

: પ્રાપ્તિસ્થાન :

શ્રી અભા શ્વે સ્થાનકવાસી
જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ
ત્રીન લોજ પાસે, રાજકોટ

Published by :

Sree Akhil Bharat S. S.
Jain Shastroddhar Samiti,
Garedia Kuva Road, RAJKOT.
(Saurashtra) W Ry India.

*

ખીજી આવૃત્તિ : પ્રત ૧૦૦૦
વીર સંવત : ૨૪૮૬
વિક્રમ સંવત : ૨૦૧૬
ધર્વી સન્ : ૧૯૬૦

*

મુદ્રક : અને મુદ્રણસ્થાન :
જય તિલાલ દેવચંદ મહેતા
જય ભારત પ્રેસ,
ગરેડીઆ કુવા રોડ
શાક માર્કેટ પાસે, રાજકોટ.

निर्यावलिका सूत्रकी विषयानुक्रमणिका ।

क्रमाङ्क	विषय	पृष्ठ.
१	मङ्गलाचरण	१-२
२	शास्त्रका आरम्भ	३
३	गुणशीलक चैत्यका वर्णन	४-५
४	आर्यसुधर्मस्वामीका वर्णन और पञ्चाभिगमपूर्वक समागम	६-१०
५	जम्बूस्वामीका वर्णन	११-१६
६	जम्बूस्वामीका प्रश्न	१७-२२
७	शास्त्रका परिचय	२३-२४
८	जम्बूस्वामीका प्रश्न	२५-२७
९	कूणिकराजाका वर्णन	२८-३०
१०	पद्मावतीका वर्णन	३१-३४
११	काली देवीका वर्णन	३५-३७
१२	कालकुमारका वर्णन	३८
१३	सम्यक्त्वकी प्रशंसा	३९-४२
१४	देवताओं द्वारा श्रेणिक की परीक्षा	४३-४४
१५	देवताओं के द्वारा की गई श्रेणिक की स्तुति	४५-४६
१६	दो देवोंने श्रेणिकको अर्पित हारादिकका वर्णन	४७-४८
१७	कूणिकराजका वर्णन	४९-५०
१८	चेलना देवीका वर्णन	५१-५२
१९	चेलना और कूणिकके प्रश्नोत्तरका वर्णन	५३-५४
२०	श्रेणिकराजका प्राणत्याग	५५
२१	रथमुशल संद्वग्रामका वर्णन	५६-६१
२२	कालीदेवीके विचारका वर्णन	६२-७२
२३	कालीराज्ञीका भगवान् को वन्दनके लिये जाना	७३-७७
२४	भगवान्से धर्मकथाका श्रवण	७७-७८
२५	काली राज्ञीका भगवान्से प्रश्न	७८-८०
२६	कालकुमारके वृत्तान्तका वर्णन	८१-८२
२७	कालीदेवीके पुत्रशोकका वर्णन	८३-८४
२८	गौतमस्वामीका भगवान्से कालकुमारके विषयमें प्रश्न	८४-८७
२९	चेलना राणीके दोहद (दोहला)का वर्णन	८८-९४

क्रमाङ्क	विषय	पृष्ठ-
३०	दोहदकी पूर्ति करनेके विषयमें श्रेणिकराजका वर्णन	९५-१०४
३१	दोहद पूर्तिके पीछे गर्भधारण विषयमें चेल्लनादेवीका वर्णन	१०५-१०७
३२	कूणिकराजके जन्मका और कुमारको निर्जनस्थलमें छोडनेका चेल्लनादेवीकी आज्ञा और श्रेणिकराजाका उपालम्भका वर्णन	१०७-११२
३३	कूणिकके त्यागादि और नामकरणका वर्णन	११२-११५
३४	श्रेणिकका बन्धन और कूणिकके राज्याभिषेकका वर्णन	११६-११८
३५	श्रेणिकराजके वात्सल्यता परिचयका वर्णन	११९-१२०
३६	श्रेणिकराजके मरणादिका वर्णन	१२०-१२८
३७	कूणिकराज, श्रेणिकराजके मारण के कारणहोनेका वर्णन	१२९-१३५
३८	वैहल्यकुमारकी गन्धहस्तीसे क्रीडा	१३६-१४४
३९	चेटकराज और कूणिकराजका दूत द्वारा संवाद	१४५-१५६
४०	कूणिककी कालादि कुमारों से मंत्रणा	१५७-१६२
४१	कौटुम्बिक पुरुषोंसे कूणिक राजकी आज्ञा	१६२-१६४
४२	कूणिक और चेटकके युद्धोद्योगका वर्णन	१६५-१७५
४३	सुकालकुमारका वर्णन	१७६-१७८
४४	पद्मकुमारका वर्णन	१७८-१८२
४५	पद्मअनगारका वर्णन	१८२-१८५
४६	भद्रकुमारादि आठ कुमारोंका वर्णन और भद्रादि देवोंकी स्थिति	१८६-१९१
४७	चन्द्रदेवके पूर्वभवका वर्णन	१९२-१९४
४८	चन्द्रदेवका वर्णन	१९५-१९८
४९	अङ्गति गाथापत्रिका वर्णन	१९९-२३२
५०	सोमिल ब्राह्मणका वर्णन	२३३-२५६
५१	बहुपुत्रिका देवीका वर्णन	२५७-३१४
५२	पूर्णभद्रदेवका वर्णन	३१४-३१९
५३	मणिभद्रदेवका वर्णन	३२०-३२२
५४	श्रीदेवीका वर्णन	३२३-३३९
५५	निषधकुमारका वर्णन	३४०-३६८
५६	मायानि आदिका वर्णन	३६९-३७०
५७	शास्त्रप्रशस्ति	३७१-३७४

प्रस्तावना

संसारके सभी जीव परम अमृत समान सुखकी गवपणा करते हैं, सुखके प्रयत्नमें लगे रहते हैं, सुखके कारणको ढूँढते हैं, सुखके वातावरणको पसंद करते हैं, सुखकी याचना और सुख ही की मिश्रित मानते हैं, तो भी वे परम सुखके बदले परम दुःख ही प्राप्त करते हैं। सभी प्रयत्न सभी कारण और सभी वातावरण ये दुःखरूप जालमें परिणत होकर आत्मरूप भोले भाले मृगोंको फसाकर दुःखित करते हैं। जिससे आत्मा अपना भान भूलकर अज्ञानरूपी अन्धकारमें गोता खाता है भटकता है, फिर इन्द्रिय रूपी चोर चारों तरफसे आकर दुर्बल आत्माको घेर लेते हैं और अनेक प्रकारकी विडम्बना करते हुए आत्माको हैरान करते हैं। जैसे इन्द्र वज्रसे पर्वतको चूर २ कर डालता है वैसे ही वे आत्माके शम-दम आदि गुणोंको नाश करके आत्माको जड जैसा बनाते हुए दीन हीन बनाकर छोड़ते हैं।

जब आत्मा निर्बल हो जाता है तब मोहरूपी सुभट आत्मराज्यमें प्रवेश करता है, और वहाँ विघ्नपरंपराको उपस्थित कर आत्माका सर्वस्व लूटकर उसको भवरूप कृपमें डालता है। वहाँ आत्माको संयोग वियोगरूप आधिग्याधि रूप दुष्ट जलजंतु हरएक तरहसे कण्ट पहुँचाते हैं, सर्प जैसे मेढकको गिल जाता है वैसे ही जन्म जरा मृत्यु आत्माको गिलता रहता है। फिर किस प्रकार सुखकी आशा की जाय? ऐसी अवस्थामें तो सुखका स्वप्न भी नहीं मिल सकता, 'हा कष्टम्' तो भी ससारी जीव सुखकी आशा करते हैं।

फिर अविरति रूपी राक्षसी आकर आत्माको घेर लेती है और विष समान विषय भोगोंमें फसाकर उसे निःसार बना देती है, आत्माके निज स्वरूपको पलटाकर विभावदशा उत्पन्न करती है जिससे आत्मा परस्वरूपको अपना स्वरूप समझकर भवभ्रमण रूप परंपराकी और भी वृद्धि करता हुआ कण्ट पर कण्ट भोगता है, सुख कैसे प्राप्त हो इसकी तलाशमें घूमता है, इतनेमें कषाय रूप राक्षस विविध प्रकारसे आस पैदा करता है, तो भी आत्मा दुःखके निदान

रूप उस कषायको ही सुखका निदान समझकर उसमें आसक्त होता है, सुखके जितने जितने भी कारण हैं- अहिंसा संयम तप आदि; उनको दुःख रूप समझकर उन्हें छोड़ बैठता है, धर्म अधर्म आत्मा अनात्माके विवेकसे वंचित रहना है, उन्मार्गगामी बनता है, सुमार्गको परित्याग करता है, फिर उसी दुःख परंपराकी जालमें फसता है। इतनेमें प्रमाद रूपी पिशाच आकर झमता है और आत्माकी ऐसी छिन्न भिन्न दशा करता है कि आत्मा जड स्वरूप बनकर जड वस्तुओंमें ही आनन्द मानता है।

इधर अशुभयोग रूप भूत आत्मामे प्रवेश करता है; तब फिर क्या? कल्पनासेभी बाहर परिस्थिति बन जाती है। अशुभ योगों की अशुभ प्रवृत्तियाँ अशुभ कार्योंकी और आत्माको घसीटती हैं। फिर आत्मा परतंत्र बनकर ज्ञानावरणीय आदि आठ कर्मोंको मन्द तीव्र आदि रसमें प्रवृत्त हो बांधता है और एकलौ अडतालीस प्रकृतियों की फासमें फमकर नाना प्रकार का दुष्कृत्य करके नरक निगोद आदि अनन्त दुःखरूपी खड्डेमें गिर जाता है। इस प्रकार अनन्त काल तक आत्माके लिये मनुष्यभव पाना तो दूर रहा, किन्तु निगोदकी अपेक्षा सूक्ष्म एकेन्द्रियसे चादर एकेन्द्रियका भी भव वह नहीं पा सकता।

इस तरह चतुरगतीमें भटकता भव भ्रमण करता २ आत्मा कदाचित् मनुष्य भवमें आ भी गया तो मिथ्यात्व अविरति कषाय प्रमाद और अशुभ योगों की प्रवृत्तियाँ उसको घेर लेती हैं, जिससे वह फिर भवाटवीमें पड़ जाता है और उसी विकल दशाको प्राप्त कर जन्म मरण आदि पाता रहता है।

इस प्रकारकी अवस्था सकल संसारी जीवों की भगवानने अपने केवलज्ञानरूपी प्रकाशसे अवलोकन करके परम करुणा करते हुए शारीरिक मानसिक दुःखोंको मिटानेवाली जन्म मरण आदिको उच्छेद करनेवाली जिनवाणीको द्वादश अंग द्वारा प्रवचन रूपसे प्रकाशित की है। वह वाणी १ चरणकरणानुयोग २ धर्मकथानुयोग ३ गणितानुयोग और ४ द्रव्यानुयोग रूपमें विभक्त है।

निरयालिका आदि पाँच उपाङ्ग भगवानकी धर्मकथानुयोग वाणीमें अन्तर्हित हैं। इन पाँचों उपाङ्गोंमें (१) निरयावलिका अन्तकृतका (अन्त-गडसूत्र) उपाङ्ग है, और (२) कल्पावतंसिका अनुत्तरोपपातिकका, (३) पुष्पिता प्रश्नव्याकरण सूत्रका, (४) पुष्पचूलिका विपाकसूत्रका, एवं वृष्णिदशा दृष्टिवादाङ्गका उपाङ्ग है।

इनमें निरयावलिका उपाङ्गमें काल आदि दस कुमारोंका वर्णन काल आदि दस अध्ययनोंमें किया गया है। जो संक्षिप्तमें इस प्रकार है—

महाराज श्रेणिककी अनेक रानियाँ थी। उनमें नन्दा, चेल्लना, काली, सुकाली, महाकाली, कृष्णा, सुकृष्णा, महाकृष्णा, वीरकृष्णा, रामकृष्णा, पितृसेनकृष्णा, और महासेनकृष्णा, ये उनकी मुख्य रानियाँ थीं। इनमें नन्दाके पुत्र अभयकुमार थे, चेल्लनाके पुत्र कूणिक, वैहल्य और वैहायस थे। काली आदि दसों रानियोंके पुत्र क्रमशः काल, सुकाल, महाकाल, कृष्ण, सुकृष्ण, महाकृष्ण, वीरकृष्ण, रामकृष्ण, पितृसेनकृष्ण और महासेनकृष्ण थे। इन कुमारोंमें अभयकुमार प्रव्रजित हो गये। चेल्लनाके पुत्र कूणिकने काल आदि दस कुमारोंको अपनी ओर मिलाकर महाराज श्रेणिकको कैद कर लिया और उन्हें अनेक प्रकारकी तकलीफें देने लगा। एक दिन कूणिक अपनी माताके चरण बन्दनके लिये आया। माताने उसे देखकर अपना मुंह फिरा लिया। यह देख कूणिक हाथ जोड़ इस प्रकार बोला—हे माता! मैं अपने प्रराक्रमसे राज्यका सम्राट् बना, यह देखकर भी तुझे आनन्द नहीं होता, तुम्हारे मुखपर हर्षका कोई चिह्न नहीं दिखायी देता, तुम उदासीन हो, क्या यह तुम्हारे लिये उचित है? भला तुम्हीं सोचो, कौन ऐसी मा होगी जो अपने पुत्रकी उन्नति पर प्रसन्न न होगी। यह सुनकर महारानी चेल्लनाने कहा—वेटा! तुम्हारी इस उन्नतिसे मुझे किस प्रकार आनन्द हो? क्यों कि तुमने अपने पिता महाराज श्रेणिकको कैद कर लिया है, जो तुम्हारे देव गुरुके समान हैं, जिन्होंने तुम्हारे उपर अनेक उपकार किये हैं। उन्हींके साथ तुम्हारा यह व्यवहार समुचित है! जरा तुम्ही सोचो!

कूणिकने कहा—मा! जो श्रेणिक राजा मुझे मार डालना चाहते थे, वे मेरे परम उपकारी हैं, यह कैसे! स्पष्ट बताओ।

रानीने कहा—वेटा ! जब तुम मेरे गर्भमें आये, उस समय मुझे दोहद उत्पन्न हुआ कि मैं राजा श्रेणिकके उदरवलिका मांस तल भूनकर मदिराके साथ खाऊँ। इसके लिये मैं उदास रहने लगी और दिनानुदिन क्षीण होने लगी। जब यह समाचार तुम्हारे पिताको मिला तो उन्होंने इसका कारण शपथ पूर्वक पूछा, तो मैंने अपना दोहद बतलाया। बादमें तुम्हारे पिताने मेरा दोहद पूरा किया। दोहद पूरा हो जानेके बाद मैंने सोचा—यह बालकने गर्भावस्थामें ही पिताका मांस खाया, उत्पन्न होनेपर न जाने क्या करेगा ? इस लिये जिस किसी प्रकार इस गर्भको गिरा देना ही श्रेयस्कर है। पर अनेक प्रकारकी औषधीसे भी गर्भ न गिरा। फिर नौ महीनेके बाद उस गर्भसे तुम पैदा हुए, मैंने तुम्हें अनिष्ट समझ कर उकरडी पर फिकवा दिया। यह बात तुम्हारे पिताको मालूम हुई, वह तुम्हें खोज कर ले आये और मुझे उन्होंने इम कार्यके लिये बड़ी भर्त्सना की। तेरी उङ्गलीको उकरडी पर सुर्गेने काट खाया जिससे वह सूज गयी उसमें पीप भर आया, तुझे असह्य वेदना होने लगी, तू चिल्लाने लगा, उस समय तेरे पिता तुम्हारे पास बैठे रहते थे, दिन रात तुम्हारी परिचर्या करते रहेते थे, तुम जब व्रणकी वेदनासे रो पडते थे, उस समय तुम्हारी उङ्गलीको अपने मुंहमें डाल पीप चूसकर थूक देते थे, उससे तुझे शान्ति मिलती थी और तू धीरे २ अच्छा हो गया। वेटा ! तू ही सोच, ऐसे परम उपकारी पिताके साथ तेरा यह वर्ताव उचित है ? अपनी मां के सुखसे यह सुन कूणिक बहुत दुःखी हुआ। परम उपकारी पिताका बन्धन तोड़ूँ इस भावनासे उसी समय हाथमें कुल्हाडी लेकर जिस पिंजरेमें महाराजा श्रेणिक कैद थे, उस पिंजरेको तोडनेके लिये चल पडा। लेकिन राजा श्रेणिकने कूणिकको हाथमें कुठार लेकर आते हुए देख मनमें सोचा—न जाने यह कूणिक मुझे किस कुमौतसे मारेगा ? इस भयसे उन्होंने अपनी अंगूठीमें जडा हुआ तालपुष्ट विष चूस कर अपना अन्त कर लिया। पिताकी मृत्युसे कूणिक अत्यधिक दुखी हुआ, उसे राजगृहकी प्रत्येक वस्तु पिताकी स्मृति दिलाकर दुःखित करने लगी, पिताके प्रति किये हुए अन्याय उसकी आत्माको कष्ट देने लगे। वह राजगृहमें नहीं रह सका, राजगृह छोडकर चम्पानगरीको उसने राजधानी बनायी। वहाँ अपने भाई बन्धुओंके साथ रहने लगा और राज्यको ग्यारह भागोंमें बाँटकर

एक २ भाग काल आदि दस कुमारोंको दिया, और ग्यारहवाँ भाग खुद लेकर राज्य करने लगा।

राजा श्रेणिकने सेचनक गन्ध हाथी और रानी नन्दाने अठारह लडीवाला हार कूणिकके छोटे भाई वैहल्यको दिया था। वह हाथी पर बैठ गङ्गा नदीमें अपने अन्तःपुर परिवारके साथ क्रीडा करते थे। उनकी क्रीडा देखकर लोग कहने लगे—वास्तविक राज्योपभोग तो वैहल्य कुमार ही करते हैं। कूणिक तो नाम मात्रके राजा हैं, क्यों कि उनके पास सेचनक गन्ध हाथी नहीं है। धीरे २ वैहल्यकी जलक्रीडाका समाचार कूणिक राजाकी रानी पद्मावतीको मालुम हुआ, वह वैहल्यसे सेचनक हाथी और अठारह लडीवाला हार ले लेनेके लिये कूणिकको बार बार प्रेरित करने लगी। कूणिकने अन्तमें रानीकी बात मानकर अपने भाईसे हाथी और हार मांगा। उन्होंने भी राज्यका हिस्सा मांगा, परन्तु कूणिक इस पर तैयार न हो सके। यह देख वैहल्य कुमार झौका पाकर हाथी हार आदि अपनी सभी सामग्री लेकर अपने अन्तःपुर परिवारके साथ वैशाली नगरीमें अपने नाना चेटकके पास पहुँचे। कूणिकने अपने दूतके द्वारा चेटकको संदेशा दिया—कि आप हाथी और हारके साथ वैहल्यको भेज दें। इसपर चेटकने उत्तरमें संदेशा भेजा—यदि तुम राज्यका भाग वैहल्यको दो तो इसे हम हाथी और हारके साथ भेज सकते हैं, परन्तु कूणिकको यह शर्त मंजूर नहीं हुई, फल स्वरूप दोनोंमें युद्ध हुआ। इधर कूणिककी तरफ काल आदि दस कुमार थे उधर चेटककी और नौ लच्छी नौ अल्लकि ये अठारह गणराजा थे। इनमें प्रत्येकके पास तीन २ हजार हाथी घोड़े रथ और तीन २ करोड पैदल सैनिक थे। प्रथम दिनकी लड़ाईमें कालकुमार अपने तीन २ हजार हाथी घोड़े रथ और तीन करोड पैदल सैनिकके साथ चेटक राजासे लड़नेके लिये आया और चेटकके एक अमोघ वाणसे सैन्य सहित मारा गया। दूसरे दिन सुकालकुमार, तीसरे दिन महाकाल, चौथे दिन कृष्णकुमार, पाँचवें दिन सुकृष्ण, छठे दिन महाकृष्ण, सातवें दिन वीरकृष्ण, आठवें दिन रामकृष्ण, नवमें दिन पितृसेनकृष्ण, और दशवें दिन महासेनकृष्ण अपने २ सैन्य सहित चेटकके

साथ लडने आये और चेटकके द्वारा ससैन्य मारे गये। और अपने पाप कर्मके प्रभावसे निरय (नरक) गामी हुए। इसी वस्तुको भगवानने गौतम स्वामीको उनके पूछने पर निरयावलिका नामसे फरमाया है।

कल्पावतंसिका नामक द्वितीय वर्गमें दस अध्ययन हैं, इन दसों अध्ययनोंका नाम क्रमसे—पद्म (१) महापद्म (२) भद्र (३) सुभद्र (४) पद्मभद्र (५) पद्मसेन (६) पद्मगुल्म (७) नलिनीगुल्म (८) आनन्द (९) और नन्दन (१०) है। प्रथम अध्ययनमें पद्मकुमारका वर्णन इस प्रकार है! पद्मकुमार भगवान महावीर स्वामीके पास प्रव्रजित हो पाँच वर्षों तक श्रामण्य पर्याय पाली, अन्तमें मासिकी संलेखनासे साठ भक्तोंको छेदित कर काल प्राप्त हुए, और सौधर्म कल्पमें देवता होकर उत्पन्न हुए। वहाँसे च्यव कर महाविदेह क्षेत्रमें जन्म लेंगे और सिद्ध होकर सब दुखोंका अन्त करेंगे। इसी प्रकार महापद्मसे लेकर नन्दन पर्यन्त नौ कुमारों का वर्णन जानना चाहिये। ये सभी भगवानके समीप प्रव्रजित हुए और संलेखनासे अपने शरीरकों त्याग कर देवलोकमें देव होकर उत्पन्न हुए। वहाँसे च्यव कर महाविदेह वर्षमें जन्म लेंगे और सिद्ध होकर सब दुखोंका अन्त करेंगे। ये पद्म आदि दस कुमारोंके पुत्र और महाराज श्रेणि कके पौत्र (पोते) थे।

पुष्पिता नामक तृतीय वर्गमें चन्द्र (१) सूर (२) शुक्र (३) बहुपुत्रिका (४) पूर्ण (५) मानभद्र (६) दत्त (७) शिव (८) वलेपक (९) अनादृत (१०) इन दसों देवोंका दस अध्ययनोंमें वर्णन है। ये सब भगवान महावीर प्रभुके दर्शन करनेके लिये देवलोकसे अपने २ परिवारके साथ आये और अपनी वैक्रियिक शक्तिसे नाट्य विधि दिखाकर अन्तर्हित हो गये। गौतम स्वामीने उनकी विशाल क्रुद्धिके बारेमें भगवानसे पूछा—हे भदन्त! इन्हें यह क्रुद्धि कहाँसे प्राप्त हुई? भगवानने गौतम स्वामीको चन्द्र आदि देवके पूर्वभवका वर्णन सुनाया और उन्होंने कहा—गौतम! ये सब देवलोकसे च्यव कर महाविदेह वर्षमें उत्पन्न होकर सिद्ध होंगे।

पुष्पचूलिका नामक चतुर्थ वर्गमें भी दस देवियोंके नामसे दस

अध्ययन हैं। उन दसों देवियोंका नाम-श्री (१) ह्री (२) धी (३) कीर्ति (४) बुद्धि (५) लक्ष्मी (६) इलादेवी (७) सुरादेवी (८) रसदेवी (९) और गन्धदेवी (१०) है। ये दसों देवियाँ भगवानके दर्शनके लिये आयीं और नाट्यविधि दिखाकर अपने २ स्थान पर चली गयीं। गौतमस्वामीने इन देवियोंकी ऋद्धि प्राप्तिके बारेमें पूछा। भगवानने इन सबोंका पूर्व भवका वर्णन किया, और कहा-हे गौतम ! ये सभी देवलोकसे च्यव कर महाविदेह क्षेत्रमें जन्म लेंगी और सिद्ध होकर सभी दुखोंका अन्त करेंगी !

इसका पाँचवाँ वर्गका नाम वृष्णिदशा वर्ग है। इसमें बारह अध्ययन हैं। ये बारहों अध्ययन बारह कुमारोंका नामसे हैं। उन कुमारोंका नाम-निषध (१) मायनी (२) वह (३) वह (४) पगता (५) ज्योति (६) दशरथ (७) दृढरथ (८) महाधन्वा (९) सप्तधन्वा (१०) दशधन्वा ११ और शतधन्वा १२ है। इनमें निषधकुमारका वर्णन इस प्रकार है-निषध कुमार राजा बलदेव और रानी रेवतीका पुत्र थे। इनका विवाह पचास राजकन्याओंके साथ हुआ और वह अपने उपरी महलमें सुख पूर्वक रहने लगे। एक समय द्वारकाके नन्दन वन उद्यानमें भगवान अर्हत् अरिष्टनेमि पधारे। भगवानके दर्शनके लिये कृष्ण वासुदेव आदि नन्दन वन उद्यानमें गये। निषधकुमारको भी भगवानके पधारनेका समाचार ज्ञात हुआ। वह भी भगवानके दर्शनके लिये। धर्म कथा सुनकर श्रावक धर्म स्वीकार कर अपने घर लौट गये। भगवानका अन्तेवासी वरदत्त अनगार निषधकुमारकी सौम्यता देख मुग्ध हो गये। और निषधकुमारको यह सौम्यता और ऋद्धि आदि कैसे प्राप्त हुई ? इस बारेमें भगवानसे पूछा। भगवानने निषधकुमारके पूर्वभवका वर्णन किया। वरदत्तने पूछा-हे भदन्त ! यह निषधकुमार आपके समीप प्रव्रजित होगा ? भगवानने कहा-हाँ, वरदत्त ! यह निषधकुमार मेरे समीप प्रव्रजित होगा। इसके बाद भगवान जनपदमें विचरने लगे। एक समय तिषधकुमार पोषधशालामें दर्भके आसन पर बैठे हुए थे। उनके मनमें यह भावना पैदा हुई -यदि भगवान यहाँ आँवें तो मैं उनका दर्शन करूँ और उनकी

उपासना करूं। भगवानने निषधकुमारके मनकी बात जान ली और अठारह हजार श्रमणोंके साथ नन्दन वन उद्यानमें पधारे। निषध-कुमारने भगवानका दर्शन किया, और बादमें माना पितासे पूछकर अनगार हो गये और बयालीस भक्तोंको अनशनसे छेदित कर काल प्राप्त हुए। उनके काल प्राप्त होनेके बाद वरदत्त अनगारने भगवानसे पूछा—हे भदन्त ! आपका अन्तेवासी प्रकृतिभद्रक निषध अनगार इस शरीर को छोडकर कहाँ गये ? भगवानने कहा—हे वरदत्त ! मेरा अन्तेवासी प्रकृतिभद्रक निषध नामक अनगार सर्वार्थ सिद्ध विमानमें देव होकर उत्पन्न हुआ। वहाँ उसकी स्थिति तेतीस सागरोपम है। वह वहाँ से च्यव कर महाविदेह क्षेत्रके उन्नात नगरमें विशुद्ध मातृ पितृ वंशवाले राजकुलमें उत्पन्न होगा, बाल्यावस्था बीत जानेपर स्थविरोके समीप प्रव्रजित होगा और सिद्ध होकर सभी दुखोंका अन्त करेगा। इसी प्रकार मायनी आदि ग्यारह राजकुमारोंकाभी वर्णन जानना चाहिये। ये सभी भगवान अरिष्टनेमिके समीप प्रव्रजित हुए और अपने नश्वर शरीरको छोड सर्वार्थ सिद्ध विमानमें देव होकर उत्पन्न हुए और च्यवकर महाविदेह क्षेत्रमें जन्म लेकर सिद्ध होंगे और सभी दुखोंका अन्त करेंगे।

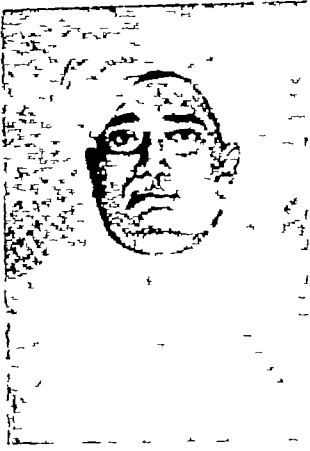
यह पाचों उपाङ्गका संक्षिप्त वर्णन है।

इस निरयावलिका आदि पाचों उपाङ्गो पर जैनाचार्य पूज्य श्री घासीलालजी महाराजने सुन्दरबोधिनी नामकी टीका की है। इस टीका की विशेषता संस्कृत प्राकृतज्ञ विद्वान मूल और संस्कृत टीका को देखकर समझ लेंगे। और सकल साधारण भव्यजन हिन्दी और गुजराती भाषाके अनुवादसे इसकी विशेषता समझेंगे। इस पर हम अधिक लिखना उचित नहीं समझते, क्यों कि 'हाथ कङ्कनको आरसी क्या ?' वस; इसी न्यायसे हम अपना वक्तव्य समाप्त करते हैं। इत्यलम्।

राजकोट,
१५ मई १९४८ }

मुनि कन्हैयालाल.

આઘસુરુખીશ્રીઓ



(સ્વ.) શેઠ હરખચંદ કાલીદાસ વારીઆ
ભાણુવડ.

કેઠારી હરગોવિંદલાલ જેચંદ
રાજકોટ.



(સ્વ.) શેઠ આત્મારામ માણેકલાલ
અમદાવાદ.

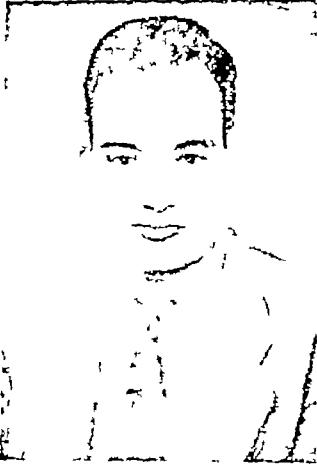
શેઠ શાંતિલાલ મંગળદાસલાલ
અમદાવાદ.



(સ્વ.) શેઠ ધારશીલાલ જીવણુલાલ
સોલાપુર.

છગનલાલ શામળદાસ ભાવસાર
અમદાવાદ.

આદ્યમુરખીશ્રીઓ



(સ્વ.) શેઠશ્રી દિનેશભાઈ
કાંતિલાલ શાહ
અમદાવાદ.



(સ્વ.) શેઠશ્રી શામળ વેલળ વીરાણી
રાજકોટ.



શ્રી વિનોદકુમાર વીરાણી
રાજકોટ.

(દીલા નીંધા પહેલા શાસ્ત્રાભ્યાસ કરતા)



શ્રી નેશિંગભાઈ પાંચાલાલભાઈ
અમદાવાદ.



(સ્વ.) શેઠ રંગજીભાઈ મોહનલાલ શાહ
અમદાવાદ.

अभिल भारत ज्वेताम्भूर, स्थानकवासी

जैन शास्त्रोद्धार समिति

गरेडीया कुवा रोड - श्रीन लोण पासे,

रा ज के ट

दानवीरोनी नामावली

शङ्खात ता. १८-१०-४४ थी ता. १५ ५-६० सुधीमां
दाणल थयेल भेम्भरोनां सुभारक नामो.

लाठेके भेम्भरोनुं गामवार ककावारी लिस्ट.

(डा. २५० थी ओष्ठी रकम भरनारनुं
नाम आ याहीमां सामेल करेल नथी.)

આદ્યમુરખખીશ્રીઓ-૧૧

ઓછામાં ઓછી રૂ. ૫૦૦૦ની રકમ આપનાર)

ક્રમ	નામ	ગામ	રૂપિયા
૧	શેઠ શાંતીલાલ મગળદાસભાઈ બાણીતા મીલમાલીક	અમદાવાદ	૧૦૦૦૦
૨	શેઠ હરખચંદ કાળીદાસભાઈ વારીયા હા. શેઠ લાલચંદભાઈ, જેચંદભાઈ, નગીનભાઈ વૃજલાલભાઈ તથા વલ્લભદાસભાઈ	ભાણુવડ	૬૦૦૦
૩	કોઠારી જેચંદ અજરામર હા. હરગોવિંદભાઈ જેચંદભાઈ	રાજકોટ	૫૨૫૧
૪	શેઠ ધાગીભાઈ જીવનભાઈ	વારસી	૫૦૧
૫	સ્વ. પિતાશ્રી છગનલાલ શામળદાસના સ્મરણાર્થે હા શ્રી ભોગીલાલ છગનલાલભાઈ ભાવસાર	અમદાવાદ	૫૨૫૧
૬	સ્વ. દિનેશભાઈના સ્મરણાર્થે હા. શેઠ કાંતિલાલ મણીલાલ જેશીંગભાઈ	અમદાવાદ	૫૦૦૦
૭	શેઠ આત્મારામ માણેકલાલ હા. શેઠ ચીમનલાલભાઈ શાંતીલાલભાઈ તથા પ્રમુખભાઈ	અમદાવાદ	૬૦૦૧
૮	શ્રી શામળ વેલજી વીરાણી અને શ્રી કડવીખાઈ વીરાણી સ્મારક ટ્રસ્ટ હા. શેઠ શામળ વેલજી વીરાણી	રાજકોટ	૫૦૦૦
૯	શ્રી શામળ વેલજી વીરાણી અને શ્રી કડવીખાઈ વીરાણી સ્મારક ટ્રસ્ટ હા. માતૃશ્રી કડવીખાઈ વીરાણી	રાજકોટ	૫૦૦૦
૧૦	શેઠ પોચાલાલ પીતાંબરદાસ	અમદાવાદ	૫૨૫૧
૧૧	શાહ રગજીભાઈ મોહનલાલ	અમદાવાદ	૫૦૦૧

નોટ :- ઘાટકોપરવાળા શેઠ માણેકલાલ એ. મહેતા તરફથી અમદાવાદમાં પાલડી બસ સ્ટેન્ડ પસે પ્લોટ નં. ૨૫૦ વાળી ફલ્ટ ચો. વાર જમીન સમિતિને લેટ મળેલ છે. અને જેનું રજીસ્ટર તા. ૨૨-૩-૬૦ ના રોજ થઈ ગયેલ છે.

૩ મુરબીશ્રીઓ-૨૦

(ઓછામાં ઓછી રૂ. ૧૦૦૦ ની રકમ આંખમાર)

૧	વકીલ જીવરાજભાઈ વર્ધમાન કોઠારી હા. કહાનદાસભાઈ તથા વેણીલાલ કોઠારી	જેતપુર	૩૬૦૫
૨	દોશી પ્રભુદાસ મુળજીભાઈ	રાજકોટ	૩૬૦૪
૩	મહેતા ગુલાબચંદ પાનાચંદ	રાજકોટ	૩૨૮૬૧૧-૧૧
૪	મહેતા માણેકલાલ અમુલખરાય	ઘાટકોપર	૩૨૫૦
૫	સઘવી પીતામ્બરદાસ ગુલાબચંદ	જામનગર	૩૧૦૧
૬	નામદાર ઠાકોર સાહેબ લખધીરસિંહજી બહાદુર	ગોરખી	૨૦૦૦
૭	શેઠ લહેચંદ કુંવરજી હા. શેઠ ન્યાલચંદ લહેચંદ	સિદ્ધપુર	૨૦૦૦
૮	શાહ છગનલાલ હેમચંદ વસા હા. મોહનલાલભાઈ તથા મોતીલાલભાઈ	મુંબઈ	૨૦૦૦
૯	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ હા. શેઠ ચન્દ્રકાંત વીક્રમચંદ મોરખી		૧૯૬૩
૧૦	મહેતા સોમચંદ તુલસીદાસ તથા તેમના ધર્મપત્નિ અ. સૌ. મણીગૌરી મગનલાલ	રતલામ	૧૫૦૦
૧૧	મહેતા પોપટલાલ માવજીભાઈ	જામજોધપુર	૧૫૦૨
૧૨	દોશી કપુરચંદ અમરશી હા. દલપતરામભાઈ	જામજોધપુર	૧૦૦૨
૧૩	બગડીયા જગજીવનદાસ રતનશી	દામનગર	૧૦૦૨
૧૪	શેઠ માણેકલાલ ભાણજીભાઈ	પોરબંદર	૧૦૦૧
૧૫	શ્રીમાન ચંદ્રસિંહજી સાહેબ મહેતા (રિલ્વે મેનેજર)	કલકત્તા	૧૦૦૧
૧૬	મહેતા સોમચંદ નેણસીભાઈ (કરાચીવાળા)	મોરખી	૧૦૦૧
૧૭	શાહ હરિલાલ અનોપચંદ	ખલાત	૧૦૦૧
૧૮	મોદી કેશવલાલ હરીચંદ્ર	અમદાવાદ	૧૦૦૧
૧૯	કોઠારી છબીરદાસ હરખચંદ	મુંબઈ	૧૦૦૦
૨૦	કોઠારી રંગીવદાસ હરખચંદ	ભાવનગર	૧૦૦૦

સહાયક મેમ્બરો-૬૩

(ઓછામાં ઓછી, રૂા ૫૦૦ ની રકમ આપનાર)

૧	શ્રી સ્થા. જૈનસઘ ડા. શેઠ જીઆભાઈ વેલશીભાઈ	વઢવાણશહેર	૭૫૦
૨	શેઠ નરોત્તમદાસ ઓઘડભાઈ	શીવ	૭૦૦
૩	શેઠ રતનશી હીરજીભાઈ ડા. ગોરધનદાંસભાઈ	જામજોધપુર	૫૫૫
૪	બાટવીયા ગીરધર પરમાણુદ ડા. અમીચ દભાઈ	ખાખીજાળીયા	૫૨૭
૫	મોરખીવાળા મઘવી દેવચ દ નેણુશીભાઈ તથા તેમનાં ધર્મપત્નિ		
	અ. સો મણીબાઈ તરફથી ડા. મુળચ દ દેવચ દ સઘવી	મલાડ	૫૨૧
૬	વોગ મણીલાલ પોપટલાલ	અમદાવાદ	૫૦૨
૭	ગોસડીયા હરીલાલ લાલચ દ તથા ચ પામેન ગોસડીયા	,,	૫૦૨
૮	શાહ પ્રેમચ દ માણેકચ દ તથા અ ઓ સમરતમેન	,,	૫૦૨
૯	શેઠ ઇશ્વરલાલ પુરુષોત્તમદાસ	,,	૫૦૧
૧૦	શેઠ ચંદુલાલ છગનલાલ	,,	૫૯૧
૧૧	શાહ શાતિલાલ માણેકલાલ	,,	૫૦૧
૧૨	શેઠ શીવલાલ ડમરભાઈ (કરાંચીવાળા)	લીંમડી	૫૦૧
૧૩	કામદાર તારાચ દ પોપટલાલ ધોરાજીવાળા	ગજકોટ	૫૦૧
૧૪	મહેતા મોહનલાલ કપુરચ દ	,,	૫૦૦
૧૫	શેઠ ગોવિંદજીભાઈ પોપટભાઈ	,,	૫૦૦
૧૬	શેઠ રામજી શામજી વીરાણી	,,	૫૦૧
૧૭	સ્વ પિતાશ્રી નદાજીના સ્મરણાર્થે ડા. વેણીચ દ શાતીલાલ		
	(જાખુંઆવાળા) મેઘનગર		૫૦૬
૧૮	શ્રી સ્થા. જૈનસઘ ડા. શેઠ ઠાકરશી કરશનજી	ધાનગઢ	૫૦૦
૧૯	શેઠ તારાચ દ પુખગજી	ઓરણાબાદ	૫૦૫
૨૦	શ્રી સ્થા. જૈન સઘ	ઓરણાબાદ	૫૦૬
૨૧	મહેતા સુણચંદ રાઘવજી ડા. મગનલાલભાઈ તથા દુર્લભજીભાઈ	ધાકશ	૭૫૦
૨૨	શેઠ હરખચ દ પુરુષોત્તમ ડા. ઇન્દુકુમાર	ચોરવાડ	૫૦
૨૩	,, કેશરીમલજી વન્તીમલજી ગુગલીયા	મલાડ	૫૦૦
૨૪	શ્રી સ્થા. જૈન સઘ ડા. બાટવીયા અમીચ દ ગીરધરભાઈ	ખાખીજાળીયા	૫૦૧
૨૫	શેઠ ખીમજીભાઈ બાવાભાઈ ડા. કૃષ્ણચ દભાઈ ગુલાબચ દભાઈ,		
	નાગરદાસભાઈ, જમનાદાસભાઈ	મુળઈ	૫૦૧

૨૬	શેઠ મણીલાલ મોહનલાલ ડગલી હા. મુળજીભાઈ મણીલાલભાઈ મુંબઈ	મુંબઈ	૫૦૧
૨૭	સ્વ. કાંતીલાલભાઈના સ્મરણાર્થે હા. શેઠ બાલચંદ્ર સાકરચંદ	,,	૫૦૧
૨૮	કામદાર સતીલાલ દુર્લભજી (જેતપુરવાળા)	મુંબઈ	૫૦
૨૯	શાહ જયંતીલાલ અમૃતલાલ	શીવ	૫૦૧
૩૦	વેરા મણીલાલ લક્ષ્મીચંદ	શીવ	૫૦૧
૩૧	શેઠ ગુલાબચંદ ભુદરભાઈ તથા કસ્તુરબેન હા. ભાઈ અનોપચંદ	ખારરોડ	૫૦૧
૩૨	મહાન ત્યાગી બેન ધીરજકુંવર ચુનીલાલ મહેતા	ધ્રાક્ષ	૫૦૧
૩૩	શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ	ધ્રાક્ષ	૫૦૧
૩૪	શ્રી મગનલાલ છગનલાલ શેઠ	રાજકોટ	૫૦૧
૩૫	શેઠ ચતુરદાસ ઠાકરશી તથા અ. સૌ. નફકુવરબેન	જામનગર	૫૦૩
૩૬	શેઠ દેવચંદ અમરશી (બેન ધીરજકુંવરની દીક્ષા પ્રસંગે લેટ)	ભાણુવડ	૫૦૧
૩૭	શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ (બેન ધીરજકુંવરની દીક્ષા પ્રસંગે લેટ)	ભાણુવડ	૫૦૧
૩૮	વકીલ વાડીલાલ નેમચંદ શાહ	વીરમગામ	૫૦૧
૩૯	મહેતા શાંતિલાલ મણીલાલ હા. કમળાબેન મહેતા	અમદાવાદ	૫૫૬
૪૦	શ્રીચુત લાલચંદજી તથા અ. સૌ. ધીસાબેન	,,	૫૦૧
૪૧	શેઠ મોહનલાલ મુકુટચંદ બાલચા	,,	૫૦૧
૪૨	સ્વ. શેઠ ઉકાભાઈ ત્રિલોચનદાસના સ્મરણાર્થે તેમના ધર્મપત્નિ લક્ષ્મીબાઈ ગીરધર તરફથી હા. મરઘાબેન તથા મગુબેન	અમદાવાદ	૫૦૧
૪૩	પારેખ જયંતીલાલ મનસુખલાલ રાજકોટવાળા હા. વિનુભાઈ	,,	૫૦૧
૪૪	શ્રીચુત શેઠ લાલચંદજી મીશ્રીલાલજી	,,	૫૦૧
૪૫	શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ	વાંકાનેર	૫૦૧
૪૬	શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ	ખોટાદ	૫૦૧
૪૭	શેઠ ગુદડમલ્લજી શેષમલજી બેવર (બરાર)	પીપળગાવ	૫૦૧
૪૮	સ્વ તુરખીયા લહેરચંદ માણેકચંદના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્નિ જીવતીબાઈ તરફથી હા. ભાઈ જયંતીલાલ તથા પૂનમચંદભાઈ	ડલાસ	૫૦૧
૪૯	શાહ અચળદાસ શુકનરાજજી હા. શેઠ શુકનરાજજી	અમદાવાદ	૫૦૧
૫૦	ભાવચાર ખોડીદાસ ગણેશભાઈ	ધ ધુકા	૫૦૧
૫૧	અ સૌ. હીરાબેન માણેકલાલ મહેતા	ઘાટકોપર	૫૦૧
૫૨	મહેતા શાંતીલાલ મગનલાલ તથા અ. સૌ. પદ્માવતી શાંતિલાલ મહેતા	અમદાવાદ	૫૦૦

- ૫૩ શેઠા હીરાચંદ્રજીવનેચંદ્રજી કટારીયા હુમડી ૫૦૧
- ૫૪ શેઠ છોટલાઈ હરગોવિંદદાસ કચેરીવાળા મુંબઈ ૫૦૧
- ૫૫ પારેખ રતિલાલ નાનચંદ મોરખીવાળા તરફથી તેમનાં
પિતાશ્રી નાનચંદ ગોવિંદજીના સ્મરણાર્થે તથા તેમનાં
ધર્મપત્નિ અ. સૌ. વસંત બહેનના અઠાઈ તપ નિમિત્તે
હા. ભુપતલાલ રતિલાલ અમદાવાદ ૫૧૧
- ૫૬ સ્વ. શાહ ત્રીલોવનદાસ મગનલાલના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્નિ
શીવકુવરબાઈ તરફથી હા. રતીલાલ ત્રીલોવનદાસ શાહ અમદાવાદ ૫૧૧
- ૫૭ શ્રીમાન નાથાલાલ માણેકચંદ પારેખ મુંબઈ (માટુંગા) ૫૦૧
- ૫૮ શ્રી લીંમડી સપ્રદાયના ગચ્છાધીપતી પૂ આચાર્ય મહારાજશ્રી
લાલાજી સ્વામીના સ્મરણાર્થે હા શેઠ જેશીંગલાઈ પોચાલાલ
(મહારાજશ્રી છોટાલાલજી સદાનદીના ઉપદેશથી) અમદાવાદ ૫૦૧
- ૫૯ સ્વ શ્રી વિનયમૂર્તિ શ્રી લખમીચંદ્રજી મહારાજના સ્મરણાર્થે
હા શેઠ જેશીંગલાઈ પોચાલાલ (મહારાજશ્રી છોટાલાલજી
સદાનદીના ઉપદેશથી) અમદાવાદ ૫૦૧
- ૬૦ બા. પ્ર. પ્રભાવતી બેન કેશવલાલ ઉબેનવાળા તરફથી તેમની
દીક્ષા પ્રસંગે વીરમગામ ૫૫૧
- ૬૧ શ્રીચુત હરજીવનદાસ રાયચંદ હા છખીલદાસ હરજીવન અમદાવાદ ૫૦૧
- ૬૨ શેઠ પોપટલાલ હસરાજ તથા દિવાળીબેનના સ્મરણાર્થે
હા. શેઠ બાબુલાલ પોપટલાલ અમદાવાદ ૫૦૨
- ૬૩ અ સૌ. લીલાવતી બેન ઇશ્વરલાલ , ૫૦૨



૫૪૯ લાઈફ મેમ્બરો

અમદાવાદ તથા પરાંચો

૧ શેઠ ગીરધરલાલ કરમચંદ	૨૫૧
૨ શેઠ છોટાલાલ વખતચંદ હા. કૃષ્ણચંદ લાઈ	૨૫૧
૩ શાહ કાંતિલાલ ત્રીભોવનદાસ	૨૫૧
૪ શાહ પોપટલાલ મોહનલાલ	૨૫૧
૫ શેઠ પ્રેમચંદ સાકરચંદ	૨૫૦
૬ શાહ રતીલાલ વાડીલાલ	૨૫૧
૭ શેઠ લાલભાઈ મંગળદાસ	૨૫૧
૮ સ્વ. અમૃતલાલ વર્ધમાનના સ્મરણાર્થે હા. કાનજીભાઈ અમૃતલાલ દેશાઈ	૨૫૧
૯ શાહ નંદવરલાલ ચંદુલાલ	૨૫૧
૧૦ શાહ નરસિંહદાસ ત્રીભોવનદાસ	૨૫૧
૧૧ બીપીનચંદ્ર તથા ઉમાકાંત ચુનીલાલ ગોપાણી	૩૦૧
૧૨ શ્રી શાહપુર દરિયાપુરી આઠકોટી સ્થા. જૈન ઉપાશ્રય હા. વહીવટ કર્તા શેઠ ઇશ્વરલાલ પુરુષોત્તમદાસ	૨૫૧
૧૩ શ્રી છીપાપોળ દરીયાપુરી આઠકોટી સ્થા. જૈન સંઘ હા શેઠ ચંદુલાલ અચરતલાલ	૨૫૧
૧૪ શાહ ચીનુભાઈ બાલાભાઈ C/o. શાહ બાલાભાઈ મહાસુબલાલ	૨૫૧
૧૫ શાહ ભાઈલાલ ઉજ્જવશી	૨૫૧
૧૬ શ્રી સુબલાલ ડી શેઠ હા ડૉ કુ સરસ્વતીબેન શેઠ	૨૫૧
૧૭ શ્રી સોરાષ્ટ્ર સ્થા. જૈન સંઘ હા. શેઠ કાંતિલાલ ભુવણુલાલ	૨૫૧
૧૮ મોદી નાથાલાલ મહાદેવદાસ	૨૫૧
૧૯ શાહ મોહનલાલ ત્રીકમલાલ	૨૫૧
૨૦ શ્રી છકોટી સ્થા. જૈન સંઘ હા શેઠ પોચાલાલ પિતામ્બરદાસ	૨૫૧
૨૧ દેશાઈ અમૃતલાલ વર્ધમાનના સ્મરણાર્થે હા. ભાઈલાલ અમૃતલાલ	૨૫૧
૨૨ શાહ નવનીતરાય અમુલખરાય	૨૫૧
૨૩ શાહ મણીલાલ આશારામ	૨૫૧
૨૪ શેઠ ચીનુભાઈ સાકરચંદ	૨૫૧
૨૫ શાહ વરજીવનદાસ ઉમેદચંદ	૨૫૧
૨૬ શાહ રજનીકાંત કસ્તુરચંદ	૨૫૧

- ૨૭ સઘવી જીવણલાલ છગનલાલ ૨૫૧
- ૨૮ શાહ શાંતિલાલ મોહનલાલ ધ્રાંગધ્રાવાળા ૨૫૨
- ૨૯ અ સૌ યેન ગ્તનખાઈ કિદિયા હાણીશેઠ ધુલાજી ચ પાલાલજી ૨૫૨
- ૩૦ શાહ હરિલાલ જેઠાલાલ ભાડલાવાળા ૨૫૨
- ૩૧ શ્રી સરસપુર દરીયાપુરી આઠ કોટી સ્થા. જૈન ઉપોશ્રય ૨૫૧
- હા ભાવસાર ભોગીલાલ છગનલાલ ૨૫૧
- ૩૨ શેઠ પુખરાજજી સમતીરામજી પુનમિયા સાદડીવાળા ૨૫૧
- ૩૩ સ્વ પિતાશ્રી જવાહીરલાલજી તથા પૂ ત્રાચાજી હજરીમલજી ૨૫૧
- ખરડીયાના સ્મરણાર્થે હા મુળચંદ જવાહીરલાલજી ખરડીયા ૨૫૧
- ૩૪ સ્વ ભાવસાર ખખાભાઈ (મગળદાસ) પાનાચંદના સ્મરણાર્થે ૨૫૧
- હા તેમના ધર્મપત્નિ પુરીબેન ૨૫૧
- ૩૫ સ્વ પિતાશ્રી સ્વજીભાઈ તથા સ્વ માતૃશ્રી મુળીખાઈના સ્મરણાર્થે ૩૦૧
- હા કકલભાઈ કોઠારી ૩૦૧
- ૩૬ ભાવસાર કેશવલાલ મગનલાલ ૨૫૧
- ૩૭ શાહ કેશવલાલ નાનચંદ જાખડાવાળા હા પાર્વતી યેન ૨૫૧
- ૩૮ શાહ જીતેન્દ્રકુમાર વાડીલાલ માણેકચંદ રાજસીતાપુરવાળા ૨૫૧
- ૩૯ શ્રી સાખરમતી સ્થા જૈન સંઘ હા શેઠ મણીલાલભાઈ ૨૫૦
- ૪૦ ભાવસાર છોટાલાલ છગનલાલ ૨૫૧
- ૪૧ ભાવસાર સકરાભાઈ છગનલાલ ૨૫૧
- ૪૨ અ સૌ યેન જીવીબેન રતિલાલ હા ભાવમાર રતિલાલ હરગોવિંદદાસ ૨૫૧
- ૪૩ ભાવમાર ભોગીલાલ જમનાદાસ ખાટણવાળા ૨૫૧
- ૪૪ સઘવી બાલુભાઈ કમળશી તથા તેમના ધર્મપત્નિઓ અ સૌ. ૨૫૧
- ચ પાબેન તથા વસંતબેન તરકથી ૨૫૧
- ૪૫ અ સૌ વિદ્યાબેન વનેચંદ દેશાઈ વર્ષીતપ તથા અઠાઈ પ્રમગે ૪૧૭
- હા ભુપેન્દ્રકુમાર વનેચંદ દેશાઈ ૪૧૭
- ૪૬ શાહ નટવરલાલ ગોકળદાસ ૨૫૧
- ૪૭ શાહ શામળભાઈ અમરશીભાઈ ૫૧
- ૪૮ અ સૌ કકુબેન (ભાવસાર ભોગીલાલ છગનલાલના ધર્મપત્નિ) ૩૦૯
- ૪૯ અ સૌ સાવતાબેન (જયંતીલાલ ભોગીલાલના ધર્મપત્નિ) ૨૫૧
- ૫૦ અ સૌ શાતાબેન (દીનુભાઈ ભોગીલાલના ધર્મપત્નિ) ૨૫૧
- ૫૧ અ સૌ મુનદાબેન (રમણભાઈ ભોગીલાલના ધર્મપત્નિ) ૨૫૧

૫૨	શેઠ હીરાજી ડુંગનાથજીના સ્મરણાર્થે	હા. વાગમલજી ડુંગનાથજી	૩૦૧
૫૩	શેઠ મણીલાલ ખોઘાલાઈ		૨૫૧
૫૪	પટવા સુમેરમલજી અનોપચંદજી ભેધપુરવાળા		૩૦૧
૫૫	સ્વ માણેકલાલ વનમાળીદાસ શેઠના સ્મરણાર્થે	હા. રમણલાલ માણેકલાલ	૨૫૧
૫૬	સ્વ. શાહ ધનરાજજી ખેમરાજજીનાં સ્મરણાર્થે	હા. કનૈયાલાલ ધનરાજજી	૩૦૧
૫૭	શ્રી સારંગપુર દ. આ. કે. સ્થા જૈન સંઘ	હા. શાહ રમણલાલ ભગુભાઈ	૨૫૧
૫૮	દોશી હરજીવનદાસ જીવરાજ તથા લક્ષ્મીબાઈ લહેરચ દના સ્મરણાર્થે	હા. દોશી મનહરલાલ કરશનદાસ મુળીવાળા	૨૫૧
૫૯	શાહ પુનમચંદ કૃતોહચંદ		૨૫૧
૬૦	શ્રીચુત ચતુરભાઈ નંદલાલ		૨૫૧
૬૧	શ્રીચુત અમૃતલાલ ઇશ્વરલાલ મહેતા		૨૫૧
૬૨	શાહ બદવજી મોહનલાલ તથા શાહ ચીમનલાલ અમુલખભાઈ		૨૫૧
૬૩	અ. સૌ. જેન લાલુજેન મગનલાલ હા. શાહ અમૃતલાલ ધનજીભાઈ	વઢવાણુ શહેરવાળા	૩૦૧
૬૪	અ સૌ. જેન કાતાજેન ગોરધનદાસ (ચાંદમુનિના ઉપદેશથી)		૨૫૧
૬૫	દોશી કુલચંદ સુખલાલભાઈ ખોટાદવાળાના સ્મરણાર્થે	હા. દોશી છખીલદાસ કુલચંદભાઈ	૨૫૧
૬૬	લાલાજી રામકુંવરજી જૈન		૨૫૧
૬૭	શેઠ છોટાલાલ શુભાનચંદ પાલનપુરવાળા		૨૫૧
૬૮	શાહ ધીરજલાલ મોતીલાલ		૨૫૧
૬૯	સઘવી સૂર્ય પાંત ચુનીલાલના સ્મરણાર્થે	હા સંઘવી જીવણલાલ ચુનીલાલ	૨૫૧
૭૦	ભાવસાર મોહનલાલ અમુલખરાય		૨૫૧
૭૧	મહેતા મૂળચંદ મગનલાલ		૨૫૧
૭૨	વૈદ્ય નરસિંહદાસ સાકરચંદનાં ધર્મપત્નિ રેવાબાઈના સ્મરણાર્થે	હા. હરીલાલ નરસિંહદાસ	૨૫૧
૭૩	શાહ કુલચંદ મુલચંદભાઈ હા હસમુખભાઈ કુલચંદભાઈ		૨૫૧
૭૪	શેઠ મિશ્રીલાલજી જવાહીરલાલજી ખરડીયા		૨૫૧
૭૫	શાહ લલ્લુભાઈ મગનભાઈ ચૂડાવાળા હા. જશવતલાલ લલ્લુભાઈ		૩૦૧

૭૬	કુમારી પુષ્પાબેન હીરાલાલ (ચાંદ મુનિના ઉપદેશથી)	૨૫૧
૭૭	શાહ મણીલાલ ઠાકરશી હા. કમળાબેન મણીલાલ લખતરવાળા (ચાંદ મુનિના ઉપદેશથી)	૨૫૧
૭૮	મીસ નલીનીબેન જયંતીલાલ	૨૫૧
૭૯	સ્વ. ઉમેદરામ ત્રીભુવનદાસના ધર્મપત્નિ કાશીબાઈના સ્મરણાર્થે હા. શાતિલાલ ઉમેદરામ (ચાંદ મુનિના ઉપદેશથી)	૨૫૧
૮૦	સ્વ. ભાવસાર મોહનલાલ છગનલાલના ધર્મપત્નિ દિવાળીબાઈના સ્મરણાર્થે હા. રતીલાલ માણેકલાલ (ચાંદ મુનિના ઉપદેશથી)	૨૫૧
૮૧	મહેતા દેવીચ દિલ ખૂમચંદલ ઘોઠા ગઠસીયાણાવાળાના સ્મરણાર્થે હા. મહેતા ચુનીલાલ હરમાનચંદ	૨૫૧
૮૨	ઘાસીલાલજી મોહનલાલજી કોઠારી C/o. લક્ષ્મી પુસ્તક ભંડાર	૨૫૧
૮૩	સ્વ. શેઠ નાથાલાલ રતનાભાઈ મારફતીયાના સ્મરણાર્થે પુનાબેન તરફથી હા. કરશનભાઈ (ચાંદ મુનિના ઉપદેશથી)	૨૫૧
૮૪	શાહ મણીલાલ છગનલાલ	૨૫૧
૮૫	ભાવસાર જયંતીલાલ ભોગીલાલ	૨૫૧
૮૬	ભાવસાર દિનુભાઈ ભોગીલાલ	૨૫૧
૮૭	ભાવસાર રમણલાલ ભોગીલાલ	૨૫૧
૮૮	ભાવસાર કનુભાઈ સકરચંદ	૨૫૧
૮૯	શેઠ ભેડમલજી સાહેબ ભેદપુરવાળા	૨૫૧
૯૦	સ્વ. બેનાણી વર્ધમાન રામજીભાઈ કુંદણીવાળાના સ્મરણાર્થે હા. શાતિલાલ વર્ધમાન	૨૫૧
૯૧	સ્વ. શાહ કચરાભાઈ લહેરાભાઈના સ્મરણાર્થે હા. શાંતિલાલ કચરાભાઈ	૨૫૧
૯૨	એક સ્વધર્મી બંધુ હા. શાહ રીખલદાસજી જયંતિલાલજી	૨૫૧
૯૩	ચ સૌ. સરસ્વતીબેન મણીલાલ ચતુરભાઈ શાહ (સદાનદી છોટાલાલ મહારાજશ્રીના ઉપદેશથી)	૨૫૧
૯૪	ચીમનલાલ મણીલાલ શાહ (દરિયાપુરી સપ્રદાયના પૂ તપસ્વી મહારાશ્રી માણેકચંદ્રજી મહારાજના શિષ્ય મુનિશ્રી મગનલાલજી મહારાજશ્રીના સ્મરણાર્થે)	૨૫૧
૯૫	જેકુંવર વ્રજલાલ પારેખ	૨૫૧
૯૬	પુનમચંદજી જવાહરલાલજી બરડીયા	૨૫૧

૯૭	અ. સૌ. લીલાવતી ધીરજલાલ મહેતા	
	C/o. ડો. ધીરજલાલ ત્રીકમલાલ મહેતા	૩૦૧
-૯૮	શેઠ રાજમલજી -ઘાસીમલજી કોઠારી કોશીથડવાળા	
	તરકથી સ્થા. જૈન સંઘને ભેટ	૨૫૧
૯૯	શેઠ ચુનીલાલ ભગવાનજી C/o. રતીલાલ ચુનીલાલ	૨૫૧
૧૦૦	ભાગ્યવતી અરવીંદકુમાર C/o. અરવીંદકુમાર સકરાભાઈ ભાવસાર	૨૫૧
૧૦૧	અ. સૌ. ચંચળબેન મનસુખલાલ	
	હા. મનસુખલાલ જેઠાલાલ રૂપેરા	૨૫૧
૧૦૨	સ્વ. આસીબાઈ તથા શેઠ વસ્તીમલજી ભોમાજીનાં સ્મરણાર્થે	
	હા શેઠ મીશ્રીમલજી દેવીચંદજી ઝોસવાલ કેરુવાળા	૨૫૧
૧૦૩	સ્વ. શેઠ કીશનમલજી માંડોતના સ્મરણાર્થે	
	હા શીરેમલજી કીશનમલજી સોજતવાલા	૨૫૧
૧૦૪	સ્વ. શેઠ વકતાવરમલજીના સ્મરણાર્થે	
	હા. શેઠ ધીસાલાલજી મુકનરાજજી શીયારીયા (જ્ઞેધપુરવાળા)	૨૫૧
૧૦૫	શાહ મહાસુખલાલ ભાઈલાલ (સદાનંદી પડિત મુનિશ્રી	
	છોટાલાલજી મહારાજના ઉપદેશથી)	૨૫૧
૧૦૬	અ. સૌ. કાંતાબેન કાળીદાસ C/o કુમાર બુક બાઈન્ડીંગ વર્કસ	૨૫૧
૧૦૭	સ્વ. શેઠ હીંમતલાલ મગનલાલના સ્મરણાર્થે તેમના	
	સુપુત્રો મેસર્સ દ્વારકાદાસ એન્ડ બ્રધર્સ તરકથી	૩૫૧
૧૦૮	અ. સૌ કાંતાબેનના સ્મરણાર્થે	
	હા. ભાવસાર નાગરદાસ હરજીવનદાસ	૨૫૧
૧૦૯	શ્રી ઉમેદચંદ ઠાકરશી C/o. M/s. યુ. ટી. ગોપાણી એન્ડ સન્સ	૩૫૧
૧૧૦	પૂ. માતૃશ્રીના સ્મરણાર્થે હા. ભાવસાર ભોગીલાલ છગનલાલ	૨૫૧
૧૧૧	શાહ શાતિલાલ મોહનલાલ	૨૫૧
૧૧૨	સરસ્વતી પુસ્તક ભંડાર હા. પ્રભુદાસભાઈ મહેતા	૨૫૧
૧૧૩	શાહ ભુગલાલ કાળીદાસ	૨૫૧
૧૧૪	સ્વ. પિતાશ્રી મોતીલાલજીના સ્મરણાર્થે	
	હા. મહેતા રણજીતલાલજી મોતીલાલજી ઉદ્દેપુરવાળા	૨૫૧
૧૧૫	શેઠ પરસોતમદાસ અમરસીના ધર્મપત્નિ સ્વ. કુસુમબેનના	
	સ્મરણાર્થે તથા અ. સૌ. સવિતાબેનના માસખમણા નિમિત્તે	
	હા. સોમચંદ પરસોતમદાસ (પોર્ટ સુદાનવાળા)	૩૦૧

- ૧૧૬ શ્રીમાન જોરાવરમલજી ધર્મચંદજી, ડુંગરવાલ રાજજી
રાજજીકાકેરકા વાળા (મુનિશ્રી માંગીલાલજીના ઉપદેશથી) ૨૫૧

અમલનેર

- ૧ શાહ નાગરદાસ વાઘજીલાઈ ૨૫૧
૨ શ્રી સ્ત્રી જૈન સંઘ હા. શાહ ગાંડાલાલ લીળાલાલ ૨૫૧

અજમેર

- ૧ શેઠ ભુરાલાલ મોહનલાલ ડુંગરવાલ ૨૫૧

અલ્હર

- ૧ શ્રીમતી ચપાદેવી C/o. પુષ્કામલજી રતનમલજી સચેતી ૨૫૧
૨ ચાંદમલજી મહાવીરપ્રસાદ પાલાવત ૨૫૧
૩ શ્રીચુત રૂપલકુમાર સુમતિકુમાર જૈન ૨૫૧

આસનસોલ

- ૧ બાવીશી મણીલાલ ચત્રભુજના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્નિ
મણીબાઈ તરફથી હા રસિકલાલ, અનિલકાંત, વિનોદરાય ૨૫૧

આટકોટ

- ૧ મહેતા ચુનીલાલ નારણદાસ ૩૦૧

આણંદ

- ૧ શેઠ રમણીકલાલ એ કપાસી હા. મનસુખલાલભાઈ ૨૫૧

આકોલા

- ૧ શેઠ કંચનલાલભાઈ રાઘવજી અજમેરા C/o. મેસર્સ અજમેરા
પ્રધર્સ એન્ડ કા. (પૂ સદાનંદી મુનિશ્રી છોટાલાલજી મહારાજના ઉપદેશથી) ૨૫૧

ઘગતપુરી

- ૧ શેઠ પન્નાલાલ લખીચંદ જૈન ૨૫૧

ધન્દોર

- ૧ અ. સૌ. બેન દયાબેન મોહનલાલ દેશાઈ જેતપુરવાળા
(અ. સૌ. બેન વિદ્યાબેનના વર્ષી તંપ નિમિત્તે)
હા. અરવિંદકુમાર તથા જીતેન્દ્રકુમાર ૨૫૧
- ૨ શ્રીચુત ભાઈલાલ છગનલાલ તુરખીયા ૩૫૧
- ૩ સ્વ. ગૌરીશંકર કાળીદાસ દેશાઈ જેતપુરવાળાના સ્મરણાર્થે
હા. ભુપતલાલ ગૌરીશંકર દેશાઈ ૨૫૦

ઉદેપુર

- ૧ શેઠ મોતીલાલજી રણજીતલાલજી હીંગડે ૨૫૧
- ૨ શ્રીમતી સોહીનીબાઈ C/o. મોતીલાલજી રણજીતલાલજી હીંગડે ૨૫૧
- ૩ અ. સૌ. બેન ચન્દ્રાવતી તે શ્રીમાન બહોતલાલજી નાહરનાં
ધર્મપત્નિ હા. શેઠ મોતીલાલજી રણજીતલાલજી હીંગડે ૨૫૧
- ૪ શેઠ છગનલાલજી બાગેચા ૨૫૧
- ૫ શેઠ મગનલાલજી બાગેચા ૨૫૧
- ૬ સ્વ. શેઠ કાળુલાલજી લોઠાના સ્મરણાર્થે
હા. શેઠ દોલતસિંહજી લોઠા ૨૫૧
- ૭ સ્વ. શેઠ પ્રતાપમલજી સાખલાના સ્મરણાર્થે
હા. પ્રાણુલાલ હીરાલાલ સાખલા ૨૫૧
- ૮ શેઠ ભીમરાજજી થાવચંદજી બાફણા ૨૫૧
- ૯ શ્રીચુત સાહેબલાલજી મહેતા ૩૦૧
- ૧૦ શેઠ પન્નાલાલજી ગણેશલાલજી હીંગડે ૨૫૧
- ૧૧ શેઠ દ્વીપચંદજી પન્નાલાલજી લોઠા ૨૫૧

ઉપલેટા

- ૧ શેઠ જેઠાલાલ ગોરધનદાસ ૨૫૧
- ૨ સ્વ. બેન સંતોકબેન કચરા હા. ઓતમચંદભાઈ, છોટાલાલભાઈ
તથા અમૃતલાલભાઈ વાલજી (કલ્યાણવાળા) ૨૫૧
- ૩ શેઠ ખુશાલચંદ કાનજીભાઈ હા. શેઠ પ્રતાપભાઈ ૨૫૧
- ૪ દોશી વીઠ્ઠલજી હરખચંદ ૨૫૧
- ૫ સંઘાણી મુળશંકર હરજીવનભાઈના સ્મરણાર્થે હા. તેમના પુત્રી
જયંતીલાલ તથા રમણીકલાલ ૨૫૧

ઉમરગાંવ રોડ

૧ શાહ મોહનલાલ પોપટલાલ પાનેલીવાળા ૨૫૧

મોહન કેમ્પ

- ૧ મહેતા પ્રેમચંદ માણિકચંદના સ્મરણાર્થે
હા. રાયચંદભાઈ, પોપટલાલભાઈ તથા રસીકલાલભાઈ ૨૫૧
- ૨ શાહ જગજીવનદાસ પુરપોત્તમદાસ ૨૫૧
- ૩ શાહ ગોકળદાસ શામજી ઉદાણી ૨૫૨

કલકતા

- ૧ શ્રી કલકતા જૈન ટ્રે. સ્થા. (ગુજરાતી) સંઘ
હા. શાહ જયસુખલાલ પ્રભુલાલ ૨૫૧

કલોલ

- ૧ શેઠ મોહનલાલ જેઠાલાઈના સ્મરણાર્થે હા. શેઠ
આત્મારામ મોહનલાલ ૨૫૧
- ૨ હા. મયાચંદ મગનલાલ શેઠ હા. હા. રતનચંદ મયાચંદ ૨૫૧
- ૩ સ્વ. નાથાલાલ ઉમેદચંદના સ્મરણાર્થે હા. શાહ રતીલાલ નાથાલાલ ૨૫૧
- ૪ શેઠ મણીલાલ તલકચંદના સ્મરણાર્થે હા. મારફતીયા
ચંદુલાલ મણીલાલ ૨૫૧
- ૫ સ્વ શ્રીચુત વાડીલાલ પરશોત્તમદાસના સ્મરણાર્થે હા.
વેલાભાઈ તથા આત્મારામભાઈ ૨૫૧
- ૬ શાહ નાગરદાસ કેશવલાલ ૨૫૧
- ૭ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. શેઠ આત્મારામભાઈ મોહનલાલભાઈ ૨૫૧

કડી

- ૧ શ્રી સ્થા. દરિયાપુરી જૈન સંઘ હા. લાવસાર
દામોદરદાસભાઈ ઇશ્વરલાલભાઈ ૨૫૧
- ૨ પાર્વતીબેન C/o. જેસીંગભાઈ ઇશ્વરલાલભાઈ ૨૫૧

કાઠોર

- ૧ શ્રી સ્થા. જૈનસંઘ હા. શેઠ જેશીંગલાઈ પોચાલાલ
(માધવસિંહજી મહારાજત્રીના ઉપદેશથી) ૨૫૧

કેત્રાસગઢ

- ૧ શ્રી ૨વે. સ્થા. જૈન સંઘ હા. શેઠ દેવચંદ અમુલખ ૨૫૧

કલ્યાણ

- ૧ સંઘવી ઠાકરશીલાઈ સંઘજીના સ્મરણાર્થે
હા. શાહ હીમતલાલ હરખચંદ ૨૫૧

કાનપુર

- ૧ શાહ રમણીકલાલ પ્રેમચંદ ૩૦૦

કુંદણી-આટકોટ

- ૧ દોશી રતીલાલ ટોકરશી ૨૫૧

કેલકી

- ૧ પટેલ ગોવિંદલાલ ભગવાનજી ૨૫૧
૨ પટેલ ખીમજી જેઠાલાઈ વાઘાણી
(તેમના સ્વ. સુપુત્ર રામજીલાઈના સ્મરણાર્થે) ૩૦૨

કમ્પાલા

- ૧ સ્વ શેઠ નાનચંદ મોતીચંદ ધ્રાક્ષવાળાના સ્મરણાર્થે હા. તેમના
સુપુત્ર જમનાદાસ નાનચંદ શેઠ ૨૫૧
૨ શ્રીમતી હીરાબેન, રતીલાલ નાનચંદ શેઠ ધ્રાક્ષવાળા ૨૫૧

કુશાળગઢ

- ૧ શેઠ ચંપાલાલજી દેવીચંદજી ૨૫૧

ખાખીનળીયા

- ૧ ખાટવીયા ગુલાબચંદ લીલાધર ૨૫૧

ખારાથોડા

- ૧ સ્વ. પિતાશ્રી હરજીવનદાસ લાલચંદ શાહ
તથા સ્વ. અ. સૌ ણેન જમકુખાઈ તથા લીલાખાઈના
સ્મરણાર્થે હા. નરસિંહદાસ હરજીવનદાસ ૨૫૧
- ૨ સ્વ. શેઠ ઓઘડલાલ લક્ષ્મીચંદના સ્મરણાર્થે હા ભાઈચંદ ઓઘડભાઈ ૨૫૧

ખીચત

- ૧ શેઠ કીશનલાલ પૃથ્વીરાજ ૩૫૨

ખુરદારોડ

- ૧ શેઠ ગીરધારીલાલજી સીતારામજી ખેડપવાળા ૩૦૦
- ૨ શેઠ નરસિંહદાસ શાતીલાલજી ભોરલાવાળા
(મુનિશ્રી ચાદમલજીના ઉપદેશથી) ૨૫૧

ખંભાત

- ૧ શેઠ માણેકલાલ ભગવાનદાસ ૨૫૧
- ૨ શેઠ ત્રિભોવનદાસ મંગળદાસ ૨૫૧
- ૩ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. પટેલ કાંતીલાલ અંબાલાલ ૨૫૧
- ૪ શાહ ચંદુલાલ હરીલાલ ૨૫૧
- ૫ શાહ સાકરચંદ મોહનલાલ ૨૫૧
- ૬ શાહ સકરાભાઈ દેવચંદ ૨૫૧

ગાંધીધામ

- ૧ શાહ મોરારજી નાગજી એન્ડ કું. ૨૫૧

ગુંદાલા

- ૧ શાહ માલશી ઘેલાભાઈ ૨૫૧

ગુલાબપુરા

- ૧ શ્રી સ્થા. જૈન વર્ધમાન સંઘ
હા. માંગીલાલજી ઉકારમલજી ધનોપવાળા ૨૫૧

ગોંડલ

- ૧ સ્વ. બાબડા વચ્છરાજ તુલસીદાસનાં ધર્મપત્નિ કમળબાઈ
તરફથી હા. માણેકચંદલાઈ તથા કપુરચંદલાઈ ૨૫૧
- ૨ પીપળીયા લીલાધર દામોદર તરફથી તેમનાં ધર્મપત્નિ અ. સૌ.
લીલાવતી સાકરચંદ કોઠારીના બીજા વર્ષીતેપની ખુશાલીમાં ૩૦૧
- ૩ કામદાર બુઠાલાલ કેશવજીના સ્મરણાર્થે હા.
હરીલાલ બુઠાલાલ કામદાર ૩૦૧
- ૪ સ્વ. કોઠારી કૃપાશંકર માણેકચંદના સ્મરણાર્થે
હા. તેમનાં ધર્મપત્નિ પ્રભાકુંવરબેન ૨૫૧
- ૫ કોઠારી ગુલાબચંદ રાયચંદ રગુનવાળા ૨૫૧
- ૬ જસાણી રૂગનાથલાઈ નાનજી હા ચુનીલાલભાઈ ૨૫૧
- ૭ માસ્તર હકમીચંદ દીપચંદ શેઠ ૨૫૧

ગોધરા

- ૧ શાહ ત્રીભોવનદાસ છગનલાલ ૩૦૧
- ૨ સ્વ. પ્રેમચંદ ઠાકરશીના સ્મરણાર્થે હા. શાહ ચુનીલાલ પ્રેમચંદ ૩૦૧

ઘટકણ

- ૧ શાહ ચંદુલાલ કેશવલાલ ૨૫૧

ઘોલવડ (થાણા)

- ૧ મહેતા ગુલાબચંદજી ગંભીરમલજી ૩૦૦

ઘોડનદી

- ૧ શેઠ ચંદ્રભાણુ શોભાચંદ ગાદીયા ૨૫૧

ચુડા

- ૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. રતીલાલ મગનલાલ ગાંધી ૨૫૧

ચોટીલા

- ૧ શાહ વનેચંદ જેઠાલાલ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘને લેટ ૩૦૧

ગોંડલ

- ૧ સ્વ. બાબડા વચ્છરાજ તુલસીદાસનાં ધર્મપત્નિ કમળાબાઈ
તરફથી હા. માણેકચંદલાઈ તથા કપુરચંદલાઈ ૨૫૧
- ૨ પીપળીયા લીલાધર દામોદર તરફથી તેમનાં ધર્મપત્નિ અ. સૌ.
લીલાવતી સાકરચંદ કોઠારીના બીજા વર્ષીતપની ખુશાલીમાં ૩૦૧
- ૩ કામદાર જીઠાલાલ કેશવજીના સ્મરણાર્થે હા.
હરીલાલ જીઠાલાલ કામદાર ૩૦૧
- ૪ સ્વ. કોઠારી કૃપાશંકર માણેકચંદના સ્મરણાર્થે
હા. તેમના ધર્મપત્નિ પ્રભાકુંવરબેન ૨૫૧
- ૫ કોઠારી ગુલાબચંદ રાયચંદ રંગુનવાળા ૨૫૧
- ૬ જસાણી રૂગનાથલાઈ નાનજી હા. ચુનીલાલલાઈ ૨૫૧
- ૭ માસ્તર હુકમીચંદ દીપચંદ શેઠ ૨૫૧

ગોધરા

- ૧ શાહ ત્રીલોચનદાસ છગનલાલ ૩૦૧
- ૨ સ્વ. પ્રેમચંદ ઠાકરશીના સ્મરણાર્થે હા. શાહ ચુનીલાલ પ્રેમચંદ ૩૦૧

ઘટકેણુ

- ૧ શાહ ચંદુલાલ કેશવલાલ ૨૫૧

ઘોલવડ (થાણા)

- ૧ મહેતા ગુલાબચંદજી ગંભીરમલજી ૩૦૦

ઘોડનદી

- ૧ શેઠ ચંદ્રભાણુ શોભાચંદ ગાદીયા ૨૫૧

ચુડા

- ૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. રતીલાલ મગનલાલ ગાંધી ૨૫૧

ચોટીલા

- ૧ શાહ વનેચંદ જોઠાલાલ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘને ભેટ ૩૦૧

ચારભુજગ્રંથો

૧ શેઠ માગીલાલજી હીરાચંદજી ખાખેલ ૩૦૧

જમશેદપુર

૧ દોશી ઝવેરચંદ વલલજી ૨૫૧

જલેસર (ખાલાસોર)

૧ સંઘવી નાનચંદ પોપટલાઈ થાનગઢવાળા ૨૫૧

જયપુર

૧ શ્રીમાન હિંમતસિંહજી સાહેબ ગલૂડિયા, એડિસનલ કમીશ્નર
અજમેર ડીવીઝનવાળાનાં ધર્મપત્નિ અ. સૌ. માણુકકુવરબેન
તરફથી હા ખુશાલસિંહજી ગલૂડિયા ૩૫૧

૨ શ્રીમાન શેઠ શીરેમલજી નવલખાના ધર્મપત્નિ અ. સૌ. પ્રેમલતાદેવી ૨૫૧

જાવરા

૧ રવ. ભંડારી સ્વરૂપચંદજી શાહના ધર્મપત્નિ મોતીબેનના
સ્મરણાર્થે હા. શ્રીચુત લાલચંદજી રાજમલજી કીશનગઢવાળા
(ચાંદમુનિના ઉપદેશથી) ૨૫૧

જામખંભાળીયા

૧ શેઠ વસનજી નારણજી ૨૫૧

૨ શ્રી સ્થા જૈન સઘ હા. મહેતા રણુછોડદાસ પરમાણુંદ ૨૫૧

૩ સઘવી પ્રાણુલાલ લવજીભાઈ ૨૫૧

જામનગર

૧ શાહ છોટાલાલ કેશવજી ૨૫૧

૨ વેરા ચીમનલાલ દેવજીભાઈ ૨૫૧

૩ ડો સાહેબ પી. પી. શેઠ ૨૫૦

૪ શાહ રંગીલદાસ પોપટલાલ	૨૫૧
૫ વકીલ મણીલાલ ખેગારભાઈ પુનાતર	૨૫૧

બુનારદેવ

૧ ઘેલાણી ત્રીકમજી લાધાભાઈ	૨૫૧
---------------------------	-----

બુનાગઢ

૧ શાહ મણીલાલ મીઠાભાઈ હા. હરિલાલભાઈ (હાટીનામાળીયાવાળા)	૨૫૨
---	-----

ભમજેધપુર

૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. મહેતા પોપટલાલ માવજીભાઈ	૩૮૭
૨ શાહ ત્રીભોવનદાસ ભગવાનજી પાનેડીવાળા	૨૫૧
૩ દોશી માણેકચંદ લવાન	૨૫૧
૪ પટેલ લાલજી જુઠાભાઈ	૨૫૧
૫ શેઠ ખાવનજી જેઠાભાઈ	૨૫૧
૬ શેઠ વ્રજલાલ ચુનીલાલ	૨૫૧

જેતપુર

૧ કોઠારી ડોલરકુમાર વેણીલાલ	૨૫૧
૨ અ સૌ બેન સુરજકુંવર વેણીલાલ કોઠારી	૨૫૧
૩ શેઠ અમૃતલાલ હીરજીભાઈ હા. નરભેરામભાઈ (જસાપુરવાળા)	૨૫૧
૪ દોશી છોટાલાલ વનેચંદ	૨૫૧

જેતલસર

૧ શાહ લક્ષ્મીચંદ કપૂરચંદ	૨૫૧
૨ કામદાર લીલાધર જીવરાજના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્નિ જમકબેન તરફથી હા શાંતીલાલભાઈ ગોડલવાળા	૨૫૧

જેધપુર

૧ શેઠ નવરતનમલજી ધનવત્સિહજી	૨૫૦
૨ શેઠ હસ્તીમલજી મનરૂપમલજી સામસુખા	૨૫૧

३	शेठ पुष्कराजल पद्मराजल लंडारी	२५१
४	शेठ वस्तीमलल आनंदमलल सामसुणा	२५१

जेरावरनगर

१	श्री स्था जैन अंध डा. शेठ चंपकलाल धनलभाध	२५१
---	--	-----

अरीया

१	श्री स्था जैन अंध डा. शेठ ईनियालाल भी. मोती	२५१
---	---	-----

डोंडायचा

१	श्री स्था जैन अंध	२५०
---	-------------------	-----

ढसा

१	श्री ढसागाम स्था जैन अंध डा. चोक सद्भ्रह्मंडस्थ तरकथी	२५१
२	श्री स्था. जैन अंध डा. णगडिया नरभेराम जेठालाल (ढसा न'कशन)	२५०

तासगांव

१	स्व. चुनीलालल हुगडना स्मरणार्थे तेमनां धर्मपत्नि ढोढुणाधना तरकथी डा. शेठ रामचंद्रल हुगड	३५१
---	--	-----

थानगढ

१	शाड ठाकरशीभाध करमनल	२५१
२	शेठ जेठलाल त्रीलोकवनदास	२५१
३	शाड धारशीभाध पाशवीरभाध डा सुणदालभाध	२५१
४	डंसाभेन अरवी द डा भाध रवीच द माणुकेचंद	३०१

दडाथुरेडे

१	शाड डरचवनदास ओधक अंधार (कराचीवाणा)	२५१
---	------------------------------------	-----

दाडोद

१	शेठ माणुकेलालभाध जेगारल	२५१
---	-------------------------	-----

દિલ્હી

૧	લાલાજી પૂર્ણચંદજી જૈન (સેન્ટ્રલ ઝોનવાળા)	૩૫૧
૨	શ્રીચુત કીશનચંદજી મહેતાબચંદજી ચોરડીયા હા. શ્રીમતી નગીનાદેવી તથા શ્રીચુત મહેતાબચંદ જૈન	૨૫૧
૩	અ. સૌ સજ્જનબેન ઇંદરમલજી પારેખ	૨૫૧
૪	લાલાજી મીઠનલાલજી જૈન એન્ડ સન્સ	૩૦૧
૫	લાલાજી ગુલશનરાયજી જૈન એન્ડ સન્સ	૩૦૧
૬	સ્વ. લક્ષ્મીચંદજીના સ્મરણાર્થે નગીનાદેવી સુજાતીના તરફથી હા. સંઘવી હેમતકુમારજી જૈન	૨૫૧
૭	બેન વિજ્યાકુમારી જૈન C/o. મહેતાબચંદ જૈન (વયોવૃદ્ધ સરલ સ્વભાવી ફૂલમતીજી મહાસતીજીની પ્રેરણાથી)	૨૫૧
૮	શ્રીમાન લાલાજી રતનચંદજી જૈન C/o. આઈ સી. હોઝીયરી	૨૫૧

ક્રાફ્ટ

૧	શેઠ મણીલાલ જેચંદભાઈ	૨૫૧
---	---------------------	-----

ધાર

૧	શેઠ સાગરમલજી પનાલાલજી	૨૫૧
---	-----------------------	-----

ધ્રાંગધ્રા

૧	ભાવદીક્ષિત અ. સૌ. રૂપાળીબેન હીમતલાલ સઘવીના તપશ્ચાર્યે સઘવી ચીમનલાલ પરસોતમદાસ સંઘવી તરફથી	૩૦૫
૨	સંઘવી નરસિંહદાસ વખતચંદ	૩૦૧
૩	શ્રી સ્થા. જૈન મોટા સઘ હા શેઠ મંગળજી જીવરાંજ	૨૫૧
૪	ઠંકકર નારણદાસ હરગોવિંદદાસ	૨૫૧
૫	કોઠારી કપુરચંદ મંગળજી	૨૫૧

ધોરાજી

૧	મહેતા પ્રભુદાસ મુળજીભાઈ	૩૫૧
૨	અ. સૌ. બચીબેન બાબુભાઈ	૨૫૧

૩	ધી નવસૌરાષ્ટ્ર ઓઈલ મીલ પ્રા લીમીટેડ	૨૫૧
૪	સ્વ. રાયચંદ પાનાચંદના સ્મરણાર્થે હા. ચીમનલાલ રાયચંદ શાહ	૩૦૧
૫	ગાધી પોપટલાલ જ્વેલ હલાઈ	૨૫૦
૬	દેશાઈ છગનલાલ ડાહ્યાલાઈ લાઠવાળાના ધર્મપત્નિ દિવાળીબેન તરફથી હા. કુમારી હસુમતી	૨૫૧
૭	શેઠ દલપતરામ વસનજી મહેતા	૨૫૧
૮	એક સદ્ગ્રહસ્થ હા. મહેતા પ્રભુદાસ મુળજીલાઈ	૨૫૧
૯	સ્વ. પિતાશ્રી લગવાનજી કચરાલાઈના તથા ત્રિ. હંસાના સ્મરણાર્થે હા. પટેલ દલીચંદ લગવાનજી	૩૦૧
૧૦	મહેતા હેમચંદ કાળીદાસ જામખંલાળીયાવાળા	૨૫૧

ધ ધુકા

૧	શેઠ પોપટલાલ ધારશીલાઈ	૨૫૧
૨	સ્વ. ગુલાબચંદલાઈના સ્મરણાર્થે હા. વેરા પોપટલાલ નાનચંદ	૨૫૧
૩	શ્રી ચત્રભુજ વાઘજીલાઈ વસાણી	૨૫૧

ધુલિયા

૧	શ્રી અમોલ જૈન જ્ઞાનાલય હા. કનૈયાલાલજી છાજેડ	૨૫૧
---	---	-----

નડીયાદ

૧	શાહ મોહનલાલ ભુરાલાઈ	૨૫૧
---	---------------------	-----

નારાયણ ગામ

૧	મોતીલાલજી હીરાચંદજી ચોરડીયા બેરીવાળા	૨૫૧
---	--------------------------------------	-----

ન દુરખાર

૧	શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. શેઠ પ્રેમચંદ લગવાનલાલ	૨૫૦
---	--	-----

નાગોર

૧	શ્રીપાલભાઈ એન્ડ કું. હા. સાગરમલજી લુકંક ડેરવાળા તરફથી	૨૫૧
---	---	-----

પાલનપુર

- | | | |
|---|---|-----|
| ૧ | બેન લક્ષ્મીબાઈ હા. મહેતા હરિલાલ પિતાંબરદાસ | ૨૫૧ |
| ૨ | શ્રી લોકાગચ્છ સ્થા. જૈન પુસ્તકાલય હા. કેશવલાલ જી. શાહ | ૨૫૧ |

પાણસાણા

- | | | |
|---|--|-----|
| ૧ | શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. શાહ છોટાલાલ પૂંજભાઈ | ૨૫૧ |
|---|--|-----|

પાલેજ

- | | | |
|---|--|-----|
| ૧ | સ્વ. મનસુખલાલ મોહનલાલ સંઘવીના સ્મરણાર્થે
હા. ભાઈ ધીરજલાલ મનસુખલાલ | ૩૦૧ |
|---|--|-----|

પ્રાંતીજ

- | | | |
|---|--|-----|
| ૧ | સ્થા જૈન સંઘ હા. શ્રીચુત અંબાલાલ મહાસુખરામ | ૨૫૦ |
|---|--|-----|

પીપળગાંવ

- | | | |
|---|--|-----|
| ૧ | શેઠ ગુદડમલજી શેષમલજી જ્વેર C/o. શેઠ બાલચંદ મીશ્રીલાલ | ૫૦૧ |
|---|--|-----|

પૂના

- | | | |
|---|-------------------------------|-----|
| ૧ | શેઠ ઉત્તમચંદજી કેવળચંદજી ધોડા | ૨૫૧ |
|---|-------------------------------|-----|

ફાલના

- | | | |
|---|------------------------------------|-----|
| ૧ | મહેતા પુખરાજજી હસ્તીમલજી સાદડીવાળા | ૩૦૧ |
| ૨ | મહેતા કુંદનમલજી અમરચંદજી સાદડીવાળા | ૨૫૧ |

બગસરા

- | | | |
|---|--|-----|
| ૧ | શેઠ પોપટલાલ રાઘવજી રાઈડીવાળા
હા નાનચંદ પ્રેમચંદ શાહ | ૨૫૧ |
|---|--|-----|

બરવાળા-ઘેલાશા

- ૧ સ્વ. મોહનલાલ નરસિંહદાસના સ્મરણાર્થે
હા. તેમનાં ધર્મપત્નિ સુરજબેન મોરારજી ૨૫૧

બદનાવર

- ૧ શ્રી વર્ધમાન સ્થા. જૈન શ્રાવક સંઘ હા. મિશ્રીલાલ જૈન વકીલ ૨૫૧

બાલોતરા

- ૧ શાહ જેઠમલજી હસ્તીમલજી ભગવાનદાસજી ભણસારી ૨૫૧

બીદડા

- ૧ શાહ કાનજી શામજીભાઈ ૨૫૧

બિકાનેર

- ૧ શેઠ ભેરદાનજી શેઠીયા ૨૫૪

બેરાબ

- ૧ શેઠ ગાંગજી કેશવજી. જ્ઞાનભંડાર માટે ૨૫૧

બેલારી

- ૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. શેઠ હનરીમલજી હસ્તીમલજી રાંકા ૨૫૧

બેરમો

- ૧ શ્રી બેરમો સ્થા જૈન સંઘ હા. મહેતા નવલચંદ હાકેમચંદ ૨૫૧

બેંગલોર

- ૧ બાટવીયા વનેચંદ અમીચંદ, મહાવીર ટેક્સટાઇલ સ્ટોર તરફથી
ભાઈ ચન્દ્રકાન્તના લગ્નની ખુશાલીમાં ૨૫૨

- ૨ શેઠ કિશનલાલજી કુલચંદજી સાહેબ ૨૫૧

બોટાદ

- ૧ સ્વ. વસાણી હરગોવિંદદાસ છગનલાલના સ્મરણાર્થે
હા. તેમનાં ધર્મપત્નિ છબલબેન ૨૫૧

બોડેલી

- ૧ શાહ પ્રવીણચંદ્ર નરસિંહદાસ સાણુંદવાળા ૨૫૧
૨ શાહ ગીરધરલાલ સાકરચંદ ૨૫૧

બોરા

- ૧ સ્વરૂપચન્દલ જવાહરમલલ બોરડીયા, મનોબાઈ સુગનલાલના
સ્મરણાર્થે (ચાંદમુનિના ઉપદેશથી) ૨૫૧
૨ બેન રાધીબાઈ (પૂ. આચાર્ય ધર્મદાસલ મહારાજના સપ્રદાયના
મંત્રિ ક્રીશનલાલ મહારાજના સુશિષ્ય શોભાગમલલ
મહારાજના શિષ્ય સ્વ. કેવળચંદલ મહારાજના સ્મરણાર્થે)
(ચાંદમુનિના ઉપદેશથી) ૨૫૧

ભાણુવડ

- ૧ શેઠ જ્યેંદભાઈ માણેકચંદભાઈ ૩૫૨
૨ સંઘવી માણેકચંદ માધવલ ૨૫૧
૩ શેઠ લાલલ માણેકચંદ લાલપુરવાળા ૨૫૧
૪ શેઠ રામલ જીણાભાઈ ૨૫૧
૫ શેઠ પદમશી લીમલ ફેફરીયા ૨૫૧
૬ ફેફરીયા ગાડાલાલ કાનલભાઈ હા. અ સૌ. શાંતાબેન વસનલ ૨૫૧
૭ સ્વ. મહેતા પૂનમચંદ ભવાનના સ્મરણાર્થે હા. તેમનાં
ધર્મપત્નિ દિવાળીબેન લીલાધર (ચુંદાવાળા) ૨૫૧

ભાવનગર

- ૧ સ્વ -કુંવરલ બાવાભાઈના સ્મરણાર્થે હા. શાહ લહેરચંદ કુંવરલ ૩૦૧
૨ કોઠારી ઉદયલાલલ સાહેબ ૨૫૧

૨૬

લીલકર્તા

- ૧ શ્રી શાંતિ જૈન પુસ્તકાલય હા. ગ્રાંદમલજી આર્નેમલજી સંઘવી ૨૫૧
૨ શેઠ ભીમરાજજી મીશ્રીલાલજી ૩૦૧

લીમ

- ૧ ગ્રંથકલાલજી જૈન પુસ્તકાલય હા. શેઠ ઊગામલજી માંગીલાલજી ૨૫૧

ભુસાવલ

- ૧ શેઠ રાજમલજી નંદલાલજી ચેરીટેગલટ્રસ્ટ ૨૫૧

ભોજાય

- ૧ જ્ઞાન મદિરના સેક્રેટરી શાહ કુવરજી જીવરાજ ૨૫૧

મદ્રાસ

- ૧ શેઠ મેઘરાજજી દેવીચંદજી મહેતા ૨૫૧
૨ મહેતા મણીલાલ ભાઈચંદ ૨૫૧
૩ મહેતા સુરજમલ ભાઈચંદ ૨૫૧
૪ બાપાલાલ ભાઈચંદ મહેતા ૨૫૧

મનોર

- ૧ શાહ શેરમલજી દેવીચંદજી જરાવતગઢવાળા હા.
પૂનમચંદજી શેરમલજી જોડયા ૨૫૧

માનકુવા

- ૧ સ્વ. મહેતા કુવરજી નાથાલાલના સ્મરણાર્થે હા. તેમનાં ધર્મપત્નિ
કુવરબાઈ હરખચંદ (માનકુવા) સ્થા જૈન સંઘ માટે ૨૫૧

માંડવી

- ૧ શ્રી સ્થા. છકોટી જૈન સંઘ હા મહેતા ચુનીલાલ વેદજી ૨૭૭

માંડવા

- ૧ શ્રી માંડવા સ્થા. જૈન સંઘ
હા. અ. સૌ. કચ્ચનગૌરી રતીલાલ ગોસલીયા (ગઢડાવાળા) ૨૫૧

માલેગાંવ

- ૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. ક્ષેત્રલાલ, માહુ જૈન ૨૫૬

મુખર્ષ તથા પરંચો

- ૧ સ્વ. પિતાશ્રી કુંદનમલજી મોતીલાલજી મુઠાના સ્મરણાર્થે
હા. શેઠ મોતીલાલજી જીવરમલજી (અહમદનગરવાળા) ૨૫૧
- ૨ શ્રી વર્ધમાન સ્થા. જૈન સંઘ હા. કામદાર રૂપચંદ શીવલાલ (અંધેરી) ૨૫૧
- ૩ અ. સૌ. કમળાબેન કામદાર હા. કામદાર રૂપચંદ શીવલાલ (અંધેરી) ૨૫૧
- ૪ સ્વ. માતૃશ્રી કડવીબાઈના સ્મરણાર્થે હા. તેમનાં પૌત્ર
હુકમીચંદ તારાચંદ દોશી (અંધેરી) ૨૫૧
- ૫ શાહ હરજીવન કેશવજી ૨૫૧
- ૬ શાહ રમણીકલાલ કાળીદાસ તથા અ. સૌ. કાન્તાબેન રમણીકલાલ ૨૫૧
- ૭ સંઘવી હિમતલાલ હરજીવનદાસ ૨૫૧
- ૮ વેરા પાનાચંદ સંઘજીના સ્મરણાર્થે
હા. ત્રયકલાલ પાનાચંદ એન્ડ બ્રધર્સ ૨૫૧
- ૯ શાહ રામજી કરશનજી થાનગઢવાળા ૨૫૧
- ૧૦ સ્વ જટાશંકર દેવજીભાઈ દોશીના સ્મરણાર્થે
હા. રણુછોડદાસ (બાબુલાલ) જટાશંકર દોશી ૩૦૧
- ૧૧ ઘેલાણી વલભજી નરભેરામ હા. નરસીંહદાસ વલભજી ૨૫૧
- ૧૨ કપાસી મોહનલાલ શીવલાલ ૨૫૧
- ૧૩ શાહ ત્રિલોવનદાસ માનસિંગભાઈ દોઢીવાળાના સ્મરણાર્થે
હા. શાહ હરખચંદ ત્રિલોવનદાસ ૨૫૧
- ૧૪ ખેતાણી મણીલાલ કેશવજી (વડીયાવાળા) ઘાટકોપર ૨૫૧
- ૧૫ સ્વ. પિતાશ્રી શામજી કલ્યાણજી ગોડલવાળાના સ્મરણાર્થે
હા. વૃજલાલ શામજી બાવીસી ૩૦૧
- ૧૬ શાહ મનહરલાલ પ્રાણજીવનદાસ ૨૫૧

૧૭	સ્વ. આશારામ ગીરધરલાલના સ્મરણાર્થે હા. શાંતિલાલ આશારામવતી જશવંતલાલ શાંતિલાલ	૨૫૧
૧૮	ગાંધી કાંતીલાલ માણેકચંદ	૨૫૧
૧૯	શાહ રવજીભાઈ તથા ભાઈલાલભાઈની કું. (કાંદીવલી)	૨૫૧
૨૦	અ સૌ લાહુખેન હા રવજીભાઈ શામજી	૨૫૧
૨૧	સ્વ. માતુશ્રી માણેકબાઈના સ્મરણાર્થે હા. શેઠ વલભદાસ નાનજી	૩૦૧
૨૨	એક મદ્દગૃહસ્થ હા. શેઠ સુંદરલાલ માણેકલાલ	૨૫૧
૨૩	શેઠ ખુશાલભાઈ ખેંગારભાઈ	૨૫૦
૨૪	શેઠ ચુનીલાલ નરભેરામ વેકરીવાળા	૨૫૧
૨૫	સ્વ. માતુશ્રી ગોમતીબાઈના સ્મરણાર્થે હા. શાહ પોપટલાલ પાનાચંદ	૨૫૧
૨૬	કોટેચા જયતીલાલ રણછોડદાસ સૌભાગ્યચંદ જુનાગઢવાળા	૨૫૧
૨૭	વેરા ઠાકરશી જશરાજ	૨૫૧
૨૮	કેઠારી સુખલાલજી પુનમચંદજી (ખારરોડ)	૨૫૧
૨૯	અ. સૌ. ખેન કુંદનગૌરી મનહરલાલ સંઘવી	૨૫૧
૩૦	કેઠારી રમણીકલાલ કસ્તુરચંદભાઈ	૨૫૧
૩૧	દેશાઈ અમૃતલાલ વર્ધમાનના સ્મરણાર્થે હા. દલીચંદ અમૃતલાલ દેશાઈ	૨૫૧
૩૨	સ્વ. ત્રીલોવનદાસ વ્રજપાળ વીંછીયાવાળાના સ્મરણાર્થે હા. હરગોવિંદદાસ ત્રિલોવનદાસ અજમેરા	૨૫૧
૩૩	તેજાણી કુખેરદાસ પાનાચંદ	૨૫૧
૩૪	શેઠ સરદારમલજી દેવીચંદજી કાવેડીયા (સાદડીવાળા)	૨૫૧
૩૫	શેઠ નેમચંદ સ્વરૂપચંદ ખભાતવાળા હા. ભાઈ જેઠાલાલ નેમચંદ	૨૫૧
૩૬	શાહ કેરશીભાઈ હીરજીભાઈ	૩૦૧
૩૭	શ્રીમતી મણીબાઈ વ્રજલાલ પારેખ ચેરીટેબલ ટ્રસ્ટ ફંડ હા. વૃજલાલ હર્લભજી	૨૫૧
૩૮	દડિયા અમૃતલાલ મોતીચંદ (ઘાટકોપર)	૨૫૧
૩૯	દોશી ચત્રભુજ સુંદરજી	૨૫૧
૪૦	દોશી જુગલકિશોર ચત્રભુજ	૨૫૧
૪૧	દોશી પ્રવિણચંદ ચત્રભુજ	૨૫૧
૪૨	શેઠ મનુભાઈ માણેકચંદ હા. ઝાટકીયા નરભેરામ મોરારજી	૨૫૧
૪૩	શાહ કાંતીલાલ મગનલાલ	૨૫૧

૪૪	શેઠ મણીલાલ ગુલાબચંદ	ઘાટકોપર	૨૫૧
૪૫	શેઠ શેઠ છગનલાલ નાનજીભાઈ		૨૫૧
૪૬	શાહ શીવજી માણેકભાઈ		૨૫૧
૪૭	મેસર્સ સવાણી ટ્રાન્સપોર્ટ કું. હા. શેઠ માણેકલાલ વાડીલાલ		૨૫૧
૪૮	શાહ નગીનદાસ કલ્યાણજી (વેરાવળવાળા)		૨૫૧
૪૯	મહેતા રતિલાલ ભાઈચંદ		૨૫૧
૫૦	શાહ પ્રેમજી હીરજી ગાલા		૨૫૧
૫૧	બેન કેશરબાઈ ચંદુલાલ જેસીંગભાઈ શાહ		૨૫૧
૫૨	પારેખ ચીમનલાલ લાલચંદ સાયલાવાળાનાં ધર્મપત્નિ અ. સૌ. ચંચળબાઈના સ્મરણાર્થે હા. સારાભાઈ ચીમનલાલ		૨૫૧
૫૩	ધી મરીના મોડર્ન હાઈસ્કૂલ ટ્રસ્ટ ફંડ હા. શાહ મણીલાલ ઠાકરશી		૨૫૧
૫૪	મહેતા મોટર સ્ટોર્સ હા. અનોપચંદ ડી. મહેતા		૨૫૧
૫૫	શેઠ રસીકલાલ પ્રભાશંકર મોરખીવાળા તરફથી તેમનાં માતૃશ્રી મણીબેનના સ્મરણાર્થે		૩૦૧
૫૬	શ્રીચુત જશવંતલાલ ચુનીલાલ વેરા		૨૫૦
૫૭	શાહ કુંવરજી હંસરાજ		૨૫૧
૫૮	દ્વીયા જેસીંગલાલ ત્રીકમજી		૨૫૧
૫૯	મોદી અલેચંદ સુરચંદ રાજકોટવાળા હા. ડોસાલાલ અલેચંદ		૨૫૧
૬૦	શાહ જેઠાલાલ ડામરશી ધ્રાગધ્રાવાળા હા. શાહ વાડીલાલ જેઠાલાલ		૨૫૦
૬૧	સ્વ. પિતાશ્રી ભગવાનજી હીરાચંદ જસાણીના સ્મરણાર્થે હા. લક્ષ્મીચંદભાઈ તથા કેશવલાલભાઈ		૩૦૧
૬૨	સ્વ. પિતાશ્રી શાહ અંબાલાલ પુરૂષોત્તમદાસના સ્મરણાર્થે હા. શાહ બાપલાલ અંબાલાલ		૨૫૧
૬૩	સ્વ. કસ્તુરચંદ અમરશીના સ્મરણાર્થે હા. તેમનાં ધર્મપત્નિ ઝવેરબેન મગનલાલ વતી જયંતિલાલ કસ્તુરચંદ મફકારીયા (ચુડાવાળા)		૨૫૧
૬૪	શેઠ ડુંગરશી હંસરાજ વીસરીયા		૨૫૧
૬૫	શાહ રતનશી મોણશીની કું.		૨૫૧
૬૬	શેઠ શીવલાલ ગુલાબચંદ મેવાવાળા		૨૫૧
૬૭	શાહ ચંદુલાલ કેશવલાલ		૨૫૧
૬૮.	સ્વ. પિતાશ્રી વિરચંદ જેસીંગ શેઠ લખતરવાળાના સ્મરણાર્થે હા. કેશવલાલ વીરચંદ		૨૫૧
૬૯	ચંદુલાલ કાનજી મહેતા		૨૫૧

૭૦	શ્રી વૈદ્યમાન સ્થા નૈન સંઘ		
	હા. કેશરીમલજી અનોપચંદજી શુગલીયા	(મલોડ)	૨૫૧
૭૧	સ્વ. પિતાશ્રી પતુભાઈ મોનાભાઈના સ્મરણાર્થે		
	હા. શાહ કાનજી પતુભાઈ	,,	૨૫૧
૭૨	અ. સૌ. પાનળાઈ હા. શેઠ પદમશી નરસિંહલાઈ	,,	૨૫૧
૭૩	સ્વ. નાગશીભાઈ સેજપાલના સ્મરણાર્થે	હા. રામજી નાગશી	,,
૭૪	સ્વ. ગોડા વણારશી ત્રીભોવનદાસ સરસઘવાળાના સ્મરણાર્થે		
	હા. જગજીવન વણારશી ગોડા	,,	૨૫૧
૭૫	સ્વ કાનજી મૂળજીનાં સ્મરણાર્થે તથા માતૃશ્રી દિવાળીબાઈના		
	૧૬ ઉપવાસના પારણા પ્રસંગે હા. જયંતિલાલ કાનજી	,,	૨૫૧
૭૬	શાહ પ્રેમજી માલશી ગંગર	,,	૨૫૧
૭૭	શાહ વેલશી જેશીંગલાઈ છાસરાવાળા તરફથી તેમનાં ધર્મપત્નિ		
	સ્વ નાનબાઈના સ્મરણાર્થે	,,	૩૦૧
૭૮	સ્વ. પિતાશ્રી રાયશી વેલશીના સ્મરણાર્થે હા		
	શાહ દામજી રાયશીભાઈ	,,	૩૦૧
૭૯	સ્વ પિતાશ્રી ભીમજી કેરશી તથા માતૃશ્રી પાલાબાઈના		
	સ્મરણાર્થે હા. શાહ ઉમરશી ભીમશી	,,	૩૦૧
૮૦	શાહ વરન્તંગલાઈ શીવજીભાઈ	,,	૨૫૧
૮૧	શાહ ખીમજી મુળજી પૂન્જ	,,	૨૫૧
૮૨	સ્વ. માતૃશ્રી જકલબાઈના સ્મરણાર્થે હા. દેશાઈ વજલાલ કાળીદાસ	,,	૨૫૧
૮૩	અ. સૌ. સમતાબેન શાંતિલાલ C/o. શાંતિલાલ ઉન્મશી શાહ	,,	૨૫૧
૮૪	સ્વ. કેશવલાલ વછરાજ કોઠારીના સ્મરણાર્થે સૂરજબેન તરફથી		
	હા. તનસુખલાલભાઈ	,,	૨૫૧
૮૫	સ્વ. પિતાશ્રી હંસરાજ હીરાના સ્મરણાર્થે		
	હા. દેવશી હંસરાજ કૃતજી ખીદડાવાળા	,,	૨૫૧
૮૬	વેલાણી પ્રભુલાલ ત્રીકમજી	(ખેરીવલી)	૨૫૨
૮૭	શેઠ ત્રંબકલાલ કસ્તુરચંદલીંમડી અજરામરશાસ્ત્ર ભંડારને ભેટ (માટુંગા)		૨૫૧
૮૮	અ. સૌ. બેન રંજનગૌરી C/o શાહ ચંદુલાલ દક્ષમીચંદ	,,	૨૫૧
૮૯	શાહ નટવરલાલ દીપચંદ તરફથી તેમનાં ધર્મપત્નિ અ. સૌ.		
	સુશીલાબેનના વર્ષીતપની ખુશાલીમાં	,,	૨૫૧
૯૦	દોશી ભીખાલાલ વૃજલાલ પાળીયાદવાળા	,,	૨૫૧
૯૧	શાહ ગોપાળજી માનસંગ	,,	૨૫૧

૯૨	દોશી કુલચંદ માણેકચંદ	”	૨૫૦
૯૩	શેઠ અપકલાલ ચુનીલાલ દાદલાવાળા	”	૨૫૧
૯૪	શ્રી વર્ધમાન સ્થા. જૈન શ્રાવક સંઘ ડા. સંઘવી ચીમનલાલ અમરચંદ.	(દાદર)	૨૫૧
૯૫	શાંતિલાલ ડુંગરશી અદાણી	”	૨૫૧
૯૬	શાહ કરશન લઘુભાઈ	”	૩૦૧
૯૭	કીશનલાલ સી. મહેતા	શીવ	૨૫૧
૯૮	માતુશ્રી જીતીબાઈના સ્મરણાર્થે ડા. શામજી શીવજી કચ્છ ગુંદાળાવાળા	ગોરેગાંવ	૨૫૧
૯૯	સ્વ. શાહ રાયશી કચરાભાઈના સ્મરણાર્થે તેમના ધર્મપત્નિ નેણુબાઈ વતી ડા. જેઠાલાલ રાયશી	”	૨૫૧
૧૦૦	શુશીલાબેનન શકરાભાઈ C/o. નવીનચંદ્ર વસંતલાલ શાહ વિલેપાલે		૨૫૧
૧૦૧	બેન ચંદનબેન અમૃતલાલ વારિયા		૨૫૧
૧૦૨	સ્વ. કાળીદાસ જેઠાલાલ શાહના સ્મરણાર્થે ડા. સુમનલાલ કાળીદાસ (કાનપુરવાળા)		૩૦૧
૧૦૩	શાહ ત્રીભોવન ગોપાલજી તથા અ. સૌ. બેન કંસુબા ત્રીભોવન (થાનગઢવાળા)	શીવ	૨૫૧

સુળી

૧	શેઠ ઉજ્જમશી વીરપાળ ડા. શેઠ કેશવલાલ ઉજ્જમશી	૩૦૧
---	--	-----

મોરબી

૧	દોશી માણેકચંદ સુંદરજી	૩૫૧
---	-----------------------	-----

મોરબાસા

૧	શ્રીચુત નાથાલાલ ડી. મહેતા	૨૫૧
૨	શાહ દેવરાજ પેથરાજ	૨૫૦

યાદગીરી

૧	શેઠ બાદરમલજી સુરજમલજી બેંકર્સ	૨૫૦
---	-------------------------------	-----

રતલામ

૧	અનેક ભકતજનો તરફથી ડા. શ્રીમાને કેશરીમલેણ (શ્રી કેવળચંદ મુનિશ્રીના ઉપદેશથી)	૨૫૧
---	--	-----

રાણપુર

૧	શ્રીમતિ માતુશ્રી સમરતબાઈના સ્મરણાર્થે ડા. ડૉ. નરોતમદાસ ચુનીલાલ કાપડીયા	૨૫૧
૨	સ્વ. પિતાશ્રી લહેરાભાઈ ખીમજીના સ્મરણાર્થે ડા. શેઠ કાલીદાસ લહેરાભાઈ વશાણી	૩૦૧

રાણાવાસ

૧	શેઠ જ્વાનમલજી નેમીચંદજી ડા. બાબુ રીખબચંદજી	૩૦૧
---	--	-----

રાયચુર

૧	સ્વ. માતુશ્રી મેઘીબાઈના સ્મરણાર્થે ડા. શાહ શીવલાલ ગુલાબચંદ વઠવાણવાળા	૨૫૧
૨	શેઠ કાગુરામજી ચાંદમલજી સચેતી મુથા	૨૫૧

રાજકોટ

૧	વાડીલાલ ડાઈગ એન્ડ પ્રિન્ટીંગ વર્કસ	૪૦૦
૨	શેઠ રતીલાલ ન્યાલચંદ ચીતલીયા	૨૫૧
૩	બાબુ પરશુરામ છગનલાલ શેઠ ઉદેપુરવાળા	૨૫૦
૪	શેઠ મનુભાઈ મુળચંદ (એન્જનીઅર સાહેબ)	૨૫૧
૫	શેઠ શાંતિલાલ પ્રેમચંદ તેમના ધર્મપત્નિના વર્ષીતપ પ્રસંગે	૨૫૧
૬	શેઠ પ્રજારામ વીઠ્ઠલજી	૨૫૧
૬	ઉદાણી ન્યાલચંદ હાકેમચંદ વકીલ	૨૫૧
૮	બેન સચુબાળા નૌતમલાલ જસાણી (વર્ષીતપની ખુશાલી)	૨૫૧
૯	મોતી સૌભાગ્યચંદ મોતીચંદ	૨૫૧
૧૦	બદાણી ભીમજી વેલજી તરફથી તેમનાં ધર્મપત્નિ અ. સૌ. સમરતબેનના વર્ષીતપ નિમિત્તે	૨૫૧

૧૧	દોશી મોતીચંદ ધારશીભાઈ (રીટાયડે, ચૈકઝીકચુટીવ એન્જનીયર)	૨૫૧
૧૨	કામદાર ચંદુલાલ જીવરાજ (ધાગધાવાળા)	૨૫૦
૧૩	હેમાણી ઘેલાભાઈ સવચંદ	૨૫૧
૧૪	દક્ષતરી પ્રભુલાલ ન્યાલચંદ	૨૫૧
૧૫	સ્વ. મહેતા દેવચંદ પુરૂષોત્તમના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્નિ હેમકુંવરબાઈ તરફથી હા. જયંતિલાલ દેવચંદ મહેતા.	૨૫૧
૧૬	પારેખ શીવલાલ ઝૂઝાભાઈ મોમ્બાસાવાળા હા. એ. સૌ. કંચનબેન	૨૫૨

રાપર

૧	પૂજ્ય વાલજીભાઈ ન્યાલચંદભાઈ	૨૫૧
---	----------------------------	-----

લાખતર

૧	શાહ રાયચંદ ઠાકરશીના સ્મરણાર્થે હા. શાંતિલાલ રાયચંદ શાહ	૨૫૧
૨	ભાવસાર હરજીવનદાસ પ્રભુદાસના સ્મરણાર્થે હા. ત્રીભોવનદાસ હરજીવનદાસ	૨૫૧
૩	શાહ તલકશી હીરાચંદના સ્મરણાર્થે હા. ભાઈ અમૃતલાલ તલકશી	૨૫૧
૪	શાહ ચુનીલાલ માણેકચંદ	૨૫૧
૫	શાહ બદવજી ઓઘડભાઈના સ્મરણાર્થે હા. શાંતિલાલ બદવજી	૨૫૧
૬	દોશી ઠાકરશી ગુલાબચંદના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્નિ સમસ્તખંડેન તરફથી હા. જયંતીલાલ ઠાકરશી	૨૫૧

લાલપુર

૧	શેઠ નેમચંદ સવજી મોદી હા. ભાઈ મગનલાલ	૨૫૧
૨	શેઠ મુલચંદ પોપટલાલ હા. મણીલાલભાઈ તથા જેશીંગલાલભાઈ	૨૫૧

લાખેરી

૧	માસ્તર જેઠાલાલ મોનજીભાઈ હા. મહેતા અમૃતલાલ જેઠાલાલ (સીવીલ એન્જનીયર સાહેબ)	૨૫૧
---	---	-----

લાકડીયા

૧	શ્રી લાકડીયા સ્થા. જૈન સંઘ હા. શાહ રતનશી કરમણુ	૨૫૧
---	--	-----

હાંમડી (સોરાષ્ટ્ર)

૧ શાહ ચક્રભાઈ ગુલાબચંદ ૨૫૧

હાંમડી (પંચમહાલ)

૧ શાહ કુંવરજી ગુલાબચંદ ૨૫૧

૨ છાજેડ ઘાસીરામ ગુલાબચંદ ૨૫૧

૩ શેઠ વીરચંદ પન્નાલાલજી કર્ણાવટ ૨૫૧

લોનાવલા

૧ શેઠ ધનરાજજી મુલચંદજી મુથા ૨૫૧

લુધિયાના

૧ બાબુ રાજેન્દ્રકુમાર જૈન દિલ્હીવાળા ૨૫૧

વઢવાણુ શહેર

૧ શેઠ દિલીપકુમાર સવાઈલાલ C/o. શાહ સવાઈલાલ ત્રમ્બકલાલ ૨૫૧

૨ કામદાર મગનલાલ ગોક્ળદાસ હા. રતીલાલ મગનલાલ ૨૫૧

૩ સંઘવી મુળચંદ ખેચરભાઈ હા. જીવણલાલ ગફલદાસ ૨૫૧

૪ શેઠ કાંતીલાલ નાગરદાસ ૨૫૧

૫ વોરા ચત્રભુજ મગનલાલ ૨૫૧

૬ સંઘવી શીવલાલ હીમજીભાઈ ૨૫૧

૭ શાહ દેવશીભાઈ દેવકરજી ૨૫૧

૮ વોરા ડોસાભાઈ લાલચંદ સ્થા જૈન સઘ

હા. વોરા નાનચંદ શીવલાલ ૨૫૧

૯ વોરા ધનજીભાઈ લાલચંદ સ્થા. જૈન સંઘ

હા. વોરા પાનાચંદ ગોખરદાસ ૨૫૧

૧૦ દોશી વીરચંદ સુરચંદ હા. દોશી નાનચંદ ઉજમશી ૨૫૧

૧૧ સ્વ વોરા મણીલાલ મગનલાલ તથા વોરા ચત્રભુજ મણીલાલ ૨૫૧

૧૨ શાહ વાડીલાલ દેવજીભાઈ ૨૫૧

૧૩ કામદાર ગોરધનદાસ મગનલાલના ધર્મપત્ની

અ. સૌ. કમળાબેન રગુનવાળા ૨૫૧

૧૪ શેઠ વૃજલાલ સુખલાલ ૨૫૧

વડોદરા

૧ કામદાર કેશવલાલ હિંમતરામ પ્રોફેસર ૨૫૧

૨ વકીલ મણીલાલ કેશવલાલ શાહ ૨૫૧

૩ સ્વ. પિતાશ્રી ફકીરચંદ પુંજલાલનાં સ્મરણાર્થે ૨૫૧

હા. શાહ રમણલાલ ફકીરચંદ ૨૫૧

વડીયા

શેઠ ભવાનભાઈ કાળાભાઈ પંચમીયા ૨૫૧

વલસાડ

૧ શાહ ખીમચંદ સુળભાઈ ૨૫૧

વાણી

૧ મહેતા નાનાલાલ છગનલાલનાં ધર્મપત્નિ સ્વ. ચંચળબેન તથા
પુરીબેનના સ્મરણાર્થે હા. મનહરલાલ નાનાલાલ મહેતા ૨૫૧

વટામણ

૧. શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. પટેલ ડાહ્યાભાઈ હલુભાઈ ૨૫૧

વડગાંવ

૧ શેઠ માણેકચંદ્ર રાજમલજી બાક્ષુ ૨૫૧

વાંકાનેર

૧ ખંઢેરીયા કાંતીલાલ ત્રંબકલાલ ૨૫૧

૨ દક્તરી ચુનીલાલ પોપટભાઈ મોરખીવાળા
હા. પ્રાણુલાલ ચુનીલાલ દક્તરી ૨૫૧

વીંછીયા

૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ. હા. અજમેરા રામચંદ. વ્રજપાળ ૨૫૧

વિરમગામ

૧	માસ્તર વીઠલભાઈ મોદી	૨૫૧
૨	શાહ નાગરદાસ માણેકચંદ	૨૫૧
૩	શાહ મણીલાલ જીવણલાલ શાહપુરવાળા	૨૫૧
૪	શાહ અમુલખ નાગરદાસનાં ધર્મપત્નિ ય. સૌ. બેન લીલાવતીના વર્ષીતપ નિમિતે હા. શાહ કાંતિલાલ નાગરદાસ	૩૦૦
૫	સ્વ. શેઠ ઉજમશી નાનચંદના સ્મરણાર્થે હા. શાહ ચુનીલાલ નાનચંદ	૨૫૧
૬	સ્વ. શેઠ મણીલાલ લક્ષ્મીચંદ બારાઘોડાવાળાના સ્મરણાર્થે તેમના પુત્રો તરફથી હા. ખીમચંદભાઈ	૨૫૧
૭	સ્વ. શેઠ હરિલાલ પ્રભુદાસના સ્મરણાર્થે હા. અનુભાઈ	૨૫૧
૮	સંઘવી જેચંદભાઈ નારણદાસ	૨૫૧
૯	સ્વ. શાહ વેલશીભાઈ સાકરચંદ કત્રાસગઢવાળાના સ્મરણાર્થે હા. ભાઈ ચીમનલાલભાઈ	૨૫૧
૧૦	પારેખ મણીલાલ ટોકરશી લાતીવાળા (મોટી બેનના સ્મરણાર્થે)	૨૫૧
૧૧	શાહ નારણદાસ નાનજીભાઈના પુત્ર વાડીલાલભાઈના ધર્મપત્નિ અ. સૌ. નારંગીબેનના વર્ષીતપ નિમિતે હા. શાંતિલાલ નારણદાસ	૨૫૧
૧૨	સ્વ. છખીલદાસ ગોકળદાસના સ્મરણાર્થે તેમના ધર્મપત્નિ કમળાબેન તરફથી હા. મળુલાકુમારી	૨૫૧
૧૩	શ્રી સ્થા. જૈન શ્રાવીકા સંઘ હા. રલાબેન વાડીલાલ	૨૫૧
૧૪	સ્વ. ત્રિભોવનદાસ દેવચંદ તથા સ્વ. ચંચળબેનના સ્મરણાર્થે હા. ડો. હિંમતલાલ સુખલાલ	૨૫૧
૧૫	શાહ મુળચંદ કાનજીભાઈ હા. શાહ નાગરદાસ ઓઘડભાઈ	૨૫૧
૧૬	શેઠ મોહનલાલ પિનામ્બરદાસ હા. ભાઈ દેશવલાલ તથા મનસુખલાલ	૨૫૧
૧૭	શ્રીમતી હીરાબેન નથુભાઈના વર્ષીતપ નિમિતે હા. નથુભાઈ નાનચંદ શાહ	૩૦૧
૧૮	શેઠ મણીલાલ શીવલાલ	૨૫૧
૧૯	સ્વ. મણીચાર પરસોતમદાસ સુદરજીના સ્મરણાર્થે હા. સાકરચંદ પરસોતમદાસ શાહ	૨૫૧
વેશવળ		
૧	શાહ દેશવલાલ જેચંદભાઈ	૨૫૧

૨	શાહ ખીમચંદ શોભાગ્યચંદ	૨૫૧
૩	સ્વ. શેઠ મદનજી જ્વેચંદલાઈના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્નિ લાડકુંવરબાઈ તરફથી હા. ધીરજલાલ મદનજી	૨૫૧
૪	શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. શાહ શોભેચંદ કરશનજી	૨૫૧
૫	શાહ હરકિશનદાસ કુલચંદ કાનપુરવાળા	૨૫૧

સતારા

૧	સ્વ. કોઠારી મદનલાલજી કુંદનમલના સ્મરણાર્થે હા. તેમનાં ધર્મપત્નિ રાજકુંવરબાઈ	૨૫૧
---	---	-----

સરા

૧	શ્રી સરા સ્થા. જૈન સંઘ હા. દોશી પાનાચંદ સોમચંદ	૨૫૧
---	--	-----

સાણુંદ

૧	શાહ હીરાચંદ છગનલાલ હા શાહ ચીમનલાલ હીરાચંદ	૩૦૧
૨	અ. સૌ. ચંપાબેન હા. દોશી જીવરાજ લાલચંદ	૨૫૧
૩	પટેલ મહાસુખલાલ ડોશાબાઈ	૨૫૧
૪	શાહ સાકરચંદ કાનજીબાઈ	૨૫૧
૫	પુરીબેન ચીમનલાલ કલ્યાણજી સઘવી લીંમડીવાળાના સ્મરણાર્થે હા. વાડીલાલ મોહનલાલ કોઠારી	૨૫૧
૬	પારેખ નેમચંદ મોતીચંદ મુળીવાળાના સ્મરણાર્થે હા. પારેખ ભીખાલાલ નેમચંદ	૨૫૧
૭	સંઘવી નારણદાસ ધરમશીના સ્મરણાર્થે હા. જયંતીલાલ નારણદાસ	૨૫૧
૮	શાહ કસ્તુરચંદ હરજીવનદાસ સાણુંદવાળા હા. ડો. માણેકલાલ કસ્તુરચંદ શાહ	૨૭૧
૯	શેઠ મોહનલાલ માણેકચંદ ગાધી ચુડાવાળા તરફથી તેમનાં ધર્મપત્નિ મરઘાબેન લલ્લુભાઈના સ્મરણાર્થે	૩૦૧

સાલખની

૧	દોશી ચુનીલાલ 'કુલચંદ	૨૫૦
---	----------------------	-----

સાદડી

૧ શેઠ દેવરાજભાઈ જીતમણીભાઈ પુનમીયા ૨૫૧

સામવંડ

૧ ચંદનમલભાઈ મુથાના ધર્મપત્નિ અ. સૌ. રંગુભાઈ મુથા તરફથી
હા. અમરચંદભાઈ મુથા ૨૫૧

સુરત

૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. શાહ રતિલાલ લલ્લુભાઈ ૨૫૧
૨ શ્રીચુત કલ્યાણચંદ માણેકચંદ હડાલાવાળા ૨૫૧
૩ શ્રી હરીપુરા છકેટી સ્થા. જૈન સંઘ હા. ખાખુલાલ છોટાલાલ શાહ ૨૫૧

મુરેન્દ્રનગર

૧ શેઠ ચાંપશીભાઈ સુખલાલ ૨૫૧
૨ ભાવસાર ચુનીલાલ પ્રેમચંદ ૨૫૧
૩ સ્વ. કેશવલાલ મુળભાઈનાં ધર્મપત્નિ અમરતખાઈના સ્મરણાર્થે
હા. ભાઈલાલ કેશવલાલ શાહ ૨૫૧
૪ શાહ ન્યાલચંદ હરખચંદ ૨૫૧
૫ શાહ વાડીલાલ હરખચંદ ૨૫૧

સુવઈ

૧ સાવળા સામભાઈ હીરભાઈ તરફથી સદાનંદી જૈન મુનિશ્રી છોટાલાલભાઈ
મહારાજના ઉપદેશથી સુવઈ સ્થા. જૈન સંઘ જ્ઞાનભંડારને ભેટ ૨૫૧

સજેલી

૧ શાહ હુણાભાઈ ગુલામચંદભાઈ ૨૫૧
૨ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. શાહ પ્રેમચંદ દલીચંદ ૨૫૧

હારીજ

૧ શાહ અમુલખ મુળભાઈ હા. પ્રકાશચંદ્ર અમુલખભાઈ ૩૦૧
૨ સ્વ. ખેન ચંદ્રકાંતાના સ્મરણાર્થે હા. શાહ અમુલખ મુળભાઈ ૩૦૧

હાટીના માળીયા

૧ શેઠ ગોપાલભાઈ મીઠાભાઈ ૨૫૦
૨ શ્રીમતી આનંદગૌરી ભગવાનદાસના સ્મરણાર્થે
હા. તેમનાં નાનાખેન અ. સૌ. ગંબુલાખેન ભગવાનદાસ ગાંધી ૨૫૧

તા. ૧૫-૫-૬૦ સુધીના મેમ્બરોની સંખ્યા

- ૧૧ આદ્ય મુરખીશ્રી
 ૨૦ મુરખીશ્રી
 ૬૩ સહાયક મેમ્બરો
 ૫૪૯ લાઇફ મેમ્બર
 ૬૪ બીજા ક્લાસના જુના મેમ્બરો

૭૦૭

સાકરચંદ લાઇચંદ શેઠ
 મંત્રી,

રાજકોટ-તા ૧૬-૫-૬૦.

*

તા. ૧૬-૫-૬૦થી તા. ૩૧-૫-૬૦ સુધીનાં નીચે મુજબ
નવા મેમ્બરો નોંધાયા છે.

- | | | |
|---------|------------------------------------|--------------|
| રૂ. ૫૦૦ | કેઠારી પોપટલાલ ચત્રભુજભાઈ. | સુરેન્દ્રનગર |
| રૂ. ૩૫૧ | સરસ્વતી પુસ્તક ભંડાર. | અમદાવાદ |
| રૂ. ૩૫૧ | શેઠ ભુરાલાલ કાળીદાસ. | અમદાવાદ |
| રૂ. ૩૫૧ | શેઠ મીયાચંદજી જુહારમલજી કટારીયા. | રાવટી |
| રૂ. ૩૦૧ | શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ. | સુરેન્દ્રનગર |
| રૂ. ૨૫૧ | ડો. ધનજીભાઈ પુરુષોત્તમદાસ | અમદાવાદ |
| રૂ. ૨૫૧ | શાહ કાતીલાલ હીરાચંદ. | સાંભુદ |
| રૂ. ૨૫૧ | શેઠ ગેરીલાલજી સુગનલાલજી ઉદેપુરવાળા | અમદાવાદ |

*

મેમ્બર ફી.

- ઓછામાં ઓછા રૂ. ૫૦૦૦ આપી આદ્ય મુરખીપદ આપ દિપાવી શકો છો.
 ઓછામાં ઓછા રૂ. ૩૦૦૦ આપી એક શાસ્ત્ર આપના નામથી છપાવી શકો છો
 ઓછામાં ઓછા રૂ. ૧૦૦૦ આપી મુરખીપદ મેળવી શકો છો.
 ઓછામાં ઓછા રૂ. ૫૦૦ આપી સહાયક મેમ્બર બની શકો છો.
 અને ઓછામાં ઓછા રૂ. ૩૫૧ આપી લાઇફ મેમ્બર તરીકે દરેક ભાઈ-બેન
 દાખલ થઈ શકે છે.

ઉપરના દરેક મેમ્બરોને ૩૨ સૂત્રો તથા તેના તમામ ભાગો મળી લગભગ
 ૭૦ અથો જેની કિંમત લગભગ ૮૦૦ ઉપર થાય છે તે ભેટ તરીકે મળી શકે
 છે. અને દરેક શાસ્ત્રમાં તેમનું નામ પ્રસિદ્ધ કરવામાં આવે છે.



તા. ૧-૬-૬૦ સુધીમાં પ્રસિદ્ધ થયેલાં સૂત્રો

શાસ્ત્રોનો નં.	શાસ્ત્રનું નામ	કિંમત
૧	ઉપાસકદશાંગ (બીજી આવૃત્તિ) ખલાસ	૮-૮-૦
૨	દશવૈકલિક ૧ લો ભાગ	૧૦-૦-૦
	દશવૈકલિક ૨ નો ભાગ (છપાય છે)	૭-૮-૦
૩	આગ્રાગ ૧ લો ભાગ	૧૨-૦-૦
	આગ્રારાંગ ૨ નો ,,	૧૦-૦-૦
	આગ્રારાંગ ૩ નો ,,	૧૦-૦-૦
૪	આવશ્યક	૭-૮-૦
૫ થી ૯	નિરયાવલિકા	૧૧-૦-૦
૧૦	નંદી સૂત્ર	૧૨-૦-૦
૧૧	કલ્પ સૂત્ર ૧ લો ભાગ	૨૫-૦-૦
	કલ્પ સૂત્ર ૨ નો ભાગ	૨૦-૦-૦
૧૨	અન્તકૃત	૮-૮-૦
૧૩	વિપાક	૧૫-૦-૦
૧૪	અનુતરોપપાતિક	૭-૮-૦
૧૫	દશાશ્રુત	૧૧-૦-૦
૧૬	ઔપપાતિક	૧૨-૦-૦
૧૭	ઉતરાધ્યયન સૂત્ર ૧ લો ભાગ	૧૫-૦-૦
	” ૨ નો ભાગ	૧૫-૦-૦
	” ૩ નો ભાગ (છપાય છે)	
	” ૪ થો ,, (,,)	
૧૮	ભગવતી સૂત્ર ૧ લો ભાગ (છપાય છે)	



શ્રી અખિલ ભારત શ્રેતામ્બર સ્થાનકવાસી

જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ, રાજકોટ.

પચવર્ષિય યોજના અને તેનો હેતુ

ભવિષ્યના તમારા વારસદારને ખાતર

ફક્ત પાંચ વર્ષ માટે સહાયક બનો.

સ્થાનકવાસી સમાજ માટે ધર્મનાં જે અવલંબન છે પહેલું શ્રમણુવર્ગ અને બીજું આગમ ખત્રીશી. જ્યાં જ્યાં શ્રમણુવર્ગની ગેરહાજરી હોય ત્યાં ત્યાં ધર્મ ટકાવવાનું અત્યારે પણ એકજ સાધન છે અને તે જૈન સિદ્ધાંતો.

પરદેશમાં વસ્તાં તેમજ ગામડામાં રહેતા લાઇઓને તેમજ ખડેનોને વીરવાણીનો લાભ ક્યારે મળી શકે કે જ્યારે તેઓ જે ભાષા બોલતા હોય તે ભાષામાં સૂત્રો લખાયેલ હોય.

લગવાન મહાવીરે ફરમાવેલ વાણીની શુંથણી ગણુધરોએ કરી. તે પ્રાકૃત ભાષામાં રચેલાં શાસ્ત્રો અત્યારની પ્રજા વાંચી ન શકે એટલે લાભ તો ક્યાથી લઇ શકે ?

આ બધી મુશ્કેલીઓના નિવારણ માટે પૂ. આચાર્યશ્રી ધાસીલાલજી મહારાજ મૂળ શાસ્ત્રોનું પ્રાકૃત, સંસ્કૃત, હિન્દી અને ગુજરાતી ભાષાંતર કરી એકજ પેઠજ ઉપર એકજ પુસ્તકમાં સાથે ચારે ભાષામાં વીર પ્રભુના વચનોનો ખળનો હરકોઇ વ્યકિત સહેલાઈથી વાચીને તેનો અમૂલ્ય લાભ ઉઠાવી શકે તેવી રીતે તૈયાર કરી રહ્યા છે.

આ સમિતિ દ્વારા પૂજ્યશ્રીનાં ખનાવેલાં લગભગ અઠાર શાસ્ત્રો પ્રસિદ્ધ થઈ ચુક્યાં છે હાલમાં લગવતી સૂત્ર છપાય છે જેના લગભગ ૧૨ લાખ થશે. અને એક જ શાસ્ત્રનો ખર્ચ લગભગ સવા લાખ રૂ. થશે. ખત્રીશ સૂત્રો અને તેના ભાગો મળીને લગભગ ૭૦ સી-તેર ખુકો પ્રસિદ્ધ થવાની ધારણા છે.

રૂ. ૨૫૧૭ ભરનાર લાઇફ મેમ્બરને આ આખો સેટ જેની કિંમત લગભગ રૂ. ૭૦૦ થી રૂ. ૮૦૦ થાય છે તે સેટ તરીકે આપવામાં આવે છે. પરંતુ આવી રીતે શાજબરોજ તોટો પડતો રહે તે ક્યાં સુધી ચલાવી શકાય ? અત્યાર સુધી

મેમ્બરોની સંખ્યા ૭૧૫ની થયેલ છે. હાલમાં મેમ્બરો થવા માટે વગર પ્રયત્ને નામો આપના વાચ છે. જુલાઈ ૧૯૬૦માં મળનાર કાર્યવાહક કમિટી દ્વારા ૩૧ ૫૦૧૫ મેમ્બર શ્રી કૃષ્ણા માટે વાટાઘાટો ચાલે છે. હાલમાં કામ ચલાવે છે. રાષ્ટ્રીય ગૃહ મેમ્બર શ્રી ૩૧ ૪૫૧૫ રાજવામાં આવી છે.

ગઈ જાન્યુઆરી મહાગે હરણ કરીને પચવર્ષીય યોજના ઘડી કાઢી છે અને તેના હેતુ અન્યારે શાસ્ત્રો ભેટ તરીકે આપવામાં જે જોટ ગમવી પડે છે તે પૂરી કરવામાં છે. ૩૧. ૨૫૫ શ્રી વધુ ગમે તેટલી રકમ પાચ વર્ષ સુધી સમિતિને કોઈપણ વ્યક્તિ (મેમ્બર હોય ન હોય તે) ભેટ આપે તેમ સમિતિએ નીતિ કરી છે. સમિતિના પ્રમુખ શેઠ શાંતિલાલભાઈએ ૩૧. ૧૦૦૦૭ એક હજાર પચાસ વર્ષ સુધી આપવાનું નીતિ કર્યું છે.

અન્યાર સુધીમાં ૩૧ ૪૦૭૮૫ ની રકમ સમિતિને પહેલા વર્ષની ભેટ તરીકે મળી પાણુ ગઈ છે. આવી રીતે મદદ આપનારને શાસ્ત્રો ભેટ મળવાનાં નથી તે વાત સમજી શકાય તેમ છે.

સુખ પ્રસંગે, પુત્ર જન્મ પ્રસંગે, દિક્ષા પ્રસંગે વર્ષિતપ પ્રસંગે તેમજ બીજા કાલ પ્રસંગે થતા ખર્ચામાં થોડો કાપ સુધીને પાણુ આ યોજના અપનાવી તેના નામ અમારને અગેા વિનંતિ કરીએ છીએ.

અવાગ પશ્ચિમ વેદીને સમાજના કલ્યાણ માટે જે સંત આણુ આણુમોહુ કરે કરી આ છે અને જેને વ્યવસ્થિત રીતે પ્રમિદ્ધ કરીને ઘેર ઘેર આગમો તેને આપવા જે સમિતિ કાર્યરતી કરી છે તેના હાથ મજબુત કરવા અમારના સાધુ, સંન્યાસી સમજ-સાધિકા એ સંસ્કૃતી પશ્ચિમ કરજ છે. -એજ વિનંતિ.

તા ૧-૬-૬૦
મહાગે

મેવકો,
માનદ્ મંત્રીઓ,



પંચવર્ષીય ચોળનાની સંવત ૨૦૧૬ ની પહેલાં વર્ષની લેટ.

(તા. ૩૧-૫-૬૦ સુધીમાં દાતાઓ તરફથી મળેલી રકમો)

શ્રી	શેઠ શાંતિલાલ મંગળદાસ	અમદાવાદ	૧૦૦૦
”	” બાબુલાલ નારણદાસ	ધોરાજી	૨૫૧
”	” ભાવસાર ભોગીલાલ છગનલાલ	અમદાવાદ	૨૫૧
”	” ઈશ્વરલાલ પુરૂષોત્તમદાસ	અમદાવાદ	૨૫૧
”	” હરિલાલ અનોપચંદ	ખંભાત	૨૫૦
”	” રંગજીભાઈ મોહનલાલ	અમદાવાદ	૨૫૦
”	” મુલચંદજી જવાહીરલાલજી ખરડીયા	અમદાવાદ	૧૦૧
”	” ગુલાબચંદ લીલાધર ખાટવીયા	ખાખીબળીયા	૧૦૧
”	” મહેતા પોપટલાલ માવજીભાઈ	બમજોધપુર	૧૦૧
”	” શાહ પ્રેમચંદ સાકરચંદ	અમદાવાદ	૧૦૦
”	” હાથીભાઈ ચત્રભુજ બમનગરવાળા	અમદાવાદ	૭૫
”	” મહેતા ભાનુલાલ રૂગનાથ	ધ્રાક્ષ	૭૫
”	” શાહ હરજીનદાસ કેશવજી	મુંબઈ	૭૫
”	” ઝુંઝાભાઈ વેલશીભાઈ	સુરેન્દ્રનગર	૭૫
”	શાહ હીરાચંદ છગનલાલ હા. ચીમનલાલ હીરાચંદ	સાણુદ	૫૧
”	” મોતીલાલજી હીરાચંદજી	નારાયણગામ	૫૧
”	વકીલ મણીલાલ કેશવલાલ	વડોદરા	૫૧
”	શેઠ ત્રીલોવનદાસ મંગળદાસ	ખંભાત	૫૧
”	” ખાટવીયા અમીચંદ ગીરધરલાલ	ખેંગલોર	૫૧
”	” સુમનલાલ કાળીદાસભાઈ	કાનપુર	૫૧
”	” હરકીશનદાસ કૂલચંદભાઈ	કાનપુર	૫૧
”	” બાગરાલજી રૂગનાથમલજી ભણુસારી હા. શેઠ નેનમલજી અમદાવાદ		૫૧
”	” ગીરધરલાલ મણીલાલ તરફથી (સ્વ. અ. સૌ. છબલભાઈના સ્મરણાર્થે)	ખારાઘોડા	૫૧
”	” એક સદ્ગ્રહસ્થ હા. શાહ રીખલદાસ જયંતિલાલ	અમદાવાદ	૫૧
”	” બગડીયા જગજીવનદાસ રતનશી	દામનગર	૫૧
”	વકીલ વાડીલાલ નેમચંદ શાહ	વીરમગામ	૫૧
”	” સ્થા. જૈન સંઘ હા. મહેતા ચંદુલાલ ખેતશીભાઈ	વણી	૫૧
”	શેઠ દોશી જીવરાજ લાલચંદ	સાણુદ	૫૧

”	”	નરસિંહદાસ વર્ણતચંદ સઘવી	ધાંગપ્રાં	૫૧
”	ડા	કસ્તુરચંદ બાલાભાઈ શાહ હા રજનીકાંત કસ્તુરચંદ શાહ અમદાવાદ		૫૧
”	શેઠ	કસ્તુરચંદ હરજીવનદાસ હા. ડા. માણેકલાલ કસ્તુરચંદ સાણંદ		૫૧
”	”	ખીમચંદ મણીલાલ	ખારાધોડા	૩૧
”	”	કેશવલાલ ઓતમચંદ શાહ	ખારાધોડા	૩૧
”	”	ભાઈલાલ ઉજ્જવશી શાહ	અમદાવાદ	૩૧
”	”	રતીલાલ પોપટલાલ મહેતાના પૂ. માતુશ્રી		
		બેન ગ્રંથબેનના તરફથી ભેટ	વણી	૩૧
”	”	અમૃતલાલ ઓઘડભાઈ	ખારાધોડા	૩૧
”	”	મહેતા રણજીતલાલ મોતીલાલ (ઉદેપુરવાળા)	અમદાવાદ	૨૫
”	”	કેશવલાલભાઈ	વીરમગામ	૨૫
”	”	પ્રવિણબેન લક્ષ્મણભાઈ	અમદાવાદ	૨૫
”	”	પારેખ ભીખાલાલ નેમચંદ	સાણંદ	૨૫

સમિતિ સર્વ દાતાઓનો આભાર માને છે.

રાજકોટ
તા. ૧-૬-૧૯૬૦

સાકરચંદ ભાઈચંદ શેઠ
મંત્રી



॥ श्री वीतरागाय नमः ॥



जेनाचार्य-जैनधर्म-दिवाकर-पूज्यश्री-घासीलालजीमहाराजविरचितया

‘सुन्दरबोधि’-न्याख्यया व्याख्यया समलङ्कृतम्

॥ श्री-निरयावलिकासूत्रम् ॥

॥ अथ मङ्गलाचरणम् ॥

(मालिनी-छन्दः)

सुरमनुजमुनीन्द्रैर्वन्द्यमानाऽङ्घ्रिपद्म,

विदितसकलतत्त्वं बोधिदं तीर्थनाथम् ।

कृतभवजलनौकारूपधर्मोपदेशं,

विमलनयनदं तं वर्धमानं प्रणम्य ॥ १ ॥

श्री निरयावलिकासूत्र की सुन्दरबोधिनी टीकाका हिन्दीभाषानुवाद
“मङ्गलाचरण”

जिनके चरणकमल, देव, मनुष्य और मुनिवरोसे वंदित हैं। जो सर्व तत्त्वोंके ज्ञाता और बोधिको देने वाला हैं। तथा संसार-सागरसे पार होनेके लिये नौकास्वरूप श्रुतचारित्र धर्मके उपदेशक हैं। एवं ज्ञानरूपी नेत्रके दाता हैं, और चतुर्विधसंघरूपी तीर्थके स्वामी हैं। ऐसे त्रिलोकमें प्रसिद्ध (चौबीसवें तीर्थकर) श्री वर्धमानस्वामीको नमस्कार करके ॥ १ ॥

श्री निरयावलिका सूत्रनी सुंदरबोधिनी नामे टीकाने।

गुजराती अनुवाद.

“भंगदाचरणु.”

जेना अरणु कमण देव मनुष्य तथा मुनिवेशी वदित छे, जे सर्व तत्वना लक्षणारा तथा बोधिस्वरूपने आपवा वाणा छे, जे संसारसागर तरी जवा माटे, डोडी इपी श्रुतचारित्र धर्मना उपदेशक छे, जे ज्ञानरूपी अक्षुना हेनार छे तथा चार प्रकारना संघरूपी तीर्थना प्रलु छे, जेवा त्रणु लोकमां विख्यात (चौबीसमा तीर्थकर) श्री वर्धमान स्वामीने नमस्कार करीने, (१)

मकलनिगमदक्षं ज्ञानचक्षुःसमेतं,

कलितसकललब्धि पूर्वधारं मुनीन्द्रम् ।

जिनवचनरहस्यद्योतकं दीनवन्धुं,

करण-चरणधारं गौतमं चाऽपि नत्वा ॥ २ ॥

(पृथ्वी छन्दः)

सगुप्तिसमितिं समां विरतिमादधानं सदा,

क्षमावदखिलक्षमं कलितमञ्जुचारित्रकम् ।

सदोरमुखवस्त्रिकाविलसिताऽऽननेन्दुं गुरुं,

प्रणम्य भववारिधिप्लवमपूर्वबोधप्रदम् ॥ ३ ॥

(अनुष्टुप् छन्दः)

जैनीं सरस्वतीं नत्वा लोकालोकप्रकाशिनीम् ।

निरयावलिकावृत्तिं, कुर्वे सुन्दरबोधिनीम् ॥ ४ ॥

तथा सत्र शास्त्रांके तत्त्व समझाने में दक्ष (चतुर), ज्ञानदृष्टि से तत्वातत्त्व का निर्णय करने वाले, सम्पूर्ण लब्धिवाले, चौदहपूर्व-धारक, स्याद्वादरूप जिन-वचनके रहस्यको बताने वाले, षट्कायके रक्षक, और चरण-करणके धारी, मुनियोंमें प्रधान ऐसे श्री गौतम-स्वामीको शीश झुकाकर ॥ २ ॥

तथा समितिगुप्तिधारक, समदर्शी, विरतिमार्गमें चलने वाले, पृथिवीके समान सत्र परीषहोपसर्गोंको सहन करने वाले, निरतिचार चारित्रवाले, सम्यक् बोध के देने वाले, वायुकाय आदि जीवोंकी रक्षाके लिए डोरा सहित मुखवस्त्रिकासे जिनका मुखचन्द्र देदीप्यमान है, और जो संसारसागरमें तैरनेके लिए नौकाके समान हैं, ऐसे परमकृपालु गुरुदेवको वन्दना करके ॥ ३ ॥

तथा सर्व शास्त्रोक्त तत्त्व समज्जववासां चतुर, ज्ञानदृष्टिशी तत्वातत्त्वने निरुप्य कर्वावाणा, अ पूर्ण लब्धीवाणा, चौद पूर्व धारक, स्याद्वाद इपी जित-वचननां रहस्यने गतावनार, छकायनी रक्षा करनार तथा अरुण करणना धारक, मुनियोभा प्रधान जेवा श्री गौतम स्वामीने अस्तक नभावीने, (२) तथा समिति गुप्तिना धारण करनारा समदर्शी, विरतिमार्गमा विचरनारा, पृथ्वीनी-पेठे तमाभ परीषहो तथा छपसर्गोने अडन कर्वावाणा, निरतिचार चारित्रवाणा, सम्यक् उपदेश आपवावाणा, वायुकाय आदि जीवोनी रक्षाने माटे डोरा सहित मुखवस्त्रिकाशी जेतु मुभारविन्द शाशी नहु छे तथा जे असागर तरवा माटे जेक नाव समान छे जेवा परम कृपालु गुरुदेवने वंदन करीने, (३)

मूलम्—तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे नामं नयरे-
होत्था । रिद्धत्थिमियसमिद्धे ॥ १ ॥

छाया-तस्मिन् काले तस्मिन् समये राजगृहं नाम नगरम् आसीत् ।
ऋद्धस्तिमितसमृद्धम् ॥ १ ॥

टीका—‘तेणं कालेणं’ इत्यादि—तस्मिन् काले=अवसर्पिण्याश्रतुर्यारकरूपे
तस्मिन् समये=कालविशेषरूपे हीयमानलक्षणे राजगृहं नाम नगरम् आसीत् ।

तद्—(राजगृह)—वर्णनमित्थमाह—‘ रिद्धत्थिमियसमिद्धे ’ इत्युपलक्षणम्,
तेन ‘ प्रमुद्ध्यजणजाणवण्, उत्ताणनयणपेक्खणिज्जे, पासाईण्, दरिसणिज्जे,
अभिरूवे, पडिरूवे, ’ इत्येतेषामपि सङ्ग्रहः । छाया-ऋद्धस्तिमितसमृद्धम्,
प्रमुदितजनजानपदम्, उत्ताननयनप्रेक्षणीयम्, प्रासादीयम्, दर्शनीयम्, अभि-
रूपम्, प्रतिरूपम्; ।

“ ऋद्ध ”—इत्यादि—ऋद्धं=नभःस्पर्शिवहुलप्रासादयुक्तं बहुजनसङ्कुलं च
स्तिमितं=स्वपरचक्रभयरहितं, समृद्धं = हिरण्य-सुवर्ण-धन-धान्यादिपरिपूर्णमिति
ऋद्धस्तिमितसमृद्धम्, अत्र त्रिपदकर्मधारयः । ‘ प्रमुदिते ’—ति प्रमुदितजनजान-
पदयुक्तम् । तत्रत्यास्तत्राऽऽगता देशान्तरीयाश्च जना हिरण्य-सुवर्ण-धनधान्य-

तथा लोकालोकके स्वरूपको प्रकाशित करने वाली—जिनवाणीको
नमस्कार करके मैं घासीलाल मुनि निर्यावलिकासूत्र की ‘ सुन्दरबोधिनी ’
नामक टीका की रचना करता हूँ ॥ ४ ॥

‘ तेणं कालेणं ’ इत्यादि । उस काल उस समय में अर्थात्—
अवसर्पिणीके चौथे आरेके, उसी हीयमान रूप समयमें राजगृह नाम-
का प्रसिद्ध नगर था । जिम्ममें नभःस्पर्शी ऊँचे-ऊँचे सुन्दर महल थे ।
जहाँ स्व-पर चक्रका कोई भय नहीं था । और वह धन, धान्यादि
ऋद्धियोंसे समृद्ध परिपूर्ण था । जो वहाँ के निवासियोंको तथा देश-

तथा लोकालोकना स्वइयने प्रकाशित करवावाणी जिन-वाणीने नमस्कार करी
हुँ घासीलाल मुनि निर्यावलिका सूत्रनी ‘ सुन्दरबोधिनी ’ नामनी टीकानी
रचना करे छुं. (४)

तेणं कालेणं इत्यादि ते काले अने ते समयमां अर्थात् अवसर्पिणी(काण)ना चेथा
आराना हीयमान (उतरता) समयमां राजगृह नामे ओक प्रख्यात नगर इतुं के नेमां
गगनसुभी वींचा वींचा सुदर भूडालये उता न्यां स्व पर चक्रने भय न होतो
तथा ते नगर धन धान्यादि ऋद्धिओथी परिपूर्ण समृद्धिवाणुं इतु, ने त्यांना रहे-
वाशीओने तथा देश परदेशथी आववावाणाने सोनुं यांही रत्न वगेरिता वेपार-

वस्त्रादीनां समर्घलभ्यतया- विविधवाणीज्येन स्वस्वाभीष्टानां पूर्णतया यथानीति-
लाभेन च प्रमुदिता भवन्ति । 'उत्ताने'-ति उत्ताननयनप्रेक्षणीयम्=सौन्दर्या-
तिशयादुन्मीलितनिमेषपातवर्जिताक्षिभिर्दर्शनीयम् 'प्रासादीयम्=द्रष्टृणां चित्तप्रसा-
दजनकत्वात्प्रमोदजनकम्, दर्शनीयम् = दृष्टिसुखदत्त्वेन पुनः पुनर्दर्शनयोग्यम् ।
अभिरूपम्=मनोज्ञाकृतिकम्, प्रतिरूपम्=अपूर्वचमत्कारकशिल्पकला-कलितत्वेना-
द्वितीयरूपम् ॥ १ ॥

मूलम्—तत्थ उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए गुणशिलए (नामं)
चेइए (होत्था) वण्णओ । असोगवरपायवे पुढवीसिलापट्टए
(होत्था) ॥ २ ॥

छाया—तत्र उत्तरपौरस्त्ये दिग्भागे गुणशिलकं (नाम) चैत्यम् (आसीत्)
वर्णकः । अशोकवरपादपः पृथिवीशिलापट्टकः (आसीत्) ॥ २ ॥

टीका—'तत्थ' इत्यादि—तत्र=राजगृहे, उत्तरपौरस्त्ये दिग्भागे गुणशिलकं
(नाम) चैत्यं=व्यन्तरायतनमासीत्, कीदृशं चैत्यमिति जिज्ञासायां शास्त्रान्तरे
तद्वर्णनमेवमाह—

देशान्तरसे आनेवालोंको स्वर्ण चांदी रत्नादिके व्यापारसे लाभान्वित
करनेके कारण आनन्द जनक था । जिसका अतिशय सौन्दर्य टक-
टकी लगाकर अनिमेष दृष्टिसे देखनेके योग्य होनेसे वह 'प्रेक्षणीय'
था । जो दर्शकोंका मन प्रफुल्लित कर देनेके कारण 'प्रासादीय' प्रमोद-
जनक था । नेत्रोंको देखनेमें बारम्बार सुख देनेवाला होनेके कारण
'दर्शनीय' था । सुन्दर आकृतिका होने के कारण 'अभिरूप' था ।
अपूर्व-अपूर्व चमत्कार उत्पन्न करने वाली शिल्पकलाओं से युक्त होने
के कारण प्रतिरूप अर्थात् अनुपम था ॥ १ ॥

'तत्थ' इत्यादि । उस राजगृहके ईशान कोणमें गुणशिलक नामका

देशान्तरसे आनेवालोंको स्वर्ण चांदी रत्नादिके व्यापारसे लाभान्वित
करनेके कारण आनन्द जनक था, जिसका अतिशय सौन्दर्य अनिमेष
दृष्टिसे लेवा लायक होवाथा ते 'प्रेक्षणीय' था, जो जोनारना भनने प्रफुल्लित कर-
वानां कारणे 'प्रासादीय' प्रमोदजनक था, आपोथी लेवाभा बारंवार सुख आपनार
होवाथी 'दर्शनीय' था, सुन्दर आकृतिवाणु होवाथी 'अभिरूप' था नवीन नवीन
आश्चर्य उपलब्धे अपी शिल्पकलाओंवाणु होवाथी 'प्रतिरूप' अर्थात् अनुपम था ॥ १

'तत्थ' इत्यादि ते राजगृहना ईशानकोणभा शृणुशिलक नामनु व्यन्तरायतन

‘चिरार्ईए, पुव्वपुरिसपन्नत्ते, सच्छत्ते, सज्जए, -सघंटे, सपडागे, कय-
वियदीए, लाइयोल्लोइयमहिए’ इति । छाया-चिरादिकम्, पूर्वपुरुषप्रज्ञप्तम्,
सच्छत्रम्, सध्वजम्, सघण्टकम्, सपताकम्, कृतवितर्दिकम्, लिप्तोपलिप्तमहितम्, इति ।
‘चिरादिकम्’ इति-चिरः=बहुकालिकः आदिः=निवेशो यस्य तत् तथा,
‘पूर्वपुरुषे’ति पूर्वपुरुषैः=प्राचीनपुंभिः प्रज्ञप्तम्=उपादेयतया प्रतिबोधितम्, सच्छत्रम्,
सध्वजम्, सघण्टम्, सपताकम्, एतत्सर्वं स्पष्टम्, कृतवितर्दिकम्=रचितवेदिकम्,
‘लाइये’त्यादि लाइयं=गोमयमृत्तिकादिना भूम्युपलेपनम् च उल्लोइयं=भित्ति-
समुदायस्य सैदिकादिभिः संमृष्टीकरणं च; लाइयोल्लोइये; ताभ्यां महितं=युक्तं
प्रशस्तम् परिष्कृतमिति यावत्, एवम्भूतं चैत्यमासीत् ।

तत्र व्यन्तरायतनभूमौ अशोकवरपादपः=अशोकाख्यो महावृक्षोऽस्ति,
तस्याऽधस्तटे ‘पृथिवीशिलापट्टकः’ पट्टक इव पट्टकः, आसनरूपेण परिणता
पृथिवीशिलेन्यर्थः, अभवत्=आसीत्, तस्य शास्त्रान्तरे वर्णनमित्यमाह-

“विक्कंभायामसुप्पमाणे, आइणग-रूय-बूर-नवणीय-तूलफासे, पासाईए,
दरिसणिज्जे, अभिरूवे, पडिरूवे” इति । छाया-विष्कम्भायामसुप्रमाणः, अजिनक-
रूत-बूर-नवनीत-तूलस्पर्शः, प्रासादीयः, दर्शनीयः, अभिरूपः, प्रतिरूपः, इति ।

‘विष्कम्भे’-ति-विस्तारदैर्घ्याभ्यां समुचितप्रमाणोपेतः ‘अजिनके’
ति-अजिनमेवाऽजिनकं=मृगचर्म, रूतं = कार्पासः, बूरः=स्निग्धवनस्पतिविशेषः,
नवनीतं=दृग्धविकारविशेषः, तूलं=अर्क-शालमलीवृक्षजातम्, तद्वत्स्पर्शः कोमल-

• व्यन्तरायतन था । उसका वर्णन अन्यत्र (दूसरे शास्त्रोंमें) इस प्रकार है-
पूर्व पुरुषोंके कथनानुसार वह प्राचीन कालसे है । उसमें छत्र,
ध्वजा, घण्टा, पताका आदि लगे हुए थे और वेदिकाएँ बनी हुई थी ।
उसकी भूमि गोमय और मिट्टी से लिपी हुई थी । भीतें खड़ी चूना
आदि से धवलित थी ।

वहाँ उसी स्थान पर एक बड़ा अशोक वृक्ष था । उसके नीचे मृग-
चर्म, कपास बूर (वनस्पति), मक्खन और आंकड़े (अर्क) की रूई (तूल)

इतु जेनु वधुन अन्यत्र (णीम शास्त्रोमा) आनी रीते छे.—

अगाठना ढोडोना कडेवा प्रभाषे ते जुना वधतथी छे तेमा छत्र, ध्वज,
घण्टा, पताका आदि लागेला इतां वेदिके पानेदी इती. तेनी भूमि छाद्य अने
भाटीथी लीपेदी इती अने भीते। मडी-युना वगेरेथी धवलित इती.

। त्या जे जग्या उपर जेक मोटु अशोक वृक्ष इतु तेनी नीचे मृगचर्म,
कपास, बूर (वनस्पति) भाष्य अने आकडाना इ जेनुं सुंवाणु अने उचित

स्वर्गः, इत्यर्थः, 'गामादीय' इत्यादिपदानां व्याख्या पूर्वोक्तरीत्याऽवगन्तव्या ।
एवम्भूतः पृथिवीशिव्यापट्टक आसीत् ॥ २ ॥

मृत्यु-तेणं कालेणं तेणं समणं समणस्स भगवओ
महावीरस्स अन्तेवासी अज्जसुहम्मो णामं अणगारे जाइसंपन्ने
जहा केसी जाव पंचहिं अणगारसएहिं सद्धिं संपरिवुडे पुव्वा-
णुपुत्विं चरमाणे (गामाणुगामं दुइज्जमाणे) जेणेव रायगिहे
जाव अहापडिरुवं ओग्गहं ओगिण्हत्ता संजमेण जाव विहरइ ।
परिस्सा णिग्गया धम्मो कहिओ । परिस्सा पडिग्गया ॥ ३ ॥

श्राया-तस्मिन् काले तस्मिन् समये श्रमणस्य भगवतो महावीरस्या-
न्तेवामी आर्यसुधर्मा नामाऽनगारो जातिसम्पन्नो यथा केशी, यावत् पञ्चभिर-
नगारैर्गैः साद्रे संपरिवृतः पूर्वानुपुत्र्यां चरन् (ग्रामानुग्रामं द्रवन्) यत्रैव राज-
शूरे नगरं यावत् यथाप्रतिरूपमवग्रहमशृणु संयमेन यावद् विहरति । परिप-
दिर्गता । पर्यैः कथितः । परिपत् प्रतिगता ॥ ३ ॥

टीका—'तेणं कालेणं' इत्यादि-तस्मिन् काले तस्मिन् समये श्रमण-
स्य भगवतो महावीरस्य अन्तेवामी=शिष्यः, आर्यसुधर्मा (स्वामी) नामाऽनगारः
रिपगनीयनयः । अथ नदर्शनमाह-जातिसम्पन्नः=गृविशुद्धमातृवंशयुक्तः, 'यथा-
केशी' नि-केजिनामा श्रमणो नगधरो यथाऽऽसीदित्यर्थः, अत्र यावच्छब्देनैवं
केनिरिच्छेयमानि संशुद्धन्ते-तथाहि-'कुट्टसंपन्ने, वत्तसंपन्ने, विणयसंपन्ने, प्पावव-
के समान स्पर्शवान्ता, उचित प्रमाण मे लभ्या चौटा आमन के आकार-
मा घना ह्वा पृथ्वीशिव्यापट्टा, जो दर्शनीय अमिरूप प्रतिरूप था ॥२॥

'तेणं कालेणं' इत्यादि । उस काल उस समय में श्रमण
भगवान महावीर स्वामीके अन्तेवामी (शिष्य) श्री आर्यसुधर्मास्वामी
धिगन्ते थे । उनका वर्णन केशी श्रमणके समान इस प्रकार है—

माताका यंश विजुद्ध होनेसे जातिसंपन्न थे । पैतृक पक्ष निर्मल

इस पक्षी पक्षी पक्षी के पापु आमनता आहारे सेपुं पृथ्वीशिव्यापट्ट दत्तु मे इश-
नीय अमिरूप अन्ते प्रतिरूप दत्तु. (२)

'तेणं कालेणं' इत्यादि । ते काले अने ते अभायगा शमणु भगवान महावीर
स्वामीके अन्ते, य अर्थात् श्री आर्यसुधर्मा स्वामी विद्यते न्या दत्तु. तेभसुं वर्णन केशी
स्वामीके समान था अर्थात्—

माताका यंश विजुद्ध होनेसे जातिसंपन्न दत्तु, पिपत्तु यथा शूरे अन्ते

संपन्न, ओयंसी, तेयंसी, वयंसी, जसंसी, जियकोहमाणमायालोहे, जीवियासा-
मरणभयविप्रमुक्ते, तवप्पहाणे, गुणप्पहाणे, करणचरणप्पहाणे, निग्गहप्पहाणे,
घोरबंभचेरवासी, उच्छ्रद्धसरीरे, चोइसपुब्बी, चउनाणोवगए' इति । अस्य च्छाया-
"कुलसम्पन्नः, बलसम्पन्नः, विनयसम्पन्नः, लाघवसम्पन्नः, ओजस्वी, तेजस्वी,
वचस्वी, यशस्वी, जितक्रोधमानमायालोभः, जीविताशामरणभयविप्रमुक्तः, तपः
प्रधानः, गुणप्रधानः, करणचरणप्रधानः, निग्रहप्रधानः, घोरब्रह्मचर्यवासी, उच्छ्र-
द्दशरीरः, चतुर्दशपूर्वी, चतुर्ज्ञानोपगतः" । इति,

'कुले'ति-कुलं=पैतृकः पक्षस्तत्सम्पन्नः, उत्तमपैतृकपक्षयुक्तः, 'बले'
ति-बलेन=संहननसमुत्थेन पराक्रमेण युक्तः, वज्र-ऋषभ-नाराच-संहननधारीत्यर्थः,
'विनये'ति-विनयति=नाशयति अष्टप्रकारकं कर्म यः स विनयः=अभ्युत्थानादि-
गुरुसेवालक्षणस्तत्सम्पन्नः । 'लाघवे'ति-लाघवे द्रव्यतः स्वल्पोपधित्वमु-
भावतो गौरवत्रयनिवारणं, तत्सम्पन्नः । 'ओजस्वी'ति-ओजः=सकलेन्द्रियाणां
पाटवं तपःप्रभृतिप्रभावात् समुत्थतेजो वा, तद्वान्, 'तेजस्वी'ति-तेजः=अन्त-
र्बहिर्देदीप्यमानत्वम् तेजोलेश्यादि वा, तद्वान्, 'वचस्वी'ति-वचः=आदेयं वचनं-
सकलप्राणिगणशितसंपादकं निरवद्यवचनं, तद्वान्, 'यशस्वी'ति-यशः=तपः

(शुद्ध) होनेसे कुलसंपन्न थे । बलसंपन्न अर्थात् संहनन से उत्तम
पराक्रमसे युक्त थे । वज्रऋषभनाराचसंहननके धारी थे । जो आठ
कर्मोंका नाश करे उसको विनय कहते हैं, वह अभ्युत्थानादि गुरु-
सेवा स्वरूप है, उससे युक्त थे । लाघवसंपन्न थे अर्थात् द्रव्यसे अल्प
उपधि वाले थे और भावसे गौरव-(गारव)-त्रय रहित थे । इन्द्रि-
योंके सौन्दर्य और तप आदि के प्रभावसे ओजस्वी-प्रतिभाशाली थे ।
अन्तर 'आत्मप्रभाव' और बहार 'शरीर प्रभाव' से देदीप्यमान
होने के कारण तेजस्वी थे । सब प्राणियोंके हितकारक और निर-
वद्य (निर्दोष) वचन युक्त होनेसे आदेय (ग्राह्य) वचन वाले थे ।

कुलसंपन्न होता, बलसंपन्न होता, अर्थात् संहननथी उत्पन्न थयेवा पराक्रमवाणा होता,
जो आठ कर्मोंका नाश करे तेने विनय छोडे छे, ते अभ्युत्थानादि गुरुसेवाना लक्षण
युक्त विनयसंपन्न होता लाघवसंपन्न होता अर्थात् द्रव्यथी थोडी उपाधिवाणा होता-
अने भावथी त्रय गौरवथी रहित होता । इन्द्रियोंका सौन्दर्यथी तथा तप वगेरना प्रभा-
वथी प्रतिभाशाली होता । अन्तर आत्मप्रभाव अने गहार शरीरप्रभावथी देदीप्यमान
होवाना कारणे तेजस्वी होता । सर्वे प्राणीयेना कल्याणकारक तथा निर्दोष वचन युक्त
होवाथी आदेय (ग्राह्य) वचनवाणा होता । तप तथा सयमनी आराधना करेवाथी

संयमाराधनख्यातिस्तद्धान्, 'जिते'-स्यादि-उदयावलिकामविष्टक्रोधादीनां वि-
जयो=त्रिफलीकरणं, तद्धान्, 'जीविते'-स्यादि-जीवितं=माणधारणं तस्याशा,
मरणं=मृत्युस्तस्माद्भयं=त्रासः, ताभ्यां त्रिमयुक्तः=वर्जितः, 'तपःप्रधान' इति-
तपति=दहति ज्ञानावरणीयाद्यष्टविधकर्माणि इति तपः=चतुर्थ-पथा-ऽष्टमभक्ता-
दिलक्षणं तत्प्रधानः शेषमुनिजनापेक्षया त्रिविधप्रकारक-तपोयुक्तः पारणादौ ना-
नाविधाभिग्रहयुक्तः । 'गुणप्रधान' इति-गुणः = ज्ञानादिरत्नत्रयं क्षान्त्यादिर्वा
तत्प्रधानः, उक्तञ्च-

“परोपकारैकरतिर्निरीहता, विनीतता सत्यमनुत्थचित्तता ।

विद्या विनोदोऽनुदिने न दीनता, गुणा इमे सत्त्ववतां भवन्ति ॥१॥” इति ॥

तप और संयमके आराधनसे प्रसिद्धि प्राप्ति होने के कारण यशस्वी
थे । उदयावलिकामें आनेवाले क्रोध आदिको निष्फल करनेके कारण
कषायोंके विजेता थे । जीनेकी आशा और मृत्युके भयसे रहित थे ।
अन्य मुनियोंकी अपेक्षा चतुर्थ भक्त आदि तप अधिक करनेसे, और
पारणा आदिमें अनेक प्रकारके कठिन अभिग्रह करनेसे, 'तपःप्रधान'
थे, सम्यग् ज्ञान आदि रत्नत्रय, और क्षान्ति आदि दशविध यति-
धर्मसे युक्त होनेके कारण 'गुणप्रधान' थे । कहा भी है:-

“परोपकारैकरतिर्निरीहता, विनीतता सत्यमनुत्थचित्तता ।

विद्या विनोदोऽनुदिने न दीनता, गुणा इमे सत्त्ववतां भवन्ति ॥” इति ॥

अर्थात्-परोपकारमें आनन्द मानना, निःस्पृहता रखना, विनय,
सत्य, प्रशान्त भाव, विद्या विनोद, मध्यस्थ भाव और दीनताका त्याग,
ये गुण महापुरुषोंमें होते हैं ॥

प्रसिद्धिप्राप्त होवाने कारणे यशस्वी हुता, उदयावलिका अष्टके कर्मक्षेत्री परंपराभां
आववा वाणा क्रोधादिने अतवाथी कषायैना विजेता हुता. अवावानी आशा तथा
मृत्युना भय रहित हुता

धीन मुनिजोनी अपेक्षाये चतुर्थ लक्षण (तपवास) आदि तप षड् कर्वाथी
तथा पारणा आदिमा अनेक कठिन आलत्र्य कर्वाथी 'तपप्रधान' हुता.

सम्यग् ज्ञान आदि रत्नत्रय तथा शान्ति (क्षमा) आदि दशविध यतिधर्मथी
युक्त होवाथी 'गुणप्रधान' हुता कथ्य पथ छे छे:-

“परोपकारैकरतिर्निरीहता, विनीतता सत्यमनुत्थचित्तता ।

विद्या विनोदोऽनुदिने न दीनता, गुणा इमे सत्त्ववतां भवन्ति ॥” इति ॥

अर्थात्-परोपकारमां आनन्द मानना, निःस्पृहता रखनी, विनय, सत्य प्रशांत

‘करणे’ति-करणसप्ततिः, चरणसप्ततिः, तत्प्रधानः, ‘निग्रहप्रधान’ इति इन्द्रियनोइन्द्रियनिरोधकरणेन, स्वात्मनोऽपूर्ववीर्यपरिस्फोटनं, तत्प्रधानः, ‘घोर-ब्रह्मे’-त्यादि-ब्रह्म=कामपरिषेवणत्यागस्तत्र चरणं ब्रह्मचर्यं, घोरं च तद् ब्रह्मचर्यं घोरब्रह्मचर्यम् अल्पसत्त्वेन दुरनुष्ठेयं, तत्र वस्तु शीलमस्येति घोरब्रह्मचर्यवासी । ‘उच्छूढशरीर’ इति-उच्छूढमुज्झितमिव संस्कारपरित्यागाच्छरीरं येन स उच्छूढ-शरीरः, सर्वथा शरीरसंस्कारवर्जितः । ‘चतुर्दशपूर्वी’=चतुर्दशपूर्वधारीः चतुर्ज्ञानो-पगतः=केवलवर्जितमत्यादिचतुर्ज्ञानवान्. एतादृशकेशिश्रमणगणधरसदृशः पञ्चम-गणधरः श्रीसुधर्मस्वामी पञ्चभिरनगारशतैः पञ्चशतसंख्यकमुनिभिः सार्द्धं=सह संपरिवृतः = पञ्चशतमुनिपरिवारयुक्तः, ‘पूर्वानुपूर्व्या’ - तीर्थं करोक्तपरम्परया चरन्=विहरन्, (‘ग्रामानुग्रामम्’ एकस्मात् ग्रामात् ग्रामान्तरं द्रवन्=गच्छन् यान-वाहनादि विना पदविहारेण ग्रामान्तरमपरित्यजन्, अनेनाऽप्रतिबद्ध-विहारिता सूचिता) ‘जेणेव’ इति-यस्मिन्नेव क्षेत्रविभागे राजगृहनामकं नगरमस्ति गुणशिलकं नाम चैत्यं च तस्मिन्नेव स्थाने उपागच्छति, उपागत्य

तथा करण चरणके धारी थे, इन्द्रिय नोइन्द्रिय (मन) के दमन करने से आत्माका अपूर्व वीर्य स्फोरन करनेके कारण ‘निग्रहप्रधान’ थे । अल्पसत्त्ववालों से दुश्चरणीय ब्रह्मचर्यके धारक होनेसे ‘घोर-ब्रह्मचारी’ थे । श्रृङ्गारके लिए सर्वथा शरीरसंस्काररहित होनेके कारण ‘उच्छूढशरीर’ (शरीरभ्रमत्वरहित)थे । तथा चतुर्दश पूर्व और चार ज्ञानके धारी थे । इस प्रकार केशी श्रमण गणधर के समान गुणके धारण करनेवाले चार ज्ञान और चौदह पूर्वके धारी पँचम गणधर श्री-सुधर्मा स्वामी पाँच सौ मुनियोंके परिवार सहित तीर्थकरोंकी मर्यादाका पालन करते हुए और ग्रामानुग्राम विचरते हुए, जहाँ राजगृह

भाव, विद्या विनोद, मध्यस्थभाव अने दीनतासे त्याग से शुष्क महापुरुषोभा डोय छे

तथा तेभ्यो करण्यं चरण्युना धारण्यं कर्वावाणा इति, इन्द्रियेने तथा नोइन्द्रिय (मन) ने दमन कर्वाथी आत्माना अपूर्व वीर्य प्रगट कर्वाणा कारणे ‘निग्रहप्रधान’ इति अल्पसत्त्ववाणाथी मुश्कलीसे पणाय सेवा ब्रह्मचर्यने धारण्यं कर्वाथी ‘घोर ब्रह्मचारी’ इति श्रृङ्गार साठे शरीरने सर्वथा संस्काररहित राभता डोवाथी उच्छूढ-शरीर (शरीरभ्रमत्वरहित) इति ।

“ तथा चतुर्दशपूर्व अने चार ज्ञानना धारी इति अने प्रमाणे केशी श्रमण्य गणधरनी समान शुष्के धारण्यं कर्वावाणा चार ज्ञान अने चौदह पूर्वना धारी पाँच । गणधर सुधर्मा स्वामी पाँचसौ मुनियोना परिवार साथे तीर्थ करेनी मर्यादानु पालन करता थका अने ग्रामानुग्राम विचरता थका नया राजगृह नगर छे, नया शुष्कशिलक

प्रार्थितं च=अभिलषितं च विजानन्ति यास्तथा, ताभिःबुध्यमानाभिः, युक्तेति शेषः । तथा 'महत्तरे'ति-अतिशयेन महान्=महत्तरः स एव महत्तरकः=अन्तःपुररक्षकः, तेषां वृन्दम्=नानादेशोत्पन्नचेटकसमूहस्तेन 'परिक्षिप्ता'='परि=सर्वतः क्षिप्ता=मध्ये स्थापिता, तथा सती अन्तःपुरात् निर्गच्छति=वर्हिर्निःसरति निर्गत्य यत्रैव=यस्मिन्नेव स्थाने बाह्या=वर्हिर्भवा उपस्थानशाला=उपवेशनमण्डपः यत्रैव=यस्मिन्नेव स्थले धार्मिकयानप्रवरः=रथादियानोत्तमः, तत्रैव=तस्मिन्नेव स्थाने उपागच्छति=समुपैति, उपागप्य=धार्मिकयानप्रवरसमीपमागत्य धार्मिकं=धर्माय नियुक्तं यानप्रवरं दूरोहति=आरोहति, दूरुह्य=उक्तयानप्रवरमारुह्य 'निजके' ति-निजा एव निजकाः=स्वकीयाः परिवाराः=दास्यादयः, तैः संपरिवृता=परिवेष्टिता, चम्पां नगरीं मध्यमध्येन=चम्पानगर्या मध्यभागेन निर्गच्छति, निर्गत्य यत्रैव पूर्णभद्रचैत्यं तत्रैव उपागच्छति=समायाति, उपागत्य 'छत्ताईए' छत्रादिकान् 'यावत्'-शब्देन तीर्थकरातिशेषान् पश्यति, दृष्ट्वा धार्मिकं यानप्रवरं स्थापयति, स्थापयित्वा धार्मिकाद् यानप्रवराद्=धार्मिकरथात् प्रत्यवरोहति=अधस्तादवतरति, प्रत्यवरुह्य=अवतीर्य वहीभिः कुब्जाभिः=पूर्वोक्तदासीभिर्युक्ता यावत् महत्तरकवृन्द-परिक्षिप्ता पञ्चाभिगमपुरस्सरं यत्रैव=यस्मिन्नेव पूर्णभद्रोद्याने भगवान् महावीर-

'चिन्तित'-हृदयके भावको अनुमानसे समझना ।

'प्रार्थित'-अभिलषितको अनुमानसे जानना ।

ऐसी दासियोंके साथ अन्तःपुररक्षक पुरुषवृन्दसे तथा अनेक देशमें उत्पन्न होनेवाले दाससमूहसे घिरी हुई अन्तःपुरसे चारह निकलकर भवनके सभा-मण्डपमें जिस स्थलपर धार्मिक रथ था वहाँ आई और रथमें बैठी । बाद अपने सब परिवार के साथ चम्पा नगरीके घीच-रास्तेसे होकर जहाँ पूर्णभद्र चैत्य था वहाँ पहुँची । और तीर्थकरके छत्र आदि अतिशयोंको देखकर अपने रथको स्थापित किया और

'चिन्तित'-हृदयना भावने अनुमानथी समझयो ।

'प्रार्थित'-अभिलषित (भ्रूँछा जेनी होय ते) अनुमानथी जानवुं

अेवी दासीओनी साथे अंतःपुररक्षक पुरुषवृ द्धी तथा अनेक देशना उत्पन्न थनारा दाससमूहथी घेरायेली अंतःपुरथी मंडार नीकणीने भवनना सभामण्डपमा जे ठेकाए धार्मिक रथ हुतो त्या जे रथमा जेठी पछी पोताना सधणा परिवारनी साथे तथा नगरीना मध्य रस्तामां थधने ज्या पूरुभद्र चैत्य 'हुतुं' त्या पछांभी, तथा तीर्थकरेना छत्रादि अतिशयाने जेधने पोताना रथने उक्ते राणी नीचे उतारी अने पछी पोताना

स्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य श्रमणं भगवन्तं महावीरं त्रिःकृत्वो वन्दते, च= पुनः स्थितैव सपरिवारा शुश्रूषमाणा=सेवमाना नमस्यन्ती अभिमुखी=सम्मुखं स्थिता विनयेन = नम्रभावेन प्राञ्जलिपुटा = ललाटतटसविनयविन्यस्तकरकमला पर्युपास्ते=सेवते ॥ १७ ॥

मूलम्—तए णं समणे भगवं जाव कालीए देवीए तीसे य महातिमहालयाए धम्मकहा भाणियव्वा जाव समणोवासए वा समणोवासिया वा विहरमाणे आणाए आराहए भवइ ॥ १८ ॥

छाया-ततः खलु श्रमणो भगवान् यावत् काल्यै देव्यै तस्यां च महातिमहालयायां परिषदि धर्मकथा भणितव्या यावत् श्रमणोपासको वा श्रमणोपासिका वा विहरन् आज्ञाया आराधको भवति ॥ १८ ॥

टीका—‘तएणं समणे’ इत्यादि-ततः=तदनन्तरं श्रमणो भगवान् महावीरः यावत्-सिद्धिगतिनामधेयं स्थानं सम्प्राप्तुकामः, काल्यै देव्यै तस्यां=पूर्वोक्तायां महाति-महालयायां=अतिविशालायां परिषदि धर्मकथा भणितव्या=कथयितव्या, धर्मकथास्वरूपं विस्तरत उपासकदशाङ्गसूत्रस्यागारधर्मसंजीविन्याख्यायां व्याख्यायां त्रिलोकनीयं विशेषजिज्ञासुभिरिति ।

रथसे नीचे उत्तरी । फिर अपने सब परिवारके साथ पांच अभिगम पूर्वक जहाँ भगवान् बिराजते हैं वहाँ पहुँचकर विधिपूर्वक वन्दना-नमस्कार किया, और सपरिवार भगवान्के सम्मुख नतमस्तक हो विनयके साथ अञ्जलिपुटको ललाटपर रखती हुई खड़ी होकर सेवा करने लगी ॥ १७ ॥

‘तएणं समणे’ इत्यादि । बाद मोक्षगामी श्रमण भगवान् महावीर स्वामीने काली महारानीको लक्ष्य करके विशाल परिषदमें धर्मकथा कही । धर्मकथाका विशेष वर्णन जाननेके जिज्ञासुओंको हमारी बनाई

सधणा परिवार-साथे पांच अभिगम-पूर्वक न्यां भगवान् बिराजता इता त्या पडोयीने विधिपूर्वक वन्दना-नमस्कार कर्या तथा सपरिवार-भगवान्नी सम्मुख भाथु नभायीने विनयपूर्वक अञ्जलि पुटने (नेडेला हाथने) ललाट पर राणी ठीकी रहीने सेवा करवा लागी. (१७)

‘तएणं समणे’ इत्यादि, बाद मोक्षगामी श्रमण भगवान् महावीर स्वामीने काली महारानीने लक्ष्य करी विशाल परिषदमा धर्मकथा कही. धर्मकथानु विशेष वर्णन

‘जाव’ शब्देन—‘एयस्स अगारधम्मस्स अणगारधम्मस्स सिक्खाए उट्ठिए’ इत्येषां सङ्ग्रहः । एतच्छाया च—‘एतस्य अगारधर्मस्य अनगारधर्मस्य शिक्षायाम् उत्थित’ इति । एतस्यागारधर्मस्यानगारधर्मस्य शिक्षायाम् उत्थितः=उद्यतः श्रमणोपासकः=श्रावकः श्रमणोपासिका=श्राविका वा द्वावपि विहरन्तौ आज्ञायाः=भगवदाज्ञायाः आराधकौ भवतः ॥ १८ ॥

अथ कालीवक्तव्यमाह—‘तए णं सा’ इत्यादि ।

मूलम्—तए णं सा काली देवी समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा निसम्म हट्टु—जाव—हियया समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो जाव एवं वयासी—एवं खल्लु भंते ! मम पुत्ते काले कुमारे तिहिं दंतिसहस्सेहिं जाव रहमुसलसंगामं ओयाए, से णं भंते किं जइस्सइ ? नो जइस्सइ ? जाव काले णं कुमारे अहं जीवमाणं पासिजा ? । कालीति समणे भगवं महावीरे कालिं देविं एवं वयासी—एवं खल्लु काली ! तव पुत्ते काले कुमारे तिहिं दंतिसहस्सेहिं जाव कूणिएणं रक्षा सच्चिं रहमुसलं संगामं संगामेमाणे हयमहियपवरवीरघाइयनिवयियचिंधज्जयपडागे निरालोयाओ दिसाओ करेमाणे चेडगस्स रत्तो सपक्खं सपडिदिसिं रहेणं पडिरहं हव्वमागए ॥१९॥

छाया—ततः खल्लु सा काली देवी श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य अन्तिके धर्मे श्रुत्वा निशम्य हृष्टा यावत्—हृदया श्रमणं भगवन्तं महावीरं त्रिः-

हूर्द्धे उपासकदशाङ्ग सूत्रकी अगारधर्म—संजीवनी नामकटीकामें देखना चाहिये ।

‘जाव’ शब्दसे अगार अनगार धर्मकी शिक्षामें तत्पर श्रावक और श्राविका को भगवानकी आज्ञाके आराधक जानना ॥ १८ ॥

अथवा भाटे अज्ञासुओओ अमानी भनावेवी उपासकदशाङ्गसूत्रनी अगारधर्मसंजीवनी नामनी टीकाभां लेध लेवुं लेधओ

‘जाव’ शब्दही अगार अनगार धर्मनी शिक्षाभां तत्पर श्रावक तथा श्राविकाने भगवाननी आज्ञाना आराधक संभजवा. ॥ १८ ॥

कृत्वो यावदेवमवादीत्-एवं खलु भदन्त ! मम पुत्रः कालः कुमारः त्रिभिर्दन्तिसहस्रैः यावत्-रथमुशलसङ्ग्रामम् अवयातः, स खलु भदन्त ! किं जेष्यति ? नो जेष्यति ? यावत् कालं खलु कुमारमहं जीवन्तं द्रक्ष्यामि ? कालि ! इति श्रमणो भगवान् महावीरः कालीं देवीमेवमवादीत्-एवं खलु कालि ! तव पुत्रः कालः कुमारः त्रिभिर्दन्तिसहस्रैर्यावत् कूणिकेन राज्ञा सार्द्धं रथमुशलं सङ्ग्रामं सङ्ग्रामयन् हतमथितप्रवरवीरघातितनिपतितचिह्नध्वजपताकः निरालोका दिशः कुर्वन् चेटकस्य राज्ञः सपक्षं सपतिदिक् रथेन प्रतिरथं इव्यमागतः ॥ १९ ॥

टीका-ततः=धर्मकथाश्रवणानन्तरं, काली देवी श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य अन्तिके=समीपे धर्म=श्रुतचारित्रलक्षणं श्रुत्वा=कर्णविषयीकृत्य निशम्य=हृदयेनाऽवधार्यं हृष्ट-यावत्-हृदया-हृष्टतुष्टचित्तानन्दिता हर्षवशविसर्पद्हृदया सती श्रमणं भगवन्तं महावीरं त्रिःकृत्वः=त्रिवारं यावत्-वन्दित्वा नमस्यित्वा एवं=वक्ष्यमाणम् अवादीत्=अवोचत्-हे भदन्त ! खलु=निश्चयेन एवम्=अनेन प्रकारेण मम पुत्रः कालकुमारः त्रिभिर्दन्तिसहस्रैः=हस्तिसहस्रैः, 'जाव'शब्देन-त्रिभिस्त्रिभी रथाश्वसहस्रैर्मनुष्याणां तिसृभिः कोटिभिर्युक्तो रथमुशलं सङ्ग्रामम् अवयातः=समुपागतः, हे भदन्त ! सः=कालः कुमारः खलु=निश्चयेन किं जेष्यति ? वा नो जेष्यति ? यावच्छब्देन-जीविष्यति ? नो जीविष्यति ? पराजेष्यते ? नो पराजेष्यते ? अहं कालं कुमारं खलु=निश्चयेन जीवन्तं

अब काली रानीके प्रश्नका वर्णन करते हैं- 'तएणं सा' इत्यादि ।

श्रमण भगवान् महावीरके समीप श्रुतचारित्रलक्षण धर्म सुनकर और उसे हृदयमें धारणकर प्रफुल्लित हो तीन बार वन्दन-नमस्कार करके इस प्रकार भगवानसे पूछने लगी-

हे भगवान् ! मेरा पुत्र कालकुमार तीन २ हजार हाथी-घोड़े-रथ और तान करोड पैदल सेनाके साथ रथमुशल संग्राममें गया है वह विजयी होगा या नहीं ? वह जीवित रहेगा या नहीं ? वह परा-भवको पायेगा या जीतेगा ? मैं उसे जिन्दा देखूंगी या नहीं ?

इसे काली राणीना प्रश्ननुं वर्णन करे छे- 'तएणं सा' इत्यादि

श्रमण भगवान् महावीरनी पासैथी श्रुतचारित्रलक्षण धर्म साबणीने तथा तेने हृदयमां धारण करी प्रफुल्लित थछ त्रषु वार वन्दन-नमस्कार करी आवी नीते भगवानने पूछवा लागी:-

हे भगवन् ! मेरो पुत्र कालकुमार त्रषु त्रषु हजार हाथी-घोडा-रथ तथा त्रषु करोडनी पायदल सेनानी साथे रथमुशल संग्राममा गया छे ते विजयी थसे के

द्रक्ष्यामि ? । इति कालीदेवीप्रश्नं श्रुत्वा श्रमणो भगवान् महावीरः एवं=वक्ष्य-
 याणं प्रतिवचनम् अवादीत्=अवोचत्, हे कालि ! एवं खलु तव पुत्रः कालः
 कुमारः त्रिभिर्दन्तिसहस्रैः यावच्छब्देन युद्धसामग्रीयुक्तः, कूणिकेन राज्ञा सार्द्धं
 रथमुशलं संग्राम सङ्ग्रामयन्=संग्रामं कुर्वन् 'हतमथिते'—ति—सैन्यगतहतत्वारो-
 पात् हतः, मानगतमथितत्वारोपात् मथितः, प्रवराश्रुते वीराः प्रवरवीराः=सुभटाः
 घातिताः=विनाशिता यस्य स प्रवरवीरघातितः आर्पत्वान्न निष्ठान्तस्य पूर्व-
 प्रयोगः, चिह्नस्य=सैन्यलक्षणस्य ध्वजाः=गरुडचिह्नयुक्ताः केतवः, पताकाश्च
 चिह्नध्वजपताकाः, निपातिताः चिह्नध्वजपताका यस्य स निपातितचिह्नध्वजपताकः,
 इतो मथितः प्रवरवीरघातितश्चासौ निपातितचिह्नध्वजपताकः=हतमथितप्रवरवीर-
 घातितनिपातितचिह्नध्वजपताकः, तादृशः सन् निरालोकाः=हतप्रभाः दिशः
 कुर्वन्-सर्वदिशः प्रमारदिताः कुर्वन्-चेटकस्य राज्ञः सपक्षं-समानौ पक्षौ=वाम-
 दक्षिणापार्श्वौ यस्य (आगमनस्य) तत् सपक्षं यथास्यात्तथा आगत इत्यनेनान्वयः,
 क्रियाविशेषणम्, अतः सामान्ये नपुंसकम्, एवं सप्रतिदिक्=समानाः प्रतिदिशो
 यस्य तत् सप्रतिदिक् समानप्रतिदिक्त्वेन परस्पराभिमुखं यथास्यात्तथा, इदमपि
 क्रियाविशेषणम्, रथेन प्रतिरथं-प्रतिगतः=संमुखः रथो यस्य तत् प्रतिरथं=
 रथाभिमुखं यथास्यात्तथा ह्वयं=शीघ्रम् आगतः=आयातः, चेटकराजस्य सर्वथा
 सम्मुखं समागत इत्यर्थः ॥ १९ ॥

। ऐसे काली महारानीके प्रश्नोंको सुनकर भगवान बोले—
 हे काली महारानी ! तेरा पुत्र कालकुमार तीन २ हजार हाथी-
 घोड़े-रथ और युद्धकी समस्त सामग्री सहित कूणिक राजाके साथ
 रथमुशल संग्राममें युद्ध करता हुआ वह अपनी सेना और सारी रण-
 सामग्रीके नष्ट होजाने पर, बड़े २ वीरो के मारे जाने और घायल
 होने पर तथा ध्वजा पताका आदि चिन्होंके धराशायी होजानेसे अकेला

नहि ? , ते लवतो रथे के नहि ? , ते डारी जथे के लतथे ? , हु तेने लवतो
 टैभीथ के नहि ? ,

। आवा डाली महाराणीना प्रश्नो सालणीने लगवान जेत्या-डे डाली महाराणी !
 तारे पुत्र कालकुमार तथु तथु डणर हाथी-घोडा-रथ तथा युद्धनी तमाम सामग्री
 साथे कूणिक राजनी साथे रथमुशल संग्राममां युद्ध करते थडे सेना तथा रथसामग्री
 तमाम नाथ पार्या पछी, मोटा मोटा वीरेना मरथुथी अने घायल थवाथी तथा
 ध्वज पताका आदि चिन्हे जमीनहोरत थथ जवाथी जेठेले ज योताना पराक्रमी

मूलम्—तए णं से चेडए राया कालं कुमारं एजमाणं पासइ, कालं एजमाणं पासित्ता आसुरुत्ते जाव मिसिमिसेमाणे धणुं परामुसइ, परामुसित्ता उसुं परामुसइ, परामुसित्ता वइसाहं ठाणं ठाइ, ठाइत्ता आययकण्णाययं उसुं करेइ करित्ता कालं कुमारं एगाहच्चं कूडाहच्चं जीवियाओ ववरोवेइ । तं कालगए णं काली ! काले कुमारे नो चैव णं तुमं कालं कुमारं जीवमाणं पासिहिसि ॥ २० ॥

छाया—ततः खलु स चेटको राजा कालं कुमारम् एजमानं पश्यति । कालमेजमानं दृष्ट्वा आशुरुत्तः यावत् मिसमिसन् धनुः परामृशति, परामृश्य इषुं परामृशति, परामृश्य वैशाखं स्थानं निष्ठति, स्थित्वा आयतकर्णायतमिषुं करोति, कृत्वा कालं कुमारमेकाहृत्यं कूटाहृत्यं जीवित्वाद् व्यपरोपयति । तत् कालगतः खलु कालि ! कालः कुमारः नो चैव खलु त्वं कालं कुमारं जीवन्तं द्रक्ष्यसि ॥ २० ॥

टीका—‘तएणं से चेडए’ इत्यादि—ततः=कूणिकस्य रणे चेटकसम्मुख-गमनानन्तरं सः=पूर्वोक्तः प्रसिद्धो वा चेटको राजा एजमानम्=आयान्तं कालं कुमारं पश्यति, एजमानं कालं कुमारं दृष्ट्वा=अवलोक्य आशुरुत्तः=शीघ्रकोपाविष्टः, जाव शब्देन—‘रुद्धे, कुविए, चंडिक्किए,’ एतेषां सङ्ग्रहः । एतच्छाया—रुष्टः, कुपितः, चाण्डिक्यितः, इति ॥ रुष्टः=रोषयुक्तः, कुपितः—अन्तःस्थितक्रोधेन प्रस्फुरदधरः, चाण्डिक्यितः=चाण्डिक्यं=रौद्ररूपत्वं संजातमस्येति चाण्डिक्यितः=

ही अपने पराक्रमसे सभी दिशाओंको निस्तेज करता हुआ रथपर बैठकर चेटक राजाके रथके सामने महावेगसे आया ॥ १९ ॥

‘तएणं से चेडए’ इत्यादि । तदनन्तर चेटक राजा कालकुमारको अपने सम्मुख आया हुआ देखकर तत्क्षण क्रुद्ध हो उठे, रुष्ट हुए और आन्तरिक कोपके कारण उनके होठ फडफडाने लगे, उन्होंने

अधी दिशाओने निस्तेज करतो थके रथमा भेसीने चेटक राजाना रथनी सामे महा-वेगशी आव्ये (१९)

‘तएणं से चेडए.’ इत्यादि त्थार भाट चेटकराज कालकुमारने पोतानी सम्मुख आवेकी नेधने तत्क्षण क्रोधित थई गया, रुष्ट थया तथा आन्तरिक क्रोध ने बीधे तेना होठ फडफडाने लाग्या, तेमणे रौद्र (अमानक) रूप धारण कथुं ओवं क्रोधनी

प्रकटितरौद्ररूपः, मिसमिसन्=देदीप्यमानः क्रोधज्वालय ज्वलन् इत्युपलक्षणम्, तेन 'तिवलियं भिउडिं निडाले साहडु' इत्येपामपि ग्रहणम् । त्रिवलिकां=भ्रुकुटिं नेत्रत्रिकारविशेषं ललाटे संहृत्य=विधाय धनुः=शरासन परामृशति=सज्जीकरोति, इपुं=वाणं परामृशति=धनुषि संयोजयति, उपसर्गवलात्तत्तदर्थो धातूनामनेकार्थत्वाद्वा, परामृश्य=धनुः शरं च परस्परं संयोज्य वैशाखं स्थानं योधस्थानविशेषं तिष्ठति=आश्रयति, स्थित्वा=योधस्थानमाश्रित्य इपुं=वाणं आयतकर्णायतम्=आकर्णान्तं करोति=कर्षयति कृत्वा=आकर्णान्तं वाणमाकृष्य कालं कुमारमेकाहृत्यम्-एकैवाऽऽहृत्या आहननं प्रहारो यत्र (जीवितव्यपरोपणे) तदेकाहृत्यं 'क्रियाविशेषणं' तत्, एवं कूटाहृत्यं कूटे इव तथाविधपापाणसम्पुटादौ कालविलम्बाभावसाधर्म्याद् आहृत्या=हननं यत्र तत् कूटाहृत्यं, कूटस्यैव पापाणमयमहामारणयन्त्रस्यैवाहृत्याऽऽहननं वा यत्र तत् कूटाहृत्यम्, इदमपि क्रियाविशेषणम्, तद् यथास्यात्तथा जीविताद् व्यपरोपति=व्यपगमयति हन्तीति यावदिति, हे कालि ! तत्=तस्मात् कारणात् खलु=निश्चयेन कालगतः=कालवशं प्राप्तः कालः कुमारः । नैव खलु त्वं कालं कुमारं जीवन्तं द्रक्ष्यसि=अवलोकयिष्यसि ॥ २० ॥

मूलम्—तए णं सा काली देवी समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म महया पुत्तसोएणं अप्फुत्ता समाणी परसुनियत्ताविव चंपगलया धसत्ति धरणीयलंसि सव्वं-

रौद्ररूप धारण किया एवं क्रोधकी ज्वालासे जलने लगे । ललाटपर आवेशसे तीन सल चढाते हुए धनुषको सज्ज किया और उसपर वाण चढाकर युद्ध स्थलमें खड़े होगये और वाणको कान तक खींचा, अन्तमें चेटकने-कूट, अर्थात् बहुत बडा पत्थरका घनाया हुआ 'महाशस्त्रविशेष' जिम्मे एक वारके प्रहारसे ही प्राण निकल जाय, उसी प्रकार वाणके प्रबल प्रहारसे कालकुमारके प्राण लेलिये, इस लिए हे काली ! तू कालकुमारको जीवित नहीं देखेगी ॥ २० ॥

ज्वालाथी गणवा लाग्या आवेशथी कपाण उपर त्रष्टु देभा यडावीने धनुष सन्न करी तेना उपर भाष्य यडावीने युद्धनी जगोम्मे ठिसा रक्षा अने भाषुने डान सुधी भेय्यु आभरे चेट्टे 'कूट' अर्थात् णडु मेटा पत्थरनु. अंनावेल 'महाशस्त्रविशेष' जेना अेठ वारना प्रहारथीन प्राष्य नीकणी कय, तेवा भाषुने प्रबल प्रहार करी कालकुमारने प्राष्य लध बीधो. आथी हे माली ! तु कालकुमारने अचित देखे नोड (२०)

गेहिं संनिवडिया । तएणं सा काली देवी मुहुत्तरेण आ-
सत्था समाणी उट्टाए उट्टेइ, उट्टित्ता समणं भगवं महावीरं
वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी-एवमेयं भंते !
तहमेयं भंते !, अवितहमेयं भंते !, असंदिद्धमेयं भंते !, सच्चेणं
एसमट्टे से जहेव तुब्भे वदह,--त्तिकट्टु समणं भगवं महावीरं वंदइ
नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता तमेव धम्मियं जाणप्पवरं दूरुहित्ता
जामेव दिसं पाउब्भूया तामेव दिसं पडिगया ॥ २१ ॥

छाया-ततः खलु सा काली देवी श्रमणस्य भगवतो महावीरस्याऽ-
न्तिके एतमथ श्रुत्वा निशम्य महता पुत्रशोकेन आक्रान्ता सती परशुनिकृत्तेव
चम्पकलता 'धस' इति धरणीतले सर्वाङ्गः संनिपतिता । ततः खलु सा काली
देवी मुहुर्तान्तरेण आस्वस्था सती उत्थया उत्तिष्ठति, उत्थाय श्रमणं भगवन्तं
महावीरं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत्-एवमेतद् भदन्त !
तथ्यमेतद् भदन्त ! अवितथ्यमेतद् भदन्त ! असंदिग्धमेतद् भदन्त !, सत्यः
खलु एषोऽर्थः तद् यथैतद् यूयं वदथ, इति कृत्वा श्रमणं भगवन्तं महावीरं
वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा तमेव धार्मिकं यानप्रवरं दूरोहति, दूरुह्य
यस्या दिशः प्रादुर्भूता तामेव दिशं प्रतिगता ॥ २१ ॥

टीका—' तएणं सा ' इत्यादि-ततः=पुत्रवृत्तान्तश्रवणानन्तरं सा काली
देवी श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य अन्तिके=समीपे एतम्=' कालं कुमारं
जीवितं न द्रक्ष्यसी 'ति अर्थं=वृत्तान्तं श्रुत्वा=आकर्ष्य निशम्य=हृदयेनावधार्य
महता=विशालेन पुत्रशोकेन=कालकुमारनामकनिजसुतमरणजन्यदुःखेन 'अप्फुष्णा'
इति-आक्रान्ता व्याप्ता सती परशुनिकृत्तेव=कुठारच्छिन्ना चम्पकलता इव 'धस'
इति धरणीतले सर्वाङ्गैः समूर्च्छं संनिपतिताः । ततः=तत्पश्चात् सा काली देवी

' तएणं सा ' इत्यादि-भगवानके समीप अपने पुत्रका ऐसा
वृत्तान्त सुनकर और उसे निश्चयस्वरूप समझकर काली महारानी
पुत्रमरणके दुःखसे दुःखित होकर कुठारसे कटी हुई चम्पकलताके

' तएणं सा ' इत्यादि भगवानकी पासैसी पोताना पुत्रनुं अेवुं वृत्तान्तं
सांखणीने तथा ते नककी समञ्जने काली महाराणी पुत्रमरणना दुःखी दुःखित थधने
केम कूडाडीथी कपायेसी यपकलता पंडी जय तेम भूर्विष्ठत थधने जमीन पर धडाक

मुहूर्तान्तरेण=अन्तर्मुहूर्तानन्तरम् आस्वस्था=लब्धचैतन्या सती उत्थया=कथमपि दास्यादिना उत्थानक्रियया उत्तिष्ठति, उत्थाय श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते, नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा एवं=वक्ष्यमाणम् अवादीत्—हे भदन्त ! एतत्=भवद्भाषितम्, एवम्=एवमेवाऽस्ति, तथ्यम्=यथार्थम्, हे भदन्त ! अवितथ्यम्=यथार्थस्वरूपनिरूपकम्, हे भदन्त ! असंदिग्धम्=संशयविपरीतानध्यवसायवर्जितम् हे भदन्त ! एषः=भवद्भुक्तः अर्थः=भावः खलु=निश्चयेन सत्यः=सम्यग्निर्णायकः, तद् यथा=येन प्रकारेण युयमेतद्ब्रूयथ, इति कृत्वा=इति भगवत्समीपे निवेद्य श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा, नमस्यित्वा तमेव=पूर्वोक्तमेव धार्मिकं यानप्रवरं दूरोहति, दूरुह्य यस्या दिशः प्रादुर्भूता तामेव दिशं प्रतिगता ॥ २१ ॥

कालीराज्या गमनानन्तरं गौतमः पृच्छति—‘भंतेत्ति’ इत्यादि ।

मूलम्—भंतेत्ति भगवं गोयमे जाव वंदति नमंसति, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी—कालेणं भंते ! कुमारे तिहिं दंतिसहस्सेहिं जाव रहमुसलं संगामं संगामेमाणे चेडएणं रत्ता एगाहच्चं कूडाहच्चं जीवियाओ ववरोविए समाणे कालमासे कालं किच्चा कहिं उववन्ने ? । गोयमाइ समणे भगवं महावीरे गोयमं एवं वयासी—एवं खलु गोयमा ! काले कुमारे तिहिं दंतिसहस्सेहिं जाव जीवियाओ ववरोविए समाणे कालमासे

समान मूर्च्छित हो घडामसे भूमिपर गिर पडी । कुछ समय पश्चात् सचेष्ट होकर दासी आदिके द्वारा खडी हुई । बाद भगवानको वन्दन नमस्कार करके बोली—हे भदन्त ! जैसा आप कहते हैं, वैसा ही है, यथार्थ है, मन्देह रहित है, सत्य है ओर सर्वथा सत्य है । ऐसा कहकर भगवान् को वन्दन—नमस्कार करके पूर्वोक्त धार्मिक रथमें बैठकर अपने स्थानपर गयी ॥ २१ ॥

पडी गड. थोडा वधत पडी चेतना आवी तथा दासीओनी भददथी ओली थर. पडी भगवानने वदन नमस्कार करीने बोली—हे लहत नेम आप कहे छे. तेमज छे. यथार्थ छे. शकारहित छे. सत्य छे तथा सर्वथा सायुंज छे. जेम कही भगवानने वदन नमस्कार करी अगाडि वरुणवेला धार्मिक रथमां ओसीने पोताना स्थाने गड. (२१)

कालं किञ्चा चउत्थीए पंकप्पभाए पुढवीए हेमाभे नरगे दस-
सागरोवमट्टिइएसु नेरइएसु नेरइयत्ताए उव्वन्ने ॥ २२ ॥

छाया—भदन्त ! इति भगवान् गौतमः यावद् वन्दते नमस्यति
वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत्—कालः खलु भदन्त ! कुमारः त्रिभिर्दन्ति-
सहस्रैर्यावद् रथमुशलं संग्रामं संग्रामयन् चेटकेन राज्ञा एकाहत्यं कूटाहत्यं
जीविताद् व्यपरोपितः सन् कालमासे कालं कृत्वा क्व गतः ? क्व उपपन्नः ? ।
गौतम ! इति श्रमणो भगवान् महावीरः गौतममेवमवादीत्—एवं खलु गौतम !
कालः कुमारस्त्रिभिर्दन्तिसहस्रैर्यावद् जीविताद् व्यपरोपितः सन् कालमासे
कालं कृत्वा चतुर्थ्या पङ्कपभायां पृथिव्यां हेमाभे नरके दशसागरोपमस्थितिकेषु
नैरयिकेषु नैरयिकतया उपपन्नः ॥ २२ ॥

टीका—हे भदन्त ! इति संबोध्य-भगवान् गौतमः यावत्=मोक्षगति-
प्राप्तं श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवा-
दीत्—हे भदन्त ! कालः कुमारः खलु=निश्चयेन त्रिभिर्दन्तिसहस्रैः यावद् रथ-
मुशलं सङ्ग्रामं सङ्ग्रामयन् चेटकेन राज्ञा वज्ररूपेण एकेनैव बाणेन जीविताद्
व्यपरोपितो मृतः सन् कालमासे=कालावसरे कालं कृत्वा क्व गतः ? क्व उपपन्नः ?

हे गौतम ! इति संबोध्य श्रमणो भगवान् महावीरो भगवन्तं गौतमम्-
एवम्=वक्ष्यमाणम् अवादीत्—हे गौतम ! खलु=निश्चयेन एवम्=उक्तकर्मकारकः
कालकुमारः त्रिभिर्दन्तिसहस्रैर्युक्तो यावत् जीविताद् व्यपरोपितः सन् कालमासे

रानीके चले जानेके बाद श्री गौतम स्वामी भगवानसे पूछते
हैं—' भंतेत्ति ' इत्यादि ।

हे भदन्त ! कालकुमार तीन २ हजार हाथी घोड़े रथ और
अपने सम्पूर्ण सैन्य वर्गके साथ रथमुशल संग्राममें लड़ाई करता हुआ
चैटक राजाके वज्रस्वरूप एक ही बाणसे मारा गया । वह मृत्युके
समय कालप्राप्त होकर कहाँ गया और कहाँ उत्पन्न हुआ ? ।

भगवान कहते हैं—हे गौतम ! वह क्रूर कर्म करनेवाला काल-

राष्ट्रीना गया पछी श्री गौतम स्वामी भगवानने पूछे छे:- 'भंतेत्ति' इत्यादि-
हे भदन्त ! कालकुमार त्रय त्रयु डण्डर हाथी-घोडा-रथ तथा पोताना स पूरु
सैन्य वर्ग साथे रथमुशल संग्राममें लडाई करतो थके चैटक राजाना वज्रस्वरूप ओके
आणुथी मार्यो गयो. ते मृत्युने अवसरे काल करीने कथां गयो अने कथा उत्पन्न थयो ? .
भगवान कहे छे—हे गौतम ! क्रूर कर्म करनेवाले ते कालकुमार पोतानी

कालं कृत्वा चतुर्थ्यां पङ्कमभायां पृथिव्यां हेमाभे नामके नरके=नरकवासे दग्गमा-
गगेपमस्थितिकेषु नैरयिकेषु नैरयिकतया=नारकित्वेन उपपन्नः=समृत्पन्नः॥२२॥

गौतमम्नामी पुनः पृच्छति—'कालेणं भते' इत्यादि ।

मृचम्—कालेणं भते ! कुमारे केरिसएहिं आरंभेहिं केरिस-
एहिं समारंभेहिं केरिसएहिं आरंभसमारंभेहिं केरिसएहिं भोगेहिं
केरिसएहिं संभोगेहिं केरिसएहिं भोगसंभोगेहिं केरिसएण वा
अमुभकडकम्मप्पवभारेणं कालमासे कालं किञ्चा चउत्थीए पंकप्प-
भाए पुढवीए जाव नेरइयत्ताए उववन्ने ? । एवं खलु गोयमा !
तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे नामं नयरे होत्था, रिद्ध-
त्थिमियसमिद्धे । तत्थणं रायगिहे नयरे सेणिए नामं राया होत्था,
महया० । तस्स णं सेणियस्स रत्तो नंदा नामं देवी होत्था, सोमाला
जाव विहरति । तस्सणं सेणियस्स रत्तो पुने नंदाए देवीए अत्तए
अभाए नामं कुमारे होत्था, सोमाले जाव सुरुवे साम—दान—भेद—
दंड—कुमले जहा चित्तो जाव रत्तधुराए चिंतए यात्रि होत्था ॥ २३ ॥

हाया-काशः खलु मत्तन् ! कुमारः कीदृशो गारम्भैः, कादृशैः समा-
रम्भैः, कादृशैः प्रारम्भगतारम्भैः, कादृशीर्भोगैः, कादृशीः संभोगैः, कीदृशीः
भोगसंभोगैः कीदृशेन वा भूयुःकृतार्थार्थान्तराणं कालमासे कालं कृत्वा चतुर्थ्यां
पङ्कमभायां पृथिव्यां यावत् नैरयिकतया उपपन्नः ? । एवं खलु गौतम ? तस्मिन्
काले तस्मिन् मगये राजपूरं नाम नगरमभूत् कृत्स्नितमिगममूढम् । तत्र खलु
राजपूरं नगरं भेजिती नाम राजाऽभूत् मया० । तस्य खलु श्रेणिकस्य राज्ञो
मन्दा नाम देवी भूयुः सुहृत्मा० यावत् विहरति । तस्य खलु श्रेणिकस्य
कुमार अपती मन्दा मन्थित म्दत्ता इत्या मन्दासं मरकर पङ्कमभा नामक-
शीघ्रनरकके, अन्तर हेमा अनामके नरकायात्मने दग्गमागरोपम स्थितियात्ता
नैरयिक भूया ॥ २२ ॥

हे- मन्थित म्दत्ता इत्या मन्दासं मरकर पङ्कमभा नामक-
शीघ्रनरकके, अन्तर हेमा अनामके नरकायात्मने दग्गमागरोपम स्थितियात्ता
नैरयिक भूया ॥ २२ ॥

राज्ञः पुत्रो नन्दाया देव्या आत्मजः अभयो नाम कुमारोऽभूत् सुकुमारः यावत्
सुरूपः साम-दान-भेद-दण्डकुशलः, यथा चित्तो यावद् राज्यधुरायाश्चिन्त-
कोऽभूत् ॥ २३ ॥

टीका-कालकुमारः खलु हे भदन्त ! कीदृशैः आरम्भैः प्राणातिपातादि
सावधानुष्ठानैः, समारम्भैः=खर्चादिना प्राण्युपमर्दनरूपव्यापारैः, आरम्भसमा-
रम्भैः=आरभ्यन्ते=विनाश्यन्ते जीवा यैर्हिंसादिव्यापारैरित्यारम्भास्तेषां समा-
रम्भाः सम्पादनानि तैः, कीदृशैः भोगैः=शब्दादिविषयैः ?, कीदृशैः सम्भोगैः=
तीव्राभिलाषजनकविषयैः ?, कीदृशैः भोगसम्भोगैः=महारम्भपरिग्रहरूपविषया-
भिलाषैः ?, कीदृशेन वा अशुभकर्मप्राग्भारेण=अशुभकर्मसमूहेन कालमासे=काला
वसरे कालं कृत्वा चतुर्थ्या पृथिव्यां यावत् नैरधिकतया उपपन्नः ? । हे गौतम !
'एवं खलु' इत्यादि निगदमिदम् ॥ २३ ॥

पुनः श्री गौतम स्वामी पूछते हैं:- 'कालेणं भंते' इत्यादि ।

हे भदन्त ! वह कालकुमार हिंसा झूठ आदि सावध अनुष्ठा-
नरूप आरम्भसे तलवार आदि शस्त्रोंद्वारा प्राणियोंका उपमर्दनरूप समा-
रम्भसे, जिससे प्राणियोंका संहार होता है ऐसे आचरण करनेसे, किस
तरहके शब्दादि विषय भोगोंसे तथा किस तरहके तीव्र अभिलाषाजनक
विषयोंके संभोगोंसे और किस तरहके महारम्भ और महापरिग्रहरूप
विषयोंके अभिलाषारूप भोगापभोगोंसे और कौनसे अशुभ कर्मोंके
पुञ्जसे वह काल करके चौथे नरकमें गया ? । भगवान कहते हैं-हे
गौतम ! उस काल उस समयमें राजगृह नामक नगर था जो ऋद्धि
अदिसे समृद्ध था । उसमें श्रेणिक राजा राज्य करते थे । उनकी रानीका

पुनः गौतम स्वामी पूछे थे:- 'कालेणं भंते' इत्यादि

हे भदन्त ! ते कालकुमार हिंसा, झूठ, आदि सावध अनुष्ठानरूप आरम्भसे,
तलवार आदि शस्त्रोंकी प्राणियोंको नाश करवाइए, समारम्भसे, जेनाथी प्राणियोंको
संहार थाय अवा आरम्भ अनु आचरण करवाथी, डेवी जतना शब्दादि विषयलोगथी,
डेवी जतनी तीव्र आभिलाषा वडे उत्पन्न यता विषयाना संलोगथी, तथा डेवी जतना
महारम्भ अने महापरिग्रहरूप विषयाना आभिलाषारूप लोपोपलोगोथी तथा डेवां
अशुभ कर्मना पुञ्जसे ते काल करीने (मृत्यु पासीने) योथा नरकमां गयो ? भगवान
कहे थे-हे गौतम ! ते काल ते समयमें राजगृह नामकी नगरी छती जे ऋद्धि
आदिथी समृद्ध छती. तेमा श्रेणिक राजा राज्य करता छता. तेनी रानीका

मूलम्—तस्स णं सेणियस्स रत्तो चेल्लणा नामं देवी होत्था,
सोमाला जाव विहरइ । तएणं सा चेल्लणा देवी अन्नया
कयाइं तंसि तारिसगंसि वासघरंसि जाव सोहं सुमिणे पासित्ता
णं पडिबुद्धा, जहा पभावई, जाव सुमिणपाठगा पडिविसज्जिता,
जाव चेल्लणा से वयणं पडिच्छित्ता जेणेव सए भवणे तेणेव
अणुपविट्ठा ॥ २४ ॥

छाया—तस्य खलु श्रेणिकस्य राज्ञश्चेल्लना नाम देवी आसीत् सुकुमारा
यावद् विहरति । ततः खलु सा चेल्लना देवी अन्यदा कदाचित् तस्मिन्
तादृशके वासगृहे यावत् सिंहं स्वप्ने दृष्ट्वा खलु प्रतिबुद्धा यथा प्रभावती,
यावत् स्पन्नपाठकाः प्रतिविसर्जिताः यावत् चेल्लना तस्य वचनं प्रतीष्य यत्रैव
स्वकं भवनं तत्रैवानुप्रविष्टा ॥ २४ ॥

टीका—‘तस्स णं’ इत्यादि । ‘तस्य खलु श्रेणिकस्य राज्ञः’ इत्यारभ्य
‘तत्रैवानुप्रविष्टा’ इत्यन्तम्य व्याख्यानं सुगमम् ॥ २४ ॥

नाम नन्दा था, जो अत्यन्त सुकुमार था, यावत् अपने पूर्वजन्म उपाजित
पुण्यसे प्राप्त मनुष्य-सम्बन्धी सुखोंका अनुभव करती हुई विचरती
थी । उनके अभयकुमार नामक पुत्र था, जो सुकुमार स्वरूप तथा सभी
लक्षणोंसे युक्त था । साम, दाम, दण्ड, भेद आदि नीतिमें निपुण था ।
चित्तप्रधानके समान राजकार्य दक्षतासे करता था ॥ २३ ॥

‘तस्स णं’ इत्यादि ।

उस श्रेणिक राजाकी दूसरी रानी चेल्लना थी, जो सुकुमारता
(कोमलता) आदि नारीगुणोंसे सभी तरह युक्त थी । उसने स्वप्नमें
एक समय सिंह देखा उसी समय जाग उठी और प्रभावतीके समान

हुत जे गहु सुकुमार हुती पोताना पूर्वजन्ममां करेला पुष्यर्था प्राप्त थयेला मनुष्य
सणधी सुणोने अनुभव करती विचरती हुती तेने अभयकुमार नामे पुत्र हुतो जे
सुकुमार रूपवान तथा गधा लक्षणोधी युक्त हुतो साम, दाम, दण्ड, भेद आदि
नीतिमा निपुण हुतो चित्त प्रधाननी पेटे राजकार्यने दक्षतापूर्वक करतो हुतो. २३

‘तस्स णं’ इत्यादि ते श्रेणिक राजानी थील्ल चेल्लना हुती जे सुकुमार
(कोमलता) आदि स्त्रीने लगता गुणोधी सर्व प्रकारे युक्त हुती तेणे स्वप्नामा ज्येष्ठ
वृषभ सिंहने जेथे आने जगती उठी प्रभावतीनी पेटे राजाने स्वप्न कळुं जेथी राजाने

मूलम्—तए णं तीसे चेल्लणाए देवीए अन्नया कयाइं तिणहं
मासाणं बहुपडिपुण्णाणं अयमेयारूवे दोहले पाउब्भूए-धन्नाओ
णं ताओ अम्मयाओ जाव जम्मजीवियफले जाओ णं णियस्स
रत्तो उदरवलीमंसेहि सोल्लेहि य तल्लिएहि य भज्जिएहि य
सुरं च जाव पसन्नं च आसाएमाणीओ जाव परिभाएमाणीओ
दोहलं पविणेंति ॥ २५ ॥

छाया—ततः खलु तस्याश्चेल्लनाया देव्या अन्यदा कदाचित् त्रिषु
मासेषु बहुप्रतिपूर्णेषु अयमेतद्रूपो दोहदः प्रादुर्भूतः-धन्याः खलु ताः अम्बाः
यावत् (तासां) जन्म-जीवित-फलं याः खलु निजस्य राज्ञः उदरवलिमांसैः
शूलैश्च तल्लितैश्च भजितैश्च सुरां च यावत् पसन्नां च आम्बाद्यन्त्यो यावत्
परिभाजयन्त्यो दोहदं प्रविणयन्ति ॥ २५ ॥

टीका—‘तएणं तीसे’ इत्यादि । ततः=तदनन्तरं खलु=निश्चयेन अन्यदा
‘कदाचित् चेल्लनाया देव्याः त्रिषु-मासेषु बहुप्रतिपूर्णेषु अयम्=वक्ष्यमाणः, ए-
तद्रूपः=एतदाकारकः दोहदः प्रादुर्भूतः=समुत्पन्नः-ताः अम्बाः=जनन्यः धन्याः
=प्रशंसनीयाः यावत् जन्मजीवितफलं=तासां जन्मनो जीवितस्य च फलं=
आनन्दरूपम् याः निजस्य राज्ञः=स्वामिनः खलु शूलैःपक्वैः तल्लितैः=स्नेहादिना

राजाको जाकर स्वप्न कहा, राजाने स्वप्नपाठक बुलाये । उन्होंने स्वप्नका
फल कहा और राजाने उन्हें प्रीतिदान देकर विसर्जित (विदा) किये ।
स्वप्नफल सुननेके पश्चात् रानी अपने महलमें गयी ॥ २४ ॥

‘तएणं तीसे’ इत्यादि ।

बाद रानी चेल्लनाको, गर्भके तीन महिने पूरे होनेपर ऐसा
दोहद-(दोहला) उत्पन्न हुआ कि-धन्य हैं वे माताएँ, यावत् उन्हीका
जन्म और जीवित सफल है जो अपने पतिके उदरवलि (कलेजा)के

स्वप्नपाठकेने ज्ञाताव्या, तेज्योञ्जे स्वप्नक्षल कथं. राज्ञञ्जे तेमने प्रीतिदान आपीने
विसर्जित (विदाय) कथां. स्वप्नक्षल सांभज्या पछी राणी पोताना भडेलमां गध २४

‘तएणं तीसे’ इत्यादि पछी राणी चेल्लनाने त्रिषु भडिना पुरा तथा ज्येवे
दोहदो (तीस्र भ्रष्टा) थयो के धन्य ते माताञ्जेने ज्जेने तेमने जन्म तथा ज्येवतर सक्ष
छे के जे पोताना पतिना उदरवलि (कलेजा)ना मांसने शूल उपर सेकीने तथा तेसमां

पक्वैः भर्जितैः=केवलवह्निपक्वैः उदरवलिमांसैः दोहदं प्रविणयन्तीत्यनेन मन्वन्धः,
सुरां=मदिरां च यावत् परिभाजयन्त्यः=अन्योन्यं ददत्यो दोहदं प्रविणयन्ति=
पूरयन्ति, अहमपि स्वपतेः श्रेणिकस्य राज्ञः पक्वतलितभर्जितोदरवलिमांसैर्दोहदं
प्रपूरयेयं तदा धन्या किंतु तादृक्करणेऽममर्थाऽस्मि, इत्यादि ॥ २५ ॥

मूलम्--तएणं सा चेल्हणा देवी तंसि दोहलंसि अविणिज्ज-
माणंसि सुक्का भुक्खा निम्मंसा ओलुग्गा ओलुग्गसरीरा नित्तेया
दीणविमणवयणा पंडुइयमुही ओमंथियनयणवयणकमला जहो-
चियं पुप्फवत्थगंधमल्लालंकारं अपरिभुंजमाणी करतलमलियव्व
कमलमाला ओहयमणसंकप्पा जाव झियाइ ॥ २६ ॥

छाया—ततः खलु सा चेल्लना देवी तस्मिन् दोहदे अविनीयमाने
शुष्का बुभुक्षिता निर्मासा अवरुग्गा, अवरुग्गशरीरा निस्तेजाः दीनविमनावदना
पाण्डुकितमुवी अवमन्थितनयनवदनकमला यथोचितं पुष्पवस्त्रगन्धमाल्यालङ्कारम्
अपरिभुञ्जन्ती करतलमलितेव कमलमाला उपहतमनःसङ्कल्पा यावद् ध्यायति । २६।

टीका—‘तएणं सा’ इत्यादि-ततः=तदनु सा चेल्लना देवी तस्मिन्
दोहदे अविनीयमाने = अपूर्यमाणे सति शुष्का=शुष्कप्राया रुधिरपरिशोषणात्,

मांसको शूलपर पकाकर और तेलमें तलकर एवं अग्निमें सेककर मदिराके
साथ आंस्वादन करती हुई यावत् परस्पर-आपसमें देती हुई अपने
दोहद (दोहले)को पूरा करती हैं। यदि मैं भी अपने पति श्रेणिक
राजाके पकाये हुवे तले हुवे सेके हुवे उदरवलि (कलेजा)के मांससे
दोहदको पूरा करू तो मैं धन्य वनू परन्तु ऐसा करनेमें असमर्थ हूँ ॥ २५ ॥

‘तएणं सा’ इत्यादि—

उसके बाद वह चेलना रानी दोहद नहीं पूरा होनेसे रक्तके

तणीने के आग्नभां सेडीनें हाइनी साथे तेने स्वाह लेती अने अरसपरस देता पोताना
अे दोहदने परिपूर्ण करे छे. जे हु पणु भारा पति श्रेणिक राजना पकायेलां तणेला
अने सेकेला कलेजनां मासथी भारे दोहद पूरा करे तो धन्य अनु पणु तेम करवाभां
हुं असमर्थ छु. २५

‘तएणं सा’ इत्यादि

त्यार पछी ते चेलना राणी पोताने दोहद (धरुवा) पूरा न थवाथी दोही सूकाध

बुभुक्षिता=आहाराऽकरणेन बुभुक्षितेव, निर्मांसा=मांसरहिता-मांसवृद्धयभावात्,
 अवरुग्णा=रोगवतीव मनोवृत्तिभङ्गात्, अवरुग्णशरीरा=भग्नगात्रा, निस्तेजाः=
 शरीरद्युतिरहिता, दीनविमनोवदना=दीनस्येव वि=विगतम्=उत्साहरहितं मनः,
 कान्तिरहितं वदनं च यस्याः सा तथा-अकिञ्चनवदुत्साहहीनमनोनिष्प्रभमुख-
 वतीति भावः । पाण्डुकितमुखी=पाण्डुवर्णयुक्तमुखवती, अवमथितनयनवदनकमला
 =अधः कृतनेत्रमुखकमला, यथोचितं=यथायोग्य पुष्पवस्त्रगन्धमालालङ्कारम्-अपरि-
 भुञ्जन्ती=असेवमाना, करतलमलिता=हस्ततलमर्दिता कमलमालेव कान्तिहीना,
 उपहनमनःसंकल्पा = कर्तव्याकर्तव्यविवेकविकला यावद् ध्यायति=आर्तध्यानं
 करोति ॥ २६ ॥

मूलम्-तएणं तीसे चेल्लणाए देवीए अंगपडियारियाओ
 चेल्लणं देविं सुक्कं भुक्खं जाव झियायमाणीं पासंति, पासित्ता
 जेणेव सेणिए राया तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता करतल-

सूख जानेके कारण सूख गयी । अरुचिसे आहार आदि नहीं करनेके
 कारण भूखी रहने लगी । शरीरमें मांस नहीं रहनेके कारण क्षीण-
 काय हो गयी, मनको चोट पहुँचनेसे रोगी के समान हो गयी,
 शरीरकी कान्ति हट जानेसे तेजरहित हो गयी, उसका मन दीनके
 समान उत्साहरहित और सुख निस्तेज हो गया, अतएव रानीका
 चेहरा फीका पड़ गया । इस कारण नेत्र और मुखकमलको नीचे
 किये हुए यथायोग्य पुष्प वस्त्रादिकको भी नहीं धारण करती थी,
 वह हाथसे मली हुई-कुचली हुई कमलकी मालाके समान कान्तिहीन
 दुःखित मनवाली कर्तव्याकर्तव्यके विवेकसे रहित होकर यावत् आर्त-
 ध्यान करती थी ॥ २६ ॥

जवाथी शुष्क थछ गछ. अरुचिथी आहार आदि न करवाथी भूषी नडेवा साडी शरीरमां
 मांस न रडेवाथी शरीरे दुगणी थछ गछ मनमां घा लागवाथी शरीरसमान थछ गछ.
 शरीरनी कान्ति ओछी थतां तेजरहित थछ गछ तेनुं मन दीन समान उत्साहरहित
 तथा मोहुं निस्तेज थछ गथु आम राणीने अडेरे प्रीके पडी गयो. आथी नेत्र तथा
 मुख नीचे जुकावीने छेडी थती यथायोग्य पुष्प-वस्त्रादि अलकारे धारणु करती नडेती.
 ते हाथना मर्दनथी करमाथेदी कमलनी भाणा जेवी कान्ति वगरनी दुःखित मन वाणी कर्तव्य
 अकर्तव्य विवेकथी रहित थनी जछने सधणे। वपत आर्तध्यानमां वीतावती डती २६

परिगृह्यं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु सेणियं रायं एवं
वयासी-एवं खलु सामी ! चेह्णणा देवी न जाणामो केणइ
कारणेणं सुक्का भुक्खा जाव झियायइ ॥ २७ ॥

छाया-ततः खलु तस्याश्रेष्ठनाया देव्या अङ्गप्रतिचारिकाश्रेष्ठनां देवीं
शुष्कां बुभुक्षितां यावद् ध्यायन्तीं पश्यन्ति, दृष्ट्वा यत्रैव श्रेणिको राजा तत्रैव
उपागच्छन्ति, उपागत्य, करतलपरिगृहीतं शिरसावत्तं मस्तकेऽञ्जलिं कृत्वा
श्रेणिकं राजानमेवमवादिषुः-एवं खलु स्वामिन ! चेह्णणा देवी न जानामः
केनापि कारणेन शुष्का बुभुक्षिता यावद् ध्यायति ॥ २७ ॥

टीका—‘ तएणं तीसे ’ इत्यादि—‘ झियायइ ’ इत्यन्तस्य व्याख्या
निगदसिद्धा ॥ २७ ॥

मूर्च्छ-तएणं से सेणिए राया तासिं अंगपडियारियाणं
अंतिए एयमट्टं सोच्चा निसम्म तहेव संभंते समाणे जेणेव
चेह्णणा देवी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता, चेह्णणं देविं
सुक्कं भुक्खं जाव झियायमाणिं पासित्ता एवं वयासी-किञ्चं
तुमं देवाणुप्पिये ! सुक्का भुक्खा जाव झियायसि ?

तए णं सा चेह्णणा देवी सेणियस्स रत्तो एयमट्टं णो
आढाइ णो परिजाणाइ तुसिणीया संचिट्टइ ।

‘ तएणं तीसे ’ इत्यादि.

उसके बाद चेलना रानीकी सेवा करनेवाली दासियोने अपनी
रानीकी ऐसी अवस्था देखकर श्रेणिक राजाके पास गयी, और हाथ
जोड़कर श्रेणिक राजासे कहने लगीं-हे स्वामिन् ! चेलना महारानी
न जाने किस कारण सूख गयी है और दुःखित होकर आर्तध्यान
करती है । ॥ २७ ॥

‘ तएणं तीसे ’ इत्यादि

त्यार पछी चेलना राणीनी सेवा करवावाणी दासीयो पातानी राणीनी ऐवी
अवस्था जेधने श्रेणिक राजनी पासे जध हाथ जेडी श्रेणिकराजने कडेवा लागी-हे
स्वामिन् ! जणर नथी हे चेलना राणी शु कारथुथी सुकाथ गध छे तथा दुःखित यधने
आर्तध्यान करे छे. २७

तएणं से सेणिए राया चेल्लणं देविं दोच्चंपि तच्चंपि एवं वयासी—किं णं अहं देवानुप्पिए ! एयमट्टस्स नो अरिहे सवणयाए जं णं तुमं एयमट्टं रहस्सीकरेसि ? ।

तएणं सा चेल्लणा देवी सेणिएणं रत्ता दोच्चं पि तच्चं पि एवं वुत्ता समाणी सेणियं रायं एवं वयासी—णत्थि णं सामी ! से केइ अट्टे जस्स णं तुब्भे अणरिहा सवणयाए, नो चेव णं इमस्स अट्टस्स सवणयाए, एवं खलु सामी ! ममं तस्स ओरालस्स जाव महांसुमिणस्स तिण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं अयमेयारूवे दोहले पाउब्भूए—‘धन्नाओ णं ताओ अम्मयाओ जाओ णं णियस्स रन्नो उदरवल्लिमंसेहिं सोल्लएहि य जाव दोहलं विणेति’ तएणं अहं सामी ! तंसि दोहलंसि अविणिज्जमाणंसि सुक्का भुक्खा जाव झियायामि ॥२८॥

छाया—ततः खलु स श्रेणिका राजा तासामङ्गप्रतिचारिकाणामन्तिके एतमर्थं श्रुत्वा निशम्य तथैव संभ्रान्तः सन् यत्रैव चेल्लना देवी तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य चेल्लनां देवीं शुष्कां बुभुक्षितां यावद् ध्यायन्तीं दृष्ट्वा एवमवादीत्—किं खलु त्वं देवानुप्रिये ! शुष्का बुभुक्षिता यावद् ध्यायसि ? ।

ततः खलु सा चेल्लना देवी श्रेणिकस्य राज्ञः एतमर्थं नो आद्रियते नो परिजानाति तूष्णीका संतिष्ठते ।

ततः खलु स श्रेणिको राजा चेल्लनां देवीं द्वितीयमपि तृतीयमपि (वारं) एवमवादीत्—किं खलु अहं देवानुप्रिये ! एतदर्थस्य नो अर्हः श्रवणाय यत्खलु त्वं एतमर्थं रहस्यीकरोषि ? ।

ततः खलु सा चेल्लना देवी श्रेणिकेन राज्ञा द्वितीयमपि तृतीयमपि (वारं) एवमुक्त्वा सती श्रेणिकं राजानमेवमवादीत्—नास्ति खलु स्वामिन् ! स कोऽप्यर्थः यस्य खलु यूयमनर्हाः श्रवणाय, नो चैव खलु अस्यार्थस्य श्रवणाय एवं खलु स्वामिन् । मम तस्य उदारस्य यावत् महास्वप्नस्य (फलस्वरूप-गर्भस्य) त्रिषु मासेषु बहुप्रतिपूर्णेषु अयमेतद्रूपो दोहदः प्रादुर्भूतः—‘धन्याः खलु

ता अम्वाः याः खलु निजस्य राज उदरवलिमांसैः शूलकैश्च यावद् दोहदं विन-
यन्ति,' ('यद्यहमप्येवं करोमि तदा धन्या भवामि' इति । ततः खलु अहं हे
स्वामिन् ! तस्मिन् दोहदे अविनीयमाने शुष्का बुभुक्षिता यावद् ध्यायामि ॥२८॥

टीका—'तएणं से' इत्यादि । संभ्रान्तः सन्=आश्चर्यचकितः सन् ।
नो आद्रियते=न सम्मानयति, नो परिजानाति=न सम्यक् नृपवचनं हृदये
निदधाति । तूष्णीका=ममालम्बितमौनभावा । द्वितीयमपि द्वितीयवारं तृतीय-
मपि=तृतीयवारम् । शेषं सुगमम् ॥ २८ ॥

'तएणं से' इत्यादि.

महाराज श्रेणिक दासियोंके सुखसे इस वृत्तान्तको सुनकर
घबराते हुए शीघ्र चेलना रानीके पास आये, और चेलना रानीकी
दुःखस्थाको देखकर बोले—हे देवानुप्रिये ! तुम्हारी इस तरहकी दुःख-
जनक अवस्था कैसे हो गयी ? और क्यों आर्तध्यान कर रही हो ?,
यह सुनकर रानी कुछ नहीं बोली । पश्चात् राजाने दो तीन बार
पुनः पूछा—हे देवानुप्रिये ! क्या तुम्हारी इस बातको सुनने लायक
मैं नहीं हूँ जो मुझसे तुम अपनी बात छिपाती हो ? इस प्रकार
राजाद्वारा दो तीन बार पूछे जाने पर रानी बोली—हे स्वामिन् !
ऐसी कोई बात नहीं है जो आपसे छुपाई जाय और आप उसे
सुननेके योग्य नहीं हों, आप उसे सर्वथा सुन सकते हैं, वह बात
इस प्रकार है—उस उदार स्वप्नके फल स्वरूप गर्भके तीसरे मासके
अन्तमें मुझे इस प्रकार दोहद (दोहला) उत्पन्न हुआ है कि—वे माताए

'तएणं से' इत्यादि

महाजन श्रेणिक, दासीयाने बैठेथी आ वृत्तान्तने सावणी, गलराता, जलही
चेलना राणीनी प से आन्या, तथा चेलना राणीनी पराण अवस्थाने जेधने मोह्य।—
हे देवानुप्रिये ! तमारी आ प्रकारनी दुःखजनक अवस्था डेवी रीते थड गड ? शा
भाटे आर्तध्यान करे छे ? आ सावणीने राणी कड न मोह्यी पछी रान्तमे मे त्रयु
वार करीने पूछ्यु—हे देवानुप्रिये ! शुं तमारी आ बात सावणवा लायक हुं नथी हे
जेथी माराथी तुं पोतानी बात छुपी राभे छे ? आ प्रकारे मे त्रयु वार रान्तमे
पूछवाथी राणी मोह्यी—हे स्वामी ! जेवी थोड बात नथी जे आपथी छानी रभाय
तथा आप ते सावणवा योग्य न छे। आप ते सर्वथा सावणी थडे छे। जे बात
आभ छे—ते उदार स्वप्नना इस स्वरूप गर्भना त्रीण मडिनाना अंतमा मने जेवा
प्रकारने मोह्ये (धुंछा) उत्पन्न थये। हे ते माताने धन्य छे हे जे पोताना पतिना

मूलम्—तएणं से सेणिए राया चेळणं देविं एवंवयासी
माणं तुमं देवाणुप्पिए ! ओहय० जाव झियायह, अहं णं
तहा जइस्सामि जहा णं तव दोहलस्स संपत्ती भविस्सइत्ति
कट्टु चेळणं देविं ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं पियाहिं मणुन्नाहिं
मणामाहिं औरालाहिं कल्लाणाहिं सिवाहिं धन्नाहिं मंगल्लाहिं
मियमधुरसस्सिरीयाहिं वग्गूहिं समासासेइ, समासासित्ता चेळ-
णाए देवीए अंतियाओ पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता जेणेव
बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव सीहासणे तेणेव उवागच्छइ,
उवागच्छित्ता सीहासणवरंसि पुरत्थाभिमुहे निसीयइ, निसीइत्ता
तस्स दोहलस्स संपत्तिनिमित्तं बहूहिं आएहिं उवाएहि य
उप्पत्तियाहि य वेणइयाहि य कम्मियाहि य पारिणामियाहि
य परिणामेमाणे२ तस्स दोहलस्स आयं वा उवायं वा ठिइं
वा आवदमाणे ओहयमणसंकप्पे जाव झियायइ ॥ २९ ॥—

छाया—ततः खलु स श्रेणिको राजा चेल्लनां देवीमेवमवादीत्—मा
खलु त्वं देवानुपिये ! अवहत्त० यावद् ध्याय, अहं खलु तथा यतिष्ये, यथा
खलु तव दोहदस्य सम्पत्तिर्भविष्यतीति कृत्वा चेल्लनां देवीं ताभिरिष्टाभिः
कान्ताभिः प्रियाभिमनोज्ञाभिर्मनोऽमाभिरुदाराभिः कल्याणाभिः शिवाभिर्धन्या-

धन्य हैं जो अपने पतिके उदरवलिका मांस पकाकरके तलकरके और
अग्निमें सेक भूनकर मदिराके साथ एक दूसरी सखीको देती हुई—
आस्वादन करती हुई अपना दोहद पूरा करती हैं । मुझे भी ऐसा
ही दोहद उत्पन्न हुआ है—लेकिन हे स्वामिन् ! वह दोहद पूरा नहीं
होनेसे आज मेरी यह दशा हुई है और मैं आर्तध्यान करती हूँ ॥२८॥

उद्धर—वदिना मासने पडावी तजीने अग्निमा सेकी भूलू, मदिरानी साथे अेक णील
अणीने आपती आस्वाड लेती पोताने दोडद पूरे करे छे भने पणु अेवोण दोडद
उत्पन्न थये छे पणु छे स्वाभिन् ! ते पुरे नडि थवाथी आण भारी आवी दशा
थर छे अने आर्तध्यान करे छुं (२८)

भिर्माङ्गल्याभिर्मितमधुरसश्रीकाभिर्वल्गुभिः समाश्वासयति, समाश्वास्य चेल्लनाया देव्या अन्तिकात् प्रतिनिष्क्रामति, प्रतिनिष्क्रम्य यत्रैव वाद्या उपस्थानशाला यत्रैव सिंहासनं तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य सिंहासनत्ररे पौरस्त्याभिमुखो निपीदति, निपद्य तस्य दोहदस्य सम्पत्तिनिमित्तं बहुभिरायैरुपायैश्च औत्पत्तिकीभिश्च वैनयिकीभिश्च कार्मिकी (कर्मजा) मिश्च पारिणामिकीभिश्च परिणामयन् २ तस्य दोहदस्य आयं वा उपायं वा स्थितिं वा अत्रिन्दन् अपहतमनः संकल्पो यावद् ध्यायति ॥ २९ ॥

टीका—‘तएणं से’ इत्यादि । ततः=तदनन्तरं स श्रेणिको राजा चेल्लनामवादीत्—हे देवानुप्रिये ! त्वं आर्तध्यानं मा कुरु, अहं तथा यतिष्ये यथा तत्र दोहदस्य सम्पत्तिः=मत्पन्नता भविष्यतीति कृत्वा=इति कथयित्वा चेल्लनां देवीं ताभिः=प्रक्षयमाणाभिः उष्ट्राभिः=अभिलपणीयाभिः, कान्ताभिः=वाञ्छितार्थपूरणीभिः, प्रियाभिः=प्रेमोत्पादिकाभिः, मनोज्ञाभिः=शोभनाभिः=मनोऽसाभिः=पुनःपुनःमनोऽनुस्मरणीयाभिः, उदाराभिः=अत्यद्भुताभिः, ऋष्याणीभिः=वाञ्छितार्थप्राप्तिकारिकाभिः, शिवाभिः=उपद्रवरहिताभिः, धन्याभिः=गर्भवाञ्छासम्पादिकाभिः, माङ्गल्याभिः=कर्णप्रियाभिः, मितमधुरसश्रीकाभिः=प्रमितमत्तकोकिलशब्दचन्मनोहरस्वरशोभाभिः, वल्गुभिः=वाणीभिः समाश्वासयति=

‘तएणं से’ इत्यादि ।

चेल्लना रानीकी ऐसी बात सुनकर राजा बोले—हे देवानुप्रिये ! तुम आर्तध्यानको छोड़ो मैं, ऐसा ही प्रयत्न करूँगा जिससे तुम्हारा दोहद पूरा हो । ऐसा कहकर राजाने मनको आहाद करनेवाली, वाञ्छित अर्थको देनेवाली प्रेममयी मनोज्ञ, बारम्बार मनको अच्छी लगानेवाली, अद्भुत, मनोवाञ्छित फलको देनेवाली, सुखदायी, गर्भवाञ्छाको पूर्ण करनेवाली, कानोंको प्रिय लगानेवाली, मत्त कोकिलाके स्वरके समान मनोहर वाणी द्वारा रानीको सन्तुष्ट किया । रानीको

‘तएणं से’ इत्यादि

चेल्लना राणीनी अवी बात साबणी राजा गोल्या—‘हे देवानुप्रिये ! तु आर्तध्यान छोडी हे हु अवेक प्रयत्न करीश हे बेथी तारे होइह पूरा थाय अेम कही राजअे मनने आनंद करवनारी, वाछित अर्थ (धन्छा प्रभाअे) देवावाणी, प्रेममयी, मनोज्ञ, बारंवार मनने सारी लागनारी, अद्भुत, मनोवाञ्छित इणने देवावाणी, सुखदायी, गर्भवांछाने पूर्ण करवावाणी, कानने प्रिय लागवावाली, मत्त भनेल कोयलना स्वर बेवी मनोईर वाणी द्वारा राणीने अंतुष्ट करी. राणीने आ प्रकाई

सन्तोषयति । समाश्वास्य चेल्लनादेवीसमीपात् प्रतिनिष्क्रामति, प्रतिनिष्क्रम्य यत्र बाह्या उपस्थानशाला आस्थानमण्डपः, यत्र सिंहासनं तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य सिंहासनवरे=श्रेष्ठसिंहासने पौरस्त्याभिमुखः=पूर्वाभिमुखः सन् निषीदति=उपविशति तस्य दोहदस्य सम्पत्तिनिमित्तं=सम्पादनार्थं बहुभिः=अनेकैः आयैः=साधनैः उपयैः=प्रयोगैः, तथा-ओत्पत्तिकीभिः=शास्त्राभ्यासनिरपेक्षाऽ-दृष्टाऽश्रुताऽननुभूतविषयग्राहिकाभिः, च-पुनः वैनयिकीभिः=गुरुरत्नाधिकादिशुश्रू-ष्यसंजाताभिः, कार्मिकीभिः=कर्मजाभिः-अनिशं क्रियाकरणेन जायमानाभिः, पारिणामिकीभिः=वयआदिपरिणाम जन्याभिः, परिणामः=दीर्घकालपूर्वापरपर्या-लोचजन्य आत्मनो धर्मविशेषः, स प्रयोजनमस्याः सा पारिणामिकी, अव-यवगतबहुत्वविवक्षायां ताभिः, चतुर्विधाभिः बुद्धिभिः परिणामयन् २=दोहद-सम्पादनरूपविचारं कुर्वन् २ तस्य दोहदस्य आयं=साधनम् वा उपायं=प्रयोगं वा रिथति=व्यवस्थां वा अविन्दन्=अलभमानो भूपः-अपहतमनःसंकल्पो यावद् ध्यायति=आर्तध्यानं करोति ॥ २९ ॥

इस प्रकार आश्वासन देकर राजा सभामण्डपमें आये, और पूर्व दिशाकी ओर मुँहकर अपने सिंहासनपर बैठे तथा उस दोहदको पूरा करनेकी चिन्ता करने लगे, परन्तु—

(१) शास्त्रोंके अभ्यास विना ही अनदेखे अनसुने और अनुभवमें भी न आये हुए विषयोंको यथार्थ रूपसे ग्रहण करनेवाली ओत्पत्तिकी बुद्धि, (२) विनयसे उत्पन्न होनेवाली वैनयिकी बुद्धि, (३) हमेशा कार्य करनेसे उत्पन्न होनेवाली कार्मिकी बुद्धि, (४) वयकेपरिणामसे उत्पन्न होनेवाली पारिणामिकी बुद्धि,

इन चारों प्रकारकी बुद्धि द्वारा तथा अनेक साधन (साधनो) एवम् अनेक प्रयोग द्वारा भी राजा उस दोहदको पूरा करनेमें समर्थ नहीं हो सके अतएव आर्तध्यान करने लगे ॥ २९ ॥

आश्वासन करने राजा सभामण्डपमें आया, तथा पूर्वदिशा तरफ में राभी घेताना सिंहासन पर बैठा तथा ते दोहद (दोहदा) पूरा करवाने चिन्ता करवा लाया परन्तु—

(१) शास्त्रोंका अभ्यास विना न देखेला न सुनेला तथा अनुभवमा पण्डित न आवेला विषयाने यथार्थरूपे लक्षणवाणी 'ओत्पत्तिकी' बुद्धि, (२) विनयशी उत्पन्न यनारी 'वैनयिकी' बुद्धि, (३) हमेशा कार्य करवाशी उत्पन्न यनारी 'कार्मिकी' बुद्धि, (४) उभरना परिणामे उत्पन्न यनारी 'पारिणामिकी' बुद्धि आ आरे प्रकारनी बुद्धि द्वारा तथा अनेक साधन साधनो ज्येठे अनेक प्रयोग द्वारा पण्डित राजा ते दोहदने पूरा करवासां समर्थ न तथा तेथी आर्तध्यान करवा लाया. (२९)

मूलम्—इमं च अभयं कुमारे ण्हाए जाव सरीरे, सयाओ
 गिहाओ पडिनिक्खमइ पडिनिक्खमिन्ता जेणेव बाहिरिया उव-
 ट्ठणसाला जेणेव सेणिए राया तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता
 सेणियं रायं ओहय० जाव झियायमाणं पासइ, पासित्ता एवं
 वयासी-अन्नया णं ताओ ! तुब्भे ममं पासित्ता हट्ट जाव
 हियया भवह किन्नं ताओ ! अज्ज तुब्भे ओहय० जाव झिया-
 यह ? तं जइणं अहं ताओ ! एयस्स अट्टस्स अरिहे सवणयाए
 तो णं तुब्भे मम एयमट्टं जहाभूयमवितहं असंदिद्धं परिकहेह,
 जाणं अहं तस्स अट्टस्स अंतगमणं करोमि ! तएणं से सेणिए
 राया अभयं कुमारं एवं वयासी-णत्थि णं पुत्ता ! से केइ अट्टे
 जस्स णं तुमं अणरिहे सवणाए एवं खल्लु पुत्ता ! तव चुल्ल-
 माउयाए चेह्णणाए देवीए तस्स ओरालस्स जाव महासुमि-
 णस्स तिण्हं मासाणं बहुपडिपुञ्जाणं जाव उयरवल्लिमंसेहिं
 सोल्लेहि य जाव दोहलं विणेति ।

तएणं सा चेह्णणा देवी तंसि दोहलंसि अविणिज्जमा-
 णंसि सुक्का जाव झियायइ । तएणं अहं पुत्ता ! तस्स दोहलस्स
 संपत्तिनिमित्तं बहुहिं आपहिं य जाव ठिइं वा अविंदमाणे,
 ओहय० जाव झियामि ! तएणं से अभयं कुमारे-सेणियं रायं
 एवं वयासी-माणं ताओ ! तुब्भे ओहय० जाव झियायह, अहं
 णं तह जइहामि, जहाणं मम चुल्लमाउयाए चेह्णणाए देवीए
 तस्स दोहलस्स संपत्ती भविस्सइ-त्ति कट्टु सेणियं रायं-ताहिं
 इट्ठाहिं जाव वग्गूहिं समासासेइ, समासासित्ता जेणेव सए
 गिए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अविभंतरए रहस्सिए
 ठाणिज्जे पुरिसे सदावेइ, सदावित्ता एवं वयासी-गच्छह णं

तुम्हे देवाणुप्पिया ! सूणाओ अल्लं मंसं रुहिरं वत्थिपुडगं च
गिण्हह । तएणं ते ठाणिजा पुरिसा अभयेणं कुमारेणं एवंवुत्ता
समाणा हट्टुं करतलं जाव पडिसुणेत्ता अभयस्स कुमारस्स अंति-
याओ पडिनिक्खमंति पडिनिक्खमिन्ता जेणेव सूणा तेणेव उवा-
गच्छंति, उवागच्छिन्ता, अल्लं मंसं रुहिरं वत्थिपुडगं च गिण्हंति
गिण्हिन्ता, जेणेव अभए कुमारे तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छिन्ता
करयलं तं अल्लं मंसं रुहिरं वत्थिपुडगं च उवणेति ॥ ३० ॥

छाया—इतम् खलु अभयः कुमारः स्नातः यावत्-शरीरः स्वकात्
गृहात् प्रतिनिष्क्रामति, प्रतिनिष्क्रम्य यत्रैव बाह्या उपस्थानशाला यत्रैव श्रेणिको
राजा तत्रैवोपागच्छति, श्रेणिकं राजानम् अवहत्० यावद् ध्यायन्तं पश्यति,
द्रष्ट्वा एवमवादीत्-अन्यदा खलु तात ! यूयं मां द्रष्ट्वा इष्टुं यावद्दृष्ट्याः
भवथ, किं खलु तात ! अथ यूयम् अवहत्० यावद् ध्यायथ, तद् यदि खल्वहं
तात ! एतस्यार्थस्याऽहः भवणतायै तदा खलु यूयं मम एतमर्थं यथाभूत-
मवितथमसंदिग्धं परिकथयत, यस्मात् खल्वहं तस्यार्थस्यान्तगमनं करोमि ।

‘ इमं च णं ’ इत्यादि ।

इधर अभयकुमार स्नानकर यावत् सभी प्रकारके आभूषणोंसे
सुसज्जित हो अपने महलसे निकलकर उसी सभा-मण्डपमें आए
जहाँ श्रेणिक राजा बैठे थे । श्रेणिक राजाको आर्तध्यान करते हुए
देखकर बोले—

हे तात ! और दिन जब मैं आता था तो आप मुझे देख-
कर प्रसन्न होते थे, किन्तु आज क्या कारण है जो मेरी ओर देखते
भी नहीं और आर्तध्यानमें बैठे हैं । अगर इस बातको सुननेके

‘ इमं च णं ’ इत्यादि ।

आ आणु अलयकुमार स्नान करी तमाम प्रकारनां आभूषणोत्थी संनम थहं
भडेवमांथी नीकणी तेज सलामंडपमां आब्बा के जयां श्रेणिक राजा मेठा इता. श्रेणिक
राजने आर्तध्यान करता नेधं कलु—हे तात ! हुं जयां श्रेणिक दिवसे आवतो त्यारे
आप भने नेधं पुशी बता इता पणु आब शु कारणु छे के मारी सामुय नेता
नधी तथा आर्तध्यानमां मेठा छे. मे हुं आ बातने सांभजवा योज्य हुं जेमं सम-

ततः खलु स श्रेणिको राजा अभयकुमारमेवमवादीत्-नास्ति खलु पुत्र ! स कोऽप्यर्थः यस्य खलु त्वमनर्हः श्रवणतायै । एवं खलु पुत्र ! तव भुक्तमातृश्वेल्लनाया देव्यास्तस्योदारस्य यावत् महास्वप्नस्य त्रिषु मासेषु बहुमतिपूर्णेषु यावत् उदरवलिमांसैः शूलकैश्च यावत् दोहदं विनयन्ति । ततः खलु सा चेल्लना देवी तस्मिन् दोहदे अविनीयमाने शुष्का यावद् ध्यायति । ततः खल्वहं पुत्र ! तस्य दोहदस्य सम्पत्तिनिमित्तं बहुभिरायैरुपायैश्च यावत् स्थितिं वा अविन्दन् अपहत० यावद् ध्यायामि ।

ततः खलु सः अभयः कुमारः श्रेणिकं राजानमेवमवादीत्-मा खलु तात ! यूयम् अवहत० यावद् ध्यायत, अहं खलु तथा यतिष्ये यथा खलु

योग्य मुझे समझते हैं तो जैसी हो वैसी यथार्थरूपसे निःसंकोच होकर मुझे कहिये, जिससे मैं उसके निराकरणका प्रयत्न करूँ ।

अभयकुमारकी ऐसी विनययुक्त वाणी सुनकर राजा बोले-हे पुत्र ! ऐसी कोई बात नहीं है जो तुझसे छिपाई जाय-तेरी छोटी माता चेलना रानीको महास्वप्नके तीसरे महिनेके अन्तमें दोहद (दोहला) उत्पन्न हुआ है कि-‘आपके उदरवलिके मांसको शूला (पका) कर और तल-भूनकर मदिराके साथ आस्वादन करूँ ।’

इस दोहद (दोहला) के पूर्ण न होनेके कारण वह महादुःखित और कृशकाय होकर आर्तध्यान कर रही है । हे पुत्र ! इस दोहद (दोहला) को पूर्ण करनेके लिए अनेक उपाय सोचे परन्तु कोई उपाय पूरा नहीं दिखायी देता एतदर्थ आर्तध्यान करता हुआ बैठा हूँ । अपने पिताके मुखसे ऐसे वचन सुनकर, अभयकुमार बोले-हे तात ! आप

जता हो तो वे होय ते यथार्थ रूपे निःसंकोच यथ मने कहे जेथी हु तेनु निराकरण करवा प्रयत्न कर

अभयकुमारनी ऐवी विनययुक्त वाणी सुनकर राजा बोल्या-हे पुत्र ! ऐवी कोय बात नहीं हे जे तेराथी छानी रणाय-तारी नानी माता चेलना राखीने, महास्वप्नना त्रीन्त मासने अते दोहद (दोहला) उत्पन्न थये छे जे-‘तमारा उदरवलि-मांसने पकावी तणी लुलु (सेकी) मदिरानी साथे आस्वाद करूँ आ दोहद पुरे न थवाने करणे ते महादुःखित तथा कृशकाय थथ आर्तध्यान करी रही छे, हे पुत्र ! ते, दोहदने पूर्ण करवा माटे अनेक उपाय विचारी जेथा पाणु कोय उपाय पूरा थाय तेम देभातो नहीं. जे माटे आर्तध्यान करतो, ओहो छु पोताना पिताना मुपेथी

मम क्षुल्लमातुश्चेल्लनाया देव्यास्तस्य दोहदस्य सपत्तिर्भविष्यतीति कृत्वा श्रेणिकं राजानं ताभिरिष्टाभिर्यावद् वल्गुभिः समाश्रासयति, समाश्रास्य यत्रैव स्वकं गृहं तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य आभ्यन्तरान् राहस्यिकान् स्थानीयान् पुरुषान् शब्दयति, शब्दयित्वा एवमवादीत्-गच्छत खलु यूयं देवानुप्रियाः ! सूनात आर्द्रं मांसं रुधिरं वस्तिपुटकं च गृहीत ।

ततः खलु ते स्थानीयाः पुरुषा अभयेन कुमारेण एत्रमुक्ताः सन्तः दृष्ट्वाः करतल० यावद् प्रतिश्रुत्य अभयस्य कुमारस्यान्तिकात् प्रतिनिष्क्रामन्ति, प्रतिनिष्क्रम्य यत्रैव सूना तत्रैवोपागच्छन्ति, आर्द्रं मांसं रुधिरं वस्तिपुटकं च गृह्णन्ति, गृहीत्वा यत्रैव अभयः कुमारस्तत्रैवोपागच्छन्ति, उपागत्य करतल० तमार्द्रं मांसं रुधिरं वस्तिपुटकं च उपनयन्ति ॥ ३० ॥

टीका—‘इमं च णं’ इत्यादि—यथाभूतमघितथमसंदिग्धमित्येतानि पदानि पूर्वमेव व्याख्यातानि । राहस्यिकान्—गुप्तविचारकान् स्थानीयान्=गौरवशालिनः स्वभृत्यान्, सूनातः=अमारिघोषितातिरिक्तवधस्थानात् आर्द्रं मांसं रुधिरं वस्तिपुटकं शोणितयुक्तमुदरान्तर्वर्त्तिभागं (‘कलेजा’ इति भाषायाम्) गृहीत=आनयतेत्यर्थः । शेषं स्पष्टम् ॥ ३० ॥

आर्तध्यानको छोडे मैं शीघ्र ऐसा उपाय करूंगा जिससे मेरी साताका दोहद (दोहला) पूर्ण होजाय । इस तरह विनययुक्त मधुर वचनोंसे अपने पिताका मन संतुष्ट करके अभयकुमार अपने महल आये । महल आकर उनने अपने गुप्त पुरुषोंको बुलाये और कहा कि—हे देवानुप्रियो ! तुम लोग अमारि-घोषणाकी सीमाके बाहरके वधस्थानसे वस्तिपुटके साथ गीला मांस लाओ । इसके बाद उन राजपुरुषोंने उनकी आज्ञाका यथावत् पालन किया ॥ ३० ॥

એવા વચન સાભળી અભયકુમાર બોલ્યા—હે તાત ! આપ આર્તધ્યાન છોડો, હું જલદી એવો ઉપાય કરીશ કે જેથી મારી માતાનો દોહદ પૂર્ણ થઈ જશે ।
પ્રમાણે—વિનયવાળા મધુર વચનોથી પોતાના પિતાનું મન સંતુષ્ટ પમાડી અભયકુમાર પોતાને મહેલ ગયા ત્યાં આવીને તેણે અંગત ગુપ્ત પુરુષોને બોલાવીને કહ્યું કે—હે દેવાનુપ્રિયો ! તમે દોહડો અમારિ ઘોષણા કરેલી સીમા (રાજ્યની અમુક સીમાની અંદરે હિંસા ન કરવી એવી ઘોષણા—જાહેરાતવાળી જગ્યા) થી બહાર કસોઈખાનામાથી બસ્તીપુટ સાથે લીલું (તાંબું) માંસ લઈ આવો.
ત્યાર પછી તે રાજપુરુષોએ તેમની આજ્ઞાનું કહ્યા પ્રમાણે પાલન કર્યું (૩૦)

मूलम्—तएणं से अभए कुमारे तं अहं मंसं रुहिरं कप्प-
णीकप्पियं करेइ, करित्ता जेणेव सेणिए राया तेणेव उवागच्छइ,
उवागच्छित्ता, सेणियं रायं रहसिगयं सयणिजंसि उत्ताणयं
निवज्जावेइ, निवज्जावित्ता, सेणियस्स उदरवलीसु तं अहं मंसं
रुहिरं विरवेइ, विरवित्ता, वत्थिपुडएणं वेढेइ, वेढित्ता सवन्ती-
करणेणं करेइ, करित्ता चेळ्णं देविं उप्पिपासाए अवलोयण-
वरगयं ठवावेइ, ठवावित्ता चेळ्णाए देवीए अहे सपक्खं सप-
डिदिसिं सेणियं रायं सयणिजंसि उत्ताणगं निवज्जावेइ, सेणि-
यस्स रन्नो उदरवलिमंसाइं कप्पणीकप्पियाइं करेइ, करित्ता से
य भायणंसि पक्खवति ।

तएणं से सेणिए राया अलियमुच्छियं करेइ करित्ता मुहु-
त्तंतरेणं अन्नमन्नेणं सद्धिं संलवमाणे चिट्ठइ ।

तएणं से अभयकुमारे सेणियस्स रन्नो उदरवलिमंसाइं
गिण्हेइ, गिण्हित्ता जेणेव चेळ्णा देवी तेणेव उवागच्छइ,
उवागच्छित्ता चेळ्णाए देवीए उवणेइ ।

तएणं सा चेळ्णा देवी सेणियस्स रन्नो तेहिं उदरवलि
मंसेहिं सोल्लेहिं जाव दोहलं विणेइ ।

तएणं सा चेळ्णा देवी संपुण्णदोहला एवं संमाणिय-
दोहला विच्छिन्नदोहला तं गब्भं सुहं सुहेणं परिवहइ ॥ ३१ ॥

छाया-ततः खलु सः अभयः कुमारस्तमात्रे मासं रुधिरं कल्पनी-
कल्पितं करोति, कृत्वा यत्रैव श्रेणिको राजा तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य श्रेणिकं

राजानं रहसिगतं शयनीये उत्तानकं निषादयति, निषाद्य श्रेणिकस्योदरवलिषु तदार्षं मांसं रुधिरं विरावयति, विराव्य, वस्तिपुटकेन वेष्टयति, वेष्टयित्वा स्रवन्तीकरणेन करोति, कृत्वा चेल्लनां देवीमुपरिमासादे अवलोकनव्रगतां स्थापयति, स्थापयित्वा चेल्लनाया देव्या अधः सपक्षं सप्रतिदिक् श्रेणिकं राजानं शयनीये उत्तानकं निषादयति, श्रेणिकस्य राज्ञ उदरवलिमांसानि कल्पनीकल्पितानि करोति, कृत्वा तच्च भाजने प्रक्षिपति ।

ततः खलु स श्रेणिको राजा अलीकमूर्च्छां करोति, कृत्वा मुहूर्तान्तरेण अन्योऽन्येन सार्द्धं संलपन् तिष्ठति । ततः खलु सः अभयकुमारः श्रेणिकस्य राज्ञः उदरवलिमांसानि गृह्णाति, गृहीत्वा यत्रैव चेल्लना देवी तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य चेल्लनाया देव्या उपनयति । ततः खलु सा चेल्लना देवी श्रेणिकस्य राज्ञस्तैरुदरवलिमांसैः शूलैर्यावद् दोहदं विनयति ।

ततः खलु सा चेल्लना देवी सम्पूर्णदोहदा एवं संमानितदोहदा विच्छिन्नदोहदा तं गर्भं सुखं-सुखेन परिवहति ॥ ३१ ॥

टीका—‘तएणं से’ इत्यादि—ततः=तदनन्तरं सः=अभयः कुमारः तद्=उपनीतम्-आर्द्रम् मांसं रुधिरं कल्पनीकल्पितं-कल्पनी=कर्त्तरिका ‘कतरणी’ इति भाषायाम्, तथा कल्पितं = कर्तितं करोति, कल्पशब्दोऽत्र छेदनार्थकः, उक्तञ्च—‘सामर्थ्ये वर्णनायां च, छेदने करणे तथा ।

औपम्ये चाधिवासे च, कल्प-शब्दं विदुर्बुधाः ॥ १ ॥’

‘तएणं से’ इत्यादि—उसके बाद अभयकुमारने एकान्त स्थानमें राजाको सीधा सुलाकर उनके पेटपर उस मांस-लोथड़ेको रक्त्वा, फिर उसे वस्तिचर्मसे बांधा, वह ऐसा प्रतीत होता था जैसे उससे रक्त झरता हो । तत्पश्चात् रानीको ऊपर-महलमें बुलवाई और उस दृश्यको देख सके ऐसे योग्य सुविधाजनक स्थानपर बैठाई बाद राजाको जिसे रानी ठीक तरहसे देख सके ऐसे तथा कुछ अन्धकारवाले स्थानपर सुलाया,

‘तएणं से’ इत्यादि पछी अलयकुमारने अकेलत स्थानमा राजने सीधा (सीता) सुवाडी तेना पेट उपर ते मांसना लोथ ने राण्ये पछी तेने अस्तीचर्मथी बाध्या ते अणुं लागतुं हुतु के अणु तेमांथी बोडी अरतु डोय त्यार पछी राणीने उपर-महलमां बाधावी तथा ते आ देभाव जेध शके जेवा योग्य सुविधाजनक स्थाने जेसाडी. पछी राजने जेम राणी अराअर जेध शके तेवा अने थोडा अंधकारवाणा स्थाने सुवाड्या पछी

कृत्वा यत्रैव श्रेणिको राजा तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य श्रेणिकं राजानं रहसिगतम्=एकान्तेस्थितं शयनीये=शय्यायाम् उत्तानकं=उत्तानं निपादयति=शाययति, निपात्र=शाययित्वा श्रेणिकस्योदरवलिषु=उदरभागेषु तद्=उपनीतम् आद्रं मांसं रुधिरं च विरावयति=धातूनामनेकार्थत्वादुपसर्गबलाद्वा स्थापयतीत्यर्थः, विराव्य=स्थापयित्वा वस्तिपुटकेन वेष्टयति, वेष्टयित्वा स्रवन्तीकरणेन करोति=स्यन्दमानीकरोति, कृत्वा उपरि प्रासादे चेल्लनां देवीम् अवलोकन-वरगताम्=सम्यङ्निरीक्षणपरां स्थापयति, यथा सा सम्यम् द्रष्टुं शक्नुयात्तथा प्रासादोपर्युपवेशयति, स्थापयित्वा, चेल्लनाया देव्या अधः=नीचैः सप्रक्षं=समानवामदक्षिणपार्श्वे सप्रतिदिक्=समानप्रतिदिग्भागं सर्वथा चेल्लनासंमुखं यथा म्यात्तथा श्रेणिकं राजानं शयनीये उत्तानकं निपादयति=किञ्चिदन्धकारावृत्तप्रदेशे शाययति । श्रेणिकस्य राज्ञ उदरवलिमांसानि, कल्पनीकल्पितानि=शस्त्रकर्तिताः नीव करोति, कृत्वा तच्च=मांसं रुधिरं च भाजने प्रक्षिपति=निदधाति ।

ततः खलु स श्रेणिको राजा अलीकमूर्च्छां=कपटमूर्च्छां करोति, कृत्वा मुहूर्तान्तरेण अन्योऽन्येन=परस्परेण साद्धं संलपन्=वार्तालापं कुर्वन् तिष्ठति ।

ततः खलु स अभयकुमारः श्रेणिकस्य राज्ञः उदरवलिमांसानि गृह्णाति, गृहीत्वा यत्रैव चेल्लना देवी तत्रैवोपागच्छति; उपागत्य च चेल्लनाया देव्याः उपनयति=समीपे स्थापयति ।

ततः खलु सा चेल्लना देवी श्रेणिकस्य राज्ञस्तेरुदरवलिमांसैः शूलैः=पक्वैः, यावद् दोहदं विनयति=पूरयति ।

ततः खलु सा चेल्लना देवी सम्पूर्णदोहदा=सम्पूर्णमनोरथा एवं सम्मानितदोहदा=आदत्तदोहदा, विच्छिन्नदोहदा=इष्टवस्तुप्राप्त्याऽन्यवस्त्वभिलापरहिता तं गर्भं सुखं मुखेन परिवहति=धारयति ॥ ३१ ॥

फिर राजाके पेटपर बँधे हुए उस मांसको कतरनी (कैंची) से काट-काटकर चर्तनमें रख दिया, कुछ देर तक राजा झूठी मूर्छामें पड़े रहे, और बाद आपसमें बात-चीत करने लगे ।

इस प्रकार अभयकुमारने रानीका दोहद पूरा किया । रानी अपने दोहदके पूर्ण होनेपर सुखपूर्वक गर्भको धारण करने लगी ॥३१॥

राजाना पेट उपर गाधेहु ते मास कातरनी कापी-कापीने वासलुमां राणी हीधुं. थोडा वणत सुधी राजा थोटी मूर्छामां पड्या रहा अने पछी आपसमां बात करवा लाग्या. आपी रीते अलयकुमादे राणीने दोहद (इष्टा) पुरे कर्यो. राणी पोताने दोहद पुरे यथाशी गर्भने धारण करती सुख पूर्वक रहेवा लागी (३१)

मूलम्—तए णं तीसे चेल्लणाए देवीए अन्नया कयाइ पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि अयमेयारूवे जाव समुपज्जित्था, जइ ताव इमेणं दारएणं गब्भगएणं चैव पिउणो उदरवलिमंसाणि खाइयाणि तं सेयं खलु मम एयं गब्भं साडित्तए वा गालित्तए वा विद्धंसित्तए वा, एवं संपेहेइ संपेहित्ता तं गब्भं बहूहिं गब्भसाडणेहि य गब्भपाडणेहि य गब्भगालणेहि य गब्भविद्धंसणेहि य इच्छइ साडित्तए वा पाडित्तए वा गालित्तए वा विद्धंसित्तए वा, नो चैव णं से गब्भे सडइ वा पडइ वा गलइ वा विद्धंसइ वा ॥ ३२ ॥

छाया-ततः खलु तस्याश्चेल्लनाया देव्या अन्यदा कदाचित् पूर्वरात्रापर-रात्र कालसमये अयमेतद्रूपो यावत् समुदपद्यत-यदि तावत् अनेन दारकेण गर्भगतेन चैव पितुरुदरवलिमांसानि खादितानि तत् श्रेयः खलु मम एतं गर्भं शातयितुं वा पातयितुं वा गालयितुं वा विध्वंसयितुं वा । एवं संप्रेक्षते, संप्रेक्ष्य तं गर्भं बहुभिर्गर्भशातनैश्च गर्भपातनैश्च गर्भगालनैश्च गर्भविध्वंसनैश्च इच्छति शातयितुं वा पातयितुं वा गालयितुं वा विध्वंसयितुं वा, नो चैव खलु स गर्भः शीर्यते वा पतति वा गलति वा विध्वंसते वा ॥ ३२ ॥

टीका—‘तएणं तीसे’ इत्यादि-ततः=तदनन्तरम् शातयितुम्=औषधैर्विशीर्णयितुं, पातयितुं=गर्भाशयाब्दहिष्कर्तुम्, गालयितुं=रुधिरादिरूपं कर्तुम्,

‘तएणं तीसे’ इत्यादि—

एक समय रानी रातको सोचने लगी कि—इस बालकने गर्भमें आते ही अपने पिताके कलेजेका मांस खाया, इस लिये मुझे उचित है कि इस गर्भको सडानेके लिए, गिरानेके लिए और विध्वंस करनेके लिए कुछ उपाय करूं । ऐसा विचारकर रानीने औषधि आदिके

‘तएणं तीसे’ इत्यादि

એક સમય રાણી રાતમાં વિચાર કરવા લાગી કે આ બાળકે ગર્ભમાં આવતાં જ પોતાના પાપના કલેજાનું માંસ ખાધું આથી મારે માટે યોગ્ય છે કે આ ગર્ભને સડાવવા માટે—પાડી નાખવા માટે—ગાળવા માટે અને નાશ કરવા માટે કંઈ ઉપાય

विध्वंसयितुं=सर्वथा नाशयितुम्, एवम्=उक्तप्रकारेण संप्रेक्षते=विचारयति,
अन्यत् सर्वं सुबोधम् ॥ ३२ ॥

मूलम्—तए णं सा चेल्लणा देवी तं गभं जाहे नो संचा-
एइ वहूहिं गभसाडणेहि य जाव गभविद्धंसणेहि य साडि-
त्तए वा जाव विद्धंसित्तए वा, ताहे संता तंता परितंता निव्विन्ना
समाणा अकामिया अवसवसा अट्टवसट्टदुहट्टा तं ग भं परिवहइ ।

तए णं सा चेल्लणा देवी नवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं
जाव सोमालं सुरूवं दारयं पयाया ॥ ३३ ॥

छाया—ततः खलु सा चेल्लना देवी तं गर्भं यदा नो शक्नोति
वहुभिर्गर्भशातनैश्च यावद् गर्भविध्वंसनैश्च शातयितुं वा यावद् विध्वंसयितुं वा
तदा शान्ता तान्ता परितान्ता निर्विण्णा सती अकामिका अपस्ववशा आर्त-
वशार्तदुःखार्ता तं गर्भं परिवहति ।

ततः खलु सा चेल्लना देवी नवसु मासेसु बहुप्रतिपूर्णेसु यावत्
सुकुमारं सुरूपं दारकं प्रजाता ॥ ३३ ॥

टीका—‘तएणं सा’ इत्यादि—ततः=गर्भविध्वंसनप्रयासवैफल्यानन्तरं सा
चेल्लना देवी यदा तं गर्भं नाशयितुं नो शक्नोति तदा श्रान्ता=ग्लानिं प्राप्ता,
तान्ता=खेदं प्राप्ता, परितान्ता=विशेषतः खिन्ना, निर्विण्णा=अतिशयितखेदापन्ना
अकामिका=स्वकार्यसम्पादनाऽसमर्थतया बाञ्छारहिता, अत एव अपस्ववशा=
पराधीना आर्तवशार्तदुःखार्ता=आर्तवशम्=आर्तध्यानवश्यताम् ऋता=गता (प्राप्ता)

द्वारा वैसा ही उपाय किया, परन्तु वह गर्भ न सह सका, न गिर
सका न गल सका और न उसका किसी प्रकार नाश हो सका ॥३२॥

‘तएणं सा’ इत्यादि—बादमें रानी अपने प्रयासके विफल
होनेके ग्लानिको प्राप्त हुई, खेदको प्राप्त हुई, अपने इच्छित कार्यके
विफल होनेसे असमर्थ हुई और आर्तध्यान वश दुःखी हाकर गर्भका

कड़ं भेवा विचार करी राणीभे औपधी आदिथा भेवाज उपाय कर्या परतु ते गलं
न सउथो, न पउथो, न गउथो कं न केअ प्रकारे तेनो नाश थअ शकथो. (३२)

‘तएणं सा’ इत्यादि. पधी राणी पीताना प्रयासभा निष्फल जवार्थी अइसोअ
कंवा लागी भेद युक्त थअ अनं धारेलु कार्य आमं विफल थवार्थी पीते असमर्थ-

इति आर्तवशार्ता मा चासीं दुःखेनार्ता=सा तथा-आर्तध्यानविबशीभूता दुःखिता सती तं गर्भं परिवहति ।

ततः खलु सा चेल्लना देवी नवसु मासेषु बहुप्रतिपूर्णेषु यावत् सुकुमारं सुरूपं दारकं पुत्रं प्रजाता=प्रजनितवती ॥ ३३ ॥

मूलम्-तएणं तीसे चेल्लणाए देवीए इमे एयारूवे जाव समुप्पजित्था-जइ ताव इमेणं दारएणं गब्भगएणं चेव पिउणो उदरवलिसंसाइं खाइयाइं, तं न नज्जइ णं एसदारए संवहूमाणे अम्हं कुलस्स अंतकरे भविस्सइ, तं सेयं खलु अम्हं एयं दारगं उक्कुरुडियाए, उज्झावित्तए एवं संपेहेइ, संपेहित्ता दास-चेडिं सदावेइ सदावित्ता एवं वयासी-गच्छ णं तुमं देवाणु-प्पिए ! एयं दारगं एगंते उक्कुरुडियाए उज्झाहि ।

तए णं सा दासचेडी चेल्लणाए देवीए एवं वुत्ता समाणी करयल० जाव कट्टु चेल्लणाए देवीए एयमट्ठं विणएणं पडिसुणेइ, पडिसुणित्ता तं दारगं करतलपुडेणं गिण्हइ गिण्हित्ता, जेणेव असोगवणिया तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता तं दारगं एगंते उक्कुरुडियाए उज्झाइ । तए णं तेणं दारएणं एगंते उक्कुरुडियाए उज्झितेणं समाणेणं सा असोगवणिया उज्जोविया यावि होत्था ।

तएणं से सेणिए राया इमीसे कहाए लद्धेट्ठे समाणे जेणेव असोगवणिया तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता, तं दारगं एगंते उक्कुरुडियाए उज्झियं पासेइ, पासित्ता आसुरुत्ते जाव मिसि-मिसेमाणे तं दारगं करतलपुडेणं गिण्हइ गिण्हित्ता, जेणेव

पालन करने लगी, और फिर नौ मास बीतनेपर सुकुमार एवं सुन्दर पुत्रको जन्म दिया ॥३३॥

अथ अने आर्तध्यानवश दुःखी यधने गर्भं तु पालन करवा लागी. तथा नव मास पीत्या पछी सुकुमार अने सुंदर पुत्रने जन्म आये. (३३)

चेष्टणा देवी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छिता चेष्टणं देवि उच्चा
वयाहिं आओसणाहि, आओसइ आओसित्ता उच्चावयाहिं नि-
व्भच्छणाहिं निभच्छेइ निव्भच्छित्ता एवं उद्धसणाहिं उद्धंसेइ,
उद्धंसित्ता एवं वयासी-किस्स णं तुमं मम पुत्तं एगंते उक्कुरु-
डियाए उज्झावेसि ? त्तिकट्टु चेष्टणं देवि उच्चावयसवहसावियं
करेइ करित्ता, एवं वयासी-तुमं णं देवाणुप्पिए ! एयं दारगं
अणुपुव्वेणं सारक्खमाणी संगोवेमाणी संवड्ढेहि ।

तएणं सा चेष्टणा देवी सेणिएणं रत्ता एवं बुत्ता समाणी
लज्जिया विलिया विड्ढा करयलपरिग्गहिथं० सेणियस्स रत्तो
विणएणं एयमट्ठं पडिसुणेइ, पडिसुणित्ता, तं दारयं अणुपुव्वेणं
सारक्खमाणी संगोवेमाणी संवड्ढइ ॥ ३४ ॥

छाया-ततः खलु तस्याश्चेल्लनाया देव्या अयमेतद्रूपो यावत् समुद-
पद्यत-यदि नावद् अनेन दारकेण गर्भगतेन चैव पितुरुदरत्रलिमांसानि खाद्वि-
तानि तन्न घ्रायते खलु एष दारकः संवर्द्धमानः अस्माकं कुलम्यान्तकगे भवि-
ष्यति तच्छ्रेयः खलु अम्माकम् एनं दारकमेकान्ते उत्कुरुटिकायामुज्झितुम्, एवं
संप्रेक्षते, संप्रेक्ष्य दामचेटीं शब्दयति शब्दयित्वा एवमवादीत्-गच्छ खलु त्वं
देवानुप्रिये ! एनं दारकमेकान्ते उत्कुरुटिकायामुज्झ ।

ततः खलु सा दासचेटी चेल्लनया देव्या एवमुक्त्वा सती करतल०
यावत् कृत्वा चेल्लनाया देव्या एनमर्थं विनयेन प्रतिशृणोति, प्रतिश्रुत्य तं
दारकं करतलपुटेन गृह्णाति, गृहीत्वा यत्रैवाशोकवनिका तत्रैवोपागच्छति, उपा-
गम्य तं दारकमेकान्ते उत्कुरुटिकायामुज्झति ।

ततः खलु तेन दारकेण एकान्ते उत्कुरुटिकायामुज्झितेन सता
माशोकवनिका उद्योतिता चाप्यभवत् ।

ततः खलु स श्रेणिको राजा अस्याः कथाया-लब्धार्थः सन् यत्रैवा-
शोकवनिका तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य तं दारकमेकान्ते उत्कुरुटिकायामुज्झितं
पश्यति दृष्ट्वा आश्चर्यतः यावत् मिसिमिसीकुर्वन् तं दारकं करतलपुटेन गृह्णाति,

गृहीत्वा यत्रैव चेल्लना देवी तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य चेल्लनां देवीमु-
च्चावचाभिराक्रोशनाभिराक्रोशति, आक्रुश्य उच्चावचाभिर्निर्भर्त्सनाभिर्निर्भर्त्सयति
निर्भर्त्स्य, एवमुद्धर्षणाभिरुद्धर्षयति, उद्धर्ष्य एवमवादीत्—किमर्थं खलु त्वं
मम पुत्रमेकान्ते उत्कुरुटिकायामुज्जयसि ? इति कृत्वा चेल्लनां देवीमुच्चाव-
चशपथशापितां करोति, कृत्वा एवमवादीत्—त्वं खलु देवानुप्रिये ! एनं दारक-
मनुपूर्वेण संरक्षन्ती संगोपयन्ती संवर्द्धयति ।

ततः खलु सा चेल्लना देवी श्रेणिकेन राज्ञा एवमुक्ता सती लज्जिता
ब्रीडिता विड्ढा करतलपरिगृहीतं० श्रेणिकस्य राज्ञो पिनयेन एतमर्थं प्रतिश्रृणोति,
प्रतिश्रुत्य त दारकमनुपूर्वेण संगोपयन्ती संवर्द्धयति ॥ ३४ ॥

टीका—‘तएणं तीसे’ इत्यादि—ततः=तत्पश्चात् पुत्रजन्मानन्तरं तस्याः
चेल्लनाया देव्या अयमेतद्रूपः=वक्ष्यमाणलक्षणः यावत् पदेन “अज्झत्थिए,
चित्थिए, पत्थिए, काप्पिए, मणोगए मंक्कप्पे” एतेषां संग्रहः । एतेषां व्या-
ख्या प्रागुक्ता, समुदपघत=जातः—यदि तावत् अनेन दारकेण=पुत्रेण गर्भ-
गतेनैव पितुरुदरवल्लिमांसानि खादितानि, मया तन्न ज्ञायते खलु एष दारकः
संवर्द्धमानः=वृद्धिं प्राप्तः सन् प्रौढावस्थायाम् अस्माक कुलस्य=वंशस्य अन्तकरः=
नाशको भविष्यात् तत्=तस्मात्कारणात् खलु=निश्चयेन एकान्ते=निर्जने स्थले
एनं दारकम् उत्कुरुटिकायां=कचवरपुञ्जस्थाने ‘उकरडी’ इति भाषायाम्
उज्जितुं=त्यक्तुमस्माकं श्रेयः=कल्याणकारकम् ।

एवम्=अनेन प्रकारेण संप्रेक्षते=विचारयति, संप्रेक्ष्य दासचेटीं शब्द-
यति=आह्वयति शब्दयित्वा एवम्=वक्ष्यमाणम् अवादीत्—हे देवानुप्रिये ! त्वं
खलु गच्छ एनं दारकमेकान्ते उत्कुरुटिकायामुज्ज=प्रक्षिप ।

‘तएणं तीसे’ इत्यादि—बाद रानीके मनमें ऐसा विचार उत्पन्न
हुआ कि इस बालकने गर्भमें आते ही पिताकी उदरवल्लिका मांस
खाया । यदि यह बडा होकर समर्थ बनेगा तो न जाने हमारे वंशका
किस प्रकार नाश करेगा ? इस लिये उचित है कि इसे एकान्त स्थान
जहाँ कोई न देख सके ऐसी उकरडीपर फिकवा दूँ ।

‘तएणं तीसे’ इत्यादि. पछी राज्ञीना मनमा अेवा विचार उत्पन्न थये। ठे-
आ आणके गर्भमा आपता न आपनी उदरवल्लीनु मांस पाधु ने भेटे थता समर्थ
बनथे ता न जानथे. अमाश वंशनेा क्या प्रकारे नाश करथे. मने उचित है कि इ-
आने अेकान्त स्थान नया ठोड नोड-नु शके अेवा उकरडी उपर फेकावी देवा.

ततः=वेल्लनया देव्यैवप्रकृता सती सा दासवेटी 'तथाऽस्तु' इतिकृत्वा करतलपरिगृहीतमञ्जलिपुटं मस्तके कृत्वा=निधाय वेल्लनाया देव्या एनम्=अर्थम्=निदेशम् प्रतिशृणोति=स्वीकरोति प्रतिश्रुत्य तं दारकं करतलपुटेन गृह्णाति, गृहीत्वा यत्रैव अशोकवनिका=अशोकवाटिका तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य तं दारकमेकान्ते उत्कुरुटिकायामुज्झति=मक्षिपति ।

ततः खलु तेन दारकेण एकान्ते उत्कुरुटिकायामुज्झितेन सता साऽशोकवनिका उद्योतिता=प्रकाशिता चाऽप्यभवत् ।

ततः=दारकप्रक्षेपणानन्तरं स श्रेणिको राजा अस्याः कथायाः=दारकप्रक्षेपणवृत्तान्तस्य लब्धार्थः=ज्ञातसमाचारः सन् यत्रैवाशोकवनिका तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य तं दारकमेकान्ते उत्कुरुटिकायामुज्झितं पश्यति, दृष्ट्वा च-आशुरक्तः आशु=शीघ्रं रक्तः=कोपेनाऽरुणनयनः यावत् मिसिमिसन्=क्रोधत्वा-

ऐसा अपने मनमें विचारकर दासीको बुलवाया और उससे कहा-हे देवानुप्रिये ! इसको छिपाकर लेजा और एकान्त उकरडीपर डाल आ ।

इस तरह चेलना रानीकी आज्ञा पाकर दासीने उस बालकको हाथोंसे उठाया और अशोकवाटिकामें जाकर एकान्त स्थानमें उकरडीपर डाल दिया । वह बालक बड़ा तेजस्वी था इस कारण उससे अशोकवाटिका प्रकाशयुक्त हो गयी ।

पश्चात् राजा श्रेणिकको किसी तरह विदित हुआ कि रानी चेल्लनाने जन्मते बालक (नवजात शिशु)को कहीं फिकवा दिया है, तब राजा दृढ़ते हुए अचानक अशोकवाटिकामें आये और उकरडीपर पड़े हुए बालकको देखा । उसे देखकर राजा उसी समय बड़े क्रुद्ध

अथो पोताना मनमा विचार करी दासीने बोलावी, अने तेने कहुं-हे देवानुप्रिये ! आने सताडीने लथ वत अने अेकांत उकरडे नाणी हे.

भावी रीते चेल्लना राणीनी आज्ञा थता दासीअे ते भाणकने हाथ वडे उपाडीने अशोकवाटिकाभा वधने अेकांत स्थानभा उकरडे ईष्टी दीथी. ते भाणक णहु तेजस्वी इतो आ करणे तेनाथी अशोक-वाटिका प्रकाशयुक्त अनी गथ.

पछी राजा श्रेणिकना बाल्युवामा कथं रीते आण्युं हे राणी चेल्लनाअे जन्मता (नवजात शिशु) भाणकने कथांक ईकावी दीथी छे त्तारे राजा पोते तपास करवा भाटे भया-कमभी तपास करतां अशोकवाटिकाभा आण्यो अने उकरडा उपर पडेला भाणकने दीठा. तेने अेधने तेज वधते राजा णहु शुक्से थया अने कोधमां गणता थका

लया ज्वलन् सन् तं दारकं करतलपुटेन गृह्णाति गृहीत्वा यत्रैव चेल्लना देवी
 तत्रैवोपागच्छति उपागत्य चेल्लनां देवीम् उच्चावचाभिः=नानाप्रकाराभिः आ-
 क्रोशनाभिः=मानसिकक्रोषैः आक्रोशति=तिरस्कारपूर्वकं क्रुध्यति, आक्रुश्य=प्रकुप्य
 उच्चावचाभिः=नानाविधाभिः भर्त्सनाभिः=दूर्वचनावमानैः निर्भर्त्सयति=परुषवच-
 नैरपमानयति, निर्भर्त्स्य एवम्=अनेन प्रकारेण उद्धर्षणाभिः=तर्जन्यादिदर्शनपूर्व-
 कतिरस्कारैः, उद्धर्षयति=तिरस्करोति, उद्धर्ष्य एवम्=अनुपदवक्ष्यमाणम् अवा-
 दीत्-हे देवि ! त्वं किमर्थं खलु मम पुत्रमेकान्ते उत्कुरुटिकायां दासचेष्टया
 समुज्ज्वयसि ?, इति कृत्वा=उत्तरीत्या आक्रोशनादिकं विधाय चेल्लनां देवीम्
 उच्चावचशपथशापितां = नानाप्रकारकदेवगुरुधर्मादिशपथैः शापितां = प्रतिज्ञापितां
 करोति, कृत्वा, एवम्=अमुना प्रकारेण अवादीत्-हे देवानुप्रिये ! त्वम् एनं
 दारकं अनुपूर्वेण=क्रमेण संरक्षन्ती आपद्भयः, संगोपयन्ती=वस्त्राच्छादनगर्भगृह-
 प्रवेशनादिभिः क्षेमं प्रापयन्ती सत्रर्द्धय स्तन्यपानादिना वृद्धिं प्रापय । ततः=

हुए और क्रोधसे जलते हुए वे उस बालकको हाथमें लेकर चेलना
 रानीके पास पहुँचे, और अनेक प्रकारके आक्रोश शब्दोंसे रानीका
 तिरस्कार किया, अनेक प्रकारके कठोर शब्दोंसे भर्त्सना की, तर्जनी
 आदि अंगुली दिखाकर बहुत अपमान किया और बोले-हे रानी !
 किस लिये तूने मेरे इस बालकको दासी द्वारा उकरडीपर फिकवा
 दिया । इस तरह चेल्लना रानीको उलाहना देकर देव, गुरु, धर्म
 आदिकी शपथ देकर इस प्रकार बोले-हे देवानुप्रिये ! तुम इस
 बालककी आपत्तिसे रक्षा करो और वस्त्रसे ढाँककर प्रसूतिगृहमें ले
 जाओ. जिस प्रकार यह सुखी रहे वैसा प्रयत्न करो और स्तनपान
 आदि कराकर इसका अच्छी तरह पालन-पोषण करो ।

तेज्जा ते षाणकने हाथमां उपाडी लधने चेलना राणीनी पासे पडोव्या अने अनेक
 प्रकारना आक्रोश शब्दोथी राणीने तिरस्कार कर्यो अनेक प्रकारना कठोर शब्दोथी
 अनादर करी तर्जनी आगणी देखाडी बहुत अपमान कर्युं अने कहुं-हे राणी ! शा
 भाटे ते मारा आ षाणकने दासी द्वारा उकरडीये ड्रेकावी हीधो आवी रीते चेलना
 राणीने ठपके आपी देव, गुरु, धर्म आदिना सोगद आपी-आ प्रभावे
 ओव्या-हे देवानुप्रिये ! तमे आ षाणकनी आपत्तिथी रक्षा करे अने वस्त्रथी ढाकी
 प्रसूतिगृहमा लध जेवी रीते आ सुधी रहे तेवा प्रयत्न करे तथा स्तन-
 पान आदि करावी तेनुं सारी रीते पालन-पोषण करे।

श्रेणिकराजनिदेशानन्तरं 'खलुः' वाक्यालङ्कारार्थः, सा=श्रेणिकराजमहिषी 'चेल्लना' देवी श्रेणिकेन राज्ञा एवम्=पूर्वोक्तप्रकारं प्रतिपालननिदेशम् उक्ता=निवेदिता सती 'लज्जिता, स्वतः, व्रीडिता परतः, विह्वला=उभयतो लज्जिता, देशी शब्दः, एते समानार्थकाः, यद्वा-'व्यलीके' ति छाया व्यलीका=पति-प्रतिकूलचरणेन सापराधा करतलपरिगृहीतं शिर आवृत्तं दशनखं मस्तकेऽञ्जलिं कृत्वा श्रेणिकस्य राज्ञो=राजसम्बन्धिनम् एतम्=दारकं परिपालननिदेशरूपम्-अर्थम्=पुत्ररक्षणनिदेशं प्रतिश्रृणोति=स्वीकरोति, स्वीकृत्य तं दारकं=अनुपूर्वेण=यथावत् संरक्षन्ती संगोपयन्ती संवर्द्धयति=पालनपोषणादिना वृद्धिं नयति ॥ ३४ ॥

मूलम्—तए णं तस्स दारगस्स एगंते उक्कुरुडियाए उज्झि-
अमाणस्स अग्गं गुलियाए कुक्कुडपिच्छएणं दूमिया यावि
होत्था, अभिक्खणं अभिक्खणं पूयं च सोणियं च अभिनि-
स्सवइ । तए णं से दारए वेयणाभिभूए समाणे महया
महया सहेणं आरसइ । तएणं सेणिए राया तस्स दारगस्स
आरसितसहं सोच्चा निसम्म जेणेव से दारए तेणेव उवागच्छइ,
उवागच्छित्ता तं दारगं करतलपुडेणं गिण्हइ गिण्हित्ता तं अग्गं
गुलियं आसयंसि पक्खिवइ, पक्खिवित्ता पूयं च सोणियं च

इस प्रकार राजाके कहनेपर रानी, अपने इस अकर्तव्यपर स्वतः लज्जित हुई, 'राजा मेरे इस अकर्तव्य कर्मसे अपने मनमें क्या समझे होंगे?' ऐसा विचार कर राजासे लज्जित हुई, इस प्रकार रानी चेलना दोनों ही ओरसे बड़ी ही लज्जित हुई । पतिके प्रतिकूल आचरणसे रानीको अतिशय खेद और पश्चात्ताप हुआ । बाद वह हाथ जोड़कर सविनय पुत्रपालनरूप राजाकी आज्ञाको स्वीकार कर बालकका भलीभाँति पालन करने लगी ॥ ३४ ॥

आ प्रकारे राज्ञाना कडेवाथी राणी पोताना आ दुष्कृत्यथी स्वतः लज्जित
थइ, 'राज मेरे आ दुष्कृत्यथी पोतानां मनमां शुं समन्था इशे' अथ विचारीने
राजथी लज्जित थामी, आ प्रभाणे जन्ने प्रकारे अहु लज्जित थइ पतिना विशुद्ध
आचरणथी राणीने अतिशय खेद अने पश्चात्ताप थये। ताक हाथ जोडीने सविनय
पुत्रपालन रूप राजनी आज्ञानो स्वीकार करी जाणवतु सारी रीते पालन करवा लागी. (३४)

आसएणं आमुसइ । तए णं से दारए निव्वुए निव्वेयणे तुसिणीए संचिट्ठइ । जाहे वि य णं से दारए वेयणाए अभिभूए समाणे महया महया सहेणं आरसइ ताहे वि य णं सेणिए राया जेणेव से दारए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता, तं दारगं करतलपुडेणं गिण्हइ, तं चेव जाव निव्वेयणे तुसिणीए संचिट्ठइ ।

तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो तइए दिवसे चंदसूरदंसणियं करेति, जाव संपत्ते बारसाहे दिवसे अयमेयारूवं गुणनिष्फन्नं नामधिज्जं करेति, जम्हाणं अम्हं इमस्स दारगस्स एगंते उक्कुरुडियाए पज्झिज्जमाणस्स अंगुलिया कुक्कुडपिच्छएणं दूमिया, तं होउ णं अम्हं इमस्स दारगस्स नामधेज्जं 'कूणिए' । तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो नामधिज्जं करेति 'कूणिय'त्ति ॥ ३५ ॥

छाया—ततः खलु तस्य दारकस्य एकान्ते उत्कुरुटिकायामुज्झयमानस्याऽग्राङ्गुलिका कुक्कुटपिच्छकेन दूना चाऽप्यभूत्, अभीक्ष्णमभीक्ष्णं पूयं च शोणितं चाभिनिस्स्रवति । ततः खलु स दारको वेदनाभिभूतः सन् महता महता शब्देन आरसति । ततः खलु श्रेणिको राजा तस्य दारकस्याऽऽरसितशब्दं श्रुत्वा निश्चयं यत्रैव स दारकस्त्रैवोपागच्छति, उपागत्य, तं दारकं करतलपुटेन गृह्णाति, गृहीत्वा तामग्राङ्गुलिकामास्ये प्रक्षिपति, प्रक्षिप्य, पूयं च शोणितं चास्येन आमृशति । ततः खलु स दारको निवृतो निर्वेदनस्तूष्णीकः संतिष्ठते । यदपि च खलु स दारको वेदनयाऽभिभूतः सन् महता—महता शब्देन आरसति तदाऽपि च खलु श्रेणिको राजा यत्रैव स दारकस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य तं दारकं करतलपुटेन गृह्णाति, तदेव यावत् निर्वेदनस्तूष्णीकः संतिष्ठते ।

ततः खलु तस्य दारकस्याम्बापितरौ तृतीये दिवसे चन्द्रभूर्यदर्शनं कारयतः यावत् संप्राप्ते द्वादशाहे दिवसे इममेतद्रूपं गुणनिष्पन्नं नामधेयं कुरुतः यस्मात् खलु अस्माकमस्य दारकस्य एकान्ते उत्कुरुटिकायामुज्झयमानस्याङ्गुलिका कुक्कुटपिच्छकेन दूमिता (कूणिता) तद् भवतु खलु अस्माकमस्य दारक-

स्य नामधेय 'कृणिकः' । ततः खलु तस्य दारकस्य अम्वापितरौ नामधेयं कुरुतः 'कृणिकः' इति ॥ ३५ ॥

टीका—'तणं तस्स' इत्यादि—ततः=गृहममानयनानन्तरं तस्य दारकस्य एकान्ते—उत्कुरुटिकायाम् उज्जयमानस्य अग्राङ्गुलिका कुक्कुटपिच्छकेन=पिच्छ एव पिच्छकः=चञ्चुः, कुक्कुटस्य पिच्छकः कुक्कुटपिच्छकः, तेन=कुक्कुट-चञ्चुना, दूना=परितापिता दष्टेति यावदिति च अभूत् । तेनाङ्गुलितोऽभीक्षण-मभीक्षणं=पुनः पुनः पूयं=दूपितदुर्गन्धशोणितम्—'पीप'—इति भाषायाम्—शोणितं =रक्तं च अभिनिस्रयति । ततः = तस्मात् = पूयशोणिताभिस्त्वावात् स दारको वेदनाभिभूतः=तीव्रदुःखपीडितः सन् महता—महता=उच्चैरुच्चैः शब्देन=चीत्कारेण आरसति=विलपति । ततः खलु श्रेणिको राजा तस्य दारकस्य आरसित-शब्दम् = आर्तनादं श्रुत्वा निशम्य = हृदयेनावधार्य यत्रैव स दारकस्तत्रैवो पागच्छति, उपागत्य तं दारकं करतलपुटेन गृह्णाति, गृहीत्वा ताम्=कुक्कुट-दष्टामग्राङ्गुलिकाम्=अङ्गुल्या अग्रभागम् आस्ये=स्वमुखे प्रक्षिपति, प्रक्षिप्य—पूयं शोणितं च आस्येन=मुखेन आमृशति=चोषयति । ततः=तस्माच्चोपणात् खलु स दारको निवृतः=शान्तः निर्वेदनः=वेदनारहितः तूष्णीकः=समौनः संतिष्ठते=आस्ते । एवं यदा यदा स आर्त्तम्बरेण रौति तदा तदा श्रेणिक एवमेव करोति ।

'तणं तस्म' इत्यादि—

एकान्त उकरडापर डाले हुए उस बालककी अंगुलीके अग्र-भागको कुक्कुट (मुर्गे)ने काट गवाया जिमसे उसकी अंगुली पक गयी और उससे चारवार रक्त और पीप बहने लगा, इससे उसको बड़ी वेदना होती थी और आर्त्तस्वरसे रुदन करना था । उसका आर्त्तनाद सुनकर राजा उसके पास आना था और बालकको उठाकर उसकी अंगुली अपने मुहमें लेकर झरते हुए शोणित और पीपको चूस र कर थूकना था, जिमसे उस बालककी वेदना कम होती थी

'तणं तस्म' इत्यादि

अथान् उज्जडी उप-नाभी-दीर्घेते छेकगनी आगणीना आगला भागने धुक्डो उज्जडी जये जेथी तेनी आगणी पाडी गड तथा तेमाथी वार वार दोही अने पड वडेवा लाग्यु अथी तेने पाडु वेदना थती इती अने तेथी ते आर्त्तस्वर्था रुदन कन्तो इतो । तेना आर्त्तनाद आभणी राजा तेनी पासे आवतो अने आणकने उपाडीने तेनी आगणी पात ना मोमा लडने अरता दोही अने पडने युसी-युसीने थूडी नाणतो इतो जेथी ते आणकनी वेदना ओछी थती इती । अने ते शात (उत्ता गध) थर्ध

ततः=अङ्गुलीपीडाशमनानन्तरं तस्य दारकस्य मातापितरौ तृतीये दिवसे चन्द्रसूर्यदर्शनं कारयतः कारितवन्तौ यावत् सम्प्राप्ते द्वादशे दिवसे एतद्रूपं गुण-निष्पन्नं नामधेयंकुरुतः—यस्मात् खलु उत्कुरुटिकायां पतितस्यास्य दारकस्याङ्गुलिका कुक्कुटपिच्छकेन दृमिता=पीडिताऽतः कूणिता-संकुचिता जाता तत्=तस्मान्का रणाद् भवतु अस्य दारकस्य नाम 'कूणिक' इति, तदनु मातापितरौ तस्य दारकस्य नाम कुरुतः 'कूणिक' इति ॥ ३५ ॥

मूलम्—तएणं तस्स कूणियस्स अणुपूव्वेणं ठिड्ढवडियं च जहा मेहस्य जाव उप्पिं पासायवरगए विहरइ, अट्टुओ दाओ ॥३६॥

छाया—ततः खलु तस्य कूणिकस्यानुपूर्वेण स्थितिपतितं च यथा मेघस्य यावत् उपरि प्रासादवरगतो विहरति । अष्ट दायः ॥ ३६ ॥

और वह चुप होजाता था । जब कभी भी यह बालक वेदनासे छटपटाने लगता था तभी राजा श्रेणिक आकर उसकी वेदना उसी प्रकारसे शान्त करता था ।

बाद माता पिताने तीसरे दिन उस बालकको चन्द्र सूर्यका दर्शन कराया । यावत् चारहवें दिन बडे उत्सवके साथ उस बालकका नाम रखते हुए बोले कि—उकरडीपर डाले हुए हमारे इस बालककी अंगुली-खुर्गेके काट खानेसे कूणित-संकुचित होगई इस कारणसे इस बालकका गुण-निष्पन्न नाम 'कूणिक' रक्खा जाय, ऐसा सोचकर माता-पिताने उसका नाम 'कूणिक' रक्खा । ॥ ३५ ॥

'तएणं तस्स' इत्यादि—

नामकरणके बाद कूणिकका कुलपरम्परागत उत्सव-विवाहादि

जतो इतो. ज्यारे ज्यारे ते जाणक वेदनाथी तड्डडवा लागतो त्यारे त्यारे नन्द श्रेष्ठिक आवीने तेनी वेदना तेज रीते शांत करता हुता

बाद माता पिताने तीसरे दिवसे ते जाणकने चंद्र सूर्यना दर्शन कराव्या पछी आरमे दिवस मोटा उत्सवथी ते जाणकनु नाम पाउता गेल्या के—उकरडी उपर नाभी दीधेला अमारा आ जाणकनी आगणी कुकडांना करडी भावाथी कूष्ठिक (संकुचित) थड गड तेथी आ जाणकनु गुणनिष्पन्न (गुण दर्शावतु) नाम 'कूष्ठिक' राखुं जेधजे. आवुं विचारी माता पिताने तेनु नाम 'कूष्ठिक' राखु (उप)

'तएणं तस्स' इत्यादि.

नामकरणके पछी कूष्ठिकनां कुलपरंपरानुसार उत्सव-विवाह आदि कार्य भेध-

टीका-‘तएणं तम्म’ इत्यादि । ततः=नामकरणानन्तरं तस्य कूणिकस्य अनुपूर्वेण=अनुक्रमेण स्थितिपतितं=कुलक्रमागतम् उत्सवादिकम् यथा मेघस्य=मेघकुमारस्यैव करोति यावत् अष्टाष्ट दायः=श्वशुरेण जामात्रे दीयमानाः पदार्थाः ‘दहेज’ इति भाषायाम् ॥ ३६ ॥

मूलम्—तएणं तस्स कूणियस्स कुमारस्स अन्नया पुवरत्ता० जाव समुप्पज्जित्था—एवं खलु अहं सेणियस्स रत्तो वाघाएणं नो संचाएमि सयमेव रज्जसरिं करेमाणे पालेमाणे विहरित्तए, तं सेयं मम खलु सेणियं रायं निलयबंधणं करेत्ता अप्पाणं महया—महया रायाभिसेएणं अभिसिंचावित्तए च्चिकट्टु एवं संपेहित्ता सेणियस्स रत्तो अंतराणि य छिद्दाणि य विरहाणि य पडिजागरमाणे२ विहरइ ।

तएणं से कूणिए कुमारे सेणियस्स रत्तो अंतरं वा जाव मम्मं वा अलभमाणे अन्नया कयाइ कालादीए दस कुमारे नियघरे सदावेइ, सदावित्ता एवं वयासो—एवं खलु देवाणु-प्पिया ! अम्हे सेणियस्स रत्तो वाघाएणं नो संचाएमो सय-मेव रज्जसरिं करेमाणा पालेमाणा विहरित्तए, तं सेयं देवाणु-प्पिया ! अम्हं सेणियं रायं नियलबंधणं करेत्ता रज्जं च रट्टं च वलं च वाहणं च कोसं च कोट्टागारं च जयवणं च एक्कारसभाए विरिंचित्ता सयमेव रज्जसरिं करेमाणाणं जाव विहरित्तए ।

कार्यं मेघ कुमारके समान ह्ये । श्वशुरकी ओरसे आठ-आठ दहेज वस्तुए आयी और श्रेष्ठ प्रासादपर पूर्वपुण्योपार्जित मनुष्यसम्बन्धी पाँचों इन्द्रियोंके सुखका अनुभव करने लगे ॥ ३६ ॥

कुमार समान धया श्वशुरना तदर्थी आठ-आठ दहेज वस्तु आयी अने उत्तम महेलभा पूर्वपुण्योपार्जित मनुष्यसम्बन्धी पाँचे छेन्द्रियोना सुखने अनुभव करवा लाग्या (३६)

तएणं ते कालादीया दस कुमारा कूणियस्स कुमारस्स
एयमट्ठं विणएणं पडिसुणेंति । तएणं से कणिए कुमारे अन्नया
कयाइं सेणियस्स रत्तो अंतरं जाणाइ, जाणित्ता सेणियं रायं
नियलबन्धणं करेइ, करित्ता अप्पाणं महया-महया रायाभिसेएणं
अभिसिंचावेइ । तएणं से कणिए कुमारे राया जाए महया० । ३७।

छाया—ततः खलु तस्य कूणिकस्य कुमारस्य अन्यदा पूर्वरात्रा०
यावत्समुदपद्यत—एवं खलु अहं श्रेणिकस्य राज्ञो व्याघातेन न शक्नोमि स्वय-
मेव राज्यश्रियं कुर्वन् पालयन् विहर्तुं, तच्छ्रेयो मम खलु श्रेणिकं राजानं
निगडबन्धनं कृत्वा आत्मानं महता-महता राज्याभिषेकेणाभिषेचयितुम्, इति
कृत्वा एवं संप्रेक्षते, संप्रेक्ष्य श्रेणिकस्य राज्ञोऽन्तराणि च छिद्राणि च विर-
हान् च प्रतिजाग्रद् विहरति ।

ततः खलु स कूणिकः श्रेणिकस्य राज्ञोऽन्तरं वा यावत् मर्म वा
अलभमानः अन्यदा कदाचिन् कालादिकान् दशकुमारान् निजगृहे शब्दपति,
शब्दयित्वा एवमवादीत्—एवं खलु देवानुप्रियाः ! वयं श्रेणिकस्य राज्ञो व्या-
घातेन नो शक्नुमः स्वयमेव राज्यश्रियं कुर्वन्तः पालयन्तो विहर्तुम्, तच्छ्रेयो
देवानुप्रियाः ! अस्माकं श्रेणिकं राजानं निगडबन्धनं कृत्वा राज्यं च राष्ट्रं
च बलं च वाहनं च कोशं च क्रोष्ठागारं च जनपदं च एकादशभागान् विभज्य
स्वयमेव राज्यश्रियं कुर्वाणानां पालयतां यावद् विहर्तुम् ।

ततः खलु ते कालादिका दशकुमाराः कूणिकस्य कुमारस्यैतमर्थं
विनयेन प्रतिशृण्वन्ति ।

ततः खलु स कूणिकः कुमारः अन्यदा कदाचित् कूणिकस्य राज्ञो-
ऽन्तरं जानाति, ज्ञात्वा श्रेणिकं राजानं निगडबन्धनं करोति, कृत्वा आत्मानं
महता महता राज्याभिषेकेणाभिषेचयति ।

ततः खलु स कूणिकः कुमारो राजा जातो महा० ॥ ३७ ॥

टीका—‘ततः खलु तस्ये’ त्यादि—अन्यदा तस्य कूणिक-कुमारस्य

‘तएणं तस्स’ इत्यादि—

वाद एक समय कणिककुमार रात्रिके पिछले पहरमें विचार

‘तएणं तस्स’ इत्यादि

पछी अेक समय कूणिक कुमार रात्रिके पाछला-पहारमां विचार करवा लाग्या

पूर्वरात्रापररात्रावसरे यात्रत् विचारो जातः—एवं खलु श्रेणिकभूपस्य व्याघातेन=प्रतिबन्धेन राज्यधियं कुर्वन् पालयन् स्वयमेव=स्वतन्त्रः विद्वर्तुं=विचर्तुं अहं नो शक्नोमि तत्=तस्मात् कारणात् 'श्रेणिकराजस्य निगडबन्धनं कृत्वा विशाल-राज्याभिषेकेणात्मानमभिषेचयितुं मम श्रेयः' इति कृत्वा=इति संकल्पं विधाय एवम्=अनेन प्रकारेण संप्रेक्षते=विचारयति, संप्रेक्ष्य श्रेणिकस्य राज्ञोऽन्तराणि=अवकाशात् छिद्राणि=दूषणानि विरहान्=एकान्तानि च प्रतिजाग्रत=अन्वेषयन्, विहरति । तदनु श्रेणिकभूपस्य मर्म=गुप्तत्रुटि राज्य=गामनं राज्यलक्ष्मीं वा राष्ट्रं=देशं बलं=सैन्यं वाहनं=यानं स्थादिकम् कोशं=भाण्डागारं, कोष्ठागारं=धान्यगृहं, जनपदं=स्वदेशम्, अन्यत्सर्वं सुगमम् ॥ ३७ ॥

मूलम्—तए पां से कूणिए राया अन्नया कयाइं पहाए

कर्मने लगे कि—श्रेणिक राजाका राज्यशासनरूप प्रतिबन्ध होनेके कारण मैं सुखपूर्वक राज्यलक्ष्मीका उपभोग नहीं कर सकता हूँ इस लिए मुझे उचित है कि इस श्रेणिक राजाको कीसी तरह बन्धनमें डाल दूँ और स्वयं राजा बनकर राज्यलक्ष्मीका उपभोग करूँ । ऐसा विचार कर राजाका छिद्र देखने लगे । श्रेणिक राजाका काइ छिद्र, दूषण और मर्म हाथ नहीं आनेपर एक समय काल आदि दस कुमारोंको अपने घरमें बुलाकर सलाह करने लगे—बोले कि हम लोग राजाके कारण ही राज्यश्रीका उपभोग नहीं कर सकते इस लिए किसी तरह राजाको बन्धनमें डालकर हम लोग राज्य—राष्ट्र, सेना, वाहन, कोश, कोष्ठागार और स्वदेश इनके ग्यारह भाग करके स्वयं राज्य-श्रीका उपभोग करें । इस बातको सभी कुमारोंने स्वीकार कर लिया ।

३ श्रेणिक राजानु राज्य शासनरूप प्रतिबन्ध होवाने कारणे सुख-पूर्वक राज्यलक्ष्मीने उपभोग हु करी शकते नथी भाटे भने उचित छे के आ श्रेणिक राजाने केछ पणु रीते पांघनमा नाथी हउ अने हु पोते राजा गानीने राज्यलक्ष्मीने उपभोग करे, अमे विचार करी राजाना छिद्र लेवा भउये श्रेणिक राजानुं केछ छिद्र हूषणु अने मर्म हाथ न आववाथी अेक समय काल आदि दश कुमाराने पोताना घरमा बोलावी सलाह करवा लाग्ये हलु के—आपणु राजाना कारणथीने राज्यश्रीने उपभोग करी शकतः नथी आथी केछ पणु रीते राजाने पांघनमा नाथी आपणु राज्य, राष्ट्र, सेना, वाहन, भगनेना, केदार तथा देश अेना अगीयार लाग करीने आपणु पोतेने राज्यश्रीने उपभोग करीअे. आ वातने पाधा कुमाराने स्वीकार करी लीधे.

जाव सवालंकार-विभूसिए चेहणाए देवीए पायवंदए हव्व-
मागच्छइ । तएणं से कूणिए राया चेहणं देविं ओहय० जाव
झियायमाणिं पासइ, पासित्ता, चेहणाए देवीए पायगहणं
करेइ, करित्ता. चेहणं देविं एवं वयासी-किं णं अम्मो ! तुम्हं
न तुट्टी वा न ऊसए वा न हरिसे वा नाणंदे वा, जं णं
अहं सयमेव रज्जसिरीं जाव विहरामि ? ॥ ३८ ॥

छाया-ततः खलु स कूणिको राजा अन्यदा कदाचित् स्नातः यावत्
सर्वालङ्कारविभूषितश्चेलनाया देव्याः पादवन्दको हव्यमागच्छति ।

ततः खलु स कूणिको राजा चेल्लनां देवीम् अपहत० यावद् ध्यायन्तीं
पश्यति, दृष्ट्वा चेल्लनाया देव्याः पादग्रहणं करोति, कृत्वा, चेल्लनां देवीमेव-
मवादीत्-किं खलु अम्ब ! तव न तुष्टिर्वा नोत्सवो वा न हर्षो वा नानन्दो
वा ? यत्खलु अहं स्वयमेव राज्यश्रियं यावद् विहरामि ॥ ३८ ॥

टीका-‘तएणं से’ इत्यादि-ततःराज्यप्राप्त्यनन्तरं स कूणिको राजा
अन्यदा कदाचित्=कस्मिंश्चित्समये स्नातः यावत् सर्वालङ्कारविभूषितः चेल्लनाया
देव्याः=निजमातुः पादवन्दकः=चरणौ वन्दितुं सर्वं ससम्भ्रमं हव्यं=शीघ्रम्
आगच्छति ।

ततः=आगमनानन्तरं खलु = निश्चयेन स कूणिको राजा निजमातरं

बाद एक समय औका पाकर कूणिकने राजा श्रेणिकको बन्धनमें
डाल दिया और राज्याभिषेक कराकर अपने आप राजा बन गये ॥३७॥

‘ तएणं से ’ इत्यादि—

इसके अनन्तर एक दिन वह राजा कूणिक सभी प्रकारके
वस्त्र और अलङ्कारोंसे सज्जित होकर अपनी माता चेल्लना देवीके चरण
वन्दनके लिये हर्ष एवं उत्सुकताके साथ जल्दी २ आये, और

पछी ओक समय तक जेधन कूणिके राजा श्रेणिकने बन्धनमा नाणी दीघा अने
राज्याभिषेक करावी पोते राजा अनी जेठे (३७)

‘ तएणं से ’ इत्यादि

त्यार पछी ओक दिवस ते राजा कूणिक तमाम प्रकारना वस्त्र अने अलङ्कार-
सैथी सज्जित थछ पोतानी माता चेल्लना देवीना चरण-वन्दन माटे दुषं अने

चेल्लनां देवीम् अपहतमनःसंकल्पा यावत् ध्यायन्तीम्=आर्तध्यानं कुर्वन्तीं पश्यति,
दृष्ट्वा चेल्लनाया देव्याः पादग्रहणं करोति=चरणौ वन्दते, कृत्वा=चरणवन्दनं
विधाय चेल्लनां देवीमेवमवादीत्-हे अम्ब ! किं खलु=किमर्थं तव न तुष्टिः=
न सन्तोषः वा=अथवा नोत्सवः=न चित्तोल्लासः, वा न हर्षः=न प्रमोदः,
नानन्दः=न सुखम्, यदहं खलु स्वयमेव महता राज्याभिषेकेण विशालराज्य-
श्रियं कुर्वन्=पालयन् विहरामि=विचरामि ॥ ३८ ॥

मूलम्-तएणं सा चेल्लणा देवी कूणियं रायं एवं वयासी-
कहणं पुत्ता ! ममं तुट्ठी वा उस्सए वा हरिसे वा आणंदे
वा भविस्सइ ? जं णं तुमं सेणियं रायं पियं देवयं गुरुजणं
अच्चंतनेहाणुरागरत्तं नियलबंधणं करित्ता अप्पाणं महया राया-
भिसेएणं अभिसिंचावेसि ।

तएणं से कूणिए राया चेल्लणं देविं एवं वयासी-घाए-
उकामेणं अम्मो ! मम सेणिए राया, एवं मारेउं, वंधिउं,
निच्छुभिउकामए णं अम्मो ! ममं सेणिय राया, तं कहणं
अम्मो मम सेणिए राया अच्चंतनेहाणुरागरत्ते ? ।

तएणं सा चेल्लणा देवी कूणियं कुमारं एवं वयासी-एवं
खलु पुत्ता ! तुमंसि ममं गव्भे आभूए समाणे तिण्हं मासाणं

उन्होंने अपनी माताको दीन हीन अवस्थामें आर्तध्यान करती हुई
देखा । वह आर्तध्यान करती हुई चेल्लना देवीको चरणवन्दन करके
बोले-हे जननि ! मैं अपने तेज-प्रतापसे महाराज्याभिषेकके साथ
इस विशाल राज्यश्रीका उपभोग करता हूँ तो क्या इसे देखकर
तुम्हें मन्तोष नहीं हो रहा है, तुम्हारे चित्तमें न उल्लास है, न
प्रमोद है और न सुख ही, इसका क्या कारण है ? ॥ ३८ ॥

उत्पुक्तानी आथे जलदी-जलदी आण्ये. अने तणे पितानी मातानं दीन हीन अव-
स्थाभां आर्तध्यान करती लेधं ते आर्तध्यान करती चेल्लना देवीना चरणु वन्दन
करीने बोळ्ये छे जननी । हुं पिताना तेज-प्रतापथी महाराज्याभिषेकपूर्वक आ
विशाल राज्यश्रीना उपयोग करी रळो छुं, तो शुं आ लेधने तने संतोष थतो नथी ?
तारा मनमा नथी उल्लास, नथी प्रमोद छे नथी सुण आनु शुं क्षरणु छे ? (३८)

बहुपडिपुद्गारणं मम अयमेयारूवे दोहले पाउब्भूए—धन्नाओ
णं ताओ अम्मयाओ जाव अंगपडिचारियाओ निरवसेसं
भाणियब्वं जाव जाहे वि य णं तुमं वेयणाए अभिभूए
महया जाव तुसिणीए संचिट्ठसि, एवं खलु तव पुत्ता ! सेणिए
राया अच्चंतनेहाणुरागरत्ते ।

तएणं से कूणिए राया चेह्णणाए देवीए अंतिए एयमट्ठं
सोच्चा निसम्म चेह्णं देविं एवं वयासी—दुट्ठं णं अम्मो !
मए कयं, सेणियं रायं पियं देवयं गुरुजणं अच्चंतनेहाणु-
रागरत्तं निलयबंधणं करंतेणं, तं गच्छामि णं सेणियस्स रत्तो
सयमेव नियलाणि छिंदामि त्तिकट्ठु परसुहत्थगए जेणेव चार-
गसाला तेणेव पहारेत्थ गमणाए ।

तएणं सेणिए राया कूणियं कुमारं परसुहत्थगयं एज्ज-
माणं पासइ, पासित्ता एवं वयासी—एसणं कूणिए कुमारे अप-
त्थियपत्थिए जाव सिरिहिरिपरिवज्जिए परसुहत्थगए इह हव्व-
मागच्छइ । तं न नज्जइ णं ममं केणइ कुमारेणं मारिस्सइ
त्तिकट्ठु भीए जाव संजायभए तालपुडगं विसं आसगंसि पक्खिवइ ।

तएणं से सेणिए राया तालपुडगविसे आसगंसि पक्खित्ते
समाणे मुहुत्तंतरेणं परिणममाणंसि निप्पाणे निच्चिट्ठं जीववि-
प्पजडे ओइन्ने । तएणं से कूणिए कुमारे जेणेव चारगसाला
तेणेव उवागयं, सेणियं रायं निप्पाणं निच्चिट्ठं जीवविप्पजडं
ओइन्नं पासइ, पासित्ता, महया पिइसोएणं अप्फुण्णे समाणे
परसुनियत्ते विव चंपगवरपायवे धसत्ति धरणियलंसि सब्वंगेहिं
संनिवडिए ।

तएणं से कूणिए कुमारे मुहुत्तंतरेण आसत्थे समाणे
रोयमाणे, कंदमाणे, सोयमाणे, विलवमाणे, एवं वयासी—अहो

णं मए अधन्नेणं अपुन्नेणं अकयपुन्नेणं दुट्टु कयं सेणियं रायं
 पियं देवयं अच्चतनेहाणुरागरत्तं नियलबंधणं करंतेणं, मम
 मूलागं चैव णं सेणिए राया कालगए-त्तिकट्टु ईसर-तलवर
 जाव संधिवाल-सद्धिं संपरिवुडे रोयमाणेइ इड्ढिं सक्कारसमुदएणं
 सेणियस्स रत्तो नीहरणं करेइ, करित्ता वहूइं लोइयाइं मय-
 किच्चाइं करेइ । तएणं से कूणिए कुमारे एएणं महया
 मणोमाणसिएणं दुक्खेणं अभिभूइं समाणे अन्नया कयाइ
 अंतेउरपरिठालसंपरिवुडे सभंडमत्तोवगरणमायाए रायगिहाओ
 पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता जेणेव चंपा नयरी तेणेव उवा-
 गच्छइ । तत्थवि णं विउलभोगसमिइसमन्नागए कालेणं अप्प-
 सोए जाए यावि होत्था ।

तए णं से सेणिए राया अन्नया कयाइ कालादीए दस-
 कुमारे सदावेइ, सदावित्ता, रज्जं च जाव जणवर्यं च एक्कारस-
 भाए विरिंचइ, विरिंचित्ता सयमेव रज्जसिरिं करेमाणे पालेमाणे
 विहरइ ॥ ३९ ॥

छाया-ततः खलु सा चेल्लना देवी कूणिकं राजानमेवमवादीत्-कथं
 खलु पुत्र ! मम तुष्टिर्वा उत्तमवो वा हर्षो वा आनन्दो वा भविष्यति यत्खलु
 त्वं श्रेणिकं राजानं प्रियं देवतं गुरुजनकमत्यन्तस्नेहानुरागरक्तं निगडवन्धनं
 कृत्वा आन्मानं महतार राज्याभिषेकेण अभिषेचयसि ।

‘तएणं सा’ इत्यादि—

कूणिकके ऐसे वचन सुनकर रानी चेल्लनाने राजा कूणिकको
 इस प्रकार कहना प्रारम्भ किया—हे पुत्र ! तुम्हारे इस गज्याभिषेकसे
 मुझे मन्तोप अथवा चित्तमें उल्लास प्रमोद एवं सुख किस प्रकार

‘तएणं सा’ इत्यादि

इच्छिना-येवां वचनं श्रुत्वा राजा चेल्लनायै राज्ञे कूणिकेने आवी रीते
 इच्छेत्तुं शक्यं इत्थं—हे पुत्र ! तान् अ- गज्याभिषेकशी भने सतोष अथवा मनर्भा उल्लास,
 प्रमोद ऐतदं सुखं इवी रीते थाय ? इभइ तु अत्यन्त स्नेहं तथा अनुरागयुक्तं, इव

ततः खलु स कूणिको राजा चेल्लनां देवीमेवमवादीत्—घातयितुकामः
खलु अम्ब ! मम श्रेणिको राजा, एवं मारयितुं, बन्धयितुं, निःक्षोभयितुकामः
खलु अम्ब ! मम श्रेणिको राजा, तत्कथं खलु अम्ब ! मम श्रेणिको राजा-
ऽत्यन्तस्नेहानुरागरक्तः ? ।

ततः खलु सा चेल्लना देवी कूणिकं कुमारमेवमवादीत्—एवं खलु
पुत्र ! त्वयि मम गर्भे आभूते सति त्रिषु मासेषु बहुप्रतिपूर्णेषु ममायमेतद्रूपो
दोहदः प्रादुर्भूतः—धन्याः खलु ता अम्बाः यावत् अङ्गप्रतिचारिकाः, निरवशेषं

हो ? जब कि तुम अत्यन्त स्नेह और अनुरागसे युक्त, देव गुरुजन
सदृश अपने पिता, प्रिय राजा श्रेणिकको बन्धनमें डालकर विशाल
राज्य सुखका उपभोग करते हो ।

यह सुनकर राजा कूणिकने चेल्लना देवीसे इस प्रकार कहना
प्रारम्भ किया—हे माता ! यह राजा श्रेणिक जो मेरी घात चाहनेवाला
है एवं मेरा मरण और बन्धन चाहनेवाला है तथा मेरे मनको दुःख
देनेवाला है वह मुझपर अत्यन्त स्नेह और अनुरागसे अनुरक्त
कैसे हो सकता है ?

कूणिकके इस प्रकार कहनेपर चेल्लना देवीने उससे कहा—हे
पुत्र ! सुन—जब तू मेरे गर्भमें आया उसके तीन महीने पूर्ण होते
मुझे इस प्रकारका दोहद (दोहला) उत्पन्न हुआ कि—

वे माताएँ धन्य हैं जो अपने पतिके उदरवलिमांसको तल-
भूनकर मदिराके साथ खाती हुई यावत् अपने दोहद (दोहला)को

अने गुरुजन समान पोताना प्रिय राजा श्रेणिकने अधनमा नाभी आ विशाल राज्य
सुखको उपभोग करे छे

आ सांभली राजा कूणिके चेल्लना देवीने आ प्रभाण्डे कडेवा भांड्युं—डे माता !
आ राजा श्रेणिक ने मारे घात आडे छे अने मारुं भरणु तथा अधन आडवावाणो
छे तथा मारा मनने दुःख देनारे छे ते मारा उपर अत्यंत स्नेह तथा अनुरागथी
अनुरक्त केम डोई शके ?

कूणिकना आ प्रकारे कडेवाथी चेल्लना देवीने तेने कहु.—

डे पुत्र ! सांभण—न्यारे तुं मारा गर्भमां आव्ये त्पारथी त्रणु भडिना पूरा
यतां भने अवी नतने दोहद (तीव्र धन्धा) उत्पन्न थये डेः—

“ ते माताने धन्य छे डे ने पोताना पतिना उदरवलि मांसने तणी भूँने
भडिशनी साथे आतां पोताने दोहद संपूर्ण रीते पूरे करे छे. हुं पणु ने राजा

अणितृष्यं यावत् यदापि च खलु त्वं वेदनयाऽभिभूतो महता यावत् तूष्णीकः
संतिष्ठसे, एवं खलु तव पुत्र ! श्रेणिको राजाऽत्यन्तस्नेहानुरागरक्तः ।

पूर्ण करती हैं । मैं भी यदि राजा श्रेणिकके उदरबलिका मांस खाऊँ तो बला अच्छा हो ।” इस प्रकार दोहद होनेपर मैं दिन-रात आर्त-ध्यान करने लगी और दोहदके पूरे न होनेके कारण सूखकर पीली पड़ गई । जब तुम्हारे पिताको यह खबर दासियों द्वारा ज्ञात हुई तो उन्होंने मुझसे मेरे दोहदका वृत्तान्त सुनकर अभयकुमार द्वारा उसकी पूर्ति की । दोहद (दोहला) पूर्ण होनेके बाद मैंने विचार किया कि इस बालकने गर्भमें आते ही अपने पिताका मांस खाया तो जन्म लेकर न जाने क्या करेगा ? इस लिए इस गर्भको किसी भी उपायसे नष्ट कर डालूँ, परन्तु वह गर्भ नष्ट न हो सका और तू पैदा हुआ, तेरा जन्म होनेपर मैंने तुझे दासीके द्वारा एकान्त स्थान उकरडीपर फिकवा दिया । पश्चात् यह वृत्तान्त तेरे पिता राजा श्रेणिकको मालूम हुआ, उन्होंने तेरी खोज की और खोजकर तुझे मेरे पास ले आये । उन्होंने तेरा परित्याग करनेके कारण मेरी कड़ी भर्त्सना की और मुझे शपथ देकर कहा कि-तुम इस बच्चेका अच्छी तरह पालन पोषण करो । उकरडीपर पड़े हुए तेरी अंगुलीके अग्र भागको मुर्गेने काट लिया जिससे तुझे बड़ी वेदना होती थी, तू

श्रेणिकनु उदरबलिनो मांस भाठ तो बहुत साइ थाय.” आ प्रकारने दोहद यवाथी हुँ दिन-रात आर्तध्यान करवा लागी अने दोहद पूरे न यवाथी-सुकाधने पीजी पडी गध ब्यारे तारा पिताने आ अजर दासीओ द्वारा बालुवामां आवी त्पारे तेमसे भार भेटेथी भार दोहदनु वृत्तात साबगीने ते अभयकुमार द्वारा परिपूर्षु कर्था दोहद पूरे थया पछी में विचार कर्था के आ जाणके गर्भमा आवत, ज पोताना पितानु मांस भाधुं तो जन्म लधने तो अजर नाह के ते शुं करसे ? भाटे आ गर्भने काध पखु उपायथी नाश करी नाथु. पखु त गर्भने नाश न थध शक्ये अने तु पैदा थयो. तारा जन्म थया पछी में तने दासी भारकत अेकात-स्थान उकरडे केकावी दीधे। पछी आ डकीकतनी तारा पिता राजा श्रेणिकने अजर पडी तेमसे तारी तपास करी अने तने थोधीने रात भारी पासै लाव्या. तेमसे भारे परित्याग करवा भाटे भने, अहु ठपडे आव्ये अने भने सोगंध आवीने धलुं के-“आ जाणकनु सारी रीते पालन पोषण करे.” तु उकरडे पड्ये हुते त्पारे तारी आगणीना आगवा भागने कुकडे करड्ये।

ततः खलु स कूणिको राजा चेल्लनाया देव्या अन्तिके एतमर्थं भ्रुत्वा निश्चम्य चेल्लनां देवीमेवमवादीत—दुष्टु खलु अम्ब ! मया कृतं श्रेणिकं राजानं प्रियं दैवतं गुरुजनकमत्यन्तस्नेहानुरागरक्तं निगडबन्धनं कुर्वता, तद् गच्छामि खलु श्रेणिकस्य राज्ञः स्वयमेव निगडानि छिनद्मि, इति, कृत्वा परभृहस्तगतो यत्रैव चारकशाला तत्रैव प्रधारयति गमनाय ।

दिन-रात कष्टसे चिल्लाता रहता था, उस समय तेरे पिता तेरी कटी हुई अंगुलीको अपने मुहमें लेकर पीप और शोणितको चूसकर थूक देते थे, तब तुझे शांति होती थी और तू चूप होजाता था । जब कभी भी तुझे पीडा होती थी तब तेरे पिता इसी तरह किया करते थे, और तू शांति पानेके कारण चुप होजाता था । हे पुत्र ! इस कारण मैं कहती हूँ कि तेरे पिता राजा श्रेणिक तुझपर अत्यन्त स्नेह और अनुरागसे युक्त है ।

वह कूणिक राजा चेल्लना रानीके मुँहसे इस प्रकार वृत्तान्त सुनकर कहने लगे—हे माता ! मैंने सभी प्रकारके हित करनेवाले इष्ट-देवता स्वरूप परमोपकारक अत्यन्त स्नेह-अनुरागसे युक्त अपने पिता राजा श्रेणिकको बन्धनमें डाला यह उचित नहीं किया सो मैं स्वयं जाकर उनके बन्धनको काटता हूँ, ऐसा कहकर कुठार हाथमें लेकर जहाँ कारागार था वहाँ जानेके लिए चला ।

इतो जेथी तने अहु वेदना थती इती अने तुं ते कष्टथी दिवस रात अहु रडयाज करतो इतो ते सभये तारा पिता तारी कपायेदी आगणीने पोताना मोभा लघ पत्र अने लोही जे नीकणतुं इतुं ते यूसीने थूकी हेता इता. त्यारे तने शांति थती इती अने तुं छानो रही जतो इतो. ज्यारे वणी पाछी पीडा थती त्यारे तारा पिता जेवीज रीते करता इता. अने तुं शांत भणवाथी छानो रही जतो इतो हे पुत्र ! आ डारणुथी हुं कहुं छुं के तारा पिता राजा श्रेणिक तारा पर अहु स्नेह अने अनुराग राभता इता.

ते कूणिक राजा चेल्लना रानीना मोठिथी आ प्रभाणे इकीकत सासणी कडेवा लाज्याडे माता ! मे सर्व प्रकारे हित करवावाणा, छष्टेव स्वरूप परम उपकारक, अहुज स्नेहभाव राभवावाणा मारा पिता राजा श्रेणिकने अघनमां नाज्या ते वाजणी न क्युं तेथी हुं पोते जधने तेमनां अघन कापी नाजुं छुं. जेभे कही कुडाडी हाथमां सभे जथा केडामु इतु त्या गया.

ततः खलु श्रेणिको राजा कूणिकं कुमारं परशुहस्तगतमेजमानं पश्यति, दृष्ट्वा एवमवादीत्—एष खलु कूणिकः कुमारः अप्रार्थितप्रार्थितो यावत् श्रीही-परिवर्जितः परशुहस्तगत इह इव्यमागच्छति, तन्न ज्ञायते खलु मां केनापि कुमारेण (कुत्सितमारेण) मारयिष्यतीति, कृत्वा भीतो यावत् संजातभयस्ताल-पुटकं पिपमास्ये प्रक्षिपति ।

ततः खलु स श्रेणिको राजा तालपुटकविषे आस्ये प्रक्षिप्ते सति-मूहूर्त्तान्तरेण परिणम्यमाने निष्प्राणो निश्चेष्टो जीवविप्रत्यक्तोऽवतीर्णः ।

ततः खलु स कूणिकः कुमारो यत्रैव चारकशाला तत्रैवोपागतः, उपा-गत्य श्रेणिकं राजानं निष्प्राणं निश्चेष्टं जीवविप्रत्यक्तमवतीर्णं पश्यति दृष्ट्वा महता पितृशोकेन आक्रान्तः सन् परशुनिकृत्त इव चम्पकवरपादपः 'धस' इति धरणी-तले सर्वाङ्गः संनिपतितः ।

उसके बाद राजा श्रेणिकने, हाथमें कुठार लिए हुए कूणिक-कुमारको आते हुए देखकर उनके मुँहसे सहसा ये शब्द निकल पड़े कि—यह कूणिककुमार अनुचितको चाहनेवाला कर्तव्यहीन यावत् लज्जावर्जित हाथमें कुठार लिए हुए जल्दीसे आ रहा है, न जाने किस प्रकार यह मुझे बुगी तरह मारेगा, इस घातसे डरकर राजा श्रेणिकने अपनी अगूठीमें रहे हुए तालपुट विषको अपने मुखमें रख लिया । मुँहमें रखनेके बाद वह विष क्षणमात्रमें मारे शरीरमें फैल गया और राजा प्राण एवं चेष्टासे रहित हो मृत्युको प्राप्त हो गया ।

इसके बाद कूणिककुमार कारागारमें आया और आकर प्राण एवं चेष्टासे रहित—मरेहुए—राजा श्रेणिकको देखा । देखकर पिताके

त्यार पछी राजा श्रेणिके हाथमां कुडाडी लधने दृष्टिकु कुमारने आवतो जेथे जेधने तेना भोटथी पुरत आवा शब्दे नीकणी पड्या के—आ दृष्टिकु कुमार अनु-चित याहवावाणे कर्तव्यहीन निर्लज्ज थधने कुडाडी लध जल्दी अर्ही आवे छे. अणर नथी पडनी छे ते भने डेवी रीते अणण रीते मारी नाथये. आ वातथी डरी जधने राजा श्रेणिके पोतानी अंशुडीमा रहेल तालपुट अेर पोताना भोभा भूकथु. भोभां भूकथा पछी ते अेर अेक पण मात्रमां आभा शरीरमां डेलाध गथुं अने राजा प्राणथी अने डलन—अलनथी रहित थध मृत्यु पाभ्या

त्यार पछी दृष्टिकु कुमार केदधानामां आव्या अने आवीने राजा श्रेणिकने प्राण अने डलन—अलनथी रहित—भरेला जेथे, जेधने पिताना भरषुणन्य सहन

ततः खलु स कूणिकः कुमारो मुहूर्तान्तरेण आस्वस्थः सन् रुदन् क्रन्दन् शोचन् विलपन् एवमवादीत्—अहो ! खलु मया अघन्येन अपुण्येन अकृतपुण्येन दृष्टु कृतं श्रेणिकं राजानं प्रियं दैवतमत्यन्तस्नेहानुरागरक्तं निगड-बन्धनं कुर्वता, मम मूलकं चैव खलु श्रेणिको राजा कालगतः, इति कृत्वा ईश्वर-तलवर-यावत्-सन्धिपालैः सार्द्धं संपरिवृतो रुदन् ४ (क्रन्दन् शोचन् विलपन्) महता ऋद्धिसत्कारसमुदयेन श्रेणिकस्य राज्ञो नीहरणं करोति, कृत्वा बहूनि लौकिकानि मृतकृत्यानि करोति ।

ततः खलु स कूणिकः कुमार एतेन महता मनोमानसिकेन दुःखे-नाभिभूतः सन् अन्यदा कदाचित् अन्तःपुरपरिवारसंपरिवृतः सभाण्डामत्रोप-

मरणजन्य असहनीय कष्टसे आक्रान्त हो तीक्ष्ण कुठारसे कटे हुए कोमल चम्पक वृक्षकी तरह भूमिपर घडामसे गिर पडा ।

इसके अनन्तर वह कूणिककुमार कुछ समय बाद मूर्छारहित हुआ, मूर्छाके हट जानेपर वह रोता हुआ करुण शब्दसे आर्तनाद ओर विलाप करता हुआ इस प्रकार बोला—मैं अभागा हूँ, पापी हूँ, पुण्यहीन हूँ, जो कि मैंने बुरा कार्य किया, देवगुरुजनके समान परम उपकारी और स्नेह-ममतासे अनुरक्त अपने पिता श्रेणिक राजाको बन्धनमें डाला और मेरे ही कारण इनकी मृत्यु हुई । ऐसा कहकर अपने कुटुम्बके साथ रुदन करता हुआ बड़े समारोहके साथ राजाकी अन्तिम लौकिक क्रिया की । उसके बाद वह कूणिक राजगृहमें अपने पिताकी उपभोग सामग्रियोंको देख-देखकर अत्यन्त दुःखी

न थाय जेवा हु अथी इदन करता थका तीक्ष्णधार वाणा कुडाडीथी कापेला कामण अंपक वृक्षनी पेठे जमीन उपर घडांग पडी पडया

त्यार पछी ते कूणिक कुमार थोडा समय पछी मूर्छारहित थया मूर्छा छटी गया पछी ते इदन करता कश्छु शब्दथी आर्तनाद करता थाक अने विलाप करता करता आ प्रभाषे जोड्या—हु अभागी छु. पापी छु, पुण्यहीन छु, जेथी में अराण कार्य कर्तु हेव गुरुजन समान परम उपकारी अने स्नेह ममताथी लागणी राभनार पोताना पिता श्रेणिक राजने अधनमा (देहभानामा) नाण्या अने भाराण कारुण्यी जेनु मृत्यु थयु जेम कहीने पोताना कुटुभीजोनी साथे इदन करता थका अहु समारोहपूर्वक राजा श्रेणिकनी अन्तिम लौकिक क्रिया करी.

त्यार पछी ते कूणिक राजगृहमा पोताना पितानी उपभोग सामग्रीजो ने

करणमादाय राजगृहात् प्रतिनिष्क्रामति, प्रतिनिष्क्रम्य यत्रैव चम्पानगरी तत्रैवो-
पागच्छति । तत्रापि खलु विपुलभोगसमितिसमन्वागतः कालेन अल्पशोको
जातश्चाप्यभूत् ।

ततः खलु स कूणिको राजा अन्यदा कदाचित् कालादिकान् दश
कुमारान् शब्दयति, शब्दयित्वा राज्यं च यावज्जनपदं च एकादशभागान्
विभजति, विभज्य स्वयमेव राज्यश्रियं कुर्वन् पालयन् विहरति ॥ ३९ ॥

टीका—‘तएणं सा’ इत्यादि । प्रियं=सर्वथा हितकारकम् । देवतम्=
इष्टदेवतास्वरूपम् । गुरुजनकम्=गुरुजनवत् परमोपकारकम् । अत्यन्तस्नेहानुराग-
स्क्तं=विलक्षणप्रेमरागरञ्जितम् । प्रधारयति=निश्चिनोति गमनाय, गन्तुमुद्यत
इत्यर्थः । अवतीर्णः=मनुष्यायुः समाप्तवान् । विपुलभोगसमितिसमन्वागतः=
विपुलभोगानां समितिः=प्रवृत्तिः, तत्र समन्वागतः=समनुप्राप्तः विपुलभोगान्
भुञ्जानः कालेन=क्रियता कालेन विगतशोकोऽप्यभवत् । शेषं सुगमम् ।

होता था । कहीं वह पिताका सिंहासन देखता था तो कहीं उनकी
शय्या, कहीं उनके आभूषण, तो कहीं उनके वस्त्र, ये सब देखते
उसे पिताकी स्मृति अनवरत आती रहती थी, और उन्हें अपने किये
हुए पाप कर्मोंका भी स्मरण होजाता था जिससे असीम कष्टको
प्राप्त होता था । इस कारण वह वहाँ नहीं रह सका और एक
समय अपने अन्नःपुर परिवार सहित अपनी समस्त सामग्री लेकर
राजगृहसे बाहर निकला और चलकर जहाँ चम्पा नगरी थी वहाँ
गया, और चम्पा नगरीको अपनी राजधानी बनाकर निवास करने
लगा । कुछ समय व्यतीत होजानेपर वह पिताके शोकको भूल गया ।

लेधने गहुण दुःखी यता इता क्याठ ते पितानुं सिंहासन लेता इता तो क्याठ
तेमनी शय्या; क्याठ तेमनां आभूषण तो क्याठ तेमनां वस्त्रो आ सौ लेध तेमोने
पितानुं स्मरण वारंवार यथा करतुं इतुं अने तेमणे पोते करेवां पाप कर्मोनुं पण
स्मरण थध आवतुं इतुं जेथी पार वगरनुं कष्ट प्राप्त यतु इतु, आ धारणथी
ते त्यां रही शक्या नाह अने जेक समय पोतानां अंतःपुर कृष्ण-सहित पोतानी
तमाम सामग्री लधने राजगृहथी अहार नीकल्या. अने आधीने न्यां चंपानगरी
इती त्यां गया. अने पछी चंपानगरीने पोतानी राजधानी बनावीने त्यां रहेवा
लाग्या. थोडा समय व्यतीत थध गया पछी ते पिताना शोकने भूली गया.

अत्र प्रसङ्गमात्रं कूणिकस्य श्रेणिकघातकत्वे कारणं दर्शयते—

श्रेणिको भूपः प्राग् वीतरागवचनवर्तिवर्तितया सम्यक्त्वाभावाद् देव-
गुरुधर्मान् निर्णेतुं नाशकत् । चेल्लनापाणिपीडनानन्तरं तदीयप्रेरणयाऽनाथिमुनि-
सदुपदेशेन सम्यक्त्वमलभत ।

पुरा श्रेणिको राजा कदाचित् विमलपवनं सेवितुं शीतलमन्दसुगन्ध-
मन्धवाहमनाथं मत्तकोकिलकलरवजितं वनमगमत् । तत्रैकस्तापसाश्रम आसीत् ।

उसके बाद वह कूणिककुमार अपने भाई काल आदि दस
कुमारोंको बुलाकर राज्यके ग्यारह भाग करके उन लोगोंको बाट
दिया व अपने राज्यका पालन स्वयं करने लगा ।

कूणिक श्रेणिककी मृत्युमें क्यों कारणभूत बना ? यह कथानक
प्रासङ्गिक है एतदर्थ इसे नीचे दिखलाते हैं—

राजा श्रेणिक पहले वीतरागधर्मी नहीं होनेसे उसमें सम्यक्त्व
नहीं था, अतएव वह देव गुरु और धर्मका निर्णय करनेमें असमर्थ
था । परन्तु जब उसका विवाह चेल्लनाके साथ हुआ तब उसकी
प्रेरणासे व अनाथि मुनिके सदुपदेश द्वारा उसे सम्यक्त्वका लाभ
हुआ और वह वीतरागके धर्मको मानने लगा । पहले वह श्रेणिक
राजा एक समय शुद्ध वायु सेवन करनेके लिए वनमें गया । वह
वन शीतल, मन्द, सुगंध वायुसे युक्त एवं मत्त कोकिलके कलरवसे
कूजित था । वहाँ एक तापसका आश्रम था । उस आश्रममें एक

त्यार पछी ते कूणिक कुमार पोताना बाध डाल आदि दश कुमारेन भोला-
वीने राज्यना अगीयार भाग करी ते दोकाने वडेथी दीधु तथा पोताना राज्यनुं
पालन पोते करवा लाग्या

कूणिक शा भाटे श्रेणिकना मृत्युमां कारणभूत बन्या ? या कथानक प्रासंगिक
छे भाटे ते नीचे गतावीजे छीजे.—

राजा श्रेणिक पछेला वीतरागधर्मी न होवाथी तेनामां सम्यक्त्व नहोतुं
आथी ते देव गुरु तथा धर्मने निर्णय करवामा असमर्थ हुता परंतु न्यारे तेने
विवाह चेल्लनानी साथे थये। त्यारे तेनी प्रेरणाथी अने अनाथि मुनीना सदुपदेशथी
तेने सम्यक्त्वने लाभ थये अने ते वीतरागना धर्मने मानवा लाग्या। पछेलां ते
श्रेणिक राजा जेक समय शुद्ध वायु सेवन करवा भाटे वनमां गया ते वन शीतल,
मंठ, सुगंध वायुधी युक्त अने मत्त थयेबी कोकिलना कलरवथी कूजित हुतुं त्यां
जेक तापसीने आश्रम हुते। ते आश्रममां जेक तापस भडिने भडिने उपवास

तस्मिन्नाश्रमे कश्चित्तापसो मासं मासं तपसा क्षपयन् पारणां कुर्वाण आसीत् । राजा तं तपस्विनं त्रिलोक्य समतुष्यत्, तापसं च स्वभवने पारणां कर्तुं प्रार्थयत् । तापसेनोक्तम्—पारणायां पञ्च दिनानि माम्पतमवशिष्यन्ते पञ्चदिवमानन्तरं पारणायै तव राजधानीमागमिष्यामि, हे राजन् ! ममायं नियमो यत्—‘पारणादिने एकस्मिन्नेव गृहे भिक्षामाचरामि, यत्रैकत्र भैक्ष्यं न लभे तदा मासं क्षपयामि’ इति तापसनियमं श्रुत्वा श्रेणिको राजा निजराजधानीमागमत् ।

ततः पञ्चसु दिवसेषु व्यतीतेषु पारणाऽहे तापसः श्रेणिकराज-द्वार-मागतः । तस्मिन् दिने राज्ञो महत्या शिरोवेदनया राजभवनं व्याकुलमामो-

तापस मास-मासके उपवाससे पारणा करता था । राजा उस तापस-को देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुआ, और उससे प्रार्थना की—हे महात्मन् ! आप मेरे यहाँ पारणा करनेके लिये पधारें । राजाकी ऐसी प्रार्थना सुनकर तापस बोला—

हे राजन् ! अभी मेरे पारणेमें पाँच दिन घटते (अवशिष्ट) हैं उनके पूर्ण होजानेपर मैं तुम्हारे यहाँ पारणेके लिये आऊँगा परन्तु मेरा एक नियम है उसको ध्यानमें रखना—पारणेके दिन केवल एकही घर भिक्षाके लिए जाता हूँ । यदि वहाँ भिक्षा नहीं मिली तो फिर मासक्षपण (खमण) के वाद् ही पारणा करना हूँ । राजा उस तापसके इस नियमको सुनकर अपनी राजधानीको लौट गया ।

उसके पाँच दिन बीत जानेके पश्चात् वह तापस पारणेके दिन, राजा श्रेणिकके द्वारपर आया । उस दिन राजाके सिरमें असह्य वेदना थी जिससे समूचा राजभवन व्याकुल था, इसलिये उस

दर्री पा-छा ठ-ता हुआ -ज्वा ते तापसने जेठने अत्यंत शुशी थया अने तेओने प्रार्थना करी-हे महात्मन् ! आप भारे त्या पा-छा करवाने पधारो ' राजानी ओवी प्रार्थना मालणी तापस ओदथो :—

हे राजन् ! इछ भारे पारणा करवाने पाच दिवस अवशिष्ट (बाकी) छे. ते पूरा थछ गया पछी हु तारे त्या । छु भारे आवीथ परतु भारे ओछ नियम छे ते ध्यानमा राणने-हु पारणाने दिवस मात्र ओछत्र घेर भिक्षाने भारे जठ छु. जे त्या भिक्षा न भणे ता वणी पाछा करीने मास भमण पछीत्र पारणा करे छु. ज्वा ते तापसने आ नियम मालणीने पोतनी राजधानीओ पाछो गयो.

तेने पाच दिवस बीती गया पछी ते तापस पारणाने दिवस ज्वा श्रेणिकना द्वारे आव्यो. ते दिवस राजना माथाभा असह्य वेदना थती हुती जथा आपु राजभवन

दिति तापसं सत्कर्तुं कोऽपि नाशकत् । तापसस्तादृशं राजभवनं निरीक्ष्य ततः परावृत्तो द्वितीयं मासं क्षपयितुं प्रारभत । शिरोवेदनायां शान्तायां राजा तापसमुपागच्छत् तापसश्च स्वनियमं राजानं श्रावितवान् । भूपः पुनः पारणार्थं तापसं प्रार्थितवान् । पारणादिने श्रेणिकराजधानीमसौ तापस आगतः । तस्मिन् दिने राजभवनं बहिःप्रदीप्तमासीदिति तापसागमनं राज्ञा विस्मृतम् अतस्तापसः परावृत्तत् । ततश्चतुर्थं मासं स क्षपयितुं प्रारभत । बहौ शान्ते राजा तापस-

तापसका किसीने सत्कार नहीं किया । तापस इस प्रकार राजमहलको व्याकुल देखकर लौट गया और पुनः एक मासका उपवास करने लगा ।

जब राजाने शिरवेदनासे छुटकारा पाया तब वह पुनः उसी तापसके पास गया, और उसे पारणेके लिए अपने यहां आनेकी सविनय प्रार्थना की । तापसने राजाकी प्रार्थनाको सुनकर फिर अपने उस नियमको दोहराया और बादमें राजाके यहां पारणाके लिये आना स्वीकार कर लिया । पारणाके दिन वह तापस फिर राजाके यहां आया, परन्तु संयोगसे उस दिन राजभवनमें आग लग गयी, और राजा 'आज तापसका पारणा दिन है' यह भूल गया । तापस राजभवनको आगकी लपटोंसे जलता हुआ देखकर लौट गया और फिर तीसरे महीनेका उपवास करने लगा । आगके शान्त होजानेपर राजाको स्मरण हुआ कि मैंने तापसको पारणाके लिये आज बुलाया था परन्तु राजभवनमें आग लग जानेसे मैं उसे भूल गया, बेचारा

व्याकुल इतु आर्थी तं तापसने। डोर्धये सत्कार न कर्थे। तापस आ प्रभाष्टे राजभडेलने अस्थिर (व्यस्त) नेध पाछे। कर्थे अने इरी ते अके मासता उपवास करवा लाग्ये।

न्यारे राजने माथाने दुःभावे मटी गये। त्यारे ते इरीने तेन तापसनी पासे गये। अने तेने पारणा माटे पोताने त्या आववानी सविनय प्रार्थना करी। तापसे राजनी प्रार्थनाने सालणी इरीने पोताने ते नियम भीण वार क्यो अने पछी राजने त्या पारणां माटे आववाने स्वीकार कर्थे।

पारणाने दिवस ते तापस पाछे राजने त्यां आण्ये। परंतु सयोगवशात् ते दिवस राजभवनमां आग लागी गध तथा राज 'आने तापसने पारणांने दिवस छे' अे भूली गये। तापसे राजभवनने आगनी नवाणाअेथी अणतुं नेथुं अने नेधने पाछे इरी गये। अने पाछा त्रीण मडिनाना उपवास करवा लाग्ये। आग शांत थध गया पछी राजने याद आण्यु डे-मे तापसने पारणा माटे आने जोलाण्या इता। परंतु राजभवनमां आग लागी नवाथी हुं ते भूली गये। अितारा तपस्वी

सुपगम्य क्षमां पुनः पारणां च प्रार्थयामास । तापसेनापराधं क्षमित्वा पारणार्थं राजभवनागमनं स्वीकृतम् ।

पारणादिने तापसो राजद्वारमागतः । तस्मिन् दिने शत्रुः श्रेणिक-राजधानीमाक्राम्यत् । राजा योद्धुमुद्यतः सैन्यं सङ्ग्रहीतुं प्रवृत्तस्तापमं सत्कृतुं न क्षमोऽभूत् । तापसो राजद्वारमागत्य पुनः परावृत्तश्चतुर्थं मासं तपसा क्षपयितुं प्रारभत । ततो युद्धे निवृत्ते राजा तापमसुपगम्याऽपराधक्षमां पारणां च प्रार्थ-

नपस्वी इस मास भी मेरे ही कारण भूखा रहा । यह सोचकर राजाको अत्यन्त कष्ट हुआ और वह उस तापसके पास गया तथा अपने अपराधकी क्षमा याचना की, और फिर अपने यहाँ पारणाके लिये धानेकी प्रार्थना की । तापसने अपराधको क्षमा कर दिया, और राजभवनमें पारणाके लिए आना स्वीकार कर लिया ।

पारणाके दिन फिर वह तापस राजाके दरवाजेपर आया, परन्तु उसी दिन दुर्भाग्यसे शत्रुने उमकी राजधानीपर चढ़ाई कर दी थी । राजा सेनाको व्यवस्थित रूपसे एकत्रित करनेमें लगा हुआ था, इस लिये वह तीसरी बार भी सत्कार नहीं कर सका । तापस राजाके दरवाजेसे उम दीन थी विना पारणाके लौटा और चौथे मासका उपवास प्रारम्भ कर दिया ।

उसके बाद लडाईसे अवकाश मिलनेपर राजा तापसके पास आया और अपनी विपदा सुनाकर क्षमायाचना की तथा पारणा

आ मासना पञ्च मासाञ्च षाण्णथी भूष्या ष्णा आ विचारथी राजाने णहु कष्टं थुं अने ते तापस पासे गथे अने पोताना अपराध भाटे क्षमानी याचना करी, अने इरीन पोताने त्या पारणा भाटे आववानी प्रार्थना करी. तापसे अपराधने भाटे क्षमा आपी दीधी अने राजभवनमां पारणा भाटे आववाने स्वीकार करी दीधी.

पारणाने त्रिवसे पाछे ते तापस राजाना दरवाजे पर आव्ये। पञ्च ते त्रिवसे दुर्भाग्यवशात् शत्रुने तेनी राजधानी उपर चढ़ाई करी होवाथी राजा सैन्यने व्यवस्थित करी अठ्ठु कन्वामा सैनायेव इतो अथी ते तीर्थ वणत पञ्च सत्कार करी शक्ये नहि तापस राजाने येथी ते त्रिवस पञ्च पारणा कर्था वगर पाछे इथे अने आथा भासना उपवास शरु कर्था

त्यार पछी लडाईथी कुरसद भज्या पछी राजा तापसनी पासे आव्ये अने पोतानी विपत्त संभजवी क्षमा मागी अने पारणा करवा भाटे इरीने प्रार्थना करी

यामास । तापसः क्षमां पारणां च स्वीकृत्य चतुर्थमासानन्तरं राजद्वारमागतः सर्वान् पुत्रजन्मोत्सवनिमग्नानवलोक्य पारणामकृत्वा पुनः परावृत्तः । उत्सवानन्तरं भूपः स्वभृत्यान् पृष्टवान्—भो ! किं तापसः पारणार्थमागतवान् ? । भृत्यैः कथितम्—पारणामकृत्वैव गतवानसौ स्वाश्रमे । तत्र गत्वा वीतरागवचनामृतपानाभावात् तापसः क्रोधाग्निना प्रज्वलितः शुद्धधर्मश्रद्धारहितोऽसौ श्रेणिकं द्विषन् भार्तरौद्रध्यानपूर्वकं मनस्येवं चिन्तयति—तिलतुषमात्रमपि यदि मे तपः

करनेके लिए पुनः प्रार्थना की । तापसने राजाको क्षमा कर दिया और पारणाके लिये उनके यहाँ आना स्वीकार कर लिया । चौथे मासका समाप्त होनेपर पारणाके लिये राजाके दरवाजेपर आया । संयोगसे उसी दिन राजाके घर लडका पैदा हुआ । अपने अन्तःपुरपरिजनके सहित राजा उसी समारोहमें संलग्न था इसलिये राजाको तापसके आनेका ध्यान बिलकुल नहीं रहा । तापस पारणाके लिये भिक्षा न पाकर लौट गया । उत्सव खीतनेपर राजाने अपने परिचारकोंसे पूछा—क्या तापस पारणाके लिए आया था ? उन्होंने कहा—देव ! एक तापस पारणाके लिए आया था किन्तु वह पारणा क्रिया बिना ही अपने आश्रमको लौट गया ।

तापस अपने आश्रममें आकर वीतरागके वचनरूपी अमृतपानके बिना क्रोधाग्निसे जलता हुआ शुद्ध धर्मकी श्रद्धासे रहित होनेके कारण, श्रेणिक राजासे द्वेष करता हुआ भार्तरौद्र-ध्यानपूर्वक इस प्रकार अपने मनमें विचारने लगा—‘यदि तिलतुषके बराबर

तापसे राजाने क्षमा करी दीधी तथा पारणा माटे तेने त्या आववानो स्वीकार कर्यो योथो भास समाप्त थतां ते पारणा माटे राजाने द्वारे आव्यो सजेगथी तेज दिवसे राजाने घेर प्राकरे जनभ्यो पोताना अत पुरना परिजने। साथे राज ते प्रसंगमा लागेला हता योथी राजाने तापस आववानु गिलकुल ध्यानमा न रहु तापसने पारणा माटे भिक्षा न मणवाथी पाछा गया

उत्सव वीती गया यधी राजाने पोताना परिचारके (नोकरे) ने पूछ्युं— ‘तापस पारणा माटे आव्या हता ?’ तेज्येज्ये ह्यु— ‘हे देव ! एक तापस पारणा माटे आव्यो हता यद्यु ते पारणा कर्या विनाज पोताने आश्रमे पाछा गयो तापस पोताना आश्रममा आवी वीतरागना वचनरूपी अमृतपान वगरने। कोधरूपी अग्निथी भणतो भणतो शुद्ध धर्मनी श्रद्धाथी रहित होवाने कारणे श्रेणिक राजाना द्वेष करना आते—रौद्र-ध्यानपूर्वक आ प्रकारे पोताना मनमा विचारवा लाग्यो. जे तिलतुष (तलनां

फलं तदाऽहं जन्मान्तरेऽस्य राज्ञो दुःखदो भवेयम्' इति त्रिचार्य परभवदुःख-
दायकनिदानं कृतवान् ।

ततो राजा तापसनिकटमागतः । तत्र तापस उवाच—हे राजन् ! भूयो
भूयो मां निमन्त्र्य त्वं विस्मरसि, 'अथ सर्वथा यावज्जीवं चतुर्विधाऽऽहारं परि-
त्यज्य परभवे तव दुःखदो भवेयम्' एतादृशं प्रतिज्ञातवानस्मि ।

राजा भृशं प्रार्थयामास परञ्च तापसो न शान्तकोपोऽभवत् । राजा
विवशतया तापसाश्रमाच्चिद्वृत्त्य स्वभवनमुपागतो राज्यकार्ये लग्नः । असौ तापसः
कालावसरे कालं कृत्वा तस्यैव राज्ञश्चेल्लनादेवीगर्भतः पुत्रत्वेनोदपद्यत । प्रादुर्भूय
'कूणिककुमार' इति विख्यातः । निदानप्रभावात् श्रेणिकराजस्य घातकोऽभूत् ।

भी मेरी तपश्चर्याका फल हो तो मैं चाहता हूँ कि—इस राजा श्रेणिकको
अगले जन्ममें दुःखदायी होऊँ' ऐसा विचारकर जन्मांतरमें दुःख
देनेवाला निदान (नियाणा) किया ।

उसके बाद राजा तापसके पास आया । तापसने राजासे कहा—
हे राजन् ! तू सुझे चार२ न्यौना देकर भूल जाता है, आज मैंने
ऐसी प्रतिज्ञा करली है कि—'यावज्जीव चारों प्रकारके आहारको त्याग
कर परभवमें तुम्हारे लिये दुःखदायी बनूँ' ।

राजाने तापससे बहुत प्रार्थना की परन्तु उसका कोप शान्त
नहीं हुआ । राजा हारकर तापसके आश्रमसे अपनी राजधानीमें
आया और राजकाजमें संलग्न हो गया । वह तापस कालान्तरसे
मरकर उसकी रानी चेल्लनाके गर्भमें आया और उसका पुत्र होकर
पैदा हुआ और 'कूणिककुमार' के नामसे प्रसिद्ध हुआ । निदान
(नियाणा) के प्रभावसे वह श्रेणिकका घातक हुआ ।

इतिरां) नी अराणर पशु भारी तपश्चर्यानुं इण डोय तो हुं धृष्टुं छु डे-
'हुं' आ राण श्रेणिकने जन्मांतरमा दुःखदायी थाउ' आभ विचार करी जन्मांतरमां
दुःख देनावाणो थवा निदान (नियाणु) कर्तुः ।

त्यार पछी राज्ता तापसनी पासे आण्वा तापसे राज्ताने कहुं—डे राजन् ! तुं मने
वादे वादे निमंत्रण दधने भूली नय छे आण मे ओवी प्रतिज्ञा करी छे डे—'न्यां
सुधी छुं त्यां सुधी आदे प्रकारना आहारने त्याग करी परभवमां तमने दुःखदायी थाउ ?'
राज्ताये तापसने अहु प्रार्थना करी पशु तेना डोय शांत थयो नहिं. राज्ता डारी
नधने तापसना आश्रमेथी पोतानी राजधानीमां आवीने राजकार्यमा कामे लागी
थयो ते तापस दावातदे भरी गया पछी तेनी राणी चेल्लनाना गर्भमां आण्यो,

इदं च कुगुरुसेवाफलम् अतः कुगुरुं विहाय सुगुरुः सेवनीयः । कु-
गुरुसेवनेन न मोक्षमार्गज्ञानं न वा भवभ्रमणनिवृत्तिः । कुगुरोः सम्यक् सेवने-
ऽपि नाऽऽत्मकल्याणम् । उक्तञ्च—

नाऽऽम्रं सुषिक्तोऽपि ददाति निम्बकः,

पुष्टा रसैर्वन्ध्यगवी पयो न च ।

दुःस्थो नृपो नैव सुसेवितः श्रियं,

धर्मं शिवं वा कुगुरुर्न संश्रितः ॥ १ ॥

इति कूणिकस्य श्रेणिकघातकत्वे कारणविवरणम् ॥ सू० ३९ ॥

यह कुगुरुसेवाका फल है, इस लिये कुगुरुको छोडकर सद-
गुरुकी सेवा करनी चाहिए । कुगुरुकी सेवासे न मोक्षमार्गका ज्ञान
होता है न भवभ्रमण हो मिटता है । कुगुरुकी अच्छी तरह सेवा
करे तो भी आत्मकल्याण नहीं हो सकता । कहा भी हैः—

“नाऽऽम्रं सुषिक्तोऽपि ददाति निम्बकः,

पुष्टा रसैर्वन्ध्यगवी पयो न च ।

दुःस्थो नृपो नैव सुसेवितः श्रियं,

धर्मं शिवं वा कुगुरुर्न संश्रितः ॥ १ ॥

अर्थात्—नीमको चाहे कीतना भी सींचो तोभी उसमें आमका
फल नहीं आमकता । अच्छीसे अच्छी वस्तु खिलानेपर भी बन्ध्या
गौ दूध नहीं दे सकती । दरिद्र राजाकी चाहे कितनी भी सेवा की

तथा तेनो पुत्र धनं जन्म्या अने 'कूणिक कुमार' ना नामथी प्रासिद्ध थयो. [नदान
(नियाणा) ना प्रभावथी ते श्रेष्ठिकेनो घातक थयो

आ कुगुरुसेवानु इल छे आथी कुगुरुने छोडीने सदगुरुनी सेवा करवी जेधजे.
कुगुरुनी सेवथी नथी मोक्षमार्गनु ज्ञान थतु के नथी लवभ्रमण पणु भटतुं. कुगुरुनी
सारी रीते सेवा करीये तो पणु आत्मकल्याण थध शकतु नथी कहुं पणु छे केः—

नाऽऽम्रं सुषिक्तोऽपि ददाति निम्बकः,

पुष्टा रसैर्वन्ध्यगवी पयो न च ।

दुःस्थो नृपो नैव सुसेवितः श्रियं,

धर्मं शिवं वा कुगुरुर्न संश्रितः ॥ १ ॥

अर्थात्—लींअडाने गमे तेदलु पाणी पआ तो पणु तेमां आणानु इल न
आवी शके. सारामा सारी वस्तु भवराववाथी पणु वध्या गाय दूध न आपी शके.
दरिद्र राजनी गमे तेदली पणु सेवा करवामा आवे तो पणु ते धन न आपी शके

मूलम्—तत्थ णं चंपाए नयराए सेणियस्स रत्तो पुत्ते
 चैहणाए देत्रीए अत्तए कणियस्स रत्तो सहोयरे कणीयसे भाया
 वेहल्ले नामं कुमारे होत्था सोमाले जाव सुख्वे । तएणं
 तस्स वेहल्लस्स कुमारस्स सेणिएणं रत्ता जीवंतएणं चैव सेयणए
 गंधहत्थी अट्टारसव्वंके य हारे पुव्वदिन्ने ।

तए णं से वेहल्ले कुमारे सेणिएणं गंधहत्थिणा अंतेउरपरि-
 यालसंपरिवुडे चंपं नगरिं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छइ निग्गच्छिता
 अभिक्खणं २ गंगं महान्दं मज्जणयं ओयरइ ।

तएणं सेयणए गंधहत्था देवीओ सोंडाए गिण्हइ, गिण्हि-
 ता अप्पेगइयाओ पुट्टे ठवेइ, अप्पेगइयाओ खंधे ठवेइ, एवं
 अप्पेगइयाओ कुंभे ठवेइ, अप्पेगइयाओ सीसे ठवेइ, अप्पे-
 गइयाओ दंतमुसले ठवेइ, अप्पेगइयाओ सोंडाए गहाय उडुं
 वेहासं उविहइ, अप्पेगइयाओ सोंडागयाओ अंदोलावेइ, अप्पे-
 गइयाओ दंतंतरेसु नीणेइ, अप्पेगइयाओ स्त्रीभरेणं प्हाणेइ,
 अप्पेगइयाओ अणेगेहिं कीलावणेहिं कीलावेइ ।

तएणं चंपाए नयरीए सिंघाडगतिगचउक्कचच्चरमहापहपहेसु
 वहुजणो अन्नमन्नस्स एवमाइक्खइ जाव परुवेइ—एवं खल्लु

जाय किन्तु वह धन नहीं देसकता, वैसेही कुत्सित गुरुकी सेवामें
 न श्रुतचारित्रलक्षण धर्मकी प्राप्ति होती है और न मोक्षकी प्राप्ति
 हो सकती है ।

‘कृणिक श्रेणिकका घातक क्यों हुआ?’ इसका विवरण
 उपरोक्त लिखे अनुसार है ॥ सू० ३९ ॥

अप्येव सी १ कुत्सित (अथा०) शुद्धी सेनाथी नथी तो श्रुतचारित्रलक्षण धर्मनी
 प्राप्ति थाती हे नथी मोक्षनी प्राप्ति थथ सकती।

‘कृणिक, श्रेणिकनेो घातक हेम थया? तनु विवरणु उपर कइया प्रभाषे हे. (सू०३९)

देवाणुपिया ! वेहल्ले कुमारे एयणएणं गंधहत्थिणा अंतेउर०
तं चेव जाव अणेगेहिं कीलावणएहिं कीलावेइ, तं एस णं
वेहल्ले कुमारे रज्जसिरिफलं पच्चणुब्भवमाणे विहरइ, नो
कूणिए राया ।

तएणं तीसे पउमावईए देवीए इमीसे कहाए लद्धट्टाए
समाणीए अयमेयारूवे जाव समुप्पज्जित्था—‘एवं खलु वेहल्ले
कुमारे सेयणएणं गंधहत्थिणा जाव अणेगेहिं कीलावणएहिं
कीलावेइ, त एस णं वेहल्ले कुमारे रज्जसिरिफलं पच्चणुब्भव-
माणे विहरइ, नो कूणिए राया, तं किं अहं रज्जेण वा जाव
जणवएण वा जइ ण अहं सेयणगे गंधहत्थी नत्थि ? त सेयं
खलु ममं कणियं रायं एयमट्टं विन्नवित्तए’ त्ति कट्टु एवं
संपेहेइ, संपेहित्ता जेणेव कूणिए राया तेणेव उवागच्छइ, उवा-
गच्छित्ता करयल० जाव एवं वयासी—एवं खलु सामी ! वेहल्ले
कुमारे सेयणएणं गंधहत्थिणा जाव अणेगेहिं कीलावणएहिं
कीलावेइ, तं क्किणं सामी ! अहं रज्जेणं वा जाव जणवएण
वा जइणं अहं सेयणए गंधहत्थी नत्थि ? ।

तएणं से कूणिए राया पउमावईए देवीए एयमट्टं नो
आढाइ, नो परिजाणइ, तुसिणीए संचिइइ । तएणं सा पउ-
मावई देवी अभिक्खणंर कूणियं रायं एयमट्टं विन्नवेइ ।

तएणं से कूणिए राया पउमावईए देवीए अभिक्खणंर
एयमट्टं विन्नविज्जमाणे अन्नया कयाइ वेहल्लं कुमारं सदावेइ
सदावित्ता सेयणगं गंधहत्थि अट्टारसवंकं च हारं जायइ ।

तएणं से वेहळे कुमारे कूणियं रायं एवं वयासी-एवं खलु सामी ! सेणिएणं रन्ना जीवन्तेणं चैव सेयणए गंधहत्थी अट्टारसवंके य हारे दिन्ने, तं जइ णं सामी ! तुव्भे ममं रज्जस्स य रट्टस्स य जणवयस्स य अद्धं दलह तो णं अहं तुव्भं सेयणगं गंधहत्थि अट्टारसवंकं च हारं दलयामि ।

तएणं से कूणिए राया वेहळस्स कुमारस्स एवमट्टं नो आहाइ, नो परिजाणइ, अभिक्खणं२ सेयणगं गंधहत्थि अट्टार सवंकं च हारं जायइ ।

तएणं तस्स वेहळस्स कुमारस्स कूणिएणं रन्ना अभि-क्खणं२ सेयणगं गंधहत्थि अट्टारसवंकं च हारं (जाएमाणस्स समाणस्स अयमेयारूवे अज्झत्थिए ४ समुप्पजित्था) एवं खलु अक्खिक्खिउकामे णं गिण्हिउकामे णं उदालेउकामे णं ममं कूणिए राया सेयणगं गंधहत्थि अट्टारसवंकं च हारं तं जाव ममं कूणियं राया [नो जाणइ] ताव [सेयं मे] सेयणगं गंध-हत्थि अट्टारसवंकं च हारं गहाए अंतैउरपरियालसंपरिवुडस्स सभंडमत्तोवगरणमायाए चंपाओ नयरीओ पडिनिक्खमित्ता वेसा-लीए नयरीए, अज्जगं चेडयरायं उवसंपजित्ताणं विहरित्तए । एवं संपेहेइ, संपेहित्ता कूणियस्स रत्तो अंतराणि जाव पडि-जागरमाणे२ विहरइ ।

तएणं से वेहळ्ळे कुमारे अन्नया कयाइं कूणियस्स रन्नो अंतरं जाणइ जाणित्ता, सेयणगं गंधहत्थि अट्टारसवंकं च हारं गहाय अंतैउरपरियालसंपरिवुडे सभंडमत्तोवगरणमायाए चंपाओ नयरीओ पडिनिक्खमइ पडिनिक्खमित्ता जेणेव वेसाली नयरी

तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता वेसालीए नयरीए अज्जगं
चेडयं रायं उवसंपजित्ता णं विहरइ ॥ ४० ॥

छाया—तत्र खलु चम्पायां नगर्यां श्रेणिकस्य राज्ञः पुत्रश्लेष्ठनाया देव्या
आत्मजः श्रेणिकस्य राज्ञः सहोदरः कनीयान् भ्राता वैहल्यो नाम कुमार
आसीत् सुकुमारयावत्सुरूपः ।

ततः खलु तस्य वैहल्यस्य कुमारस्य श्रेणिकेन राजा जीवता चैव
सेचनको गन्धहस्ती अहारश्चक्रो हारश्च पूर्वदत्तः । ततः खलु स वैहल्यः
कुमारः सेचनकेन गन्धहस्तिना अन्तःपुरपरिवारसंपरिवृतश्चम्पाया नगर्यां मध्य-
मध्येन निर्गच्छति, निर्गत्य अभीक्ष्णं गङ्गां महानदीं सज्जनकम् अवतरति ।
ततः खलु सेचनको गन्धहस्ती देवीः शुण्डया गृह्णाति, ग्रहीत्वा अप्येकिकाः
वृष्टे स्थापयति, अप्येकिकाः स्क्रन्ने स्थापयति, अप्येकिकाः कुम्भे स्थापयति

‘तत्थगं चंपाए’ इत्यादि—

उस चम्पानगरीमें श्रेणिक राजाका पुत्र, रानी चेल्लनाका
आत्मज, राजा श्रेणिकका सहोदर छोटा भाई वैहल्य नामका कुमार
था, जो कि सुकुमार थावत् सुरूप था ।

उस वैहल्य कुमारको राजा श्रेणिकने अपनी जीवितावस्थामें
ही सेचनक नामका गन्ध हाथी और अहारह लडोयाला हार दिया ।
एक दिन वह वैहल्य कुमार सेचनक गंध हाथीपर चढ़कर अपने
अन्तःपुर परिवारके साथ चम्पानगरीके मध्यसे निकला, निकलकर
गंगानदीमें बारबार स्नान करनेके लिए अवतरित हुआ । तत्पश्चात्
वह सेचनक हाथी वैहल्यकी रानीयोंको अपनी सुंडसे पकड़कर

‘तत्थागं चंपाए’ इत्यादि

ते चम्पानगरीमा श्रेणिक राजानो पुत्र, राज्ञी चेल्लनानो आत्मज (हीकरे)
राज्ञ कृषिकेनो सहोदर नानोभाध वैहल्य नामे कुमार इतो के ने सुकुमार अने
सुरूप इतो

ते वैहल्य कुमारने राजा श्रेणिके पोतानी श्रुति अवस्थाभां सेचनक नामने
गंधहाथी तथा अहार सरबायो हार हीधो इतो ओक दिवस ते वैहल्यकुमार सेचनक
गंधहाथी उपर चडीने पोताना अतःपुर परिवार साथे चम्पानगरीना मध्यभागभां यधने
नीकल्यो, नीकलीने वार वार गंगानदीमा स्नान करवा भाटे उत्तरीं त्पार पछी ते सेचनक
हाथी वैहल्यनी राज्ञीओने पोतानी सुंडभां पकडीने तेभाथी होध—ओकने पोतानी पीठ

अप्येकिकाः शीर्षे स्थापयति, अप्येकिकाः दन्तमृशले स्थापयति, अप्येकिकाः शृण्डया गृहीत्वा उर्ध्वं वैहायममृद्ग्रहते, अप्येकिकाः शृण्डागता आन्दोलयति, अप्येकिकाः दन्तान्तरेषु नयति, अप्येकिकाः शीकरेण स्नपयति, अप्येकिकाः अनेकैः क्रीडनकैः क्रीडयति ।

ततः खलु चम्पायां नगर्यां शृङ्गाटक-त्रिक-चतुष्क-चत्वर-महापथ-पथेषु बहुजनोऽन्योऽन्यस्य एवमाख्याति यावत् प्ररूपयति-एवं खलु देवानुमियाः । वैहल्लयः कुमारः सेचनकेन गन्धहस्तिनाऽन्तपुर० तदेव यावद् अनेकैः क्रीडनकैः क्रोडयति तदेव खलु वैहल्लयः कुमागो राज्यश्रीफलं प्रत्यनुभवन् विहरति नो कूणिको राजा ।

ततः खलु तस्याः पञ्चावत्या देव्या अस्याः कथायाः लब्धार्थायाः सत्या अयमेतद्रूपो यावत् समुदपद्यत-‘एवं खलु वैहल्लयः कुमारः सेचनकेन

उनमेंसे किसी एकको पीठपर रखता है तो किसीको अपने कंधेपर; किसीको कुम्भस्थलपर रखता है तो किसीको अपने सिरपर, एवं किसीको अपने दन्ताशूलपर रखता है, और किसीको सृंडसे पकडकर उपर आकाशमें लेजाता है । इसी तरह किसी एकको सृंडमें दबाकर झुलाता है, किसी एकको अपने दन्ताशूलके बीचमें अधरसे रखलेता है । तथा किसी एकको अपनी सृंडसे निकलते हुए फुहारोंसे स्नान कराता है । एवं किसी एकको अनेक प्रकारकी क्रीडाओंसे सन्तुष्ट करता है ।

यह वृत्तान्त नगर भरमें फैल गया, तथा बहुतसे मनुष्य गलियों, सड़कों आदि स्थान-स्थानपर आपसमें इस प्रकार वार्तालाप करने लगे-हे देवानुप्रियो ! वैहल्लयकुमार सेचनक गंधहस्तीके द्वारा

उपर राणे तो डोढने डाध उपर, डोढने दुभस्थण उपर राणे तो डोढन पोताना भाथा उपर अने अने प्रभाणे डोढने पोताना दतशूण उपर राणे तो डोढने सूढथी पडडीने उपर आकाशमा लध जय आवी रीते डेढ-अेकने सूढमां दणावीन डीविका भवरवे, डोढने पोताना दतशूणनी वत्रमा अधरथी राणी ले तथा तथा डोढ-अेकने पोतानी सूढमाथी नीकणता पुवाग वडे स्नान करावे, तेमज डोढने अनेक प्रकारनी डीठाओथी सतुष्ट करे छे.

आ डकीकत आभा गाममा देवाध गध तथा धणुं मनुष्ये गविओ मडडे आदि अनेक डेढाणे डेढाणे पोत पोतामा आवी रीते वार्तालाप करवा लाग्या-‘हे देवानुप्रियो !

गन्धहस्तिना यावद् अनेकैः क्रीडनकैः क्रीडयति तदेष खलु वैहल्लयः कुमारो राज्यश्रीफलं प्रत्यनुभवन् विहरति नो कूणिको राजा, तत्किमस्माकं राज्येन वा यावज्जनपदेन वा यदि खलु अस्माकं सेचनको गन्धहस्ती नास्ति ?, तच्छ्रेयः खलु मम कूणिकं राजानमेतमर्थं विज्ञपयितुम् ।

इति कृत्वा एवं संप्रेक्षते, संप्रेक्ष्य यत्रैव कूणिको राजा तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य करतल० यावदेवमवादीत्-एवं खलु स्वामिन् ! वैहल्लयः कुमारः सेचनकेन गन्धहस्तिना यावद् अनेकैः क्रीडनकैः क्रीडयति, तत्किं खलु स्वामिन् ! अस्माकं राज्येन वा यावत् जनपदेन वा, यदि खलु अस्माकं सेचनको गन्धहस्ती नास्ति ? ।

अन्तःपुर परिवारसे साथ अनेक प्रकारकी क्रीडा करता है । वास्तविक राज्यश्रीका उपभोग तो वैहल्लयकुमार ही करता है, न कि राजा कूणिक ।

उसके बाद जब यह वृत्तान्त रानी पद्मावतीको मिला तो उसके मनमें ऐसा विचार उत्पन्न हुआ कि-‘वैहल्लयकुमार सेचनक हाथीके द्वारा अनेक प्रकारकी क्रीडा करता है इसलिए वही राज्यलक्ष्मी फलका उपभोग करता हुआ रहता है, न कि कूणिक राजा, इस लिये हमें इस राज्यसे और जनपदसे क्या लाभ ? यदि हमारे पास सेचनक हाथी नहीं है इसलिए यही अच्छा है कि कूणिक राजासे कहूँ कि वे वैहल्लयसे वह सेचनक हाथी लें’ । ऐसा विचारकर जहाँ कूणिक राजा था वहाँ गयी, और जाकर हाथ जोड़कर इस प्रकार बोली-हे स्वामिन् ! वैहल्लयकुमार सेचनक गन्धहस्तीके द्वारा अनेक प्रकारकी क्रीडा करता है, हे स्वामिन् ! यदि

वैहल्लय कुमार सेचनक गंध हाथी द्वारा अन्तःपुर परिवार सहित अनेक प्रकारकी क्रीडा करे छे. परी रीते राज्यश्रीना उपभोग तो वैहल्लय कुमार करे छे-नाहि के राजा कूणिक ?

त्यार पछी न्यारे आ इच्छित राष्ठी पद्मावतीना ज्ञापनामा आनी त्यारे तेना मनमा येवो विचार उत्पन्न थयो के-वैहल्लयकुमार सेचनक हाथी द्वारा अनेक प्रकारकी क्रीडा करे छे. भाटे तेज राज्यलक्ष्मीना क्षणो उपभोग करतो रह छे नाहि के कूणिक राजा, भाटे अभने आ राज्यश्री के जनपदथी शुं लाभ ले आमारी पासे सेचनक हाथी न होय तो ?, तेथी कूणिक राजाने कहुं के वैहल्लय पासेथी ते सेचनक हाथी लें वे जे ज्ञां छे. जेस विचार करी न्या कूणिक राजा हुता त्या गंध अने हाथ जेथी आ प्रकार बोली-हे स्वामिन् ! वैहल्लय कुमार सेचनक गंध हाथी

ततः खलु स कूणिको राजा पद्मावत्या देव्या एतमर्थं नो आद्रियते,
नो परिजानाति, तूष्णीकः संतिष्ठते ।

ततः खलु सा पद्मावती देवी अभीक्ष्णं कूणिकं राजानमेतमर्थे
विज्ञपयति ।

ततः खलु स कूणिको राजा पद्मावत्या देव्या अभीक्ष्णं एतमर्थं
विज्ञाप्यमानः अन्यदा कदाचित् वैहल्लयं कुमारः शब्दयति शब्दयित्वा सेचनकं
गन्धहस्तिनम् अष्टादशवक्रं हारं याचते ।

ततः खलु स वैहल्लयः कुमारः कूणिकं राजानमेवमवादीन्—एवं खलु
स्वामिन् ! श्रेणिकेन राज्ञा जीवता चैत्र सेचनको गन्धहस्ती अष्टादशवक्रश्च

हमारे पास सेचनक गन्ध हाथी नहीं है तो इस राज्य और
जनपदसे क्या लाभ ? ।

यह सुनकर राजा कूणिकने पद्मावती देवीके इस विचारका
आदर नहीं किया और न उस बातकी ओर ध्यान दिया, केवल
शुपचाप रह गया ।

परन्तु उस राजा कूणिकने रानी पद्मावतीके द्वारा बारबार
विज्ञापित होनेके कारण एक समय कुमार वैहल्लयको अपने यहाँ
बुलाया, बुलाकर उससे सेचनक गन्ध हाथी और अठारह लड़ीवाला
हार मांगा ।

कूणिकका ऐसा अधिप्राय जानकर वैहल्लयकुमारने इस प्रकार
कहना आरम्भ किया—हे स्वामिन् ! राजा श्रेणिकने अपनी जीविता-
वस्थामें ही मुझे सेचनक गन्ध हाथी और अठारह लड़ीवाला हार

दान अनेक प्रकारनी कीडा करे छे. हे स्वामी ! मेे आपछी पासे सेचनक गंध हाथी
व छेय तो आ राज्य अने जनपदथी शु लाव ?

आ सावणी रात दृष्टिके पद्मावती देवीना आ निचारने आदर कथेी नहि
डे न ते वात तरके ध्यान हीधु मात्र शुपाशुप रछा

त्यां पथी ते रात दृष्टिके राक्षी पद्मावतीना भारक्षत बारंवार विज्ञापन कर-
वाभा आवतु तेथी ओक वणत वैहल्लय कुमारने पोताने त्यां बोलाव्ये अने तेनी
पसेशी सेचनक गंध हाथी तथा अठार भरवाणो हार माव्ये।

दृष्टिकेने अवेो अधिप्राय वरछीने वैहल्लय कुमारे आ प्रकारे कडेवा मांड्युं—
हे स्वामिन् ! श्रेणिक रातमे पोतानी छवित अवस्थाभां व भने सेचनक गंध हाथी

हारो दत्तः, तद् यदि खलु स्वामिन् ! यूयं मह्यं राज्यस्य च यावत् जन-
पदस्य च अर्द्धं दत्तं तदा खल्वहं युष्यभ्यं सेचनकं गन्धहस्तिनम् अष्टादशवक्रं
च हारं ददामि ।

ततः खलु स कूणिको राजा वैहल्लयस्य कुमारस्य एतमर्थं नो
आद्रियते नो परिजानाति, अभीक्ष्णं २ सेचनकं गन्धहस्तिनम् अष्टादशवक्रं
च हारं याचते ।

ततः खलु तस्य वैहल्लयस्य कुमारस्य कूणिकेन राज्ञा अभीक्ष्णं २
सेचनकं गन्धहस्तिनम् अष्टादशवक्रं च हारं [याच्यमानस्य सतोऽयमेतद्रूप
आध्यात्मिकः ४ समुद्रपथन] एवं खलु आक्षेप्तुकामः खलु, ग्रहीतुकामः खलु,
आच्छेतुकामः खलु मां कूणिको राजा सेचनकं गन्धहस्तिनम् अष्टादशवक्रं च
हारम् तद् याचन्मां कूणिको राजा [नो जानाति] तावत् [श्रेयो मम]
सेचनकं गन्धहस्तिनम् अष्टादशवक्रं च हारं गृहीत्वान्तःपुरपरिवारसंपरिवृतस्य सभा-

दिया है, सो यदि आप उसे लेना चाहते हैं तो मुझे भी राज्य
और जनपदका आधा भाग दीजिये, फिर मैं भी आपके लिये इन
दोनोंको देदूंगा । परन्तु राजा कूणिकने वैहल्लयकुमारकी इस बातको
पसन्द नहीं किया, न कभी इसको अच्छी तरह सोचाही, परन्तु
बार-बार अपनी आंगको दोहराता रहा ।

तदन्तर कूणिक राजा द्वारा बार २ हाथी और हार मांगनेपर
वैहल्लय अपने मनमें सोचता है कि कूणिक राजा मेरे पर मिथ्यादोष
लगा कर मेरा सेचनक गंधहाथी और हार मुझसे छीन लेना चाहता
है, इसलिये उचित है कि जबतक कूणिक मुझसे हाथी और हार

तथा अठार सरवाणो हार दीधो छं नो ते आप लेवा थाहो छं तो मने यणु
राज्य तथा जन पदको अर्धो भाग आपो पछी हु पणु आपने आ गन्ने आपीश
परतु राजा कूणिके वैहल्लय कुमारनी आ बात पसन्द करी नहिं, न तो कही ये बातको
ठीक रीते विचार करी जेथो मात्र बारबार पोतानी मागणीज कर्या करी.

त्यार पछी कूणिक राजा तरुथी बारबार हाथी तथा हारनी मागणी यतां
वैहल्लय पोताना मनमा विचार करे छे के आ कूणिक राजा मारा उपर जोटे दोष
लगाडीने मारे सेचनक गंध हाथी अने हार मारी पासेथी पडावी लेवा मागे छे,
माटे जेज वाजणी छे के तथा सुधी कूणिक मारी पासेथी ते हाथी अने हार न
पडावी बीजे ते पडेवाज सेचनक गंध हाथी तथा अठार सरवाणो हार तथा अतःपुर

ण्डामत्रोपकरणमादाय चम्पाया नगर्याः प्रतिनिष्क्रम्य वैशाल्यां नगर्यामार्यकं
चेटकगजमुपसंपद्य विहर्तुम् । एवं संप्रेक्ष्य कूणिकस्य राज्ञोऽन्तराणि यावत्
प्रतिजाग्रत् २ विहरति ।

ततः खलु स वैहल्यः कुमारः अन्यदा कदाचित् कूणिकस्य राज्ञोऽन्तरं
जानाति, ज्ञात्वा सेचनकं गन्धहस्तिनमष्टादशवक्रं च द्वारं गृहीत्वा अन्तःपुरपरि-
वारसपरिवृतः राभाण्डामत्रोपकरणमादाय चम्पातो नगरीनः प्रतिनिष्क्रामति, प्रति-
निष्क्रम्य यत्रैव वैशाली नगरी तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य वैशाल्यां नगर्यां-
मार्यकं चेटकमुपसंपद्य विहरति ॥ ४० ॥

टीका—‘तत्थणं चंपाए’ इत्यादि—महोदरः=एकमातृकः । कनीयान्=
लघुभ्राता । अन्तःपुरपरिवारसंपरिवृतः=अन्तःपुरं=राज्ञी, परिवारः=खड्गरत्नादि-
क्रौञ्चो दामदास्यादिमेवकवर्गश्च, तैः संपरिवृतः=युक्तः वैद्यायसं-विद्याय एव वैहा-
यनम्=गगनम्, शीकरैः=एवमप्रसिद्धजलकणैः ‘कुहाग’ इति भाषायाम्, शृङ्गाटक
त्रिक-चतुष्क-चन्द्र-महापथ-पथेषु-शृङ्गाटकं=जलफलं ‘विगाडा’ इति भाषा-
याम्, तद्वत् त्रिकोणस्थानं, त्रिक=त्रिपथम्, चतुष्कम्=चतुष्पथम्, महापथो=
राजमार्गः, पन्थाः=सामान्यमार्गः, तेषु ! एष-कूणिको राजा माम् आक्षेप्तुकामः
राज्यमग्नयाऽदित्यया मयि मृपादोपमारोपयितुकामः । सेचनकं गन्धहस्तिनं
गृहीतुकामः=बलादादातुकामः । अष्टादशवक्रं द्वारं च ‘उगलेउकामे’ आच्छेत्तु-
कामः=मम हस्तादाकण्टुकामः अस्ति । शेषं सुगमम् ॥ ४० ॥

न छीने उसके पहले ही सेचनक गंधहायी और अठारह लड़ीवाला
हाथ तथा अन्तःपुर परिवारके साथ सभी गृहोपकरण लेकर चम्पा-
नगरसे निकलकर अपने नाना चेटक राजाके पास वैशालीनगरीमें
जाकर रहूँ । ऐसा विचार करनेके पश्चात् वह वैहल्यकुमार राजा
कूणिककी अनुपस्थितिकी ताकमें रहता है ।

उसके बाद वह वैहल्यकुमार एक समय कूणिक राजाकी
अनुपस्थितिका मौका पाकर अपने अंतःपुर परिवारके साथ सेचनक

परिवार अर्द्ध घन्टी तमाम वस्तुओं लधने चंपानगरीथी नीकणीने भाग नाना चेटक
राजनी के वैशाही नगरीमें लधने लुं. और विचार करीने पठी ते वेहल्य
कुमार राजा कूणिककी अनुपस्थिति-गेर हाजरीनी गड लेतो रहा करे छे.

त्या पठी ते वेहल्य कुमार ओक समय कूणिक राजनी गेहजारी लेध
पैतान. अंतःपुर परिवारनी साथे सेचनक हाथी, अठार स० बाणो द्वार अने तमाम

मूलम्—तएणं से कूणिए राया इमीसे कहाए लछट्टे समाणे
 -एवं खलु वेहल्ले कुमारे ममं असंविदितेणं सेयणगं गंध-
 हत्थि अट्टारसवंकं च हारं गहाय अंतेउरपरियालसंपरिवुडे जाव
 अज्जयं चेडयं रायं उवसंपज्जित्ता णं विहरइ, तं सेयं खलु
 ममं सेयणगं गंधहत्थि अट्टारसवंकं च हारं आणेउं दूयं पेसि-
 त्तए, एवं संपेहेइ, संपेहित्ता दूयं सदावेइ, सदावित्ता एवं वयासी-
 गच्छह णं तुमं देवाणुप्पिया ! वेसालिं नयरिं, तत्थ णं तुमं
 ममं अज्जं चेडगं रायं करतल० वद्धावेत्ता एवं वयाहि—एवं
 खलु सामी ! कूणिए राया विन्नवेइ—एस णं वेहल्ले कुमारे
 कूणियस्स रन्नो असंविदितेणं सेयणगं गंधहत्थि अट्टारसवंकं
 च हारं गहाय इह हव्वमागए, तए णं तुब्भे सामी ! कणियं
 रायं अणुगिणहमाणा सेयणगं गंधहत्थि अट्टारसवंकं च हारं
 कणियस्स रन्नो पच्चप्पिणह, वेहल्लं कुमारं च पेसेह ।

तए णं से दूए कूणिएणं० करतल० जाव पडिसुणित्ता
 जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता जहा चित्तो
 जाव वद्धावित्ता एवं वयासी—एवं खलु सामी ! कूणिए राया
 विन्नवेइ—एस णं वेहल्ले कुमारे तहेव भाणियव्वं जाव वेहल्लं
 कुमारं च पेसेह ।

तए णं से चेडए राया तं दूयं एवं वयासी—जह चेव
 णं देवाणुप्पिया ! कूणिए राया सेणियस्स रन्नो पुत्ते च्छेण्णाए
 देवीए अत्तए ममं नत्तुए तहेव णं वेहल्ले वि कुमारे सेणि-

हाथी, अठारह लडीवाला हार ओर सभी प्रकारकी गृहसामग्री लेकर
 चम्पानगरीसे निकल वैशालीनगरीमें आर्य चेटकके पास पहुँचकर
 रहने लगा ॥ ४० ॥

प्रकारनी गृह सामग्री लधने चम्पानगरीथी नीकणी वैशाली नगरीमां आर्य चेटकनी
 पासो पहुँचनी रहेवा साथी. (४०)

यस्स रन्नो पुत्ते चेल्लणाए देवीए अत्तए मम नत्तुए, सेणिएणं
रत्ता जीवन्तेणं चैव वेहल्लस्स कुमारस्स सेयणगे गंधहत्थी अट्टार-
सवंके हारे पुव्वदिन्ने, तं जइ णं कूणिए राया वेहल्लस्स रज्ज-
स्स य रट्टस्स य जणवयस्स य अच्चं दलयइ तो णं सेयणं
गंधहत्थि अट्टारसवंकं च हारं कूणियस्स रन्नो पच्चप्पिणामि,
वेहल्लं च कुमारं पेसेमि । तं दूयं सक्कारेइ संमाणेइ पडिविसजेइ ।

तएणं से दूए चेट्टएण रन्ना पडिविसजिए समाणे जेणेव
चाउग्घंटे आसरहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता चाउग्घंटे
आसरहं दूरुहइ, दूरुहित्ता वेसालिं नगरिं मज्झां-मज्झेणं निग्ग-
च्छइ, निग्गच्छित्ता सुहेहिं वसहिपायरासेहिं जाव वद्धावित्ता
एवं वयासी-एवं खल्लु सामी ! चेट्टए राया आणवेइ-जह चैव
णं कूणिए राया सेणियस्स रन्नो पुत्ते चेल्लणाए देवीए अत्तए
मम नत्तुए तं चैव भाणियव्वं जाव वेहल्लं च कुमारं पेसेमि,
तं न देइ सामी ! चेट्टए राया सेयणं गंधहत्थि अट्टारसवंकं
च हारं, वेहल्लं नो पेसेइ ॥ ४१ ॥

छाया—ततः खल्लु स कूणिको राजा अस्थाः कथाया लब्धार्थः सन्
'एवं खल्लु वैहल्ल्यः कुमारो मम असंविदितेन सेचनकं गन्धहस्तिनमष्टादशदक्रं
च हारं गृहीत्वा अन्तःपुरपरिवारसंपरिवृतो यावद् आर्यकं चेट्टकं राजानमुप-

'तएणं से कूणिए' इत्यादि—

उसके बाद जब यह समाचार राजा कूणिकको ज्ञात हुआ
तो उसने विचार किया कि वैहल्ल्यकुमार मुझसे बिना कुछ कहे-
सुने अपने अन्तःपुर परिवारके सहित, सेचनक गंधहस्ती अठारह
लठीवाला हार और सभी प्रकारकी गृहसामग्रियों को लेकर राजा

'तएणं से कूणिए' इत्यादि

त्यार पठी न्यारे आ अमाथारनी गज्ज कृष्णिकने णणर पडी त्यारे तेणे
विचार क्यो डे वेहल्ल्य कुमार अने डड पणु डह्या-साभल्या वगरण पोताना अत्त
पुर परिवार सहित सेचनक गंध हाथी, अठार सरने हार अने तभाम प्रकारनी

संपद्य खलु विहरति, तच्छ्रेयः खलु मम सेचनकं गन्धहस्तिनमष्टादशवक्रं च हारम् आनेतु दूतं प्रेषयितुम्, एवं संप्रेक्षते संप्रेक्ष्य दूतं शब्दयति, शब्दयित्वा एवमवादीत्—गच्छ खलु त्वं देवाणुप्रिय ! वैशालीं नगरीं, तत्र खलु त्वं मम आर्यं चेटकं राजानं करतल० वर्द्धयित्वा एवं वद—‘एवं खलु स्वामिन् ! कूणिको राजा विज्ञापयति—एष खलु वैहल्ल्यः कुमारः कूणिकस्य राज्ञः असंविदितेन सेचनकं गन्धहस्तिनमष्टादशवक्रं च हारं गृहीत्वा इह हव्य मागतः, ततः खलु यूयं स्वामिन् ! कूणिकं राजानमनुगृह्णन्तः सेचनकं गन्धहस्तिनमष्टादशवक्रं च हारं कूणिकस्य राज्ञः प्रत्यर्पयत, वैहल्ल्यं कुमारं च प्रेषयत ।

ततः खलु स दूतः कूणिकेन० करतल० यावत् प्रतिश्रुत्य यत्रैव स्वकं गृहं तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य यथा चित्तो यावद् वर्द्धयित्वा एवमवादीत्—

आर्य चेटकके पास जाकर रहने लगा है, इस कारण मुझे उचित है कि दूत भेजकर सेचनक गंध हाथी और अठारह लडीवाला हार मंगाऊँ, ऐसा विचारकर दूतको बुलाता है और बुलाकर इस प्रकार कहता है:—

हे देवानुप्रिय ! वैशालीनगरीमें मेरे नाना चेटकके पास तुम जओ उनके पास जाकर हाथ जोड़ जय-विजय शब्दके साथ राजाको बधाकर इस प्रकारसे कहो—हे स्वामिन् राजा कूणिक इस प्रकार विज्ञप्ति करते हैं कि मुझसे बिना कुछ कहे ही वैहल्ल्य कुमार सेचनक गन्ध हाथी और अठारह लडीवाला हार लेकर आपके यहाँ जन्दीसे चला आया है, सो आप वैहल्ल्यकुमारको सेचनक हाथी और अठारह लडीवाले हारके सहित कृपा करके हमारे पास भेज दें । इसके बाद वह दूत राजा कूणिकके द्वारा कहे हुए वचनोंको स्वीकारकर अपने

गृहसामग्री लधने राजा आर्य चेटकनी पासे जधने रह्यो छे आ हारणुथी भारे माटे योग्य छे क हूत भोक्ष्तीने सेचनक गंध हाथी अने अठार सरनेा हार मगावी लठि. अयेो विचार करी हूतने भोलावी आम तेने कडे छे— हे देवानुप्रिय ! वैशाली नगरीमा मारा नाना चेटकनी पासे तुं ना. तेनी पासे जध हाथ जेडीने जय-विजय शब्दथी राजने वधावीने आ प्रकारे कडे जे-हे स्वामिन् ! राजा कूणिक आ प्रकारे विज्ञप्ति करे छे के-मने काध कथा वगरज कुमार वैहल्ल्य सेचनक गंध हाथी अने अठार सग्वाणेा हार लधन आपनी पासे जध्तीथी आयेो आवेो छे माटे आप वैहल्ल्य कुमारने सेचनक गंध हाथी अने अठार सरनेा हार सहित कृपा करीने भारी पासे भोक्ष्ती आपो त्यार पछी ते हूत राजा कूणिक द्वारा कडेलां वचनाने

एवं खलु स्वामिन् ! कृणिको राजा विज्ञापयति—एष खलु वैहल्ल्यः कुमार-
स्तथैव भणितव्यं यावद् वैहल्ल्यं कुमारं प्रेषयत ।

ततः खलु स चेटको राजा तं दूतमेवमवादीत् यत्रैव खलु देवानु-
प्रिय ! कृणिको राजा श्रेणिकस्य राज्ञः पुत्रः, चेल्लनायाः देव्या आत्मजः,
मम नप्तकः, तथैव खलु वैहल्ल्योऽपि कुमारः श्रेणिकस्य राज्ञः पुत्रः, चेल्लनाया
देव्याः आत्मजो, मम नप्तकः, श्रेणिकेन राज्ञा जीवता चैव वैहल्ल्याय कुमाराय
सेचनको गन्धहस्ती अष्टादशवक्रो हारः पूर्वविदत्तः, तद् यदि खलु कृणिको
राजा वैहल्ल्याय राज्यस्य च राष्ट्रस्य च जनपदस्य चाद्धं ददाति तदा खलु

घर आया और चार घंटावाले रथमें बैठ रवाना हुवा । वह वैशाली
पहुँचकर आर्य चेटकको हाथ जोड़ जय विजयके साथ वधाकर परदेशी
राजाके चित्त प्रधानके समान इस प्रकार कहता है:-

हे स्वामिन् ! राजा कृणिक इस प्रकार विज्ञप्ति करते हैं कि-
मेरा छोटा भाई वैहल्ल्यकुमार मुझसे बिना कुछ कहे ही सेचनक
गंधहाथी और अठारह लडीवाला हार लेकर आपके पास चला आया
है इसलिये आप इसे हाथी और हारके साथ मेरे पास भेज दें ।

यह सुनकर चेटक राजाने उस दूतको इस प्रकार उत्तर दिया
हे देवानुप्रिय ! जिस प्रकार राजा कृणिक, श्रेणिक राजाका पुत्र, चेल्लना
रानीका आत्मज और मेरा दौहित्र है उसी प्रकार कुमार वैहल्ल्य
भी श्रेणिक राजाका पुत्र, रानी चेल्लनाका आत्मज और मेरा दौहित्र है ।

स्वीकार करी पोताने घेर आव्यो अने चार घंटावाणा रथमा भेसी रवाना थयो ते
वैशाली पहुँच्यो ने आर्य चेटकने हाथ जोडी जय-विजय पूर्वक वधावीने परदेशी
गणना प्रधान चित्तनी पेटे आ प्रकारे कहे छे.-

हे स्वामिन् ! राजा कृणिक आ प्रकारे विज्ञप्ति करे छे छे-मारो नानो साथ
वैहल्ल्य कुमार अने कछ पणु कछा वगर न सेचनक गंध हाथी अने अठार सर-
वाणा हार लछ आपनी पासे आव्यो आव्यो छे मारो आप तेने हाथी अने हार
साथे मारी पासे भेजवी आपो

आ आबणी चेटक राजन्थे ते दूतने आ प्रकारे उत्तर दीयो-हे देवानुप्रिय
ने प्रकारे गण कृणिक श्रेणिक गणने पुत्र चेटकना राष्ट्रीने आत्मज तथा मारो
दौहित्र छे तेन प्रकारे कुमार वैहल्ल्य पणु श्रेणिक गणने पुत्र राष्ट्री चेटकनाने
दौहित्रे अने मारो दौहित्र छे

सेचनकं गन्धहस्तिनम् अष्टादशवक्रं च हारं कूणिकाय राज्ञे प्रत्यर्पयामि, वैहल्लयं च कुमारं प्रेषयामि । तं दूतं सत्करोति सम्मानयति प्रतिविसर्जयति ।

ततः खलु स दूतः चेटकेन राज्ञा प्रतिविसर्जितः सन् यत्रैव चतुर्घण्टः अश्वरथस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य चतुर्घण्टमश्वरथं दूरोहति, दूरुह्य वैशालीं नगरीं मध्यमध्येन निर्गच्छति, निर्गत्य शुभैर्वसतिप्रातराशौर्यावद् वर्धयित्वा एवमवादीत—एवं खलु स्वामिन् ! चेटको राजा आज्ञापयति—यथैव खलु कूणिको राजा श्रेणिकस्य राज्ञः पुत्रः, चेल्लनाया देव्या आत्मजः मम नप्तकः, तदेव भणितव्यं यावद् वैहल्लयं च कुमारं प्रेषयामि । तन्न ददाति खलु स्वामिन् !

श्रेणिक राजाने अपनी जीवितावस्थामें ही कुमार वैहल्लयको सेचनक गंधहाथी और अठारह लडीवाला हार दिया था । तो भी यदि राजा कूणिक हाथी और हार लेना चाहता है तो उसे चाहिए कि वह भी वैहल्लयकुमारको राज्य राष्ट्र और जनपदका आधा भाग देदे । ऐसा होनेपर मैं हाथी और हारके साथ कुमार वैहल्लयको भेज सकता हूँ । इस प्रकार कहनेके बाद राजा चेटकने उस दूतका आदर सत्कारकर उसे विसर्जित (विदा) किया । चेटक राजासे विसर्जित वह दूत जहाँपर चार घण्टावाला रथ था वहाँ आया, आकर उस रथपर चढा और वैशाली नगरीके मध्यसे निकला । निकलकर अच्छी २ वस्तिर्योंमें विश्राम तथा प्रातःकालिक भोजन करता हुवा सुख-शांतिपूर्वक चम्पानगरीमें पहुँचा । पहुँचकर राजा कूणिकके पास जा हाथ जोड जय-विजय शब्दके साथ राजाको बधाकर इस प्रकार बोला:—

श्रेणिक राजाने पोतानी लुवित अवस्थामा न कुमार वैहल्लयने सेचनक गंध हाथी तथा अठार सरने डार दीधो हुते छता पणु ने राजा कूणिक हाथी तथा डार लेवा आहता डोय तो तेणे पणु वैहल्लय कुमारने राज्य राष्ट्र अने जनपदमा अरधे भाग देवे नेछणे. अने येम थाय तो हुं हाथी तथा डारनी साथे कुमार वैहल्लयने भोडकी शकुं छु आ प्रकारे क्हा पछी राजा चेटके ते इतने आहार सत्कार करी तेने विदाय आपी चेटक राजा पासेथी विदाय लछ ते इत न्यां आर घंटवाणे रथ हुते त्या आव्यो आवीने ते रथ उपर यडीने वैशाली नगरीनी मध्यमां थडने नीकण्ये सारी सारी वस्तीमां विश्राम तथा सवारनु लोअन करते थके सुभ शांतिपूर्वक चंपानगरीमा पडोव्ये पछी राजा कूणिक पासे न्छ पडोव्ये हाथ नेडी न्य विनय शब्दनी साथे राजा कूणिकने वधावीने आ प्रकारे क्हुं:—

चेटको राजा सेचनकं गन्धद्वस्तिनम् अष्टादशवक्रं च हारं वैहल्ल्यं च नो प्रेषयति ॥ ४१ ॥

टीका—‘तएणं से कूणिण्’ इत्यादि—शुभैः=प्रशस्तैः, वसतिप्रातराशैः मार्गं विश्रामस्थानैः पूर्ववर्तिलघुभोजनश्च मार्गं सुखपूर्वकं निवसनं यामद्वय-मध्ये भोजनं चेत्येतद्गुणं पथिकाय परमद्वितकारकम्, अन्यत् सर्वं सुगमम् ॥४१॥

मूलम्—तएणं से कूणिण् राया दुच्चं पि दूयं सद्वावित्ता एवं वयासी-गच्छह णं तुमं देवाणुप्पिया ! वेसालिं नयरिं, तत्थ णं तुमं मम अज्जगं चेडगं रायं जाव एवं वदाहि-एवं खलु सामी ! कूणिण् राया विन्नवेइ-जाणि काणि रयणाणि

हे स्वामिन् ! चेटक राजा इस प्रकार सूचित करते हैं कि जिस प्रकार राजा कूणिक, श्रेणिक राजाका पुत्र, चेडनाका आत्मज और मेरा दौहित्र है उसी प्रकार कुमार वैहल्ल्य भी श्रेणिकका पुत्र, चेडनाका आत्मज और मेरा दौहित्र है । सेचनक गंधहाथी एवं अठारह लडोवांला हार राजा श्रेणिकने कुमार वैहल्ल्यको अपनी जीवितावस्थायें ही दिया था, तां भी यदि कूणिक हाथी और हार चाहता है तो उसे चाहिये कि अपने राज्य, राष्ट्र ओर जनपदका आधा भाग वैहल्ल्यको देदे । यदि वह इस प्रकार करे तो मैं भी हाथी ओर हार के साथ वैहल्ल्यकुमारको भेज दूंगा । इस लिये हे हे स्वामिन् ! राजा चेटकने न तो हाथी और हार ही दिया न कुमार वैहल्ल्य का ही भेजा ॥ ४१ ॥

हे स्वामिन् ! चेटक राजा अंम सूचना करे छे के—“जे प्रकारे राजा कूणिक श्रेणिक राजाने पुत्र चेडलनाने आत्मज तथा भारे दौहित्र छे तेपीण् रीते कुमार वैहल्ल्य पण श्रेणिकने पुत्र, चेडलनाने आत्मज तथा भारे दौहित्र छे सेचनक-गंधहाथी अने अठार सरवाणे हार राजा श्रेणिके कुमार वैहल्ल्यने पोतानी छवित अवस्थाभण् दीधा सता तंम छता जे कूणिक हाथी अने हार चाहता छाय तो पोताना राज्य राष्ट्र तथा जनपदने अरथे भाग वैहल्ल्यने तेणे आपवे जेधजे जे तं आ प्रकारे करे तो हुं पण हाथी अने हार साथे वैहल्ल्य कुमारने भेकडी अ.पु.” तां छे स्वामी ! राजा चेटके तो नथा हाथी आप्थे, के नथी हार दीधा, तेम नथी वैहल्ल्य कुमारने भेकथ्या (४१)

समुप्पज्जंति सव्वाणि ताणि रायकुलगामीणि, सेणियस्स रत्तो रज्जसिरिं करेमाणस्स पालेमाणस्स दुवे रयणा समुप्पन्ना, तं जहा—सेयणए गंधहत्थी, अट्टारसवंके हारे, तण्णं तुब्भे सामी ! रायकुलपरंपरागयं ठिइयं अलोवेमाणा सेयणगं गन्धहत्थि अट्टारसवंकं हारं कूणियस्स रत्तो पच्चप्पिणह, वेहलं कुमारं पेसेह ।

तए णं से दूए कूणियस्स रत्तो तहेव जाव वच्चावित्ता एवं वयासी—एवं खलु सामी ! कूणिए राया विन्नवेइ—जाणि काणित्ति जाव वेहलं कुमारं पेसेह ।

तएणं से चेडए राया तं दूयं एवं वयासी जह चैव णं देवाणुप्पिया ! कूणिए राया सेणियस्स रत्तो पुत्ते चेंहणाए देवीए अत्तए जहा पढमं जाव वेहलं च कुमारं पेसेमि, तं दूयं सक्कारेइ संमाणेइ पडिविसज्जेइ । तए णं से दूए जाव कूणियस्स रत्तो वच्चावित्ता एवं वयासी—चेडए राया आणवेइ—जह चैव णं देवाणुप्पिया ! कूणिए राया सेणियस्स रत्तो पुत्ते चेंहणाए देवीए अत्तए जाव वेहलं कुमारं पेसेमि, तं न देइ णं सामी ! चेडए राया सेयणगं गंधहत्थि अट्टारसवंकं च हारं, वेहलं कुमार नो पेसेइ ।

तएणं से कूणिए राया तस्स दूयस्स अंतिए एयसट्ठं सोच्चा निसम्म आसुरुत्ते जाव मिसिमिसेमाणे तच्चं दूयं सदावेइ, सदावित्ता एवं वयासी—गच्छह णं तुमं देवाणुप्पिया ! वेसालीए नयरीए चेडगस्स रत्तो वामेणं पाएणं पायपीढं अक्कमाहि, अक्कमित्ता कुंतग्गेणं लेहं पणावेहि, पणावित्ता आसुरत्ते

जाव मिसिमिसेमाणे तिवलियं भिउडिं निडाले साहदु धेडगं
 रायं एवं वदाहि-हं भो वेडगराया ! अपत्थियपत्थया ! दुरंत
 जाव-परिवज्जिया ! एस णं कूणिए राया आणवेइ-पच्चप्पिणाहि
 णं कूणियस्स रन्नो सेयणं गंधहत्थि अट्टारसवंकं च हारं
 वेहलं च कुमारं पेसेहि, अहवा जुद्धसज्जा त्रिट्टाहि, एस णं
 कूणिए राया सबले सवाहणे सखंधावारे णं जुद्धसज्जे इह
 हव्वमागच्छइ ॥ ४२ ॥

छाया-ततः खलु स कूणिको राजा द्वितीयमपि दूतं शब्दयित्वा एव-
 मवादीत्-गच्छ खलु त्वं देवानुप्रिय ! वैशालीं नगरीं, तत्र खलु त्वं मम आर्यकं
 चेटकं राजानं यावद् एवं वद-एवं खलु स्वामिन् ! कूणिको राजा विज्ञापयति-
 यानि कानि रत्नानि समुत्पद्यन्ते सर्वाणि तानि राजकुलगामीनि, श्रेणिकस्य
 राज्ञो राज्यश्रियं कुर्वतः पालयतो द्वे रत्ने समुत्पन्ने, तत्रथा-सेचनको गन्ध-
 हस्ती, अष्टादशक्रो हारः, तत्खलु यूयं स्वामिन् ! राजकुलपरम्परागतां स्थिति-

‘ तएणं से कूणिए ’ इत्यादि-

इसके बाद कूणिक राजाने दूमरी बार फिर दूतको बुलाया
 और कहा-हे देवानुप्रिय ! वैशालीनगरीमें जाओ, वहाँ जाकर मेरे
 नाना राजा चेटकको हाथ जोड़ कर जय विजय शब्दके साथ उन्हें
 वधाकर इस प्रकार कहो कि-हे स्वामिन् ! राजा कूणिक की यह
 विज्ञापना है कि जो कुछ भी रत्न पैदा होता है उसपर राजकुलका
 ही अधिकार है। श्रेणिक राजाके राज्यकालमें दो रत्न उत्पन्न हुए,

‘ तएणं से कूणिए ’ इत्यादि

आ पछी कूणिक राजाने धीरे धीरे बार पाछे दूतने बुलावये आने कहुं-
 हे देवानुप्रिय ! वैशाली नगरीमा बर्धने भारा नाना रत्न चेटकने हाथ जेडीने जय
 विजय शब्दो साथे वधावी आ प्रकारे कहेने के हे स्वामिन् ! राजा कूणिकनी जेवी
 विज्ञापना छे के जे कछ पछु रत्न पैदा थाय छे तेना उपर गणकुलनेओ अधिकार
 छे श्रेणिक राजाना राज्य कालमा जे रत्न उत्पन्न थया छे-जेक सेचनक गंधहाथी

मलोपयन्तः सेचनकं गन्धहस्तिनम्, अष्टादशवक्रं च हारं कूणिकाय राज्ञे प्रत्यर्पयत, वैहल्लयं कुमारं प्रेषयत ।

ततः खलु स दूतः कूणिकस्य राज्ञस्तस्तथैव यावद् वर्धयित्वा एवमवादीत्-एवं खलु स्वामिन् ! कूणिको राजा विज्ञापयति-यानिकानीति यावत् वैहल्लयं कुमारं प्रेषयत ।

ततः खलु स चेटको राजा तं दूतमेवमवादीत्-यथा चैव खलु देवानुप्रिय ! कूणिको राजा श्रेणिकम्य राज्ञः पुत्रः चेष्टनाया देव्या आत्मजः,

एक सेचनक गन्धहाथी, दूसरा अठारह लडोवाला हार । हे स्वामिन् ! राजकुलकी परम्परागत स्थितिका नाश जिससे न हो इसलिये आप हाथी और हार मुझे अर्पित करदें और वैहल्लय कुमारको भेजदें ।

उसके बाद वह दूत कूणिक राजाकी इस विज्ञप्तिको स्वीकार कर अपने घर आया, और वहाँसे वैशालीनगरीमें जाकर राजा चेटकके सम्मुख उपस्थित हुआ । तथा उन्हे हाथ जोड़ जय विजय शब्दके साथ बधाकर, राजा कूणिककी विज्ञापना को इस प्रकार सुनायी-हे स्वामिन् ! राजा कूणिककी यह विज्ञापना है कि-जो कुछ भी रत्न उत्पन्न होता है उमपर राजकुलका अधिकार होता है । ये दोनों रत्न श्रेणिक राजाके राज्यकालमें उत्पन्न हुए हैं, इसलिये हे स्वामिन् ! जिससे राजकुलकी परम्परागत स्थिति विनष्ट न हो यह ध्यानमें लेकर हाथी और हारको देदें तथा वैहल्लयकुमारको भी कूणिक राजाके पास भेजदें ।

अने भीष्म अठारसन्ना डार, हे स्वामिन् ! राजकुलनी परपरागत स्थितिने नाश जेथी न थाय ते माटे आप हाथी अने डार मन अर्पित करे अने वैहल्लय कुमारने भेकली हे ।

त्यार पछी ते दूत कूणिक राजनी आ विज्ञप्तिने स्वीकार करी पोताने घेर आब्ये अने त्याथी वैशाली नगरीमा जर्ध राजा चेटकनी समुथ उपस्थित थयो. अने तेमने हाथ जेडी जय विजय शब्दथी बधावी राजा कूणिकनी विज्ञापनाने आ प्रकारे सभाजावी-हे स्वामिन् ! राजा कूणिकनी अेम विज्ञापना छे के जे कंठ पद्य रत्न उत्पन्न थाय ते तेना उपर राजकुलने अधिकार होय छे आ जे रत्ने श्रेणिक राजना राज्य कालमां उत्पन्न थयां छे. माटे हे स्वामिन् ! जेथी राजकुलनी परंपरागत स्थिति विनष्ट न थाय ते ध्यानमा लई हाथी तथा डारने अर्पण करे अने वैहल्लय कुमारने पद्य कूणिक राजनी पासे भेकली आपो.

ततः खलु स कूणिको राजा तस्य दूतस्यान्तिके एतमर्थं श्रुत्वा निशम्य आश्रुक्तः यावन्मिसिमिसी-कुर्वन् तृतीयं दूतं शब्दयति, शब्दयित्वा एवमवादीत्-गच्छ खलु त्वं देवानुप्रिय ! वैशाल्यां नगर्यां चेटकस्य राज्ञो वामेन पादेन पादपीठमाक्राम, आक्रम्य कुन्ताग्रेण लेखं प्रणायय, प्रणायय

जोड़ जय विजय शब्दके साथ उन्हें बधाकर इस प्रकार कहना आरम्भ किया-हे स्वामिन् । राजा चेटकने इस प्रकार उत्तर दिया कि-जिस प्रकार राजा कूणिक राजा श्रेणिकके पुत्र चेलुना देवीके आत्मज और मेरा दौहित्र है उसी प्रकार कुमार वैहल्ल्य भी है । राजा श्रेणिकने अपनी जीवितावस्थामें ही सेचनक गंधहाथी ओर अठारह लड़ीवाला हार वैहल्ल्य कुमारको प्रेमसे दिया है अतः इसपर राजकुलका अधिकार नहीं है, फिर भी यदि वह कुमार वैहल्ल्यके लिये अपने राज्य राष्ट्र और जनपदका आधा भाग देदे तो मैं हाथी और हार उसको देदूंगा तथा वैहल्ल्य कुमारको भी भेज दूंगा । इसलिये हे स्वामिन् । राजा चेटकने न तो सेचनक गंधहाथी और अठारह लड़ीवाला हार ही दिया और न कुमार वैहल्ल्यको भेजा ।

उस दूतके मुखसे इस प्रकारका वचन सुनकर राजा कूणिक सहसा क्रोधसे जलने लगा और उसने तीसरी बार दूतको बुलाकर

राज्य कूष्मिकनी पाससे आये अने हाथ लेडी नय विजय शब्दथी तेने वधावी आस कडेवा लाग्ये :-

हे स्वामिन् ! राजा चेटके जेवा प्रकारने जवाण हीधो के जे प्रकारे राजा कूष्मिक राजा श्रेणिकने पुत्र चेलुना देवीने आत्मज तथा भारो होडित्ते छे ते ज प्रकारे वैहल्ल्य पणु छे राजा श्रेणिके पेतानी ह्येयातीमान् सेचनक गंधहाथी अने अठार सरने हार वैहल्ल्य कुमारने प्रेमथी आपेल होवाथी तेना उपर राजकुलने अधिकार नथी तेम छतां पणु जे कुमार वैहल्ल्य माटे पेताना राज्य राष्ट्र तथा जनपदने अरधो भाग ते आपे तो हुं सेचनक गंधहाथी तथा अठार सरने हार तेने आपी दधश तथा वैहल्ल्य कुमारने पणु भोक्त्री दधश माटे हे स्वामिन् ! राजा चेटके नथी हीधो सेचनक गंधहाथी के नथी हीधो अठार सरने हार अने नथी भोक्त्र्या कुमार वैहल्ल्यने.

ते दूतना भोठेथी जेवा वचन सांभणीने राजा कूष्मिक तरत कोधथी आगनी नेम गरम थछ गये अने तेखे त्रील वार दूतने भोलावीने कछुं-हे देवानुप्रिय !

आशुरको यावत् मिसिमिसीकुर्वन् त्रिवलिकां भ्रुकुटिं ललाटे संहृत्य चेटकं राजानमेवं वद-हं भो चेटकराजाः ! अप्रार्थितपार्थकाः ! दुरन्त-यावत्परिवर्जिताः ! एष खलु कूणिको राजा आज्ञापयति-प्रत्यर्पयत खलु कूणिकस्य राज्ञः सेचनकं गन्धहस्तिनमष्टादशवक्रं च द्वारं वैहल्लयं च कुमारं प्रेषयत, अथवा युद्धसज्जाः तिष्ठत । एष खलु कूणिको राजा सवलः सवाहनः सस्कन्धावारः खलु युद्धसज्ज इह हव्यमाच्छति ॥ ४२ ॥

टीका—‘तएणं से कूणिए’ इत्यादि-सवलः=सेनायुक्तः, सवाहनः=रथादियानसहितः, सस्कन्धावारः-सशिविरः, ‘छाउनी’ इति भाषायाम् । शेषं सुगमम् ॥ ४२ ॥

मूलम्-तएणं से दूए करयल० तहेव जाव जेणेव चेडए राया तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता करयल० जाव वद्धावेइ, वद्धावित्ता एवं वयासी एस णं सामी ! ममं विणयपडिवत्ती,

फिर कहा-हे देवानुप्रिय ! वैशालीनगरीमें जाओ, वहाँ जाकर राजा चेटकके पादपीठको अपने बायें पैरसे ठोकर मारकर भालेकी नोकसे इस पत्रको देना । पत्र देकर शीघ्र ही क्रोधित होजाना, एवं क्रोधसे धगधगाते हुए त्रिवलो और भ्रुकुटिको अपने ललाटपर खींचकर चेटक राजासे इस प्रकार कहो-रे मृत्युको चाहनेवाले-निर्लज्ज ! वुरे परिणामवाले मूर्ख राजा चेटक ! वह कूणिक राजा तुझे आज्ञा देता है कि-सेचनक गंधहाथी और अठारह लडीवाला द्वार मुझे अर्पित करदे और कुमार वैहल्लयको मेरे पास भेजदे, नहीं तो संग्रामके लिए तैयार होजा, राजा कूणिक सेना, वाहन और शिविरके साथ युद्धके लिए तत्पर होकर शीघ्र आ रहा है ॥ ४२ ॥

वैशाली नगरी न्द अने त्या न्ध राज्द चेटकना पादपीठने तारा उणा पगेथी ठाकर मारीने लालानी अणीथी आ पत्र देने पत्र दधने तुरत क्रोधित थध न्दने अने क्रोधथी आगनी पडे गरम थध त्रिवली तथा भ्रमरने कपाल छपर जेथी राज्द चेटकने आम कडेने-‘रे मृत्युने आहनारा-निर्लज्ज ! अराण परिणामवाणा मूर्ध् राज्द चेटक ! तने कृष्णिक राज्द आज्ञा दे छे के-सेचनक गंधहाथी अने अठार सरवाणो द्वार अने आपी दे अने कुमार वैहल्लयने मारी पासे भेजली दे अगण न्द तेम नडि तो संग्राम माटे तैयार थध न्द राज्द कृष्णिक सेना, वाहन तथा शिविरनी साथे युद्ध माटे तत्पर थध तुरत आवी रह्या छे. (४२)

इयार्णि कृणियस्स रन्नो आणत्तो चेडगस्स रन्नो वामेणं पाएणं
पायपीठं अक्कमइ, अक्कमिन्ता, आसुरुत्ते कुंतग्गेण लेहं पणावेइ
तं चेव सबलखंधावारे णं इह हव्वमागच्छइ ।

तएणं से चेडए राया तस्स दूयस्स अंतिइ एयमट्टं सोच्चा
निसम्म आसुरुत्ते जाव साहट्टु एवं वयासी-न अण्णिणामि णं
कृणियस्स रन्नो सेयणगं अट्टारसवंकं हारं, वेहल्लं च कुमारं
नो पेसेमि, एस णं जुद्धसज्जे चिट्ठामि । तं दूयं असक्कारियं
असंमाणियं अवदारेणं निच्छुहावेइ ।

तएणं से कृणिए राया तस्स दूयस्स अंतिए एयमट्टं
सोच्चा णिसम्म आसुरुत्ते कालादीए दस कुमारे सदावेइ, सदा-
वित्ता एवं वयासी-एवं खल्लु देवाणुप्पिया ! वेहल्ले कुमारे ममं
असंविदित्तेणं सेयणगं गन्धहत्थि अट्टारसवंकं हारं अंतेउरं
सभंडं च गहाय चंपातो पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमिन्ता वेसालिं
अज्जगं चेडगरायं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ ।

तए णं मए सेयणगस्स गंधहत्थिस्स अट्टारसवंकस्स हार-
स्स अट्टाए दूया पेसिया, ते य चेडएण रण्णा इमेणं कारणेणं
पडिसेहिया अदुत्तरं च णं ममं तच्चे दूए असक्कारिए, तं
अवदारेणं निच्छुहावेइ तं सेयं खल्लु देवाणुप्पिया ! अम्मं चेड-
गस्स रन्नो जुत्तं गिण्हत्तए । तए णं कालाईया दस कुमारा
कृणियस्स रन्नो एयमट्टं विणएणं पडिसुणेंति ।

तएणं से कृणिए राया कालादीए दस कुमारे एवं
वयासी-गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया ! सएसु सएसु रज्जेसु
पत्तेयं पत्तेयं ण्हाया जाव पायच्छित्ता हत्थिखंधवरगया पत्तेयं-पत्तेयं
तिहिं दंतिसहस्सेहिं, एवं तिहिं रहसहस्सेहिं, तिहिं आससह-

आश्रुक्तो यावत् मिसिमिसीकुर्वन् त्रिवलिकां भ्रुकुटिं ललाटे संहृत्य चेटकं राजानमेवं वद-हं भो चेटकराजाः ! अप्रार्थितपार्यकाः ! दुरन्त-यावत्परिवर्जिताः ! एष खलु कूणिको राजा आज्ञापयति-प्रत्यर्पयत खलु कूणिकस्य राज्ञः सेचनकं गन्धहस्तिनमष्टादशवक्रं च द्वारं वैहल्यं च कुमारं प्रेषयत, अथवा युद्धसज्जाः तिष्ठत । एष खलु कूणिको राजा सवलः सवाहनः सस्कन्धावारः खलु युद्धमज्ज इह हव्यमाच्छति ॥ ४२ ॥

टीका—‘तएणं से कूणिण्’ इत्यादि-सवलः=सेनायुक्तः, सवाहनः=रथादियानसहितः, सस्कन्धावारः-सशिविरः, ‘छाउनी’ इति भाषायाम् । शेषं सुगमम् ॥ ४२ ॥

मूलम्-तएणं से दूए करयल० तहेव जाव जेणेव चेडए राया तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता करयल० जाव वद्धावेइ, वद्धावित्ता एवं वयासी एस णं सामी ! ममं विणयपडिवत्ती,

फिर कहा-हे देवानुप्रिय ! बैंगालीनगरीमें जाओ, वहाँ जाकर राजा चेटकके पादपीठको अपने बायें पैरसे ठोकर मारकर भालेकी नाँकसे इस पत्रको देना । पत्र देकर शीघ्र ही क्रोधित होजाना, एवं क्रोधसे धगाधगाते हुए त्रिवलो और भ्रुकुटिको अपने ललाटपर खींचकर चेटक राजासे इस प्रकार कहो-रे मृत्युको चाहनेवाले-निर्लज्ज ! बुरे परिणामवाले मूर्ख राजा चेटक ! वह कूणिक राजा तुझे आज्ञा देता है कि-सेचनक गंधहाथी और अठारह लड़ीवाला द्वार मुझे अर्पित करदे और कुमार वैहल्यको मेरे पास भेजदे, नहीं तो संग्रामके लिए तैयार होजा, राजा कूणिक सेना, वाहन और शिविरके साथ युद्धके लिए तत्पर होकर शीघ्र आ रहा है ॥ ४२ ॥

वैशाली नगरी न्त अने त्या न्ह राज्ज चेटकना पादपीठने ताग उणा पगेथी ठोकर मारीने लावानी आणीथी आ पत्र देने पत्र ठठने तुरत क्रोधित थछ न्ने अने क्रोधथी आगनी पेठे गरम थछ त्रिवली तथा भ्रमरने उपात्र छपर जेथी राज्ज चेटकने आम छेठे-‘रे मृत्युने आह्णारा-निर्लज्ज ! भ्रमण परिणामवाणा भूर्भू राज्ज चेटक ! तने द्रष्टिउ राज्ज आज्ञा दे छे ठे-सेचनक गंधहाथी अने अठार सरवाणा द्वार अने आथी दे अने कुमार वैहल्यने मारी पास भेजली दे अगरे जे तेम न्हि तो संग्राम माटे तैयार थछ न्त राज्ज द्रष्टिउ सेना, वाहन तथा शिविरनी साथे युद्ध माटे तत्पर थछ तुरत आवी रखा छे. (४२)

इयाणि कूणियस्स रत्तो आणत्तो चेडगस्स रन्नो वामेणं पाएणं
पायपीठं अक्कमइ, अक्कमित्ता, आसुरुत्ते कुंतग्गेण लेहं पणावेइ
तं चेव सबलखंधावारे णं इह हव्वमागच्छइ ।

तएणं से चेडए राया तस्स दूयस्स अंतिइ एयमट्ठं सोच्चा
निसम्म आसुरुत्ते जाव साहट्टु एवं वयासी-न अण्णियामि णं
कूणियस्स रत्तो सेयणगं अट्टारसवंकं हारं, वेहल्लं च कुमारं
नो पेसेमि, एस णं जुद्धसज्जे चिट्ठामि । तं दूयं असक्कारियं
असंमाणियं अवदारेणं निच्छुहावेइ ।

तएणं से कूणिए राया तस्स दूयस्स अंतिए एयमट्ठं
सोच्चा णिसम्म आसुरुत्ते कालादीए दस कुमारे सदावेइ, सदा-
वित्ता एवं वयासी-एवं खल्लु देवाणुप्पिया ! वेहल्ले कुमारे ममं
असंविदित्तेणं सेयणगं गन्धहत्थिं अट्टारसवंकं हारं अंतेउरं
सभंडं च गहाय चंपातो पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता वेसाल्लिं
अज्जगं चेडगरायं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ ।

तए णं मए सेयणगस्स गंधहत्थिस्स अट्टारसवंकस्स हार-
स्स अट्टाए दूया पेसिया, ते य चेडएण रण्णा इमेणं कारणेणं
पडिसेहिया अदुत्तरं च णं ममं तच्चे दूए असक्कारिए, तं
अवदारेणं निच्छुहावेइ तं सेयं खल्लु देवाणुप्पिया ! अम्हं चेड-
गस्स रत्तो जुत्तं गिण्हत्तए । तए णं कालाईया दस कुमारा
कूणियस्स रत्तो एयमट्ठं विणएणं पडिसुणेति ।

तएणं से कूणिए राया कालादीए दस कुमारे एवं
वयासी-गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया ! सएसु सएसु रज्जेसु
पत्तेयं पत्तेयं णहाया जाव पायच्छित्ता हत्थिखंधवरगया पत्तेयं-पत्तेयं
तिहिं दंतिसहस्सेहिं, एवं तिहिं रहसहस्सेहिं, तिहिं आससह-

स्सेहिं, तिहिं मणुस्सकोडीहिं सद्धिं संपरिवुडा सव्विड्डीए जाव
खेणं सएहिंतो २ नयरेहिंतो पडिनिक्खमह, पडिनिक्खमित्ता
ममं अंतियं पाउब्भवह ।

तए णं ते कालाईया दस कुमारा कूणियस्स रत्तो एयमं
सोच्चा सएसु सएसु रज्जेसु पत्तेयं २ ण्हायाजाव तिहि मणु-
स्सकोडीहि सद्धिं संपरिवुडा सव्विड्डीए जाव खेणं सएहिंतो २
नयरेहिंतो पडिनिक्खमंति, पडिनिक्खमित्ता जेणेव अंगा जण-
वए जेणेव चंपा नयरी जेणेव कूणिए राया तेणेव उवागया
करयल० जाव वच्चावेति ।

तएणं से कूणिए राया कोडुं वियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता
एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! आभिसेक्कं हत्थिरयणं
पडिक्कप्पेह, ह्य-गय-रह-चाउरंगिणिं सेणं संनाहेह, ममं एय-
माणत्तियं पच्चप्पिणह, जाव पच्चप्पिणंति ।

तए णं से कूणिए राया जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवा-
गच्छइ जाव पडिनिग्गच्छित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्टाणसाला
जाव नरवई दुरूढे ।

तए णं से कूणिए राया तिहिं दंतिसहस्सेहिं जाव खेणं
चंपं नयरिं मज्झं-मज्झेणं निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता जेणेव
कालादीया दस कुमारा तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता काला-
इएहिं दसहिं कुमारेहिं सद्धिं एगओ मेलायंति ।

तए णं से कूणिए राया तेत्तीसाए दंतिसहस्सेहिं तेत्ती-
साए आससहस्सेहिं, तेत्तीसाए रहसहस्सेहिं, तेत्तीसाए मणु-
स्सकोडीहिं सद्धिं संपरिवुडे सव्विड्डीए जाव खेणं सुभेहिं
वसहिपायरासेहिं नाइविप्पगिट्ठेहिं अंतरावासहिं वसमाणे २ अंग-

जणवयस्स मज्झं—मज्झेणं जेणेव विदेहे जणवए जेणेव वेसाली
नयरी तेणेव पहारित्थ गमणाए ॥ ४३ ॥

छाया—ततः खलु स दूतः करतल० तथैव यावद् यत्रैव चेटको राजा
तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य करतल० यावद् वर्धयति, वर्धयित्वा एवमवादीत्—
एषा खलु स्वामिन् ! मम विनयप्रतिपत्तिः, इदानीं कूणिकस्य राज्ञः आज्ञप्तिः
चेटकस्य राज्ञो नामेन पादेन पादपीठमाक्रामति, आक्रम्य आशुरक्तः कुन्ता-
ग्रेण लेखं प्रणाययति तदेव सबलस्कन्धावारः खलु इह हव्यमागच्छति ।

‘तएणं से दूए’ इत्यादि—राजा कूणिकके ऐसा कहनेपर उस दूतने
राजाकी आज्ञाको हाथ जोडकर स्वीकार की और पहिलेके ही समान राजा
चेटकके पास आया, आकर हाथ जोड जय विजय शब्दके साथ बधाकर
इस प्रकार कहा कि—हे स्वामिन् ! यह मेरा विनय है, और अब
जो राजा कूणिककी आज्ञा है वह कहता हूँ, ऐसा कहकर अपने
बाये पैरसे राजा चेटकके सिंहासनके पादपीठको ठोकर लगाता है
और कोपसे आरक्त हो भालेकी नोकसे पत्र देकर कूणिकका सन्देश
सुनाता है ।

रे मृत्युको चाहनेवाले—निर्लज्ज ! बुरे परिणामवाले मूर्ख राजा
चेटक ! वह कूणिक राजा तुझे आज्ञा देता है कि सेचनक गंधहाथी
और अठारह लडीवाला हार सुझे अर्पित करे, व कुमार वैहल्यको मेरे
पास भेजदे, नहीं तो संग्रामके लिए तैयार होजा, राजा कूणिक सेना
वाहन और शिबिरके साथ युद्धके लिए तत्पर होकर शीघ्र आरहा है ।

‘तएणं से दूए’ इत्यादि

राज्ज कुणिकना कडेवा पछी ते इत राज्ञानी आज्ञाने हाथ नेडी स्वीकार करी
अने पडेसानी पेटेअ राज्ज चेटकनी पास आये। आवीने हाथ नेडी जय विजय
शब्दथी वधावी आ प्रकारे कहुं के—हे स्वामिन् ! आ मारी तरङ्गने विनय छे अने हुवे
ने राज्ज कुणिकनी आज्ञा छे ते कहु छु. अम कहीने पोताना डणा पगथी राज्ज
चेटकना सिंहासननी पास रहला पादपीठने ठोकर मारी हे छे तथा कोपथी लालयेण
थछ जछ लालानी अछीथी पत्र आपीने कुणिकने स देशे स लणावे छे—रे मृत्युने
आहुनारा निर्लज्ज, अराण परिणामवाणा मूर्ख राज्ज चेटक ! तने कुणिक राज्ज आज्ञा
हे छे के—सेचनक गंधहाथी अने अठार सरवाणो हार मने आपीहे अने कुमार
वैहल्यने मारी पास भेकवी हे अगर ने तेम नछि तो संग्राम भाटे तैयार थछ न
राज्ज कुणिक सेना, वाहन तथा शिबिरनी साथे युद्ध भाटे तत्पर थछ तुरत आवी रहा छे.

ततः खलु स चेदको राजा तस्य दूतस्यान्तिके एतमर्थं श्रुत्वा निशम्य आभुरक्तः यावत् संहृत्य एवमवादीत्-नार्पयामि खलु कूणिकस्य राज्ञः सेचन-कमण्डादशवक्रं हारं वैहल्यं च कुमारं नो प्रेषयामि, एष खलु बुद्धसज्जस्ति-ष्ठाभि । तं दूतमसत्कारितमसम्मानितमपद्वारेण निष्कासयति ।

ततः खलु स कूणिको राजा तस्य दूतस्यान्तिके एतमर्थं श्रुत्वा नि-शम्य आभुरक्तः कालादीन दशकुमारान शब्दयित्वा एवमवादीत्-एवं खलु देवानुप्रियाः ! वैहल्यः कुमारो मम अगंविदितः खलु सेचनकं गन्धहस्तिनम्

वह चेदक राजा उस दूतके मुँहसे इस प्रकारका सन्देश सुनकर कोपसे आरक्त हो उठा और आँखे नडेरकर इस प्रकार कहने लगा-रे दूत ! मैं कूणिकको न तों सेचनक गंधहाथी और अठारह लडीवाला हार ही दे सकता हूँ, और न कुमार वैहल्ल्यको ही भेज सकता हूँ, तू जा और कह दे जो कूणिकको करना हो सो करे, युद्धके लिए मैं तैयार हूँ । एसा कहकर वह उस दूतको अपमानित (काला मुँहकर गधेपर बैठा) कर नगरके पिछले द्वारसे निकाल देता है ।

दूत वहाँसे चलकर वापस अपने राजा कूणिकके पास आया और उनको सारा वृत्तान्त सुनाया ।

कूणिक, दूतके मुखसे राजा चेदकका संवाद सुन कोपारक्त हो काल आदि दस कुमारोंको बुलवाना है और उन्हें बुलवाकर इस प्रकार कहता है-हे देवानुप्रियों ! वैहल्ल्य कुमार मुझसे बिना कुछ

ते चेदक राजा ते इतना भेटेथी आ प्रकान्ना अदेशो सांभणीने डोपथी लावयेण थरुं गये। तथा आप्णे भादी आ प्रकान्ने कडेवा लाग्यो-रे इत ! हुं कूणिकने न तो सेचनक गंधहाथी के अठारह लडीवाला हार छ शक्रीश के न तो कुमार वैहल्ल्यनं पणु भोकली शक्रीश. माटे तु आ अनं कडी दे कूणिकने ने कणु डोय ते करे सुद्ध माटे हुं तैयार छु अने कडीने ते इतन अपमानित करी (मोडु काणुं करी गधेका पर भेसाडी) नगरना पाछला एवागथी भादी भूके छे.

इत त्याथी यादीने पाछे पंताना राजा कूणिकनी पासे आव्ये अने तेने सर्व कडीकत स भजावी.

कूणिक इतना भेटेथी राजा चेदकना संवाद सांभणी डोपथी रक्त थरुं काव आदि दश कुमारने भोलावे छ तथा तंभने भोलावीने आ प्रकान्ने कडे छ-डे देवानु-प्रियो ! वैहल्ल्य कुमार अने कांथ पणु कथा भगन् सेचनक गंधहाथी अने अठार

अष्टादशवक्रं हारम् अन्तपुरं सभाण्डं च गृहीत्वा चम्पातो निष्क्रामति, निष्क्रम्य वैशालीम् आर्यकं चेटकराजम् उपसंपद्य विहरति । ततः खलु मया सेचनकस्य गन्धहस्तिनः अष्टादशवक्रस्य हारस्य अर्थाय दूताः प्रेषिताः, ते च चेटकेन राज्ञा अनेन कारणेन प्रतिषिद्धाः, अथोत्तरं च खलु मम तृतीयो दूतः असत्कारितः, तम् अपद्वारेण निष्कासयति, तच्छ्रेयः खलु देवानुप्रियाः ! अस्माकं चेटकस्य राज्ञः युक्तं ग्रहीतुम् ।

ततः खलु कालादिकाः दश कुमाराः कूणिकस्य राज्ञः एतमर्थं विनयेन प्रतिशृण्वन्ति ।

ततः खलु स कूणिको राजा कालादीन् दश कुमारान् एवमवादीत्—

कहे ही सेचनक गंधहाथी, अठारह लडीवाला हार, एवं अपने अन्तःपुर परिवारके सहित सभी प्रकारकी गृहसामग्रियाँ लेकर चम्पानगरीसे निकल गया और निकलकर वैशालीनगरीमें राजा चेटकके पास जाकर रहेने लगा है । इस समाचारको पाकर मैने हाथी और हारके लिए अपने दो दूतों को दो बार भेजे लेकिन राजा चेटकने हमारी बातको स्वीकार नहीं किया, फिर मैने तीसरे दूतको भेजा; परन्तु राजा चेटकने उसका अपमान कर उसे अपद्वारसे निकाल दिया । इसलिये हे-देवानुप्रियों ! हम लोगोंको चाहिये कि हम राजा चेटकका निग्रह करें ।

यह सुनकर वे काल आदि दस कुमारोंने राजा कूणिककी इस बातको स्वीकार किया ।

उसके बाद वह कूणिक राजा काल आदि दस कुमारोंको इस

सरनेो हार अने पोताना अतःपुर परिवार सहित तमाभ जतनी गृहसामग्री लधने अथानगरीथी नीकणी गये। अने जधने वैशाली नगरीमा राजा चेटकनी पासे रहेवा लाग्ये। आ समाचार जालीने हाथी तथा हार भाटे मे मारा जे दूताने जे वार भोक्क्या पणु राजा चेटके मारी वातनेो स्वीकार कर्या नथी पछी मे त्रीन दूतने भोक्कलाज्ये। पणु राजा चेटके तेनु अपमान करी तेने पाछवे दरवाजेथी काठी भूक्ये। भाटे जे देवानुप्रियो ! आपणु भाटे आवश्यक छे के राजा चेटकनेो निग्रह करवे।

आ सांखणी ते काल आदि दश कुमारोमे राजा कूणिकनी आ वातनेो स्वीकार कर्ये।

त्यार पछी ते कूणिक राजा काल आदि दश कुमारने आ प्रभाणे कहे छे—

गच्छत खलु यूयं देवानुप्रियाः ! स्वकेषु राज्येषु प्रत्येकं प्रत्येकं स्नाता यावत् प्रायश्चिताः दृष्टिस्कन्धवरगताः प्रत्येकं प्रत्येकं त्रिभिर्दन्तिसदृशैः, एवं त्रिभी रथसदृशः, त्रिभिरश्वसदृशः, तिसृभिर्मनुष्यकोटिभिः सार्द्धं संपरिवृताः सर्वद्वर्या यावद्-रवेण स्वकेभ्यः स्वकेभ्यो नगरेभ्यः प्रतिनिष्क्रामत, प्रतिनिष्क्रम्य ममान्तिकं प्रादुर्भवत ।

ततः खलु ते कालादिका दशकुमाराः कूणिकस्य राज्ञ एतमर्थं श्रुत्वा स्वकेषु स्वकेषु प्रत्येकं प्रत्येकं स्नाता यावत् तिसृभिर्मनुष्यकोटिभिः सार्द्धं संपरिवृताः सर्वद्वर्या यावद् रवेण स्वकेभ्यः स्वकेभ्यो नगरेभ्यः प्रतिनिष्क्रामन्ति, प्रतिनिष्क्रम्य यत्रैव अद्वा जनपदाः, यत्रैव चम्पानगरी, यत्रैव कूणिको राजा तत्रैवोपागताः करतल० यावद् वर्धयन्ति ।

प्रकार कहता है-हे देवानुप्रियो ! तुम लोग अपने २ राज्यमें जाओ । वहाँ जाकर स्नान और मांगलिक कृत्यकर हाथीपर चढ़, तुममेंसे हरेक कुमार तीन २ हजार हाथी, तीन २ हजार रथ, तीन २ हजार घोड़े, एवं तीन २ करोड़ सैनिकोंके सहित सभी प्रकारकी सामग्रियोंसे युक्त हो सज-धजकर बाजे-गाजे सहित अपने २ नगरोंसे निकलो और मेरे पास आओ ।

यह सुनकर वे काल आदि दस कुमार अपने २ राज्यमें गये वहाँ जाकर कूणिकके निर्देशानुसार सभी प्रकारकी सामग्रियोंसे युक्त हो अपने २ नगरसे निकले । और अंग देश चम्पानगरीमें राजा कूणिकके पास आए और हाथ जोड़ जय विजयके साथ राजाको वधाये ।

हे देवानुप्रियो ! तम्हे लोकां पोत-पोताना राज्ञ्यमा ज्ञाम्ना त्या ज्जने स्नान तथा मांगलिक कर्म करी हाथी उपर चडी तमारामाना दरेक कुमार त्रणु त्रणु डण्णर हाथी, त्रणु-त्रणु डण्णर रथ, त्रणु-त्रणु डण्णर घोडा अने त्रणु त्रणु करोड सैनिके साथे तमाम प्रकारनी सामथ्री लथ तैयार थछ वाज्जते जाज्जते पोतपोताना नगरेमाथी नीकणी मारी पासे आवा ।

आ सांलणी ते काल आदि दश कुमारे पोतपोताना राज्ञ्यमा गया. त्या ज्जने दृष्टिकना क्ख्या प्रभाण्णे तमाम प्रकारनी तैयारी करी अवे सर्व प्रकारनी सामथ्री लथने पोतपोताना नगरेमाथी नीकण्या अने अंग देशता य पा नगरीमा राज्ञ दृष्टिकनी पासे आव्या. त्यां आवीने हाथ जोडी जय विजय शब्देथी राजने वधाव्या.

ततः खलु स कूणिको राजा कौटुम्बिकपुरुषान् शब्दयति, शब्दयित्वा एवमवादीत्-क्षिप्रमेव भो देवानुप्रियाः ! आभिषेक्यं हस्तिरत्नं प्रतिकल्पयत, हय-गज-रथ-चतुरङ्गिणीं सेनां संनह्यत ममैतामाज्ञप्तिकां प्रत्यर्पयत यावत् प्रत्यर्पयन्ति ।

ततः खलु स कूणिको राजा यत्रैव मज्जनगृहं तत्रैवोपागच्छति यावत् प्रतिनिर्गत्य यत्रैव बाह्या उपस्थानशाला यावत् नरपतिर्दृष्टः ।

ततः खलु स कूणिको राजा त्रिभिर्दन्तिसहस्रैः यावत् रवेण चम्पां नगरीं मध्यं-मध्येन निर्गच्छति, निर्गत्य यत्रैव कालादिका दश कुमारास्तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य कालादिकैर्दशभिः कुमारैः सार्द्धमेकतो मिलति ।

काल आदि दस कुमारोंके आनेके बाद वह कूणिक राजा अपने कौटुम्बिक पुरुषोंको बुलाता है और बुलाकर इस प्रकार कहना है-हे देवानुप्रियों ! शीघ्रातिशीघ्र आभिषेक्य (पट्ट) हाथीको सजाओ तथा घोड़े, हाथी, रथ और चतुरङ्गिणी सेनाको संनद्ध करो । मेरी आज्ञानुसार तैयारी कर मुझे सूचित करो । राजा कूणिककी इस आज्ञाको सुनकर उन्होंने राजाके कथनानुसार सभी कार्य करके राजाको सूचित किया ।

उसके बाद वह कूणिक राजा जहाँ स्नानगृह था वहाँ आया, और स्नानादि कृत्योंसे निवृत्त हो, वहाँसे निकलकर जहाँ बाहरी सभामण्डप था वहाँ पहुँचा । और वहाँ आकर वह राजा सभी प्रकारसे सुसज्जित हो अपने आभिषेक्य हाथी पर चढा ।

उसके बाद वह कूणिक राजा तीन २ हजार हाथी घोड़े रथ

काल आदि दश कुमारों आये पछी कूणिक राजा पोताना कौटुम्बिक पुरुषोंने बोलावीने आ प्रमाणे कडेवा लाग्या-डे देवानुप्रियो ! अेकदम जलदीथी आभिषेक्य (पट्ट) हाथीने सज्जो तथा घोडा हाथी रथ अने चतुरङ्गिणी सेनाने तैयार करो. भारी आज्ञा प्रमाणे तैयारी करी मने भयर आयो राजा कूणिकनी आ आज्ञाने साबणी तेओअे राजना कडेवा प्रमाणे गधां कार्य करी राजने भयर आयी.

त्यार पछी ते कूणिक राजा न्यां स्नानगृह इतु त्यां आव्या अने स्नान आदि कृत्योथी निवृत्त थथ त्याथी नीकणी न्यां गहारने सभामंडप इतो त्यां पडोअ्या अने त्या आवीने ते राजा तमाम प्रकारे सुसज्जित थथने पोताना आभिषेक्य हाथी पर चढा.

त्यार पछी ते कूणिक राजा त्रय त्रय हजार हाथी घोडा रथ तथा त्रय करोड

ततः खलु स कूणिको राजा त्रयस्त्रिंशताः दन्तिसहस्रैः, यत्र त्रिंशता-
ऽश्वसहस्रैः, त्रयस्त्रिंशता रथसहस्रैः, त्रयस्त्रिंशता मनुष्यकोटिभिः सार्द्धं संपरिवृतः
सर्वद्वर्था यावद् रवेण शुभैर्वसनिप्रातराशैः=नातिविप्रकृष्टैरन्तरावासैः यसन्
अङ्गजनपदस्य मध्यमध्येन यत्रैव विदेहो जनपदः यत्रैव वैशाली नगरी तत्रैव
प्राधारयद् गमनाय ॥ ४३ ॥

टीका—‘ तएणं से दूए ’ इत्यादि-अपद्वारेण लघुद्वारेण, गुप्तद्वारेण
वा गृहपश्चाद्भागेनेत्यर्थः । दूरुढ=आरुढः, युक्तम्=उचितं योग्यमिति यावत्,
शेषं सुगमम् ॥ ४३ ॥

मूलम्—तएणं से चेडए राया इमीसे कहाए लच्छट्टे समाणे
नवमल्लइ-नवलेच्छइ-कासी-कोसलगा अट्टारस वि गणरायाणो
सदावेइ, सदावित्ता एवं वयासी-एथं खलु देवाणुप्पिया ! वेहल्ले
कुमारे कूणियस्स रत्तो असंविदित्ते णं सेयणं गन्धहत्थि

और तीन करोड सैनिकोंके सहित सभी रणसामग्रीयोंके साथ चम्पा-
नगरीके मध्यसे होकर निकला, निकलकर जहाँ काल आदि दस
कुमार थे वहाँ आया, और काल आदि दस कुमारोंसे मिला ।

उसके बाद वह कूणिक राजा तेतीस हजार घोड़े, तेतीस
हजार रथ और तेतीस करोड सैनिकोंसे घिगा हुआ सभी तरहकी
सामग्री युक्त बाजे-गाजेके साथ शुभ स्थानोंमें खान-पान करता
हुआ थोड़ी २ दूर पर डेरा डालकर विश्राम करता हुआ अङ्ग देशके
बीचो-बीचसे जहाँ विदेह देश था, जहाँ वैशाली नगरी थी वहीं पर
जानेका निश्चय किया ॥ ४३ ॥

सन्दिहो सहित तमाम युद्धनी सामग्रीयो साथे चंपा नगरीना मध्यभागमा यधने
नीकल्या अने त्यांथी नीकणी न्यां काल आदि दश कुमारे हुता त्यां आव्या अने
काल आदि दश कुमारेने भल्या

त्यार पछी ते दूष्णिक रान्त तेत्रीस हुन्तर हाथी, तेत्रीस हुन्तर घोडा तेत्रीस
हुन्तर रथ तथा तेत्रीस करौड सैनिकोथी घेरायला अने तमाम नतनी युद्ध सामग्री
युक्त थधे वाजते गाजते शुभ स्थानोमां पान-पान करता थोडे थोडे दूर पर सुकाम
करता करता विश्राम लेता थका अग देशनी वन्थो-वन्थ थधने न्यां विदेह देश
हुतो न्या वैशादी नगरी हुती त्या नपानो निश्चय क्यो (४३)

अट्टारसवंकं च हारं गहाय इहं हव्वमागए, तए णं कूणिएणं
सेयणगस्स अट्टारसवंकस्स य अट्टाए तओ दूया पेसिया, ते
य मए इमेणं कारणेणं पडिसेहिया ।

तए णं से कूणिए ममं एयमइं अपडिसुणमाणे चाउ-
रंगिणीए सेणाए सद्धिं संपरिवुडे जुज्झसज्जे इहं हव्वमाग-
च्छइ, तं किं नु देवाणुप्पिया ! सेयणगं अट्टारसवंकं च कूणि-
यस्स रत्तो पच्चप्पिणामो ? वेहल्लं कुमारं पेसेमो ? उदाहु जु-
ज्झित्था ? तए णं नवमल्लइ-नवलेच्छइ-कासी-कोसलगा अट्टा-
रस वि गणरायाणो चेडगं रायं एवं वयासी-न एयं सामी !
जुत्तं वा पत्तं वा रायसरिसं वा जन्नं सेयणगं अट्टारसवंकं
कूणियस्स रत्तो पच्चप्पिणिज्जइ, वेहल्ले य कुमारे सरणागए
पेसिज्जइ, तं जइ णं कूणिए राया चाउरंगिणीए सेणाए सद्धिं
संपरिवुडे जुज्झसज्जे इहं हव्वमागच्छइ । तो णं अम्हे
कूणिएणं रणणा सद्धिं जुज्झामो ।

तए णं से चेडए राया ते नवमल्लइ-नवलेच्छइ-कासी-
कोसलगा अट्टारस वि गणरायाओ एवं वयासी-जइणं देवा-
णुप्पिया ! तुब्भे कूणिएणं रत्ता सद्धिं जुज्झइ, तं गच्छह
णं देवाणुप्पिया ! । सएसु२ रज्जेसु ण्हाया जहा कालादीया
जाव जएणं विजएणं वद्धावेति ।

तए णं से चेडए राया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ सद्दावित्ता
एवं वयासी-आभिसेक्कं जहा कूणिए जाव दुरूढे ।

तएणं से चेडए राया तिहिं दंतिसहस्सेहि जहा कूणिए
जाव वेसालिं नयरिं मज्झां-मज्झेणं निगच्छइ निग्गच्छित्ता
जेणेव ते नवमल्लई-नवलेच्छई-कासी-कोसलगा अट्टारस वि
गणरायाणो तेणेव उवागच्छइ ।

तएणं से चेडए राया सत्तावन्नाए दंतिसहस्सेहिं, सत्ता-
वन्नाए आससहस्सेहिं, सत्तावन्नाए मणुस्सकोडीएहिं सद्धिं सं-
परिवुडे सव्विड्डीए जाव खेणं सुभेहिं वसहिपायरासेहिं नाति-
विप्पगिट्ठेहिं अंतरेहिं वसमाणेऽ विदेहं जणवयं मज्झं-मज्झेणं
जेणेव देसपंते तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता खंधावारनिवेशणं
करेइ, कूणियं रायं पडिवालेमाणे जुज्झसज्जे चिट्ठइ ।

तएणं से कूणिए राया सव्विड्डीए जाव खेणं जेणेव
देसपंते तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता चेडयस्स रत्तो जोय-
णंतरियं खंधावारनिवेशं करेइ ।

तए णं से दोन्नि वि रायाणो रणभूमिं सज्जावेति, सज्जा-
वित्ता रणभूमिं जयंति ॥ ४४ ॥

छाया—ततः खलु स चेटको राजा अस्याः कथाया लब्धार्थः सन्
नवमल्लकि-नवलेच्छकि-काशी-कौशलकान् अष्टादशापि गणराजान् शब्दयति,
शब्दयित्वा एवमवादीत्-एवं खलु देवानुप्रियाः ! वैहल्यः कुमारः कूणिकस्य
राज्ञः असंविदितेन सेचनकं गन्धहस्तिनमष्टादशवक्रं च हारं गृहीत्वा इह हव्य-

‘तएणं से चेडए’ इत्यादि-

उसके बाद उस चेटक राजाने कूणिककी चढाईके समाचार
सुनकर काशी और कोशल देशके नौ मल्लकी-नौ लेच्छकी इन अठारहों
गणराजाओंको बुलाकर उनसे इस प्रकार कहना आरम्भ किया-

हे देवानुप्रियों ! वैहल्यकुमार राजा कूणिकसे डरकर
सेचनक गन्धहाथी ओर अठारह लडीवाला हार लेकर मेरे पास चला

‘तएणं से चेडए’ इत्यादि

त्यार पछी ते चेटक राजाये कूणिकनी चढाईना समाचार साबणी तेखे काशी
तथा कोशल देशना नव मल्लकी अने नव लेच्छकी अथ अठार गणराजान्माने बोलावी
तेभने आ प्रभाखे कडेवा लाया.

हे देवानुप्रियो ! वैहल्य कुमार राजा कूणिकथी डरीने सेचनक गन्धहाथी तथा
अठार सरवाणी हार लभने मारी पास आय्यो आये छे अना समाचार भणतां

मागतः, ततः खलु कूणिकेन सेचकस्य अष्टादशवक्रस्य चार्थाय त्रयो दूताः
प्रेषिताः, ते च मयाऽनेन कारणेन प्रतिषिद्धाः । ततः खलु स कूणिको मम
एतमर्थमप्रतिशृण्वन् चातुरङ्गिण्या सेनया सार्द्धं संपरिवृतः युद्धसज्ज इह हन्यमागच्छति
तत् किं नु देवानुप्रियाः ! सेचनकमष्टादशवक्रं च कूणिकाय राज्ञे प्रत्यर्पयामः,
वैहल्लयं कुमारं प्रेषयामः, उताहो ! युध्यामहे ? ।

ततः खलु नवमल्लकि-नवलेच्छकि-काशी-कोशलका अष्टादशापि गण-
राजाश्चेटकं राजानमेवमवादिषुः-नैतत् स्वामिन् ! युक्तं वा, प्राप्तं वा राजसदृशं
वा यत्खलु सेचनकमष्टादशवक्रं कूणिकाय राज्ञे प्रत्यर्प्यते, वैहल्लयश्च कुमारः
शरणागतः प्रेष्यते, तद् यदि खलु कूणिको राजा चातुरङ्गिण्या सेनया सार्द्धं

आया । इसका समाचार पाकर कूणिकने मेरे पास तीन दूत भेजे,
परन्तु मैंने उन दूतोंको कारण बताकर मना कर दिया । उसके बाद
कूणिकने मेरी बातको न मानकर चतुरङ्गिणी सेनाके साथ लडाईके
लिये तैयार होकर यहाँ आ रहा है । तो क्या हे देवानुप्रियों !
सेचनक गंधहाथी और अठारह लडीवाला हार राजा कूणिकको देदें
और वैहल्लयकुमारको उसके पास भेजदें अथवा उससे लडें ?

उसके बाद वे अठारहों गणराजाओंने हाथ जोडकर इस
प्रकार कहा—हे स्वामिन् ! न यह युक्त है, न ऐसा कहनेकी आव-
श्यकता है, न यह राजकुलको उचित ही है, जो आप सेचनक
गन्धहाथी और अठारह लडीवाला हार राजा कूणिकको अर्पित करें
और शरणमें आए हुए कुमार वैहल्लयको लौटादें । हे स्वामिन् ! यदि

कूणिके भारी पासो त्रयु इत भोक्क्या पणु मे ते इतोने कारणे प्पनावी ना पाडी हीधी
त्यार पछी कूणिके भारी वात ने नहि मानीने अतुरगिणी सेना साथे लडाछ भाटे तैयार
थडने अहीं आवी रघो छे तो शु डे देवानुप्रियो । सेचनक गंधहाथी अने अठार
सरनेो हार राजा कूणिकने आवी देवो अने वैहल्लय कुमारने तेनी पासो भोक्कली देवो छे
तेनी साथे लडाछ करवी ?

त्यार पछी ते अठारे गण राजाओअे हाथ जोडीने आ प्रभाणे कहु—हे
स्वामिन् ! नथी तो आ वाळणी छे नथी आवी रीते करवानी आवश्यकता वणी
आ प्रभाणे करवु राजकुलने उचित पणु नथी छे आप सेचनक गंध हाथी तथा
अठार सरवाणेो हार राजा कूणिकने अर्पणु करी हीओ अने शणु आवेला कुमार
वैहल्लयने पाछो भोक्कली हीओ. हे स्वामिन् ! जे राजा कूणिक अतुरगिणी सेना लधने

संपरिवृतो युद्धसज्ज इह हव्यमागच्छति तदा खलु वयं कूणिकेन राजा सार्द्धं युध्यामहे ।

ततः खलु स चेटको राजा तान् नवमल्लकि-नवलेच्छकि-काशीकौशलकान् अष्टादशान् गणराजान् एवमवादीत्-यदि खलु देवानुप्रियाः ! यूयं कूणिकेन राजा सार्द्धं युध्यध्वं, तद्गच्छत खलु देवानुप्रियाः ! स्वकेषु स्वकेषु राज्येषु, स्नाता यथा कालादिका यावद् जयेन विजयेन वर्द्धयन्ति ।

ततः खलु स चेटको राजा कौटुम्बिकपुरुषान् शब्दयति, शब्दयित्वा एवमवादीत्-आभिषेक्यं यथा कूणिको यावद् दूरुहः ।

राजा कूणिक चतुरङ्गिणी सेनाके साथ लडाइके लिये तैयार हो आ रहा है तो हम लोग भी लडनेके लिए तैयार है ।

उन राजाओंकी ऐसी बातें सुनकर राजा चेटकने उन अठारहों राजाओंसे इस प्रकार कहा-यदि हे देवानुप्रियों ! तुम लोग कूणिकसे लडना चाहते हो तो अपने २ राज्यमें जाओ और वहाँ जाकर स्नान आदि क्रिया करके लडनेके लिए काल आदि कुमारोंके समान तुम भी सेना आदिसे सज्ज हो यहाँ आओ । राजा चेटककी आज्ञा पाकर वे गणराजा अपने २ राज्यमें जाकर वहाँसे सभी प्रकारकी सैन्य सामग्रियोंसे युक्त हो राजा चेटककी सहायताके लिये वैशाली नगरीमें आते हैं और राजा चेटकको जय विजयके साथ बधाते हैं ।

उसके बाद वह चेटक राजा अपने कौटुम्बिक पुरुषोंको बुलवाता है और उनसे अपना आभिषेक्य हाथीको सज्जित करके लानेकी

लडाई भाटे तैयारी करीने आवे छे तो अमे लोके पशु लडवा भाटे तैयार छीअे

ते राजाओंनी अे प्रभाणु वाते। साभणी राजा चेटके ते अठारहे राजाओंने आ प्रकारे कछुं-डे देवानुप्रियो । जे तमे लोके कूणिक साथे लडवा आइता छे। ते पोतपोताना राज्यमा जअे। अने त्या जठ स्नान आदि वगेरे क्रिया करी लडवा भाटे काल आदि कुमारानी समान तमे पशु सेना आदिथी सज्ज थछ अहीं आवे। राजा चेटकनी आज्ञा साभणी ते गणराजअे। पोतपोताना राज्यमा जठ अने त्याथी सर्व प्रकारनी सैन्य सामग्रीथी युक्त थछ राजा चेटकने सहायता करवा भाटे वैशाली नगरीमा आवे छे अने राजा चेटकने जय विजयना शण्ड साथे बध वे छे

त्यार पछी ते चेटक गण पोताना कौटुम्बिक पुरुषोने बोलावे छे अने तेभने पोताने आभिषेक्य (पट्ट) हाथी सज्ज करी लाववा आज्ञा आपे छे कूणिकनी पठे ते पशु पोताना पट्ट हाथी पर भेसे छे।

ततः खलु स चेटको राजा त्रिभिर्दन्तिसहस्रैर्यथा कूणिको यावद् वैशालीं नगरीं मध्य-मध्येन निर्गच्छति, निर्गत्य यत्रैव ते नवमल्लकी-नवलेच्छकी-काशी-कौशलका अष्टादशापि गणराजास्तत्रैवोपागच्छति ।

ततः खलु स चेटको राजा सप्तपञ्चाशता दन्तिसहस्रैः, सप्तपञ्चाशता अश्वसहस्रैः, सप्तपञ्चाशता रथसहस्रैः, सप्तपञ्चाशता मनुस्यकोटिभिः, सार्द्धं संपरिवृतः सर्वदर्या यावद् रवेण शुभैर्वसतिप्रातराशैर्नातिविप्रकृष्टैरन्तरैर्वसन २ विदेहं जनपदं मध्य-मध्येन यत्रैव देशप्रान्तस्तत्रैवोपागच्छति, उषागत्य स्कन्धावारनिवेशनं करोति, कृत्वा कूणिकं राजानं प्रतिपालयन् युद्धसज्जस्तिष्ठति ।

ततः खलु स कूणिको राजा सर्वदर्या यावद् रवेण यत्रैव देशप्रान्तस्तत्रैवोपागच्छति, उषागत्य चेटकस्य राज्ञो योजनान्तरितं स्कन्धावारनिवेशं करोति ।

आज्ञा देता है । कूणिकके समान वह भी अपने पट्टहाथीपर चढता है ।

वहाँसे वह चेटक राजा तीन २ हजार हाथी, घोडे, रथ और तीन करोड सैनिकोंके साथ कूणिकके समान ही अपनी वैशालीनगरीके बीचो-बीच होकर जहाँ वे अठारहों गणराजा थे वहाँ आया ।

और वहाँ चेटक राजा सत्तावन हजार हाथी, सत्तावन हजार घोडे, सत्तावन हजार रथ, ओर सत्तावन कोटि सैनिकोंसे परिवेष्टित हो सभी प्रकारके साज-बाज और बाजे-गाजेके साथ अच्छे स्थानोंमें प्रातःकालिक भोजन करते हुए थोडी २ दूरपर डेरा डालकर विश्राम करते हुए विदेह देशके बीचो-बीचसे होते हुए जहाँ देशका प्रान्त-सीमाभाग था वहाँ आया । वहाँ आकर अपने शिबिर तैयार करवाया और लडाईके लिये राजा कूणिककी प्रतीक्षा करने लगा ।

त्यांथी ते चेटक राज्ञ त्रयु त्रयु हुणर हाथी घोडा रथ अने त्रयु करोड सैनिके साथे कूणिकनी पेटेन पोतानी वैशाली नगरीनी पचभां यधने न्यां ते अठार गण-राज्येो हुता त्या आव्या

अने त्या ते चेटक राज्ञ सत्तावन हुणर हाथी सत्तावन हुणर घोडा सत्तावन हुणर रथ तथा सत्तावन करोड सैनिकेथी घेराधने तभाम प्रकारना साज भाज अने पान्त गाजनी साथे साज सारां स्थानेभां प्रातः कालिक भोजन करता थका, थोडे थोडे दूर मुकाम करता थका, विश्राम लेता थका, विदेह देशनी पच्ये-पच्ये यधने न्या देशनी सरहुड हुती त्या आव्या त्या आवीने पोतानी छावणी तैयार करावी अने लडाई भाटे राज्ञ कूणिकनी राड नेवा लाग्या.

ततः खलु तौ द्वावपि राजानौ रणभूमिं सज्जयतः, सज्जयित्वा रणभूमिं यातः ॥ ४३ ॥

टीका—‘तएणं से चेडए, इत्यादि—नवमल्लकिनः=काशीदेशस्थगणराजाः, नवलेच्छकिनः=कोशलदेशस्थगणराजाः, तान् । युक्तम्=योग्यमिति, प्राप्तम्=अधिकारोचितं, राजमदृशम्=राजवंशीयानुरूपं यत्=यन्निश्चयेन । प्रतिपालयन्=प्रतीक्षमाणः । शेषं मुगमम् ॥ ४४ ॥

मृलम्—तएणं से कूणिए तेत्तीसाए दंतिसहस्सेहिं जाव मणुस्सकोडीह गरुलवूहं रइए, रइत्ता गरुलवूहेणं संगामं उवायाए । तएणं से चेडए राया सत्तावन्नाए दंतिसहस्सेहिं जाव सत्तावन्नाए मणुस्सकोडीहिं सगडवूहं रएइ, रइत्ता सगडवूहेणं रहमुसलं संगामं उवायाए । तएणं ते दोण्ह वि राईणं अणीया सन्नद्ध जाव गहियाउहपहरणा मंगतिएहिं फलएहिं निक्कट्टाहिं असीहिं, अंसगएहिं तोणेहिं, सजीवेहिं धणूहिं, समुक्खित्तेहिं संरेह, समुल्लालिताहिं डावाहिं, ओसारियाहिं उरुघंटाहिं, छिप्पतूरेणं वज्जमाणेणं, महया उक्किट्टसीहनायबोलकलकलरवेणं समुहरवभूयं पिव करेमाणा सव्विड्डीए जाव रवेणं हयगया हयगएहिं, गयगया गयगएहिं, रहगया रहगएहिं,

उसके बाद वह कूणिक राजा भी उसी तरह वहाँ आया जहाँ देशका अंतिम भाग था । और महाराजा चेटकके शिविरसे एक योजन दूर अपना शिविर बनवाया ।

उसके बाद उन दोनों राजाओंने रणभूमिको सज्जित की और लड़ाईके लिए वहाँ आये । ॥ ४४ ॥

त्यार पछी ते दृषिक्क राज्ज पणु तेज्ज रीते त्यां आव्या डे न्यां देशना प्रदेशेना अंतिम छेडा इतो, अने महाराज्ज चेटकनी छावणीथी अेक योजन छेडे पेतानी छावणी नभावी

त्यार पछी ते भेठ राज्जोअे रणभूमि सज्जित करी अने युद्ध करवा त्या आव्या (४४)

पायत्तिया पायत्तिएहिं, अन्नमन्नेहिं सच्चिं संपलगा यावि होत्था ।

तएणं ते दोण्ह वि रायाणं अणीया णियगसामीसास-
णाणुरत्ता महंतं जणक्खयं जणवहं जणप्पमहं जणसंवट्टकप्पं नच्चं-
तकबंधवारभीमं सहिरकहमं करेमाणा अन्नमन्नेणं सच्चिं झुज्जंति ।

तएणं से काले कुमारे तिहिं दंतिसहस्सेहिं जाव मणु-
स्सकोडीहिं गरुलवूहेणं एक्कारसमेणं खंधेणं कूणियरहमुसलं
संगामं संगामेमाणे हयमहियजहा भगवया कालीए देवीए
परिकहियं जाव जीवियाओ ववरोविए ।

तं एयं खलु गोयमा ! काले कुमारे एरिसएहिं आरंभेहिं
जाव एरिसएणं असुभकडकम्मपब्भारेणं कालमासे कालं किच्चा
चउत्थीए पंकप्पभाए पुढवीए हेमाभे नरए नेरइयत्ता उववन्ने ।

काले णं भंते ! कुमारे चउत्थीए पुढवीए अणंतरं उव-
ट्टित्ता कहिं गच्छिहिइ ? कहिं उववज्जिहिइ ? । गोयमा । महा-
विदेहे वासे जाइं कुलाइं भवंति अड्ढाइं जहा दटप्पइन्नो
जाव सिज्जिहिइ बुज्जिहिइ जाव अंतं काहिइ । तं एवं खलु
जंबू ! समणेणं भगवया जाव संपत्तेणं निरयावलियाणं पढम-
स्स अज्जयणस्स अयमट्टे पन्नत्ते त्तिवेमि ॥ ४५ ॥

॥ पढमं अज्जयणं समत्तं ॥ १ ॥

छाया-ततः खलु स कूणिकस्रयत्रिंशता दन्तिसहस्रैर्यावन्मनुष्यकोटिभि-
र्गरुडव्यूहं रचयति, रचयित्वा गरुडव्यूहेन रथमुशलं सङ्ग्राममुपायातः ।

ततः खलु स चेटको राजा सप्तपञ्चाशता दन्तिसहस्रैर्यावत् सप्तपञ्चा-
शता मनुष्यकोटिभिः शकटव्यूहं रचयति, रचयित्वा शकटव्यूहेन रथमुशलं
संग्राममुपायातः ।

ततः खलु ते द्वयोरपि राज्ञोरनीके सन्नद्ध-यावद्-गृहीतायुधप्रहरणे मङ्गलिकैः फलकैः' निष्कासितैरग्निभिः' अंशगतैस्तृणैः, मजीवैर्धनुर्मिः, समुत्क्षिप्तैः शरैः, समुल्लाङ्गिताभिः डावाभिः, अवसरिताभिः उरुघण्टाभिः, क्षिप्रतूरेण वाद्यमानेन महता उन्कृष्टसिहनादबोलकलकलरवेणं समुद्ररवभूतमिव कुर्वाणे सर्वकृद्ग्या यावद् रवेण ह्यगता ह्यगतैः, गजगता गजगतैः, रथगता रथगतैः, पदातिकाः पदातिकैः, अन्योन्यैः सार्द्धं संप्रलम्बाश्चाऽप्यभूवन् ।

ततः खलु ते द्वयोरपि राज्ञोरनीके निजकस्वामिशायनालुरक्ते महान्तं जनक्षयं जनवधं जनप्रमर्दं जनसंवर्तकल्पं नृन्यस्क्वन्धवारभीमं रुधिरकर्दमं कुर्वाणे अन्योऽन्येन सार्द्धं युध्येते ।

ततः खलु स कालः कुमारस्त्रिभिर्दन्तिमहस्र्यावन्मनुष्यकोटिभिर्गरुडव्यूहेन एकादशेन स्कन्धेन कृणिकरथमुशलं संग्रामं संग्रामयन हनमथितयथा भगवता काल्यै देव्यै परिकथितं यावज्जीविताद् व्यपरोपितः ।

तदेतत् खलु गौतम ! कालः कुमार ईदृशैरारम्भै र्यावद् ईदृशेन अशुभकृतकर्मप्राग्भारेण कालमासे कालं कृत्वा चतुर्थ्यां पङ्कप्रभाया पृथिव्यां हेमामे नरके नैरथिकतयोपपन्नः ।

कालः खलु भदन्त ! कुमारश्चतुर्थ्याः पृथिव्या अनन्तरमुद्वर्त्य कुत्र गमिष्यति ? कुत्रोत्पत्स्यते ? गौतम ! महाविदेहे वर्षे यानि कुलानि भवन्ति आह्वानि यथा दृढप्रतिज्ञो यावत् सेत्स्यति भोत्स्यते यावद् अन्तं करिष्यति ।

तदेवं खलु जम्बू : ! श्रमणेन भगवता यावत्संप्राप्तेन निरयावलिकानां प्रथमाध्ययनस्यायमर्थः प्रज्ञप्तः । इति ब्रवीमि ॥ ४५ ॥

॥ प्रथममध्ययनं समाप्तम् ॥१॥

‘तएणं से कृणिए’ इत्यादि—

उसके बाद वह कृणिक नेंतीस २ हजार हाथी, घोड़े, और रथ तथा तेतीस करोड (उस समयकी एक संख्या) सैनिकोंका गरुडव्यूह बनाया और गरुडव्यूहके साथ रणभूमिमें रथमुशल संग्राम करनेके लिए आया ।

‘तएणं कृणिए’ इत्यादि

त्यार पछी ते कृणिके तेतीस हजार हाथी, घोडा अने रथ तथा तेतीस करोड (ते समयकी ओक संख्या) सैनिकोंने गरुडव्यूह बनाये अने गरुडव्यूह साथे रणभूमिमा रथमुशल संग्राम करवा भाटे आये।

टीका—‘तएणं से कूणिण्’ इत्यादि—ततः खलु ते द्वयोरपि राज्ञोः
अनीके=सैन्ये सन्नद्धं=सुसज्जितं यावत्-गृहीतायुधप्रहरणे=वृत्तगस्त्रास्त्रे मङ्गतिकैः=
हस्तपाशिफलकविशेषैः ‘ढाल’ इति भाषाप्रसिद्धैः, अंगगतैः=स्कन्धस्थितैः तूणैः-
शरधानीभिः ‘भाता’ इति भाषायाम् सजीवैः=ज्यासहितैः सप्तन्यञ्चैः धनुर्मिः=
चापैः, समुत्क्षिप्तैः=प्रक्षिप्तैः शरैः=बाणैः, समुल्लालिताभिः = आस्फालिताभिः
डावाभिः=वामभुजाभिः, अवसारिताभिः=दूरीकृताभिः उरुघण्टाभिः = विशाल-

चेटक राजा भी सत्तावन २ हजार हाथी, घोडे, रथ एवं
सत्तावन करोड (उस कालकी एक संख्या) सैनिकोंका शकटव्यूह
बनाया और उसके साथ रथमुशल संग्राममें आया ।

उसके बाद दोनों राजओंकी सेना अस्त्र शस्त्रसे सज्जित
हो अपने २ हाथोंमें धामी हुई ढालोंसे, खींची हुई तलवारोंसे,
कंधोंपर रखे हुए तूणीरोंसे, चढे हुए धनुषोंसे, छोटे हुए बाणोंसे,
अच्छी तरह फटकारते हुए डाबी भुजाओंसे, दूरपर टांगी हुई विशाल
घण्टाओंसे, अत्यन्त शीघ्रतासे बजाये जाते हुए भेरी आदि बाजोंसे,
भयंकर सिंह नादके सदृश कालाहलसे, समुद्रकी बेलकी आवाजके
समान आवाज करती हुई, तथा सभी युद्ध सामग्रियोंसे युक्त थी,
वहाँ भीषण हुंकार करते हुए घुडसवार घुडसवारोंसे, हाथीवाले
हाथीवालोंसे, रथ रथिकोंसे पैदल पैदलसे, इस प्रकार एक इमरेके
साथ युद्ध करनेके लिये संनद्ध हो गये ।

चेटक राजा पशु सत्तावन सत्तावन हजार हाथी, घोडा, रथ अने सत्तावन करोड
(ते समयनी एक संख्या) सैनिकोंने शकटव्यूह बनायी तेनी साथे रथमुशल
संग्राममा आया

त्यार पछी लडे राजमोनी सेना अस्त्र शस्त्रथी सज्जित थरुं पान पेताना
हाथमां पकडेली ढालोथी, जे चेत्री तलवारोथी, कंधे उपर राभेला तूणीरोथी, अडावेला
धनुष्योथी, छोडेला बाणोथी, सारी रीते इटकारता डाबी भुजामोथी, छोटे टागेली
विशाळ घटामोथी, अत्यंत शीघ्रताथी गजवाता भेरी आदि बाजमोथी, सिङ्गनाद
जेवा डोलाडलथी समुद्रनी छोणोना जेवा अवाज करती, तथा तमाभ युद्धसामग्रीथी
सुक्त इती त्या भीषण हुंकार करता घोडेस्वारे घोडेस्वारोनी साथे, हाथीवाणामो
हाथीवाणामोनी साथे, पायदण लश्कर पायदणनी साथे, आ प्रकारे एक पीठ साथे
युद्ध करवा माटे तयार थरुं गया

घण्टाभिः क्षिप्रतूरेण=अतिशीघ्रिण वाद्यमानेन तूर्येण महता=विशाखेन उत्कृष्टसिंह-
नाद-बोल-कलकल-स्वेण उत्कृष्टः=भयङ्करः सिंहनादः=सिंहगर्जनवत् बोलः=कोला-
हलः कलकलः=व्याकुलः श्रोतुर्महाभयजनको यो रवः=शब्दस्तेन समुद्ररवभूतमिव=
वेलाकुलजलनिधिप्रचण्ड भूतसदृशं शब्दं कुर्वाणे सर्वक्रुद्रया=सकलयुद्धसामग्र्या
युक्ते आस्तां, तत्र यावत् स्वेण चीत्कारादिभयानकशब्देन हयगताः=अश्वारूढाः
हयगतैः=अश्वारूढैः सह, गजगताः=गजारूढाः गजगतैः=गजारूढैः सह रथगताः=
रथारूढाः रथगतैः=रथारूढैः सह, पदातिकाः=पादचारिणः पदातिकैः=पादचा-
रिभिः सह, अन्योऽन्यैः=परस्परैः सार्द्धैः=सह संप्रलम्बा=योद्धुं सम्मिलिता चकारः
गच्छादिजनितप्रहारादिसमुच्चायकः' अपि=निश्चये अभूवन्=जाताः ।

ततः खलु ते द्वयोरपि राज्ञोरनीके निजकस्वामिशासनानुरक्ते=स्वस्वामि-
निदेशपरायणे महान्तं विशालं जनक्षयं=जननाशं जनवधं=जनताडनं मुशलादिना,
जनप्रमर्दं=गदादिना भटानां चूर्णीकरम् जनसंवर्तकल्पं=प्रजासंहारसदृशं नृत्य-

उसके बाद उन दोनों राजाओंके योद्धा अपने २ स्वामीकी आज्ञामें अनुरक्त हो अत्यधिक मनुष्योंका क्षय, मनुष्योंका वध, मनुष्योंका मर्दन, एवं मनुष्योंका संहार करते हुए तथा नाचते हुए घडोंके समूहसे भयंकर और शोणितसे भूमिको कीचडमयी बनाते हुए एक दूसरेके साथ लड़ने लगे ।

उसके बाद वह काल कुमार तीन २ हजार हाथी, घोड़े और रथ, तथा तीन करोड़ मनुष्योंके साथ गरुडव्यूहके अपने ग्यारहवें स्कन्ध अर्थात् भागके द्वारा रथमुशल संग्राम करता हुआ सैनिकोंका संहार हो जानेके बाद जिस प्रकार भगवानने काली देवीको कहा है उन्ही प्रकार वह मारा गया ।

त्यार पछी ते णन्ने राज्ञोऽना योद्धाऽन्ने पोतपोताना स्वामीनी आज्ञाने अनुसरता यथंन धण्णा मनुष्येऽनो नाश, मनुष्येऽनो वध, मनुष्येऽना मर्दन अर्थात् मनुष्येऽनो संहार करता करता तथा नाचतं थका घडाना समूहंथी लय कर अने लोहीथी रणभूमिने डीअडवाणी णनावता अेकपीण्ण साथे लडवा लाग्या.

त्यार पछी ते कालकुमार त्रणु त्रणु डब्बर हाथी घोडा अने रथ तथा त्रणु करोड मनुष्येऽनी साथे गरुडव्यूहना पोताना अण्णियारमा ऽऽध अर्थात् भाग द्वारा रथ मुशल संग्राम करता करता, सैनिकेऽनो संहार यथं गया पछी, देवी रीते भगवाने काली देवीने कथुं, ते प्रकारे ते मार्या गया.

त्कवन्धवारमीमं=नटच्छिरोरद्वितशरीरसमूहमयानकं रुधिरकर्दमं=शोणितपङ्कं कुर्वाणे
अन्योऽन्येन=परस्परेण साद्धं=सह युध्येते संग्रामं कुर्वाते स्म । अशुभकृतकर्म-
प्राग्भारेण=प्राणिसंहाररूपपापसम्पादितनरकयोग्यकर्मपुञ्जेन, शेषं सुगमम् 'इति
ब्रवीमि' इतिपूर्ववत् ॥ ४५ ॥

॥ इति निरयावलिकासूत्रे प्रथममध्ययनं समाप्तम् ॥

हे गौतम ! वह काल कुमार इस प्रकारके आरम्भोंसे तथा इस प्रकारके अशुभ कर्मोंके संचयसे कालमासमें काल करके चौथी पङ्कप्रभा नामक पृथ्वी (नरक) में हेमाभ नामक नरकावासमें नैरयिक होकर उत्पन्न हुआ ।

हे भदन्त ! काल कुमार चौथी पृथ्वी (नरक) से निकलकर कहाँ जायगा ? और कहाँ उत्पन्न होगा ? हे गौतम ! काल कुमार महाविदेहक्षेत्रमें जाकर आढ्य (ऋद्धि-सम्पत्तिसे भरपूर) कुलमें उत्पन्न होगा । और दृढप्रतिज्ञके समान ही सिद्ध होगा, बुद्ध होगा, मुक्त होगा और सब दुःखोंका अन्त करेगा ।

हे जम्बू ! इस प्रकार सिद्धगति स्थानको प्राप्त श्रमण भगवान महावीरने निरयावलिकाके प्रथम अध्ययनका यह भाव प्ररूपित किया है, अर्थात् भगवानके मुखसे जैसा मैंने सुना वैसा ही तुम्हें कहता हूँ ॥ ४६ ॥

॥ श्री निरयावलिका सूत्रका प्रथम अध्ययन समाप्त ॥१॥

हे गौतम ! ते कालकुमार आवा प्रकारना आरभोथी तथा आवा प्रकारना अशुभ कर्मोना संचयथी कालने वभते काल करीने चौथी पङ्कप्रभा नामनी पृथ्वी (नरक) मां हेमाभ नामे नरकवासमा नैरयिक थछ उत्पन्न थया.

हे भदन्त ! कालकुमार चौथी पृथ्वी (नरक) माथी नीकणी क्या थथे ? अने क्या उत्पन्न थथे ? हे गौतम ! कालकुमार महाविदेह क्षेत्रमा ज्म आढ्य (ऋद्धि-सम्पत्तिथी भरपूर) कुलमा उत्पन्न थथे, अने दृढप्रतिज्ञनी पेठेन सिद्ध थथे, बुद्ध थथे, मुक्त थथे अने तमाम दुःखोना अंत करथे

हे जम्बू ! आ प्रकारे सिद्धगति स्थानने प्राप्त करेला जेवा श्रमण भगवान महावीरे निरयावलिकाना प्रथम अध्ययनने आ भाव प्ररूपित कर्थे छे अर्थात् भगवानना मुखेथी जेम में सांभज्यु तेम में तमने कहु छे (४५)

श्री निरयावलिका सूत्रनुं प्रथम अध्ययन समाप्त (१)

अथ द्वितीयमध्ययनम् ।

मूलम्—जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं निरयावलि-
याणं पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते, दोच्चस्स णं भंते
अज्झयणस्स निरयावलियाणं समणेणं भगवया जाव संपत्तेणं
के अट्ठे पन्नत्ते ? एवं खलु जम्बू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं
चंपा नामं नगरी होत्था । पुन्नभहे चैइए । कोणिए राया ।
पउमावई देवी । तत्थ णं चंपाए नयरीए सेणियस्य रन्नो
भज्जा कोणियस्स रन्नो चुल्लमाउया सुकाली नामं देवी होत्था,
सुकुमाला । तीसे णं सुकालीए देवीए पुत्ते सुकाले नामं
कुमारे होत्था, सुकुमाले । तएणं से सुकाले कुमारे अन्नया
कयाइ तिहिं दंतिसहस्सेहिं जहा कालो कुमारो निरवसेसं तं
चेव जाव माहविदेहे वासे अंतं काहिइ ॥ १ ॥

॥ वीयं अज्झयणं समत्तं ॥ २ ॥

एवं सेसा वि अट्ठ अज्झयणा नेयव्वा पढमसरिसा, णवरं
मायाओ सरिसणामाओ ॥ १० ॥ निक्खेवो सव्वेसिं जाणियव्वो
तहा ॥

निरयावलियाओ समत्ताओ ।

॥ पढमो वग्गो समत्तो ॥ १ ॥

छाया—यदि खलु भदन्त ! श्रमणेन यावत्संप्राप्तेन निरयावलिकानां
प्रथमस्याध्ययनस्यायमर्थः प्रज्ञप्तः, द्वितीयस्य खलु भदन्त ! अध्ययनस्य निर-
यावलिकानां श्रमणेन भगवता यावत्संप्राप्तेन कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ? एवं खलु जम्बूः
तस्मिन् काले तस्मिन् समये चम्पा नाम नगरी अभूत् । पूर्णभद्रश्चैत्यः ।
कूणिको राजा । पद्मावती देवी । तत्र खलु चम्पायां नगर्यां श्रेणिकस्य राज्ञो
भार्या कूणिकस्य राज्ञः शुल्लमाता सुकाली नाम देव्यभूत्, सुकुमारा । तस्याः

खलु सुकाल्या देव्याः पुत्रः सुकालो नाम कुमारोऽभूत्, सुकुमारः । ततः
खलु स सुकालः कुमारः अन्यदा कदाचित् त्रिभिर्दन्तिसहस्रैर्यथा कालः कुमारः,
निरवशेषं तदेव यावन्महाविदेहे वर्षेऽन्तं करिष्यति ॥ १ ॥

॥ द्वितीयमध्ययनं समाप्तम् ॥ २ ॥

निरयात्रलिका सूत्रका द्वितीय अध्ययन

‘जङ्गं भंते’ इत्यादि—

हे भदन्त ! सिद्धि स्थानको प्राप्त श्रमण भगवान महावीरने
निरयात्रलिकाके प्रथम अध्ययनका पूर्वोक्त अर्थ कहा है ।

तो हे भगवन् ! फिर द्वितीय अध्ययनमें उन्होंने किस भा-
वका निरूपण किया है ?

हे जम्बू ! उस काल उस समयमें चम्पा नामकी नगरी थी । उस
नगरीमें पूर्णभद्र नामका चैत्य था । और उस नगरीका राजा कूणिक
था । उसकी रानी पद्मावती थी । उस चम्पानगरीमें श्रेणिक राजाकी
पत्नी राजा कूणिककी छोटी माता सुकाली नामकी रानी थी, जो
अत्यन्त सुकुमार थी । उस सुकाली देवीका पुत्र सुकाल नामक कुमार
था जो अत्यन्त सुकुमार था । उसके बाद वह सुकाल कुमार किसी
एक समयमें तीन २ हजार हाथी, घोड़े, रथ तथा तीन करोड़ पैदल
सैनिकोंके साथ राजा कूणिकके रथसुशाल संग्राममें लड़नेके लिये
गया और वह काल कुमारके समान ही अपनी सभी सेनाके नष्ट

निरयात्रलिका सूत्रानुं द्वितीय अध्ययन

‘जङ्गं भंते’ इत्यादि.

हे भदन्त ! सिद्धि स्थानने प्राप्त थयेला श्रमण भगवान महावीरे निरया-
त्रलिकाना प्रथम अध्ययननेा पूर्वोक्त अर्थ भताव्ये छे तेा हे भगवन् ! पछी द्वितीय
अध्ययनमा तेमण्णे क्या भावणु निरूपणु कथुं छे ?

हे जम्बू ? ते काल ते समये यथा नामनी नगरी हुती, ते नगरीमा पूर्णभद्र
नामनेा चैत्य हुतो अने ते नगरनेा राजा कूणिक हुतो तेना राणी पद्मावती हुती. ते
यथा नगरमा श्रेणिक राजनी पत्नी राजा कूणिकनी नानी माता सुकाली नामनी
राणी हुती जे अत्यन्त सुकुमार हुती ते सुकाला देवीनेा पुत्र सुकाल नामनेा कुमार
हुतो जे अत्यन्त सुकुमार हुतो त्पार पछी ते सुकाल कुमार केछ अेक समयमा त्रणु
त्रणु हुन्तर हाथी घोडा रथ तथा त्रणु करोड पायदण सैनिके साथे राजा कूणिकना रथ-
सुशाल सङ्ग्राममा लडवा माटे गयेा. अने ते कालकुमारनी समान जे पोतानी तामाम

एवं शेषाण्यप्यष्टाध्ययनानि ज्ञातव्यानि प्रथममदृशानि । नवरं मातरः
मदृशनाम्न्यः ॥ १० ॥ निक्षेपः सर्षपां मणितव्यस्तथा ॥

निर्यावलिकाः समाप्ताः । ॥ प्रथमो वर्गः समाप्तः ॥ १ ॥

टीका—'जडणं भंते' इत्यादि । मदृशनाम्न्यः=पुत्रमदृशनाम्न्यः । शेषं
निगदामिदम् ॥

॥ इति निर्यावलिकामूत्रे टीकायां प्रथमो वर्गः समाप्तः ॥ १ ॥

॥ अथ कल्पावतंसिका नाम द्वितीयो वर्गः ॥

मूत्रम्—जडणं भंते ! समणेणं भगवया जाव संपत्तेणं उवं-
गाणं पढमस्स वग्गस्स निर्यावलियाणं अयमद्वे पत्तत्ते, दोच्च-
स्स णं भंते ! वग्गस्स कप्पवडिसियाणं समणेणं जाव संपत्तेणं
कइ अज्झयणा पत्तत्ता ? ।

हो जानेके बाद माग गया । मरकर काल कुमारके समान ही नर-
कमें गया और वहाँसे निकलकर महाविदेह क्षेत्रमें जन्म लेकर काल
कुमारके समान सिद्ध होगा चावन् सब दुःखोंका अन्त करेगा ।

। द्वितीय अध्ययन समाप्त हुआ ।

इसी प्रकार—प्रथम अध्ययनके सदृश शेष आठ अध्ययनोंको
भी जानना चाहिये । विशेष इतना ही है कि मानाओंका नाम
कुमारोंके नामके समान हैं ॥ १० ॥

सभीका निक्षेप अर्थात् उपसंहार पहिले अध्ययनके समान
ही समझना चाहिये । इति । निर्यावलिका समाप्त हुई ।

निर्यावलिकानामक प्रथम वर्ग समाप्त ॥१॥

सेना नष्ट थई गया आठ भार्यों गये मरने डालकुमारनी पेटे न नरकमा गये अने
त्यांधी नीडगी महाविदेह क्षेत्रमां जन्म लई डालकुमारनी नेम सिद्ध थये अने तमाभ
हु.अने अत धरथे

द्वितीय अध्ययन समाप्त थयुं.

आ प्रकारे—प्रथम अध्ययनना नेम आशीनां आठ अध्ययनोने पणु वल्लुवा
लोडथे विशेष अेटलु न छे डे भाताओना नाम कुमारोना नामना नेवाळ छे
गधानो निक्षेप अर्थात् उपसंहार पहिला अध्ययनना समानन समथ सेवो
लोडथे इति निर्यावलिका समाप्त थई

निर्यावलिका नामके प्रथम वर्ग समाप्त. (१)

एवं खलु जम्बू ! समणेणं भगवया जाव संपत्तेणं कप्प-
वडिंसियाणं दस अज्झयणा पन्नत्ता, तंजहा—पउमे १ महापउमे
२ भद्दे ३ सुभद्दे ४ पउमभद्दे ५ पउमसेणे ६ पउमगुम्मे ७
नलिणिगुम्मे ८ आणंदे ९ नंदणे १० । जइणं भंते ! समणेणं
जाव सपत्तेणं कप्पवडिंसियाणं दस अज्झयणा पन्नत्ता, पढमस्स
णं भंते ! अज्झयणस्स कप्पवडिंसियाणं भगवया जाव संपत्तेणं
के अट्टे पन्नत्ते ? ! एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं
समएणं चंपा नामं नयरी होत्था ! पुन्नभद्दे चेइए । कूणिए
राया । पउमावई देवी । तत्थ णं चंपाए नयरीए सेणियस्स
रन्नो भज्जा कूणियस्स रन्नो चुल्लमाउया काली नामं देवी
होत्था, सुकुमाल० । तीसेणं कालीए देवीए पुत्ते काले
नामं कुमारे होत्था, सुकुमाल० । तस्स णं कालस्स पउमावई
नामं देवी होत्था, सोमाल० जाव विहरइ ।

तए णं सा पउमावई देवी अन्नया कयाइं तंसि तारि-
सगंसि वासघरंसि अब्भितरओ सचित्तकम्मे जाव सीहं सुमिणे
पासित्ता णं पडिबुद्धा । एवं जम्मणं जहा महाबलस्स, जाव
नामधिज्जं, जम्हाणं अम्हं इमे दारए कालस्स कुमारस्स पुत्ते
पउमावईए देवीए अत्तए तं होउ णं अम्हं इमस्स दारगस्स
नामधिज्जं पउमे सेसं जहा महब्बलस्स अट्टओ दाओ जाव
उपिंपासायवरगए विहरइ ॥ १ ॥

छाया-यदि खलु भदन्त ! श्रमणेन भगवता यावत् संप्राप्तेन उपा-
ज्ञानां प्रथमस्य वर्गस्य निरयावलिकानामयमर्थः प्रज्ञप्तः, द्वितीयस्य खलु भदन्त !
वर्गस्य कल्पावतंसिकानां श्रमणेन यावत् संप्राप्तेन कति अध्ययनानि प्रज्ञप्तानि ?

एवं खलु जम्बू ! श्रमणेन भगवता यावत् संप्राप्तेन कल्पावतंसिकानां
दश अध्ययनानि प्रज्ञप्तानि तद्यथा-पद्मः १ महापद्मः २ भद्रः ३ सुभद्रः
४ पद्मभद्रः ५ पद्मसेनः ६ पद्मगुल्मः ७ नलिनीगुल्मः ८ आनन्दः ९ नन्दनः
१० । यदि खलु भदन्त ! श्रमणेन यावत् संप्राप्तेन कल्पावतंसिकानां दश

कल्पावतंसिका नामक द्वितीय वर्ग ।

‘ जडणं भंते ’ इत्यादि—

हे भदन्त ! यदि मोक्षप्राप्त श्रमण भगवान् महावीरने निर-
यावलिका नामक उपाङ्गके प्रथम वर्गमें पूर्वोक्त अभिप्रायका वर्णन
किया है तो इसके बाद भगवानने द्वितीय वर्ग-कल्पावतंसिकामें
कितने अध्ययनोंका वर्णन किया है ?

सुधर्मा स्वामी कहते हैं—

हे जम्बू ! श्रमण भगवान महावीरने कल्पावतंसिकामें दस
अध्ययनोंका निरूपण किया है उनके नाम इस प्रकार हैं—

(१) पद्म (२) महापद्म (३) भद्र (४) सुभद्र (५) पद्मभद्र (६)
पद्मसेन (७) पद्मगुल्म (८) नलिनीगुल्म (९) आनन्द और (१०) नन्दन ।

श्री जम्बू स्वामी पूछते हैं—

हे भगवन् ! श्रमण भगवान महावीरने कल्पावतंसिकामें दस

कल्पावतंसिका नामके द्वितीय वर्ग

‘ जडणं भंते ’ इत्यादि.

हे भदन्त ! जो मोक्ष प्राप्त श्रमणभगवान महावीरे निरयावलिका नामके
उपाङ्गके प्रथम वर्गमें पूर्वोक्त अभिप्रायनों वर्णन किये थे तो त्पार पछी तेभण्णे
धीन वर्ग कल्पावतंसिकामा केदसा अध्ययनानु वर्णन किये थे ?

श्री सुधर्मा स्वामी कहे थे—

हे जम्बू ! श्रमण भगवान महावीरे कल्पावतंसिकामां दश अध्ययनानुं
निश्चय किये थे, तेभना नाम आ प्रमाणे थे—

(१) पद्म (२) महापद्म (३) भद्र (४) सुभद्र (५) पद्मभद्र (६) पद्मसेन
(७) पद्मगुल्म (८) नलिनीगुल्म (९) आनन्द अने (१०) नन्दन

जम्बू स्वामी पूछे थे—

हे भगवन् ! श्रमण भगवान महावीरे कल्पावतंसिकामां दश अध्ययनानुं

अध्ययनानि प्रज्ञप्तानि, प्रथमस्य खलु भदन्त ! अध्ययनस्य कल्पावतंसिकानां श्रमणेन भगवता यावत् सम्प्राप्तेन कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ? एवं खलु जम्बूः । तस्मिन् काले तस्मिन् समये चम्पा नाम नगरी आसीत् । पूर्णभद्रं चैत्यं, कूणिको राजा, पद्मावती देवी । तत्र खलु चम्पायां नगर्यां श्रेणिकस्य राज्ञो भार्या कूणिकस्य राज्ञो लघुमाता काली नाम देवी आसीत् । सुकुमार० । तस्याः खलु देव्याः पुत्रः कालो नाम कुमारः आसीत् । सुकुमार० । तस्य खलु कालस्य कुमारस्य पद्मावती नाम देवी अभवत् । सुकुमार० यावत् विहरति ।

ततः खलु सा पद्मावती देवी अन्यदा कदाचित् तस्मिन् तादृशे वाम-गृहे अभ्यन्तरतः सचित्रकर्मणि यावत् सिंहं स्वप्ने दृष्ट्वा खलु प्रतिबुद्धा । एवं

अध्ययनोंका निरूपण क्रिया है । उसके प्रथम अध्ययनमें किस भावका निरूपण किया है ?

सुधर्मा स्वामी कहते हैं—

हे जम्बू ! उस काल उस समयमें चम्पा नामकी नगरी थी । वहाँ पूर्णभद्र चैत्य था । उसनगरीमें कूणिक राजा राज्य करता था उसके पद्मावती नामकी रानी थी । उस चम्पानगरीमें राजा श्रेणिककी पत्नी महाराज कूणिककी छोटी माता काली नामकी रानी थी जो अत्यन्त सुकुमार थी । उस रानीके एक कालकुमार नामका पुत्र था । उस कालकुमारकी पत्नी पद्मावती देवी जो अत्यन्त सुख्या थी, वह पूर्वोपार्जित पुण्यसे मिले हुए मनुष्य सुखका अनुभव करती रहती थी ।

उसके बाद एक दिन वह पद्मावती देवी अपने अत्युत्तम वासगृहमें सोयी हुई थी । उसके वामगृहकी दिवालें अत्यन्त मनो-

निःपण्य कथुं छे तेना प्रथम अध्ययनमा कथा लावनु निःपण्य कथुं छे ?

सुधर्मा स्वामी कहे छे:—

हे जम्बू ! ते काले ते समये चम्पा नामकी नगरी छनी, तेमा पूर्युलद्र चैत्य छतो ते नगरीमा कूणिक राजा राज्य करता छता तेमने पद्मावती नामकी राणी छती, ते चम्पानगरीमा राजा श्रेणिकनी पत्नी महाराज कूणिकनी नानी माता काली नामकी राणी छती जे अत्यन्त सुकुमार छती ते राणीने एक कालकुमार नामको पुत्र छतो, ते कालकुमारनी पत्नी पद्मावती देवी जे बहुत सुखवान छती, ते पूर्वोपार्जित पुण्यथी मणोला मनुष्य सुखको अनुभव करती रहेती छती, ते

त्यार पछी एक दिवस ते पद्मावती देवी पोताना अति उत्तम वासगृहमा सूती छती, ते वासगृहनी दिवालें अत्यन्त मनोहर चित्रेथी चित्तकरेदी छती, ते

जन्म यथा महावलस्य यावत् नामधेयं, यस्मात् खलु अस्माकमयं दारकः कालस्य कुमारस्य पुत्रः पद्मावत्या देव्या आत्मजः तद् भवतु खलु अस्माकम् अस्य दारकस्य नामधेयं पद्मः । शेषं यथा महावलस्य अष्ट दायाः यावत् उपरि प्रासादवरगतो विहरति ॥ १ ॥

टीका-‘जडणं भंते’ इत्यादि-कृणिकराजलघुभ्रातुः कालकुमारस्य पद्मावती नाम भार्या अन्यदा कदाचित् अभ्यन्तरतः अभ्यन्तरभागे सचित्रकर्मणि=त्रिचित्रचित्रकर्मयुक्ते तरिमन् तादृशे वामगृहे=निजप्रासादे गृहजाग्रदवस्थायां तन्द्रायां स्वप्ने सिंह दृष्ट्वा प्रतिबुद्धा=जागरिता । शेषं सुगमम् ॥ १ ॥

मूलम्-सामी समोसरिण् । कूणिण् निग्गण् । पउमेवि जहा महव्वले निग्गण् तहेव अम्मापिड्-आपुच्छणा जाव पव्वड्ण अणगारे जाण् जाव गुत्तवंभयारी ।

तएणं से पउमे अणगारे समणस्स भगवओ महावीरस्स तहारुवाणं थेराणं अंतिण् सासाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं

हर चित्रोंसे चित्रित थी । उस घरमें अपनी कोमल शय्यापर सोती हुई उस रानीने स्वप्नमें सिंहको, देखा । स्वप्न देखनेके बाद जाग गयी । बादमें उसे स्वप्न दर्शनके अनुसार शुभ लक्षणवाली पुत्र हुआ । उसका जन्मसं लेकर नामकरण पर्यन्त सभी कृत्य महावल कुमारके सहज जानना । वह काल कुमारका पुत्र और पद्मावती देवीका अज्ञात होनेसे उसका नाम पद्म रखा गया । इसके बादका सभी वृत्तान्त महावलके सहज जानना चाहिये । उसे आठ २ दहेज मिला । वह अपने ऊपरी महलमें सभी प्रकारके मनुष्यसम्बन्धी सुखोंका अनुभव करता हुआ निवास करता था ॥ १ ॥

धर्यां पीतानी डोभल शय्याया सूतेना ते राणीञ्च स्वप्नाया सिद्धिने ज्ञेया स्वप्न टीठा पछी ते जगी गछ पछी तेने पन्नदर्शनन अनुसरीने शुभ लक्षणवाणी पुत्र थये । तेना जन्मथी माडी नसिक्कण् सुधीना कर्मा महाणल कुमारना जेवाण् जण्णवा त डालकुमान्नेः पुत्र तथा पद्मावती देवीनी रूपे जन्मेत्ते डोवाया तेनु नाम पद्म राभवामा आवुत्तु त्थार पछीने सर्व वृत्तान्त महाणलनी पंठे जण्णये । ज्ञेयञ्च तेने आठ आठ दहेज भज्या अने ते पीताना उपसा महिलयां तमाम प्रकारना मनुष्यसम्बन्धी सुणे भोगवते । तेमां रडेते । ॥ १ ॥

अहिज्जइ, अहिज्जिता बहूहिं चउत्थच्छट्टुम जाव विहरइ । तएणं
से पउमे अणगारे तेणं ओरालेणं जहा मेहो तहेव धम्म-
जागरिया चिंता एवं जहेव मेहो तहेव समणं भगवं आपुच्छिता
विउले जाव पाओवगए समाणे तहारूवाणं थेराणं अंतिए
सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइ, बहुपडिपुण्णाइं पंच वासाइं
सामन्नपरियाए, मासियाए संलेहणाए सट्ठिं भत्ताइं० आणु-
पुव्वीए कालगए । थेरा ओइन्ना भगवं गोयमो पुच्छइ, सामी
कहेइ जाव सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता आलोइय० उडुं
चंदिम० सौहम्मै कप्पे देवत्ताए उववन्ने, दो सागराइं । से
णं अंते पउमे देवे ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं पुच्छा,
गोयमा ! महाविदेहे वासे जहा दढपइन्नो जाव अंतं काहिइ ।
तं एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं कप्पवडिंसियाणं
पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्टे पन्नत्ते त्तिवेमि ॥ २ ॥

॥ पढममज्झयणं समत्तं ॥

छाया-स्वामी समवसृतः । परिषत् निर्गता । कूणिको निर्गतः ।
पद्मोऽपि यथा महाबलो निर्गतस्तथैव अम्बार्पात्राच्छना यावत् प्रव्रजितोऽनगारो
जातो यावत् गुप्तब्रह्मचारी ।

‘सामी समोसरिए’ इत्यादि—

भगवान् महावीर प्रभु पधारे, परिषद् धर्म श्रवण करनेके लिये
निकली । कूणिक राजा भी धर्मोपदेश सुननेके लिए निकला, कुमार
पद्म भी महाबलके समान भगवानके पास गया । वहाँ भगवानके

‘सामी समोसरिए’ इत्यादि

भगवान् महावीर प्रभु पधार्या परिषद् धर्म श्रवण करवा भाटे निकली कूणिक
राज पद्म धर्मोपदेश साधणवा भाटे निकल्या कुमार पद्म पणु महाबलनी पेठे भग-

ततः खलु स पद्मोऽनगारः श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य तथारूपाणां स्थविराणाम् अन्तिके सामायिकादिकानि एकादशाङ्गानि अधीते । अधीत्य बहुभिः चतुर्थपष्ठाष्टम० यावद् विहरति । ततः स पद्मोऽनगारो तेन उदारेण यथा मेघस्तथैव धर्मजागरिका, चिन्ता, एवं यथैव मेघस्तथैव श्रमणं भगवन्तमापृच्छय विपुले यावत् पादपोगतः सन् तथारूपाणां स्थविराणाम् अन्तिके सामायिकादिकानि एकादशाङ्गानि, बहुप्रतिपूर्णानि पञ्च वर्षाणि श्राम-

उपदेशसे उसे वैराग्य हो गया । उमने महाबलके समान ही माता पितासे प्रब्रज्याकी अनुमति माँगी । तथा अन्तमें उसने प्रब्रज्या लेली और अनगार हो गया यावत् गुप्त ब्रह्मचारी हो गया ।

उसके बाद वे पद्म अनगारने श्रमण भगवान महावीरके तथारूप स्थविरोंके समीप सामायिक आदि ग्यारह अंगोंका अध्ययन किया । और बहुत सी चतुर्थ षष्ठ आदि तपस्या को । अनन्तर वे पद्म अनगार उदार-कठिन तपश्चर्या करनेसे तपः कर्मके आराधनके कारण उनका शरीर शुष्क-रूक्ष हो गया । मांस शोणितके सूख जानेके कारण इतने कृश हो गये कि उनके शरीरमें हड्डी और चमडा मात्र रह गया और उनकी सभी नसें दिखाई देने लगी । इसका विशेष वर्णन मेघकुमारके समान जानना । मेघ कुमारके समान ही इनने धर्म जागरणा की और विपुल गिरि पर जाने आदिका विचार किया और मेघकुमारके समान ही विपुल गिरिपर जानेके

वाननी पासे गया त्यां लगानना उपदेशथा तेन वैराग्य यथ गयो तेखे महाबलनी पेंडेन माता पिता पासे प्रब्रज्यानी रज्य भागी तथा छवटे तेखे प्रब्रज्या (दीक्षा) लीधी अने अनगार (गृहत्यागी) थथ गुप्त ब्रह्मचारी थथ गया.

त्यार पछी ते पद्म अनगारे (गृहत्यागी) श्रमणु भगवान महावीरना तथारूप स्थविरानी पासे सामायिक आदि अगीयार अगोनु अध्ययन कर्युं अने बहु रीतनी चतुर्थ तथा छठ आदि (१-२ उपवास) तपस्या करा. पछी ते पद्म अनगार उदार कठिन तपस्या करवाथी तप. कर्मनु आराधन करवाना कारणे तेमनु शरीर सूकाथ गयुं, रूक्ष थथ गयुं. लोही मांस सूकाथ जवाना कारणे अटला कृश (नभजा) थथ गया के तेमना शरीरमा हाडका तथा अ.स.१ मात्र रही गया अने तेमनी बधी नसेा देखाव लगी आनु विशेष वर्णन मेघकुमारना जलुं जलुं मेघकुमारनी पेंडेन तेमखे धर्म अगारखु करी तथा विपुलगिरि उपर जवा आदिने विचार कर्यो तथा मेघकुमारनी पेंडेन

ण्यपर्यायः । मासिक्या संलेखनया षष्टिं भक्तानि० आनुपूर्व्या कालगतः । स्थविरा अवतीर्णा भगवान् गौतमः पृच्छति; स्वामी कथयति यावत् षष्टिं भक्तानि अनशनेन छित्वा आलोचित० ऊर्ध्वं चन्द्रमः० सौधर्मे कल्पे देवत्वेन उपपन्नः । द्वौ सागरौ । स खलु भदन्त ! पद्मो देवस्ततो देवलोकाद् आयुः क्षयेण पृच्छा गौतम ! महाविदेहे वर्षे यथा दृढप्रतिज्ञो यावदन्तं करिष्यति ।

लिये भगवानसे पूछा । पूछकर स्वयं पुनः पञ्च महाव्रत ग्रहण किया । गौतम आदि श्रमण निर्ग्रन्थोंको खमाकर स्थविरोंके साथ धीरे २ विपुल गिरि पर चढे । और वहाँ सविधि पादपोषगमन सन्धारा स्वीकारकर कालकी इच्छा नहीं करते हुए रहने लगे । और वे पद्म अनगारने स्थविरोंके समीप ग्यारह अङ्गोका अध्ययन किया और पूरे पाँच वर्षकी दीक्षापर्याय पाली ।

एक मासकी संलेखनासे साठ भक्तका छेदनकर अनुक्रमसे कालको प्राप्त हो गये । उनके कालप्राप्त करनेके बाद स्थविर उन पद्म अनगारके भाण्डोपकरण लेकर भगवानके पास आये उनके आनेके बाद गौतमने भगवानसे पूछा—हे भगवन् ! ये पद्म अनगार काल करके कहाँ गये ?

भगवानने कहा—हे गौतम ! पद्म अनगार पूर्वोक्त प्रकारसे एक महीनेको सन्धारा कर और आलोचित प्रतिक्रान्त होकर अर्थात् आत्म-

विपुल गिरिपर जवा भाटे भगवानने पूछ्यु पूछीने पीने इरीने पत्र भडाव्रत अड्यु कर्था गौतम आदि श्रमण निर्ग्रन्थानो तथा निर्ग्रन्थीओने जभावीने स्थविरेनी साथे धीरे धीरे विपुलगिरि पर अडया अने त्या विधीसर पादपोषगमन संधारे स्वीकार करी भरखुनी छरछा वगर रहेवा लाग्या तथा ते पद्म अनगार स्थविरेनी पासे अगीयार अगोनु अध्ययन कर्तुं अने पूरा पात्र वर्षनी दीक्षा पर्याय पाणी

अेक महिनानी सलेखनाथी साठ भक्तनुं छेदन करी अनुक्रमे कालने प्राप्त तथा तेमना काल प्राप्त कर्था पछी स्थविर लोक ते पद्म अनगारना साडोपकरण लधने भगवाननी पासे आव्या तेना आव्या पछी गौतमे भगवानने पूछ्यु—हे भगवन् ! आ पद्म अनगार काल करीने कथां गया ?

भगवाने कहु—हे गौतम ! पद्म अनगार पूर्वोक्त प्रकारे अेक महिनाने संधारे करी तथा अलोचित प्रतिक्रान्त थरु अर्थात् आत्मशुद्धि करी कालने अवसरे काल प्राप्त

तदेव खलु जम्बू ! श्रमणेन यावत् संप्राप्तेन कल्पावतंसिकानां प्रथमस्या-
ध्ययनस्य अयमर्थः प्रज्ञप्तः । इति ब्रवीमि ॥ २ ॥

॥ प्रथममध्ययनं समाप्तम् ॥

टीका—‘सामी’ इत्यादि—मथविरा अवतीर्णाः=त्रिपुलगरितोऽधस्तादा-
गताः । शेषं मृगमम् ॥ २ ॥

॥ प्रथममध्ययनं समाप्तम् ॥

मूलम्—जड़णं भंते ! समणेणं भगवया जाव संपत्तेणं कप्प-
वडिसियाणं पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्टे पन्नत्ते, दोच्चस्स
णं भंते ! अज्झयणस्स के अट्टे पणत्ते ? एवं खलु जंबू !
तेणं कालेणं २ चंपा नामं नयरी होत्था, पुन्नभदे चेइए,
कूणिए राया, पउमावईदेवी । तत्थ णं चंपाए नयरीए सेणि-

शुद्धि करके काल अवसर काल प्राप्त होकर चन्द्रमासे उपर सौधर्म
कल्पमें दो सागरकी स्थितिवाले देवपनेमें उत्पन्न हुए ।

हे भदन्त ! वह पद्म देव देवसम्बन्धी आयु भव स्थितिके
क्षय होजानेके बाद, देवलोकसे चवकर कर्हा जायगा ।

हे गौतम वह देवलोकसे चवकर महाविदेह क्षेत्रमें दृढ प्रतिज्ञके
समान समृद्ध कुलमें जन्म लेकर सिद्ध होगा और सब दुःखोका
अन्त करेगा ।

हे जम्बू ! इस प्रकार मोक्ष प्राप्त श्रमण भगवान महावीरने
कल्पावतंसिकाके प्रथम अध्ययनका यह भाव निरूपण किया है । ॥२॥

। प्रथम अध्ययन समाप्त ।

थं अद्रमानी उपर सौधर्म कल्पमा के सागरनी स्थितिवाणा देवपणे उत्पन्न थया

हे भदन्त ! ते पद्मदेव देव सगधी आयु, भव स्थितिने क्षय थं गया पछी
देवलोकथी व्यवीने क्या नशे ?

हे गौतम ! ते देवलोकथी व्यवीने महाविदेह क्षेत्रमां दृढप्रतिज्ञानी रीते समृद्ध
कुणमा जन्म लं सिद्ध थसे अने तमाम दुःखने अत करसे

हे जम्बू ! आ प्रकारे मोक्षप्राप्त श्रमण भगवान महावीरे कल्पावतसिकाना प्रथम
अध्ययनं आ भाव निरूपण कथुं छे ॥ २ ॥

प्रथम अध्ययन समाप्त

यस्स रत्तो भज्जा कूणियस्स रत्तो चुल्लमाउया सुकाली नामं देवी होत्था । तीसे णं सुकालीए पुत्ते सुकाले नामं कुमारे । तस्स णं सुकालस्स कुमारस्स महापउमा नामं देवी होत्था, सुकुमाला ।

तए णं सा महापउमा देवी अन्नया कयाइं तंसि तारि-सगंसि एवं तहेव महापउमे नामं दारए, जाव सिज्झिहिइ, नवरं ईसाणे कप्पे उववाओ उक्कोसट्टिइओ । तं एवं खलु जंबू ! समणेणं भगवया जाव संपणंत्ते० । एवं सेसा वि अट्टु नेयव्वा । मायाओ सरिसनामाओ । कालादीणं दसण्हं पुत्ताणं आणुपुव्वीए-दोण्हं च पंच चत्तारि, तिण्हं तिण्हं च होत्ति तिन्नेव । दोण्हं च दोणिण वासा, सेणियनत्तूण परियाओ ॥१॥

उववाओ आणुपुव्वीए, षडमो सोहम्मि वितिओ ईसाणे, तइओ सणंकुमारे, चउत्थो माहिंदे, पंचमओ बंभलोए, छट्टो लंतए, सत्तमओ महासुक्के, अट्टमओ सहस्सारे, नवमओ पाणए, दसमओ अच्चुए । सव्वत्थ उक्कोसट्टिई भाणियव्वा, महाविदेहे सिज्झिहिइ १० ॥ ३ ॥

छाया-यदि खलु भदन्त ! श्रमणेन भगवता यावत् संप्राप्तेन कल्पा-वतंसिकानां प्रथमस्याऽध्ययनस्य अयमर्थः प्रज्ञप्तः । द्वितीयस्य खलु भदन्त ! अध्ययनस्य कोऽर्थः प्रज्ञप्तः । एवं खलु जम्बू ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये चम्पा नाम नगरी आसीत्, पूर्णभद्रं चैत्यं, कूणिको राजा पद्मावती देवी । तत्र खलु चम्पायां नगर्यां श्रेणिकस्य राज्ञो भार्या कूणिकस्य राज्ञो लघुमाता सुकाली नाम देवी आसीत् । तस्याः खलु सुकाल्याः पुत्रः सुकालो नाम कुमारः, तस्य खलु सुकालस्य कुमारस्य महापद्मा नाम देवी आसीत्, सुकुमारा ।

ततः खलु सा महापद्मा देवी अन्यदा कदाचित् तस्मिन् तादृशे एवं तथैव महापद्मो नाम दारकः यावत् सेत्स्यति नवरमीशानकल्पे उपपातः उत्कृष्टस्थितिकः । एवं खलु जम्बूः ! श्रमणेन भगवता यावत् संप्राप्तेन । एवं शेषाण्यपि अष्टौ ज्ञातव्यानि, मातरः सदृशनाम्न्यः कालादीनां दशानां पुत्राणामानुपूर्व्या—(व्रतपर्यायः)—

द्वयोश्च पञ्चचत्वारि, त्रयाणां त्रयाणां च भवन्ति त्रीण्येव । द्वयोश्च द्वे वर्षे, श्रेणिकनप्तृणां पर्यायः ॥ १ ॥

उपपात आनुपूर्व्या—प्रथमः सौधर्मे, द्वितीय ईशाने, तृतीयः सनत्कुमारे, चतुर्थो साहेन्द्रे, पञ्चमो ब्रह्मलोक्रे, षष्ठो लान्तके, सप्तमो महाशुके, अष्टमः सहस्रारे, नवमः प्राणते, दशमोऽच्युते । सर्वत्र उत्कृष्टा स्थितिर्भणितव्या, महाविदेहे सेत्स्यति १० ॥ ३ ॥

टीका—‘जङ्गं भंते’ इत्यादि । मातृनामसदृशनामानः कालादीनां दशानां पुत्राः श्रेणिकपुत्रा पद्मादयः कियन्ति २ वर्षाणि संयमपर्यायं पालयामासुरिति क्रमेण व्रतपर्यायप्रतिपादिका तद्गाथा निगद्यते—‘द्वयोश्च’—त्यादि । अस्या

द्वितीय अध्ययन प्रारम्भ ।

‘जङ्गं भंते’ इत्यादि—

जम्बू स्वामि पूछते हैं—

हे भदन्त ! मोक्षप्राप्त श्रमण भगवान् महावीरने कल्पावतंसिकाके प्रथम अध्ययनके भावोंको पूर्वोक्त प्रकारसे निरूपण किया है तो इसके बाद हे भगवन् ! द्वितीय अध्ययनमें भगवान् किन भावोंका निरूपण किया है !

सुधर्मा स्वामि कहते हैं—

हे जम्बू ! उस काल उस समयमें चम्पा नामकी नगरी थी ।

जङ्गं भंते इत्यादि

द्वितीय (भीष्म) अध्ययन प्रारम्भ

जम्बू स्वामी पूछे छेः—

हे भदन्त ! मोक्षप्राप्त श्रमण भगवान् महावीरे कल्पावतंसिकानां प्रथम अध्ययनना लावने-पूर्वाक्त प्रकारे निरूपण क्यो छे, तो त्यार पछी हे भगवन् भीष्म अध्ययनमा तयोअे कया लावोनुं निरूपण क्युं छे ?

श्री सुधर्मा स्वामी कहे छेः—

हे जम्बू ! ते काले ते समये चम्पा नामे अेक नगरी छती. ते नगरीमा

अयमभिप्रायः—द्वयोः=काल—सुकाल—पुत्रयोः पद्म—महापद्मकुमारयोर्ब्रतपर्यायः
पञ्च पञ्च वर्षाणि, त्रयाणां=महाकाल—कृष्ण—सुकृष्णपुत्राणां—भद्र—सुभद्र—पद्मभद्र—
कुमाराणां चत्वारि चत्वारि वर्षाणि व्रतपर्यायः, पुनस्त्रयाणां=महाकृष्ण—वीरकृष्ण—
रामकृष्णपुत्राणां पद्मसेन—पद्मगुल्म—नलिनीगुल्मकुमाराणां त्रीणि त्रीणि वर्षाणि
व्रतपर्यायः, पुनर्द्वयोः=पितृसेनकृष्ण—महासेनकृष्णपुत्रयोः आनन्द—नन्दनकुमारयोः
द्वे द्वे वर्षे । इत्थं श्रेणिकनप्तृणां=श्रेणिकपौत्राणां दशानामपि पर्यायः=संयम-

वहाँ पूर्णभद्र चैत्य था । वहाँका राजा कृणिक था । उसकी रानीका
नाम पद्मावती था । उस चम्पानगरीमें राजा श्रेणिककी रानी महा-
राजा कृणिककी छोटी माता सुकाली नामकी रानी थी । उस सुकाली
रानीका पुत्र सुकाल कुमार था । उस सुकाल कुमारकी पत्नी का
नाम महापद्मा था, वह अत्यन्त सुकुमार थी ।

उसके बाद वह महापद्मा देवी किसी समय एक रातमें शय्या-
पर सोयी हुई थी । उसने स्वप्नमें सिंहको देखा ! और नौ महीनेके
बाद उसे एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम महापद्म रखा गया ।
इन महापद्म अनगारका उत्पत्तिसे लेकर सिद्धि तकका वृत्तान्त पद्म
अनगारके समान ही जानना चाहिये । अर्थात् देवलोकसे च्यवकर
महाविदेह क्षेत्रमें सिद्ध होंगे । इतना विशेष है कि ये महापद्म
अनगार ईशान देवलोकमें उत्कृष्ट स्थितिवाले देव हुए ।

हे जम्बू ! श्रमण भगवान महावीर प्रभुने इस प्रकार द्वितीय

पूर्वभद्र चैत्य હતો, ત્યાનો રાજા કૃણિક હતો તેની રાણીનું નામ પદ્માવતી હતું તે
ચમ્પાનગરીમાં રાજા શ્રેણિકની રાણી—મહારાજા કૃણિકની નાની માતા—સુકાલી નામે રાણી
હતી. તે સુકાલી રાણીનો પુત્ર કુમાર સુકાલ હતો તે સુકાલ કુમારની પત્નીનું નામ
મહાપદ્મા હતું તે બહુ સુકુમાર હતી

ત્યાર પછી તે મહાપદ્મા દેવી કોઈ સમયે એક રાત્રિમાં જ્યારે શય્યા પર સુતી
ત્યારે તેણે સ્વપ્નામાં સિંહને જોયો અને નવ મહિના પછી તેને એક પુત્ર ઉત્પન્ન થયો
જેનું નામ મહાપદ્મ રાખવામાં આવ્યું. આ મહાપદ્મ અનગારની ઉત્પત્તિથી માંડીને
સિદ્ધિ સુધીનું વૃત્તાન્ત પદ્મ અનગારના જેવુંજ બાણી લેવું જોઈએ અર્થાત્ દેવલોકથી
અવીને મહાવિદેહક્ષેત્રમાં સિદ્ધ થશે એટલું વિશેષ છે કે તે મહાપદ્મ અનગાર ઈશાન
દેવલોકમાં ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિવાળા દેવ થયા

હે જમ્બૂ ! શ્રમણ ભગવાન મહાવીર પ્રભુએ આ પ્રકારે બીજા અધ્યયનનું નિરૂપણ
કર્યું છે તે જેવું ભગવાન પાસેથી સાંભળ્યું છે તેવુંજ મેં તને કહ્યું છે (૨)

पर्यायो ज्ञातव्यः । आनुपूर्व्यां=क्रमेण उपपातः=देवलोकेषु जन्म प्रोच्यते-
प्रथमः=पद्मः १ सौधर्मै=सौधर्माख्यप्रथमदेवलोके उत्कृष्टद्विसागरोपमस्थितिको
देवो जातः । एवं द्वितीयः=महापद्मः २ ईशाने द्वितीये देवलोके उत्कृष्टेन
किंचिदधिकद्विसागरोपमस्थितिकोऽभूत् । तृतीयः=भद्रो मुनिः ३ सनत्कुमारे

अध्ययनका निरूपण क्रिया है । वह जैसा भगवानसे सुना है वैसा
तुम्हें कहा है ॥ २ ॥

हे जम्भू ! इसी प्रकार शेष आठ अध्ययनोंको जानना चाहिये ।
काल आदि दस कुमारोंके पुत्रोंकी माताओंके नाम उन पुत्रोंके सदृश
हैं । इन सबका चारित्रपर्याय अनुक्रमसे इस प्रकार है—काल सुकालके
पुत्र पद्म महापद्म अनगारने पाँच २ वर्ष दीक्षा पर्याय पाली ।

महाकाल, कृष्ण और सुकृष्णके पुत्र भद्र, सुभद्र और पद्म-
भद्रने चार २ वर्ष, महाकृष्ण, रामकृष्णका पुत्र पद्मसेन पद्मगुल्म
और नलिनीगुल्म अनगारने तीन २ वर्ष, पितृसेनकृष्ण महासेन-
कृष्णके पुत्र आनन्द और नन्दने दो-दो वर्ष संयम पाला । ये दसों
श्रेणिक राजाके पोते थे ।

अब कौन किस देवलोकमें गये यह क्रमसे कहते हैं ।

(१) पद्म-सौधर्म नामक प्रथम देवलोकमें उत्कृष्ट दो सागरो-
पमकी स्थितिवाले, (२) महापद्म-ईशान नामक दूसरे देवलोकमें उत्कृष्ट
दो सागरोपम झाझेरी (कुछ अधिक) स्थितिवाले, (३) भद्र-सनत्कुमार

हे जम्भू ! आ प्रकारे पाडीना आठ अध्ययनाने जखी देवा जेधजे. काल आदि
दश कुमारेना पुत्रेनी माताज्जेना नाम ते पुत्रेना जेवा छे ते पधानां चारित्रपर्याय
अनुक्रमथी आ प्रकारे छे.—

काल सुकालना पुत्र पद्म महापद्म अनगारे पाच पांच वर्ष दीक्षापर्याय पाली
महाकाल कृष्ण तथा सुकृष्णना पुत्र भद्र सुभद्र अने पद्मभद्रे चार चार वर्ष, महाकृष्ण
वीरकृष्ण, रामकृष्णना पुत्र पद्मसेन. पद्मगुल्म अने नलिनीगुल्म अनगारेजे त्रणु त्रणु
वर्ष, पितृसेनकृष्ण, अन महासेनकृष्णना पुत्र आनंद अने नंदने जे जे वर्ष संयम
पालथे आ दशिय श्रेणिक राजाना पौत्र छता.

इवे केषु कथा देवलोकमा गया ते कथी पतावीजे छीजे:—

(१) पद्म-सौधर्म नामे प्रथम देवलोकमा गया. (२) महापद्म-ईशान नामे जिन
देवलोकमा उत्पन्न थया. (३) भद्र-सनत्कुमार नामे त्रीण देवलोकमा उत्पन्न थया (४)

तृतीये देवलोके उत्कृष्टसप्तसागरोपमस्थितिकः, चतुर्थः=सुभद्रो मुनिः ४ माहेन्द्रे चतुर्थे देवलोके उत्कृष्टेन किञ्चिदधिकसप्तसागरोपमस्थितिकः, पञ्चमः=पद्मभद्रो मुनिः ५ ब्रह्मलोके पञ्चमे देवलोके, उत्कृष्टदशसागरोपमस्थितिकः, षष्ठः=पद्मसेनो मुनिः ६ लान्तके=तदाख्ये षष्ठे देवलोके, उत्कृष्टचतुर्दशसागरोपमस्थितिकः, सप्तमः=पद्मगुल्मो मुनिः ७ महाशुके सप्तमे देवलोके, उत्कृष्टसप्तदशसागरोपमस्थितिकः, अष्टमः=नलिनीगुल्मो मुनिः ८ सहस्रारेऽष्टमे देवलोके, उत्कृष्टदशसागरोपमस्थितिकः, नवमः=आनन्दो मुनिः ९ प्राणते दशमे देवलोके उत्कृष्टविंशतिसागरोपमस्थितिकः, दशमः=नन्दनो मुनिः १० द्वादशेऽच्युते देवलोके,

नामक तीसरे देवलोकमें उत्कृष्ट सात सागरोपमकी स्थितिवाले, (४) सुभद्र मुनि-माहेन्द्र नामक चतुर्थ देवलोकमें उत्कृष्ट सात सागरोपम झाङ्गेरी स्थितिवाले, (५) पद्मभद्रमुनि-ब्रह्म नामक पञ्चम देवलोकमें उत्कृष्ट दस सागरोपमकी स्थितिवाले, (६) पद्मसेन मुनि-लान्तक नामक छठे देवलोकमें उत्कृष्ट चौदह सागरोपमकी स्थितिवाले, (७) पद्मगुल्म मुनि महाशुक नामक सातवें देवलोकमें उत्कृष्ट सतरह १७ सागरोपमकी स्थितिवाले, (८) नलिनीगुल्म मुनि-सहस्रार नामक अष्टम देवलोकमें उत्कृष्ट १९ सागरोपम स्थितिवाले तथा (९) आनन्द मुनि-प्राणत नामक नवमें देवलोकमें उत्कृष्ट २० सागरोपम स्थितिवाले देवपने उत्पन्न हुए (१०) नन्दन मुनि-बारहवें अच्युत नामक देव-

सुभद्रमुनि माहेन्द्र नामे थोथा देवलोकमा उत्पन्न थया. (५) पद्मभद्र मुनि-ब्रह्म नामे पायमा देवलोकमा, (६) पद्मसेन मुनि-लान्तक नामे छठ्ठा देवलोकमा (७) पद्मगुल्म मुनि-महाशुक नामे सातमा देवलोकनी उत्कृष्टथी सत्तरमां सागरोपमनी स्थितिवाणा (८) नलिनीगुल्म मुनि-सहस्रार नामना आठमा देवलोकमां १४ उत्कृष्ट १६ सागरोपम स्थितिवाणा देवपणे उत्पन्न थया (९) आनन्द मुनि प्राणत नामे नवमा देवलोकमा उत्कृष्ट २० सागरोपमनी स्थितिवाणा देवपणे उत्पन्न थया (१०) नन्दन मुनि-गाम्मा अच्युत नामे देवलोकमां २२ सागरोपम स्थितिवाणा देवपणाथी उत्पन्न थया

तेमनी स्थिति नीचे लख्या प्रकारनी छे —

पद्मदेवनी उत्कृष्ट जे सागरोपम स्थिति छे भद्रापद्मनी जे सागरोपम आजेरी (काष्ठकअधिक छे भद्रनी सातसागरोपम, सुभद्रनी सात सागरोपम आजेरी पद्मभद्रनी दश सागरोपम पद्मसेननी चौदह सागरोपम पद्मगुल्मनी सत्तर सागरोपम नलिनी-

उत्कृष्टद्वाविंशतिसागरोपमस्थितिकश्च देवत्वेनोत्पन्नः । सर्वत्र=सर्वेषु देवलोकेषु सर्वेषां देवतयोपपन्नानामुत्कृष्टस्थितिर्भणितव्या । सर्वे महाविदेहे सिद्धा भविष्यन्ति ।

॥ इति कल्पावतंसिका नाम द्वितीयो वर्गः समाप्तः ॥

अथ पुष्पिताख्यस्तृतीयो वर्गः—

मूलम्—जइ णं भंते ! समणेणं भगवया जाव संपत्तेणं उवंगाणं दोच्चस्स वग्गस्स कप्पवडिंसियाणं अयमट्टे पन्नत्ते ? । तच्चस्स णं भंते ! वग्गस्स उवंगाणं पुप्फियाणं के अट्टे पणत्ते ? । एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं उवंगाणं तच्चस्स वग्गस्स पुप्फियाणं दस अज्झयणा पन्नता, तंजहा—

‘ १ चंदे २ सूरे ३ सुक्के ४ बहुपुत्तिय ५ पुन्न ६ माणभेदे य । ७ दत्त ८ सिवे ९ वलेया, १० अणाढिए चेज वोद्धव्वे ॥ १ ॥

जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं पुप्फियाणं दस अज्झयणा पन्नत्ता, पढमस्स णं भंते ! अज्झयणस्स पुप्फियाणं समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्टे पन्नत्ते ? ।

एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं २ रायगिहे नामं नयरे, गुणसिलए चेइए, सेणिए राया । तेणं कालेणं २ सामी समोसडे, परिसा निग्गया । तेणं कालेणं २ चंदे जोइसिंदे

लोकमें उत्कृष्ट २२ सागरोपमकी स्थितिवाले देवपने उत्पन्न हुए ।

ये सब उत्कृष्ट स्थितिवाले देव हैं और महाविदेह क्षेत्रमें सिद्ध होंगे ।

। कल्पावतंसिका नामक द्वितीय वर्ग समाप्त ।

शुद्धमनी अठार सागरोपम आनदनी पीस सागरोपम अने नदनदेवनी आवीस सागरोपम स्थिति छे

ये यथा उत्कृष्ट स्थितिवाला देव छे अने महाविदेह क्षेत्रमां सिद्ध थशे

कल्पावतंसिका नामक द्वितीय वर्ग समाप्त

जोइसराया चंद्रवडिसए विमाणे सभाए सुहम्माणे चंद्रसि सीहा-
सणंसि चउहिं सामाणियसाहस्सीहिं जाव विहरइ । इमं च
णं केवलकप्पं जंबूदीवं दीवं विउलेणं ओहिणा आभोएमाणे
२ पासइ, पासित्ता समणं भगवं महावीरं जहा सूरियाभे आभि-
ओगे देवे सदावित्ता जाव सुरिंदाभिगमणजोगं करेत्ता तस्मा-
णत्तियं पच्चप्पिणइ । सूसरा घंटा, जाव विउव्वणा, नवरं
(जाणविमाणं) जोयणसहस्सवित्थिणं अद्धत्तेवट्टिजोयणसमूसियं,
महिंदब्झओ पणुवीसं जोयणमूसिओ, सेसं जहा सूरियाभस्स
जाव आगओ नट्टविही तहेव पडिगओ । भंते त्ति भगवं गोयमे
समणं भगवं महावीरं, पुच्छा, कूडागारसाला, सरीरं अणुपविट्ठा,
पुव्वभवो ।

एवं खलु गोयसा ! तेणं कालेणं २ पावत्थी नाम नयरी
होत्था, कोट्टए चेइए ! तत्थणं सावत्थीए नयरीए अंगई नासं
गाहावई होत्था, अहुं जाव अपरिभूए । तएणं से अंगई गाहा-
वई सावत्थीए नयरीए बहूणं नयरनिगणं जहा आणंदो ॥१॥

छाया—यदि खलु भदन्त ? श्रमणेन भगवता यावत् संप्राप्तेन उपा-
द्धानां द्वितीयस्य वर्गस्य कल्पावतंसिकानामयमर्थः प्रज्ञप्तः, तृतीयस्य खलु भदन्तः
वर्गस्य उपाद्धानां पुष्पितानां कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ?

एवं खलु जम्बू : ! श्रमणेन यावत् संप्राप्तेन उपाद्धानां तृतीयस्य
वर्गस्य पुष्पितानां दशाध्ययनानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—चन्द्रः (१) सरः (२) शुक्रः
(३) बहुपुत्रिकः (४) पूर्णः (५) मानभद्रश्च (६) दत्तः (७) गिवः (८) नले-
पकः (९) अनादृतः (१०) चैव बोद्धव्याः : ।

यदि खलु भदन्त ! श्रमणेन यावत् संप्राप्तेन पुष्पितानां दशाध्यय-
नानि प्रज्ञप्तानि, प्रथमस्य खलु भदन्त ! अध्ययनस्य पुष्पितानां श्रमणेन यावत्
संप्राप्तेन कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ?

एवं खलु जम्बू : ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये राजगृहं नाम नगरं, गुणशिलं चैत्यं, श्रेणिको राजा । तस्मिन् काले तस्मिन् समये स्वामी सम-
वसतः । परिपत् निर्गता । तस्मिन् काले तस्मिन् समये चन्द्रो ज्योतिष्केन्द्रः
ज्योतीराजः चन्द्रावतंसके विमाने सभायां सुधर्मायां चन्द्रे सिंहासने चतसृभिः
सामानिकसाहस्रीभिः यावद् विहरति । इमं च खलु केवलकल्पं जम्बूद्वीपं
द्वीपं विपुलेन अवधिना आभोगयमानः २ पश्यति, दृष्ट्वा श्रमणं भगवन्तं
महावीरं यथा सूर्याभः आभियोग्यान् देवान् शब्दयित्वा यावत् सुरेन्द्रादिगम-
नयोग्यं कृत्वा तामाज्ञप्तिकां प्रत्यर्पयति । सुम्बरा घण्टा यावत् विकुर्वणा नगरं
(यानविमानं) योजनसहस्रविस्तीर्णम् अर्धत्रिपण्डियोजनसमुच्छ्रितम् , महेन्द्रध्वजः
पञ्चविंशतियोजनमुच्छ्रितः, शेषं यथा सूर्याभस्य यावदागतो नाट्यविधिस्तथैव
प्रतिगतः । भदन्त इति भगवान् गौतमः श्रमणं भगवन्तं महावीरं, पृच्छा,
कुटागारगाला, शरीरमनुप्रविष्टा, पूर्वभवः ।

एवं खलु गौतम ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये 'श्रावस्तिः' नाम
नगरी आसीत् , कोष्ठकं चैत्यम् । तत्र खलु श्रावस्त्यां नगर्याम् अङ्गतिर्नाम
गाथापतिरासीत् आढ्यो यावदपरिभूतः । ततः खलु सः अङ्गतिर्गाथापतिः
श्रावस्त्यां नगर्यां बहूनां नगरनिगम० यथा आनन्दः ॥ १ ॥

टीका— 'जडणं भंते' इत्यादि । तस्मिन् काले तस्मिन् समये ज्योति-
ष्केन्द्रः=ज्योतिर्देवाधिपतिः, ज्योतीराजः चन्द्रे सिंहासने चतसृभिः सामानिक-
साहस्रीभिः यावत् विहरति=अवतिष्ठते । इमं=प्रत्यक्षं खलु केवलकल्पं=सम्पूर्णं

। अथ पुष्पिता नामक तृतीय वर्ग ।

'जडणं भंते' इत्यादि—

जम्बू स्वामी पूछते हैं—

हे भदन्त ! मोक्षको प्राप्त श्रमण भगवान् महावीरने कल्पा-
वतंसिका नामक द्वितीय वर्ग स्वरूप उपाङ्गमें पूर्वोक्त भावोंका निरूपण

अथ पुष्पिता नामक तृतीय वर्ग

'जडणं भंते' इत्यादि

जम्बू स्वामी पूछे छे .-

हे भदन्त ! मोक्ष गयेत जेवा श्रमण भगवान् महावीरे कल्पावतसिका नामे
द्वितीय वर्ग स्वरूप उपाङ्गमा पूर्वोक्त भावानु निरूपण कर्तुं छे त्थार पछी तृतीय
वर्ग स्वरूप पुष्पिता नामका उपाङ्गमा भगवाने कथा कथा भाव निरूपण कर्त्ता छे ?

जम्बूद्वीपम्=एतन्नामकं द्वीपं=मध्यजम्बूद्वीपं त्रिपुलेन=विशालेन अवधिना=अवधिज्ञानेन आभोग्यमानः=अवलोकयन् श्रमणं भगवन्तं महावीरं पश्यति, दृष्ट्वा यथा सूर्याभः आभियोग्यान्=अभि=मनोऽनुकूलं युज्यन्ते=प्रेष्यकार्ये व्यापार्यन्ते इत्याभियोग्यास्तान् देवान् शब्दयित्वा=आहूय यावत् सुरेन्द्रादि गमनयोग्यं कृत्वा तामाज्ञप्तिकां प्रत्यर्पयन्ति । सुम्बरा घण्टा यावत् त्रिकुर्वणा नवरं (यानधिमानं)

किया है उसके बाद तृतीय वर्ग स्वरूप पुष्पिता नामक उपाङ्गमें भगवानने कौनसे भाव निरूपण किये हैं ?

श्री सुधर्मा स्वामी कहते हैं—

हे जम्बू ! मोक्षको प्राप्त श्रमण भगवान महावीरने तृतीय वर्ग स्वरूप पुष्पिता नामक उपाङ्गके दस अध्ययन निरूपण किये हैं । वे इस प्रकार हैं—(१) चन्द्र (२) सूर (३) शुक्र (४) बहुपुत्रिक (५) पूर्ण (६) मानभद्र (७) दत्त (८) शिव (९) वल्लेपक और (१०) अनादृत ये दस अध्ययन हैं ।

जम्बू स्वामी पूछते हैं—

हे भदन्त ! श्रमण भगवान महावीरने पुष्पिता नामक उपाङ्गमें दस अध्ययनोंका जो निरूपण किया है उन अध्ययनोंमें प्रथम अध्ययनके भावको भगवानने किस प्रकार वर्णन किया है ।

श्री सुधर्मा स्वामी कहते हैं—

हे जम्बू । उस काल उस समयमें राजगृह नामका नगर था । उसमें गुणशिलक नामका चैत्य था । उस नगरका राजा श्रेणिक था ।

श्री सुधर्मा स्वामी कहते हैं—

हे जम्बू ! मोक्षप्राप्त श्रेणिक भगवान महावीरने तृतीय वर्ग स्वरूप पुष्पिता नामके उपाङ्गका दस अध्ययन निरूपण किया है । वे इस प्रकार हैं— (१) चन्द्र (२) सूर (३) शुक्र (४) बहुपुत्रिक (५) पूर्ण (६) मानभद्र (७) दत्त (८) शिव (९) वल्लेपक और (१०) अनादृत ये दस अध्ययन हैं ।

जम्बू स्वामी पूछते हैं—

हे भदन्त ! श्रमण भगवान महावीरने पुष्पिता नामके उपाङ्गका दस अध्ययनोंका जो निरूपण किया है उन अध्ययनोंमें प्रथम अध्ययनका भावको भगवानने किस प्रकार वर्णन किया है ?

श्री सुधर्मा स्वामी कहते हैं—

हे जम्बू ! उस काल उस समयमें राजगृह नामके नगरके दक्षिण में गुणशिलक नामके चैत्यके दक्षिण में भगवान महावीरने प्रथम

योजनसहस्रविस्तीर्णं अर्धत्रिणष्टियोजनसमुच्छ्रितम्, महेन्द्रध्वजः पञ्चविंशतियोजन-
मुच्छ्रितः, शेषं यथा-सूर्याभदेवस्य गगनदन्तिके समगमनमभूत् तद्वत् यावत्-

उस काल उस समयमें भगवान् महावीर प्रभु वहाँ पधारे । जनस-
मुदायरूप परिपद् धर्मकथा सुननेके लिए निकली । उस काल उस
समयमें ज्योतिषकोके इन्द्र, ज्योतिषियोंके राजा चन्द्र, चन्द्रावतंसक
विमानके अन्दर सुधर्मा सभामें चन्द्र मिहासनपर बैठे हुए चार
हजार सामानिकोंके साथ यावत् विराजे हुए हैं ।

ज्योतिषियोंके इन्द्र चन्द्रमाने इम जम्बूद्वीप नामक सम्पूर्ण मध्य
जम्बू द्वीपको विशाल अवधिज्ञानसे अवलोकन करते हुए भगवान्
महावीरका मध्य जम्बू द्वीपमें देखा और उनका दर्शन करनेके लिए
जानेकी इच्छा की, और उन्होंने सूर्याभ देवके समान ही आभियोग्य
(भृग्य) देवोंको बुलाये और उनसे कहा-के देवानुप्रियो ! तुम मध्य
जम्बूद्वीपमें भगवानके समीप जाओ और वहाँ जाकर सर्वत्रक वात
आदिकी विकुर्वणा करके कूडा कचडा आदि साफ कर सुगन्ध द्रव्योसे
सुगंधित कर यावत् योजन परिमित भूमण्डलका सुरेन्द्र आदि देवोंके
जाने आने बैठने आदिके योग्य बनाकर खबर दो । वे आभियोग्य
देव उपरोक्त आज्ञानुसार भूमण्डल तैयार कर खबर देते हैं । फिर
चन्द्रदेवने पदानिसेनानायक देवको कहा कि-जाओ और सुखरा नामकी
घण्टासे बजाकर सब देवी देवोंको भगवानके पास वन्दनार्थ चलनेके
लिये सूचित करो । फिर उस देवने वैसे ही किया ।

त्या पधार्या जनसमुदायरूप पञ्चिह धर्मकथा अलगात्वा नीउणी ते कणे ते समये
न्ये तिष्ठेता इन्द्र, ज्योतिषियोना गन्त यन्द्र, चन्द्रावतसक विमानानी अहेः सुधर्मा
सभमा यन्द्रनिहासन पर गेवेला चार उक्त सामानिकोनी संथि गिगरेला छ
ते ज्योतिषोना इन्द्र यन्द्रमाने आ जम्बूद्वीप नामना सम्पूर्ण मध्य जम्बू-
द्वीपमा ज्येया अनं तमना दर्शन क्वा गाटे ज्वानी धरणा करी अने त्याहे तेमणे
सूर्याभदेवनी पठेज आभियोग्य (भृग्य) देवने गोलावीने कहुं—हे देवानुप्रियो ! तमे
मध्य जम्बूद्वीपमा लगावतनी पास ज्येया अने त्या नैर्ध सर्वत्रक भवन आहिनी
विष्टुर्ला करी करे पुजे वजेरे साहे करी सुगन्ध द्रव्योथी सुगंधित करी यावत्
योजनसहस्रविस्तीर्ण भूमण्डलने सुरेन्द्र आदि देवने आववा ज्वा असो, आदि माटे
योग्य बनावीने णणः आपो ते आभियोग्य देव उपरोक्त आज्ञा अनुसार तैयार
करी णणः हे छ पछी यन्द्रदेवे पदानिसेनाये ज्योतिषियोंके कहुं—हे देवो अने
सुखरा नामकी घण्टा बजावीने सर्व देव देवीको लससुणनी प्रसेवकना गाटे
आलका सु सुखरा देवे पछी वे देव ते प्रमाणे क्युं अहेः अहेः अहेः अहेः

चन्द्रोऽप्यागतः, नाट्यविधिस्तथैव प्रतिगतः । तदनु भदन्त ! इति संबोध्य भगवान् गौतमः श्रमणं भगवन्तं प्रति 'हे भदन्त ! इति प्राहेत्यादिना गौतमस्य पृच्छा । कूटाकारशाला=कूटस्येव-पर्वतशिखरस्येव आकारो यस्याः शालायाः सा कूटाकारशाला, एतद्दृष्टान्तेन सा दिव्याः देवर्द्धिः शरीरं=देवशरीरम् अनुप्रविष्टा=अन्तर्हिता । यथा कस्मिंश्चिदुत्सवे जनसमुदायवामयोग्यां शालां वृष्ट्यादिभयभीतो विशालो जनसमूहोऽनुप्रविशति तथैव वैक्रियक्रियया चन्द्रदेवेन विरचितो देवगणो नाट्यकार्यं दर्शयित्वा स्वकीयं चन्द्रदेवशरीरमेवानुप्रविष्टः ।

सूर्याभके वर्णनसे विशेष केवल इतना ही इसका यानविमान एक हजार योजन विस्तीर्ण था और साढे तीरमठ योजन ऊंचा था । तथा महेन्द्र ध्वज पचीस योजन ऊंचा था, और इसके अनिरिक्त सभी वर्णन सूर्याभके समान समझना चाहिये । जिस प्रकार सूर्याभ देव भगवानके समीप आये, नाट्यविधि की और वापस लौट गये, वैसे ही चन्द्र देवके विषयमें जानना चाहिये । उनके चले जानेके बाद गौतम स्वामी पूछते हैं—

हे भदन्त ! यह चन्द्रदेव अपनी देवशक्ति देवप्रभावसे सभी देवताओके द्वारा नाट्य दिखाकर फिर सबको अन्तर्हित कर केवल अकेला ही रह गया यह बड़े आश्चर्यकी बात है ।

भगवानने कहा—हे गौतम ! जैसे किसी उत्सवमें फैला हुआ जनसमूह वृष्टि आदि के भयसे किसी एक विशाल घरमें प्रवेश करता

सूर्याभना वर्णनथी विशेष देवण अटलु न छे दे आतो यानावमान अक डनर योजन विस्तारवाणु डलु अने साड त्रेमठ त्रेमठ छियु डतु तथा महेन्द्र ध्वज पचीस योजन छियु डतो अन्ते ते सिवाय अण्डु वर्णन - सूर्याभना गेवु न संभ्रणु नेधये

जे प्रकारे सूर्याभ देव भगवाननी पोसे आंव्या, नाट्यविधि करी तथा पाछा गया ओवी अरीते चन्द्रदेवना विषयमा न्णणु नेधये

तेमनी आत्थंथिया पछी गौतम स्वामी पूछे छे—

हे भदन्त ! आ चन्द्रदेव पोतानी देवशक्तितना प्रभावथी सर्वे देवताओ के नाटक हेमाडीने पछी अन्तर्हित करी देवण अभाव रही गया ओ मोटा आश्चर्यकी बात छे

भगवाने कह्यु—हे गौतम ! जेस डोठ उत्सवमा विपरिहा जनसमूह परसोड आदिना अणुथी डोठ ओके विशाल घरमा प्रवेश करे छे तेवी न रीते चन्द्रदेवे

हे भदन्त ! पूर्वभवः=चन्द्रम्य प्राक्तनं जन्म कीदृशम् आसीत् ?, इति गौतम-
पृच्छां श्रुत्वा भगवानाह-हे गौतम ! एवं=वक्ष्यमाणरीत्या खलु=निश्चयेन तस्मिन्
काले तस्मिन् समये 'श्रावस्ती' नाम नगर्यभवत्, कोष्टकं चैत्यम् । तत्र खलु
श्रावस्त्यां नगर्याम् अङ्गतिर्नाम गाथापतिरभवत्-आढ्यो=महान्, ऋद्ध्यादिपूर्णे

है उसी प्रकार चन्द्रदेव अपनी वैक्रिय शक्तिसे देवताओंकी रचना कर
नाटक दिखवा उनको समेट कर अपने ही देवशरीरमें प्रविष्ट कर लिया ।

फिर गौतम स्वामीने पूछा-हे भदन्त ! चन्द्रदेव पूर्वजन्ममें कौन थे?

गौतमका ऐसा प्रश्न सुनकर भगवानने कहा-हे गौतम ! उस
काल उस समयमें श्रावस्ती नामकी नगरी थी । उस नगरीमें कोष्टक
नामक चैत्य था । उस श्रावस्ती नगरीमें अङ्गति नामक एक गाथापति
था । वह गाथापति बहुत बड़ी ऋद्धि आदिसे युक्त था । कीर्तिसे
उज्ज्वल था । उसके पास बहुतसे घर, शय्या, आसन, गाड़ी, घोड़े
आदि थे । और वह बहुतसा धन तथा बहुत सोना चाँदी आदिका
लेन देन करता था । उसके घरमें खाने वाद बहुतसा अन्न पान आदि
खाने पीनेका सामान रहता था जो अनाथ-गरीब मनुष्योंको व पशु
पक्षियोंको दिया जाता था । उसके यहाँ दास दासियाँ बहुतसी थी
और बहुतसे गाय, भैंस, भेड़ें थी । तथा वह अपरिभूत-प्रभावशाली
था, यानी उसका कोई पराभव नहीं कर सकता था ।

पोतानी वैक्रिय शक्तिथी देवताओंकी रचना करी नाटक देखाडी तेओने सकेडी लक्ष
पोताना देवशरीरमा प्रवेश करी लीधे।

इरी गौतम स्वामीओ पूछ्यु-हे भदन्त ! चन्द्रदेव पूर्व जन्ममा कौण्डता ?

गौतमने ओयो प्रश्न साण्णी बागवाने क्यु-हे गौतम ! ते डाले ते समये
श्रावस्ती नामे नगरी इती ते नगरीमा कोष्ठक नामे चैत्य इतु ते श्रावस्ती नग-
रीमा अङ्गति नामे ओक गाथापति इने ते गाथापति णहु भोटी समृद्धिवाणे इते।
कीर्तिथी उज्ज्वल इते। तेनी पास धरु धरु, शय्या, आसन गाडी, घोडा आदि
इतां अने ते णहु धन, तथा णहु सोना चाँदी आदिनु लेणु देणु करतो इते। तेना
घरमां भावा पीवा अणु धरु अन्न पान अने धरु भावा पीवाने समान
रहेतो इते। अे अनाथ-गरीब मनुष्ये तथा पशु पक्षीओने भापी देवाते इते।
तेने त्या दास दासीओ धरु इता, तथा गाय-भैंस-भेडा पशु णहु इता वणी ते
अपरिभूत-प्रभावशाली इते अर्थात् तेने केई पराभाव करी शकते नहेते।

वा 'जाव' यावत्-^अ' आढ्यः, इत्यारभ्य 'अपरिभूए'-अपरिभूतः, इत्ये-
तत्पर्यन्तोक्तसमस्तविशेषणविशिष्ट इत्यर्थस्तेन-^{दि}त्ते, वित्थिन्न-विउल-भवन-
सयणा-SSसणजाण-वाहणाङ्णे, बहुधण-बहुजायरुव-रयए, आओग-पओग-
संपउने, विच्छड्डियविउलभत्तपाणे, बहु-दासी-दास-गो-महिस-गवेलयप्पभूए,
बहुजणस्स' इत्येषां समन्वयः कर्तव्यः । एतच्छाया च-^{दी}प्तो विस्तीर्ण-विपुल
-भवन-शयना-सन-यान-वाहनाSSकीर्णो बहुधन-बहुजातरूप-रजत आयोग-
प्रयोग संप्रयुक्तो विच्छर्दितप्रचुरभक्तपानो बहुदासी-दास-गो-महिष-गवेलक-
प्रभूतो बहुजनस्य' इति ।

तत्र दीप्तः=कीर्त्या उज्ज्वलः, विस्तीर्णानि=विस्तृतानि विपुलानि=बहूनि,
भवनानि=गेशानि, शयनानि=तल्पानि, गाडिडति "भाषा" प्रसिद्धानि आसनानि=
पीठकादीनि, यानानि=गाडीप्रभृतीनि,वाहनानि=अश्वादीनि, तैराकीर्णः=व्याप्तः समु-
पेतो वा । बहु=विपुलं धनं=मणिप्रभृति यस्य स बहुधनः, स चासौ,बहु=विपुल जात-
रूपं=सुवर्णं, रजत=रूप्यं यम्य स बहुजातरूपरजतश्च । आ=समन्ताद् योजनं=द्विगु-

'आढ्य, दीप्त, और अपरिभूत' इन तीन विशेषणोंसे अंगति गाथापतिके लिये दीपकका दृष्टान्त दिया जाता है, वह इस प्रकार है-जैसे दीपक, तेल, बत्ती और शिखा (लौ) से युक्त होकर वायुरहित स्थानमें सुरक्षित रहकर प्रकाशित होता है, वैसे ही अंगति गाथापति भी तेल और बत्तीके समान आढ्यता अर्थात् ऋद्धिसे, शिखाकी जगह उदारता गंभीरता आदिसे और दीप्तिसे युक्त होकर, वायु रहित स्थानके समान मर्यादाका पालन आदि रूप सदाचारसे तथा पराभ-वरहितपनसे संयुक्त होकर तेजस्विता धारण करता था । अतः आढ्यता दीप्ति और अपरिभूतता, इन तीनोंमें रहनेवाला हेतुताऽवच्छेदक धर्म

'आढ्य, दीप्त અને અપરિભૂત' એ ત્રણ વિશેષણોથી અંગતિ ગાથાપતિને માટે દીપકનું દૃષ્ટાન્ત કહે છે, તે આ પ્રમાણે -જેમ દીપક, તેલ, દીવેટ અને શિખા (ઝાળ) થી યુક્ત થઈને વાયુરહિત સ્થાનમાં સુરક્ષિત રહી પ્રકાશિત થાય છે, તેમ અંગતિ ગાથાપતિ પણ તેલ અને દીવેટની પેઠે આધ્યતા અર્થાત્ ઋદ્ધિથી, શિખાની જગ્યાએ ઉદારતા ગંભીરતા આદિથી અને દીપ્તિથી યુક્ત થઈને વાયુરહિત સ્થાનની સમાન મર્યાદાના પાલન આદિ રૂપ સદાચારથી તથા પરાભવરહિત પણાથી સંયુક્ત થઈને તેજસ્વિતા ધારણ કરતો હતો. એ રીતે આધ્યતા દીપ્તિ અને અપરિભૂતતા, એ ત્રણેમાં રહેલો છેતુતાવચ્છેદક ધર્મ એક છે, તે કારણથી તૃણારણિમણિ ન્યાયે

णादिला भार्थे रूप्यादीनामधमर्णादिभ्यो नियोजनमायोगस्तस्य, प्र=प्रकर्षेण योजनम्=उपायचिन्तनं प्रयोगः, यद्वा-आयोगेन द्विगुणादिलिप्सया प्रयोगः=अधमर्णानां सविधे द्रव्यस्य वितरणमायोगप्रयोगः, स संप्रयुक्तः=प्रवर्तितो येन, तस्मिन् वा संप्रयुक्तः=संलग्नो यः स आयोगप्रयोगसंप्रयुक्तः=नीत्या द्रव्योपार्जनप्रवृत्त इत्यर्थः । भक्त च पानं च भक्तपाने, विपुले च ते भक्तपाने विपुलभक्तपाने, वि=विशेषेण छर्दिते=भोजनावशिष्टे भक्तपाने यस्य स विच्छर्दितविपुलभक्तपानः, दीनेभ्यो दीयमानविपुलभक्तपान इत्यर्थः । दास्यश्च दासाश्च शावश्च महिषाश्च गवेळकाः=उरभ्राश्चेति दासीदामगोमहिषगवेळकाः, बहवश्च ते दासीदासगोमहिषगवेळका इति बहुदासीदामगोमहिषगवेळकास्ते प्रभूताः=प्रचुरा यस्य स बहुदासीदासगोमहिषगवेळकप्रभूतः, अत्र गत्रादिपदं स्त्रीगत्रादीनामप्युपलक्षकं, यद्वा-गोपदस्य=स्त्रीपुंगवयोरविशेषेण वाचकत्वादविरोध एव, महिष-गवेळक-शब्दयोश्च 'पुमान स्त्रिया' इत्येकशेषान्महिष्यादीनामपि ग्रहणम् । बहुजनस्येति जातिविवक्षयैकवचनं, संबन्ध सामान्ये च पष्ठी, तेन 'बहुजनै'-रित्यर्थो बोद्धव्यः, अत्र 'अपी' त्यस्ययोजनात् बहुजनैरपीति तत्त्वम्, अपरिभूतः=तत्परामवरहितः, यद्वा-क्त प्रत्ययार्थस्याऽविवक्षितत्वादपरिभवनीयः-बहुजनैरपि पामचित्तुमशक्य इत्यर्थः । एषूक्तविशेषणेषु "अहू, दित्ते अपरिभूए" एभिस्त्रिभिर्विशेषणैरङ्गतिगाथापतौ प्रदीपदृष्टान्तोऽभिप्रेतस्तथाहि-यथा प्रदीपस्तैलवर्तिभ्यां शिखया च संपन्नो निर्वाते स्थाने सुरक्षितः प्रकाशमासादयति, एवमयमपि तैलवर्तिस्थानीयया आढ्यताऽपरपर्यायद्वर्चा शिखास्थानीययोदारता-गम्भीरतादिरूपया दीप्त्या च संपन्नो निर्वातस्थानस्थानीयया सदाचारमर्यादा-

एक ही है, इस कारण तृणारणिमणि-न्यायसे प्रत्यक्ष, अनुमान और आगम शब्दोंमें प्रमाणताके समान प्रत्येक (सिर्फ आढ्यता, सिर्फ दीप्ति, या सिर्फ अपरिभूतता) को हेतु नहीं मानना चाहिए ।

जिस प्रकार आनन्द गाथापति धन धान्य आदिसे युक्त चाण्ड्य ग्राममें निवास करता था । उसी प्रकार अङ्गनि गाथापति भी श्रावस्ती नगरीमें निवास करता था ।

प्रत्यक्ष, अनुमान अथवा आगम शब्दोंमें प्रमाणताकी परे प्रत्येकने (मात्र आढ्यता, मात्र दीप्ति, अथवा मात्र अपरिभूतता-अथवा अशक्यता) हेतु मानना नहीं

ये प्रकार आनन्द गाथापति धनधान्य आदियों युक्त चाण्ड्य ग्राममें निवास करता हुआ वहीं-ही अङ्गनि गाथापति पशु श्रावस्ती नगरीमें निवास करता हुआ

पालनादिरूपयोऽपरिभूततया च संपन्नः समुज्ज्वलति-जगत्प्रसिद्धो भवतीति हेतुताऽवच्छेदकधर्मस्याऽऽढ्यता - दीप्त्यपरिभूततैतत्रितयसमुदायनिष्ठस्यैकधर्मस्य संज्ञान्न तृणारणिमणि-न्यायेन प्रत्यक्षानुमानाऽऽगमशब्देषु प्रत्येकं प्रमाजनकत्वमिव प्रत्येकमाढ्यतादीनां त्रयाणां समुज्ज्वलनहेतुता, किन्तु प्रकाशं प्रति तैलवत्यादिसमुदायवत् समुज्ज्वलनं प्रति आढ्यतादिसमुदायस्यैव हेतुतेति बोध्यम् ।

ततः खलु सोऽङ्गतिर्गाथापतिः श्रावस्त्यां नगर्यां यथा वाणिज्यग्रामे आनन्दो नाम गाथापतिः परिवसति तथैवायमपीत्यर्थः ।

तदेव स्पष्टयति-“नगर-निगम-राज-सर-तलवर-माडंविद्य-कोडुंविद्य-इन्ध-सेष्टि-सेणावृद्ध-सन्धवाहाणं बहुसु कञ्जसु य कारणेषु य मन्त्रेषु य कुडुंबेषु य गुज्जेषु य रहस्येषु य निच्छण्डेषु य व्यवहारे सु य आपुच्छणिज्जे पाडपुच्छणिज्जे सगरम वि य णं कुडुंबस्स मेढी प्रमाणं आहारे, आलम्बणं, चक्षुः, मेढीभूए जाव सन्धकज्जवड्ढावए याचि होत्था ” एतच्छाया-नगर-निगम-राजे-श्वान्तलवर-माण्डिक-कोटुम्बिकेभ्यः श्रेष्टि-सेनापति-सार्थवाहानां बहुषु कार्येषु च कारणेषु च मन्त्रेषु च कुटुम्बेषु च गुह्येषु च रहस्येषु च निश्चयेषु च व्यवहारेषु च आपुच्छनीयः प्रतिपुच्छनीयः, स्वस्यापि च खलु कुटुम्बस्य मेधिः, प्रमाणम्, आधारः, आलम्बनं, चक्षुः, मेधिभूतः, यावत् सर्वकार्यवर्द्धकं चापि अभवत् । तत्र-नगरम्=

“पुण्यपापक्रियाविज्ञैः, दयादानप्रवर्तकैः ।

कलाकलापकुशलैः, सर्ववर्णैः समाकुलम् ॥

भाषाभिर्विधाभिश्च, युक्तं नगरमुच्यते ।

वह अङ्गति गाथापति राजा ईश्वर यावत् सार्थवाहोके द्वारा बहुतसे कार्योंमें, कारणो (उपायो) में, मन्त्र (सलाह) में, कुटुम्बोमें, गुह्योमें, रहस्योमें, निश्चयोमें और व्यवहारोमें एक बार पूछा जाता था । और वह अपने कुटुम्बका भी मेधि, प्रमाण, आधार आलम्बन चक्षु, मेढीभूत यावत् समस्त कार्योंको बढ़ाने वाला था । यहाँ यावत्

ये अङ्गति गाथापतिने, राज, ईश्वर यावत् सार्थवाहो तरुथी घण्टा कार्योमा, करणो (उपायो) मा, मन्त्र (सलाह-)मा, कुटुम्बोमा, गुह्योमा, रहस्योमा, निश्चयोमा अने व्यवहारोमा अेक वार पूछवामा यावत् इतु, वारवार पण्य पूछवामा यावत् इतु अने ते पोताना कुटुम्बोमा पण्य मेधि, प्रमाण, आधार, आलम्बन, चक्षु, मेढीभूत, यावत् अथा कार्योने आगण बधारनारो इतो.

निगमो=व्यापारप्रधानस्थानम्, ईश्वराः=ऐश्वर्यसम्पन्ना, तलवराः=संतुष्ट-
भूपालदत्तपट्टवन्धपरिभूषितराजकल्पाः माण्डविकाः = छिन्नभिन्नजनाश्रयविशेषो
मण्डवस्तत्राधिकृताः, 'माडम्बिकाः' इति छायापक्षे तु ग्रामपञ्चशतीपतय
इत्यर्थः, यद्वा-सार्धक्रोगद्वयपरिमितप्रान्तरैर्विच्छिद्य विच्छिद्य स्थितानां ग्रामाणा-
मधिपतयः, कौटुम्बिकाः=बहुकुटुम्बप्रतिपालकाः, इभ्याः=इभो=इस्ती तत्प्रमाणं
द्रव्यमर्हन्तीति, तथा ते च-जघन्य-मध्यमो-त्कृष्टभेदात् त्रिपकाराः तत्र इस्ति-

शब्दसे राजा, ईश्वर, तलवर, माण्डविक, कौटुम्बिक, इभ्य, श्रेष्ठी
सेनापति और सार्धवाहका ग्रहण होता हैं। माण्डलिक नरेशको राजा,
और ऐश्वर्य वालोको ईश्वर कहते हैं। राजा संतुष्ट होकर जिन्हें पट्टवन्ध
देता है, वे राजाके समान पट्टवन्धसे विभूषित लोग तलवर कहलाते
हैं। जो वस्नी छिन्न भिन्न हो उसे मण्डव और उसके अधिकारीको
माण्डविक कहते हैं। 'माडंघिय' की छाया यदि 'माडम्बिक' की जाय
तो माडम्बिकका अर्थ 'पाँच सौ गाँवोंका स्वामी' होता है। अथवा
ढाई ढाई कोसकि दूरीपर जो अलग गाँव वसे हो, उनके स्वामीको
'माडम्बिक' कहते हैं। जो कुटुम्बका पालन पोषण करते हैं, या
जिनके द्वारा बहुतसे कुटुम्बोंका पालन होता है, उन्हें 'कौटुम्बिक'
कहते हैं। इभका अर्थ है हाथी, और हाथीके बराबर द्रव्य जिसके
पास हो उसे 'इभ्य' कहते हैं। जघन्य मध्यम और उत्कृष्टके भेदसे

अर्ही 'जात्र' शब्दधी राज, ईश्वर, तलवर, माडविक अथवा माडणिक,
कौटुम्बिक, इभ्य, श्रेष्ठी, सेनापति अने सार्धवाह, अटला शब्दोनु अडल्य थाय छे
माण्डलिक नरेशने राज अने ऐश्वर्यवाणाओने ईश्वर कडे छे. राज संतुष्ट धर्धने
नेने पट्टबंध आवे छे ते राजओना ओवा पट्टबंधधी-विभूषित होके तलवर कडे-
वाय छे नेनी वसती छिन्न भिन्न होय तेने मंडव अने तेना अधिकारने 'माण्डविक'
कडे छे. 'माडंघिय' नी छाया ने 'माडम्बिक' करवाभा आवे तो 'माडम्बिक'
ने 'पाँचसौ गाँवानी धणी' ओवे. अर्थ थाय छे अथवा अही अही गाँवने
अंतरे जुदा जुदा गाँवो वस्थां होय तेना धणीने 'माडम्बिक' कडे छे ने कुटु-
म्बानु पालन-पोषण करे छे अथवा नेनी द्वारा धणी कुटुम्बेनु पालन थाय छे, तेने
कौटुम्बिक कडे छे 'इभ' ने अर्थ 'हाथी' छे, अने हाथीना अटलुं द्रव्य नेनी
पास होय, तेने 'इभ्य' कडे छे. जघन्य, मध्यम अने उत्कृष्टना भेद करीने इभ्य

परिमितमणि-मुक्ता-प्रवाल-सुवर्ण-रजतादिद्रव्यराशिस्वामिनो जघन्याः, हस्ति-परिमितवज्र-मणि-माणिक्य - राशिस्वामिनो मध्यमाः, हस्तिपरिमितकेवल-वज्रराशिस्वामिन उत्कृष्टाः, श्रेष्ठिनो=लक्ष्मीकृपाकटाक्षप्रत्यक्षलक्ष्यमाण-द्रविणलक्ष-लक्षणविलक्षणद्विरण्यपट्टसमलङ्कृतमूर्धानो नगरप्रधानव्यवहर्तारः, सेनापतयः=चतुरङ्गसेनानायकाः, सार्थवाहाः=गणिम-धरिम-मेय-परिच्छेद्य-रूप-क्रेयदिक्रे-वस्तुजातमादाय लाभेच्छया देशान्तराणि व्रजतां सार्थं वाहयन्ति=योगक्षेमा-भ्यां परिपालयन्ति, दीनजनोपकाराय मूलधनं दत्त्वा तान समर्द्धयन्तीति तथा,

इभ्य तीन प्रकारके हैं। जो हाथीके बराबर मणि, मुक्ता, प्रवाल (मूंगा) सोना, चाँदी आदि द्रव्य-राशिके स्वामी हों वे जघन्य इभ्य हैं। जो हाथीके बराबर हीरा और माणिककी राशिके स्वामी हों वे मध्यम इभ्य हैं। जो हाथीके बराबर केवल हीरोंकी राशिके स्वामी हों वे उत्कृष्ट इभ्य हैं। लक्ष्मीकी जिसपर पूरी-२ कृपा हो और उस कृपा-कोरके कारण जिनके लाखोंके खजाने हो, तथा जिनके सिरपर उन्हींको सूचित करने वाले चान्दीका विलक्षण पट्ट शोभायमान हो रहा हो, जो नगरके प्रधान व्यापारी हों, उन्हें श्रेष्ठी कहते हैं। चतुरङ्ग सेनाके स्वामीको सेनापति कहते हैं। जो गणिम, धरिम, मेय और परिच्छेद्य रूप खरीदने-बेचनेके योग्य वस्तुओंको लेकर नफाके लिये देशान्तर जाने वालेको साथ ले जाते हैं, योग (नयी वस्तुकी प्राप्ति) और क्षेम (प्राप्त वस्तुकी रक्षा) के द्वारा उनका पालन करते हैं, गरीबोंकी भलाईके लिये उन्हें पूँजी देकर व्यापार द्वारा धनवान बनाते हैं उन्हें सार्थवाह

प्रश्न प्रकारना छे हाथीनी अराअर भण्डि, मोनी, परवाणा, सेनु चाँदी आदि द्रव्यना ढगलाना जे स्वामी होय तेओ जघन्य इभ्य छे. हाथीनी अराअर हीरा अने माण्डि-कना ढगलाना जे स्वामी होय तेओ मध्यम इभ्य छे. हाथीनी अराअर केवल हीराना ढगलाना जे स्वामी होय तेओ उत्कृष्ट इभ्य छे जेअनी उपर लक्ष्मीनी पूरेपूरी कृपा होय अने ओ कृपाने कारणे जेअनी पास लागेअना अणना होय तथा जेअने साथे तेअनु सखन कराने आदीने विषक्षण पट्ट शोभायमान थअ रह्यो होय, जे नगरना सुभ्य व्यापारी होय, तेने 'श्रेष्ठी' कहे छे अतुरंग सेनाने स्वामीने 'सेनापति' कहे छे. गणिम, धरिम, मेय अने परिच्छेद्य रूप अरीदवा-बेचवा योग्य वस्तुओ लधने बक्षने माटे देशांतर जनाराओने जे साथे लग्न जय छे. योग (नयी वस्तुनी प्राप्ति) अने क्षेम (प्राप्त वस्तुनु रक्षणे) नी द्वारा तेअनु पालन करे छे, गरीबाना भला माटे तेअने पूँजी आपीने बेपार द्वारा धनवान अनावे छे. तेअने 'सार्थवाह' कहे छे, ओक,

त्र गणिमम्=एक-द्वि-त्रि-चतुरादिसंख्याक्रमेण यदीयते, यथा-नालिकेरं-
-पूगीफल-कदलीफलादिकम्, धरिमं=तुलाक्षत्रेणोत्तोल्य यदीयते, यथा-त्रीहि-
-यव-लवण-सितादि, मेयं=गराव-लघुभाण्डादिनोत्तोल्य यदीयते, यथा-दूग्ध-
-घृत-तैल-प्रभृति, परिच्छेद्यं च प्रत्यक्षतो निकषादिपरीक्षया यदीयते, यथा-
-मणि-मुक्ता-प्रवाला-ऽऽभरणादि ।

‘सार्थवाहाना’ मित्यत्र ‘कृत्यानां कर्तरि वे’ ति कर्तरि षष्ठी, अत्रे-
-तनस्य ‘आप्रच्छनीयः, परिप्रच्छनीयः’ इत्यनीयर प्रत्ययस्य योगात्, सार्थ-
-वाहैरित्यपि तृतीयान्तेन कर्त्रा व्याख्येयम् ।

बहुषु=पचुरेषु, अस्य सर्वैरेव सप्तम्यन्तैः सम्बन्धः । कार्येषु=कर्तव्येषु
-प्रयोजनेष्विति यावत्, कारणेषु=कार्यजातसम्पादकहेतुषु च, मन्त्रेषु=कर्तव्य-
-निश्चयार्थं गुप्तविचारेषु । कुटुम्बेषु=वान्धवेषु, गुह्येषु=लज्जया गोपनीयेषु व्यव-

करते हैं । एक, दो, तीन, चार आदि संख्याके हिसाबसे जिनका लेन
-देन होता है, ‘गणिम’ कहते हैं, जैसे-नारियल, सुपारी, केला आदि ।
-तराजू पर तोलकर जिसका लेन देन हो, उसे ‘धरिम’ कहते हैं, जैसे
-धान, जौ, नमक, शकर आदि । सरावा छोटे २ वर्तन आदिसे नाप
-कर जिसका लेन देन होता है, उसे मेय कहते हैं, जैसे-दूध, घी,
-तैल आदि । सामने कसौटी आदि पर परीक्षा करके जिसका लेन देन
-होता है, उसे परिच्छेद्य कहते हैं । जैसे मणि, मोती, मूंगा, गहना आदि ।

वहाँ अङ्गति गाथापति, इन राजा, ईश्वर आदिके द्वारा बहुतसे
-कार्योंमें कार्यको सिद्ध करनेके-उपायोंमें, कर्तव्यको निश्चित करनेके-गुप्त
-विचारोंमें, वान्धवोंमें, लज्जाके-कारण गुप्त रखे जाने वाले विषयोंमें,

ये, द्रव्य, चार आदि संख्याना हिसाबे लेनी देख-देख थाय-छे तेने गणिम कहे छे,
-जेमके नाणीअरे, सोपारी, धरियादि, वान्धवाथी तोलीने लेनी देख-देख करवाभा आवे
-छे, तेने धरिम कहे छे, जेमके धान्य, यव, भीहु, साकर-धत्यादि, पाली के पवाछे
-जेवा मापना वासणुथी भाथीने लेनी देख-देख करवाभा आवे छे तेने मेय कहे छे,
-जेमके दूध, घी, तैल वगेरे, कसौटी आदिथी परीक्षा करीने लेनी देख-देख करवाभा
-आवे छे तेने परिच्छेद्य कहे छे, जेमके मणि, मोती, परवाणा, धरेलु वगेरे

अंगति गाथापतिने, अ राजा, ईश्वर आदि तरङ्गथी धरु कार्येभां कार्येनि सिद्ध
-करवा मोटेना, उभायेभा, कर्तव्यने निश्चित करवाना गुप्त विचारोंभां आंधवोंभा,
-लज्जाने, कारणे गुप्त रखे जाये भां आवता विषयोंभां, जोडातभां करवाभा आवता इर्थोंभा,

हारेषु, रहस्येषु=रहसि=एकान्ते-भवा रहस्यास्तेषु प्रच्छन्नव्यवहारेष्विति यावत् ।
 निश्चयेषु=पूर्णनिर्णयेषु, व्यवहारेषु=व्यवहारप्रणव्येषु, यद्वा-बान्धवादि समाचरि-
 तलोकविपरीतादिक्रियाप्रायश्चित्तेषु, विषयसप्तम्या 'एतेषु विषये' इत्यर्थः ।
 आ=ईषत् सकृदिति यावत्, प्रच्छनीयः=प्रष्टव्यः, परि=सर्वतोभावेन असकृदिति
 यावत् प्रच्छनीयः=प्रष्टव्यः, स्वस्यापि=स्वकीयस्यापि, च-कारो विषयान्तरप-
 रिग्रहार्थः । खलु=निश्चयेन कुटुम्बस्य=परिवारजनस्य मेधिः=व्रीहि-यव-गोधू-
 मादिकणमर्दनार्थं खले निखाय-स्थापितो दार्वादिमयः पशुवन्धनस्तम्भः, यत्र
 पङ्क्तिशोबद्धा बलीवर्दादयो व्रीह्यादिकणमर्दनाय परितो भ्राम्यन्ति तत्साह-

एकान्तमें होने वाले कार्योंमें, पूर्ण निश्चयोमें, व्यवहारके लिये पूछे जाने
 योग्य कार्योंमें, अथवा बान्धवों द्वारा किये गये लोकाचारसे विरुद्ध
 कार्योंके प्रायश्चित्तो (दंडो) में, अर्थात् उल्लिखित सब मामलोंमें एकबार
 और बार-बार पूछा जाता था-इन सब बातोंमें राजा आदि ससस्त
 बडे बडे आदमी अङ्गतिकी सम्मति लेते थे ।

इन सब विशेषणोंसे सूत्रकारने यह प्रकट किया है कि अंगति
 गाथापतिको सभी लोग मानते थे, वह अत्यन्त विश्वासपात्र था,
 विशालबुद्धिशाली था और सबको उचित सम्मति देता था ।

धान जौ गेहूँ आदिकी दाय करने (लाटा-दाने-निकालने) के
 लिये गढा खोदकर एक लकड़ी या बाँसका स्तम्भ गाड़ा जाता है,
 उसके चारों ओर एक पंक्तिमें लांक (धान) को कुचलनेके लिये बैल
 घूमते हैं उस स्तम्भको मेघि-मेढी-कहते हैं । बैल आदि उस समय

पूर्ण - निश्चयोभा, व्यवहारके भाटे पूछवा योग्य कार्योंभा अथवा बांधवों तरक्षणी करणामां
 आवता, लोकाचारणी विपरीत कार्योंभा प्रायश्चित्तो (दंडो) भा अर्थात् एषवा गंधां
 प्रकरणेभा अथवा तथा वारवार पूछवामा आवतु इतु-अे गंधी वातोभा, खल
 वगेरे मोटा मोटा भाषुसो पणु अगतिनी सम्मति लेता इता

अे गंधा विशेषणोवडे सूत्रकारे अेभ प्रकट कर्तुं छे, केहअगलि गाथापतिने
 गंधा लोको मानता इता, के अत्यन्त विश्वासपात्र इतो, विशाल बुद्धिशी, युक्त इतो
 अने गंधाने वाणणीज सलाह-सम्मति द्यापतो इतो

धान्य, जव, अथवा वगेरेमे कणसलाभाशी छूटा करवाने अेक जाडा जोडी तेभा
 अेक लाकडाने भाषो-पोडवाम आये छे अने अथी तेनी यारे गावतुअे अेक साथे
 कणसलाने क्यरवा भाटे गणद वगेरे क्ष्या करे छे, अे अेभावाणे मेधि कडि छे, गणद

श्यादयमपि मेधिः, अर्थादेतद्वलम्बनेनैव सर्वस्यापि कुटुम्बस्यायस्थानमिति । कुटुम्बस्यापीत्यत्रापिशब्दबलात् केवलं कुटुम्बस्यैव, अपितु सर्वस्यापि जनस्येत्यवधेयम् । प्रमाणं=प्रत्यक्षादिप्रमाणवद्देशोपादेयप्रवृत्तिनिवृत्तिरूपतया संशयराहित्येन पदार्थसार्थपरिच्छेदकः, आधारः=आधारवत् सर्वेषामाश्रयभूतः, आलम्बनं=

उसीपर निर्भर रहते हैं । यदि वह मन्मथ न हो तो कोई बैल कहीं चला जाय, कोई कहीं-सब व्यवस्था भङ्ग हो जाय । गाथापति अङ्गति अपने कुटुम्बकी मेधि-मेढीके समान थे, अर्थात् कुटुम्ब उन्हीके सहारे था-वेही उसके व्यवस्थापक थे । मूल-पाठमें 'वि' (अपि) शब्द है, उसका तात्पर्य यह है कि वे केवल कुटुम्बके ही आश्रय नहीं थे, अपितु समस्त लोगोंके भी आश्रय थे, जैसा की उपर बताया जा चुका है । आगे जहाँ-जहाँ 'वि' (अपि-भी) आया है वहाँ सर्वत्र यही तात्पर्य समझना चाहिए । अङ्गति गाथापति अपने कुटुम्बके भी प्रमाण थे । अर्थात् जैसे प्रत्यक्ष अनुमान आदि प्रमाण सदेह आदिको दूर करके हेय (त्याग करने योग्य) पदार्थोंसे निवृत्ति और उपादेय (ग्रहण करने योग्य) पदार्थोंको जनते हैं, उसी प्रकार अङ्गति भी अपने कुटुम्बियोंको बताते थे कि-अमुक कार्य करने योग्य है, अमुक कार्य करने योग्य नहीं है, यह पदार्थ ग्राह्य है, यह आग्राह्य है ।

वगेरे ये वधते ये भालाने आधारेन इयां करे छे. ले ये भालो न होय तो अेक गणद अेक गान्धुअे आत्थे नय अने भीले भीलु गान्धुअे इरे, अे रीते व्यवस्था लग थई नय. गाथापति अगति पोताना कुटुम्बानी मेधि-मध्यस्थ स्तंभ जेवो हुतो, अर्थात् कुटुम्ब अेने आधारे हुतु, तेन कुटुम्बने व्यवस्थापक हुतो. भूण पाठमां 'वि' (अपि) शब्द छे, तात्पर्य अे छे छे ते डेयण कुटुम्बनान् आधारे इय नहोतो, परंतु गधा बोडोना पणु आश्रय उप हुतो, छे जेभे उपर दर्शाववामा आवेल छे आगण पणु नयां नया 'वि' अपि-पद) आण्युं छे, त्या त्या गधे अेन तात्पर्य समभव नुं छे.

अंगति गाथापति पोताना कुटुम्बमा पणु प्रमाण इय हुतो, अर्थात् जेभे प्रत्यक्ष अनुमान आदि प्रमाण, सदेह आदिने दूर करीने हेय (त्यागवा योग्य) पदार्थोंकी निवृत्ति अंत उपादेय (ग्रहण करवा योग्य) पदार्थोंमा प्रवृत्ति करावता ते पदार्थोंने दर्शावे छे, तेन अगति पणु पोताना कुटुम्बियोंने बतावतो हुतो छे. अमुक कार्य करवुं योग्य छे, अमुक कार्य करवुं योग्य नहीं, अमुक पदार्थ ग्राह्य छे, - मुक पदार्थ अग्राह्य छे, इत्यादि

रज्जुस्तम्भादिवद्विपत्कूपपतञ्जनोद्धारकतयाऽवलम्बनम्, आधारो नाम-यमधिष्ठाय जन उन्नतिं गच्छति, स्वरूपाऽवस्थो वा वर्तते सः, यदवलम्बनेन च विपदो विनिवर्तन्ते तदालम्बनमिति तयोर्भेदः, चक्षुः=नेत्रं तद्वत् सर्वेषां सकलार्थप्रदर्शकः, यदुक्तं-मेधिः, प्रमाणम्, आधारः, आलम्बनं, चक्षुरिति । तदेव स्पष्टप्रतिपत्तये औपम्यवाचिभूतशब्दसम्मेलनेन पुनरावर्तयति-मेधीभूत इत्यादि, यावदिति यावच्छब्देन 'प्रमाणभूत, आधारभूत, आलम्बनभूत' इत्येषां संग्रहो बोध्यस्तत्र-प्रमाणभूतः, आधारभूतः, आलम्बनभूतः, चक्षुर्भूतः, इतिच्छाया, पौनरुक्त्यवारणं तु मेधिरर्थान्मेधीभूतो मेधिसदृश इति यावत् । प्रमाणमर्थात् प्रमाणभूतः प्रमाण' सदृश इति यावत् । आधारोऽर्थादाधारभूत आधारसदृश इति यावत् । आलम्बनसदृश इति यावत् । चक्षुरर्थाच्चक्षुर्भूतश्चक्षुःसदृश इति यावत् इति रीत्या

तथा अङ्गति गाथापनि अपने कुटुम्बके भी आधार (आश्रय) थे, तथा आलम्बन थे, अर्थात् विपत्तिमें पडनेवाले मनुष्यको रस्सी या स्तम्भके समान सहारे थे ।

अङ्गति अपने कुटुम्बके चक्षु थे, अर्थात् जैसे चक्षु मार्गको प्रकाशित करना है वैसे ही अङ्गति कुटुम्बियोंके भी समस्त अर्थोंके प्रदर्शक (सन्मार्गदर्शक) थे ।

दूसरी वार मेधिभूत आदि विशेषण स्पष्ट बोधके लिये हैं । 'जाव' शब्दसे प्रमाणभूत, आधारभूत, आलम्बनभूत, चक्षुर्भूत, इनका संग्रह होता है । यहाँ स्पष्टनाके लिये 'भूत' शब्द अधिक दिया है, इसका तात्पर्य यह है कि अङ्गति गाथापति मेढी अर्थात् मेढीके सदृश थे, प्रमाण अर्थात् प्रमाणके सदृश थे, आधार अर्थात् आधारके सदृश

अङ्गति पोताना कुटुम्बने पणु आधार (आश्रय) हुतो, तथा आलम्बन हुतो, अर्थात् विपत्तिमां पडला मनुष्यने दोरडुं अथवा थाभलाना जेवा आधार रूप हुतो

अङ्गति पोताना कुटुम्बना चक्षु रूप हुतो, अर्थात् जेम चक्षु मार्गने प्रकाशित करे छे तेम अङ्गति स्वकुटुम्बिगओना पणु यथा अर्थाना प्रकाशन (सन्मार्गदर्शक) हुतो

भीलवार-मेधिभूत आदि विशेषण स्पष्ट बोधने भाटे आपेला छे 'जाव' शब्दही प्रमाणभूत, आधारभूत, आलम्बनभूत, चक्षुर्भूत, ओ यधानो सश्राम थाय छे, अही स्पष्टताने भाटे 'भूत' शब्द वधादे आये छे ओनु तात्पर्य ओ छे के अङ्गति-मेधि अर्थात् मेधिनी समान हुतो; प्रमाण अर्थात् प्रमाणनी समान हुतो, आधार

ममन्वयाद्भवतीति मृक्षमचक्षुपाऽवेक्षणीयम्, च=चकारो किञ्चत्यर्थे सर्वकार्यवर्धकः
=सर्वेषां कार्याणां सम्पादकोऽपि, (एतादृशोऽङ्गतिर्गाथापतिः) अभवत्=आसीत् ॥१॥

मूलम्—तेणं कालेणं २ पासेणं अरहा पुरिसा दाणीए आदि-
गरे जहां महावीरो, नवुस्सेहे सोलसेहिं समणसाहस्सीहिं, अट्ट-
तीसा जाव कोट्टए समोसढे, परिसा निग्गया !

तए णं से अंगई गाहावई इमीसे कहाए लद्धट्टे समाणे
हट्टे जहा कत्तिओ सेट्टी तथा निग्गच्छइ जाव पज्जुवासइ,
धम्मं सोच्चा निसम्म० जं नवरं देवाणुप्पिया ! जेट्टपुत्ते कुडुंवे
ठावेमि, तए णं अहं देवाणुप्पियाणं जाव पव्वयामि, जहा
गंगदत्तो तथा पव्वइए जाव गुत्तवंभयारी । तए णं से अंगई
अणगारे पासस्स अरहओ तहारूवाणं थेराणं अंतिए सामाइय-
माइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ, अहिज्जिता वड्ढहिं चउत्थ
जाव भावेमाणे वड्ढइं वासाइं सामन्नपरियागं पाउणइ, पाउणित्ता
अद्धमासियाए संलेहणाए तीसं भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता
विराहियसामन्ने कालमासे कालं किच्चा चंदवडिंसए विमाणे
उव्वायसभाए देवसयणिज्जंसि देवदूसंतरिए चंदे जोइंसिदत्ताए
उववन्ने ।

तए णं से चंदे जोइंसिदे जोइसराया अहुणोववन्ने स-
माणे पंच विहाए पज्जत्तीए पज्जत्तिभावं गच्छइ, अंतजहा—आहार-
पज्जत्तीए सरीरपज्जत्तीए इंदियपज्जत्तीए सासोसासंपज्जत्तीए भासा
मणपज्जत्तीए ।

ये, आलम्बनके सदृश थे, चक्षु अर्थात् चक्षुके सदृश थे । अङ्गति
समस्त कार्यके सम्पादन करनेवाले भी थे ॥१॥

अर्थात् आधारनी समान इती, आलणन अर्थात् आलणननी समान इती अने
अक्षु अर्थात् अक्षुनी समान इती अंगति गथा कथेरेनु न पादन इन्न रेण भणु इती (१)

चंद्रस्स णं भंते ! जोइसिंदस्स जोइसरन्नो केवइयं कालं
ठिई पन्नत्ता ? गोयमा ! पलिओवमं वाससयसहस्समव्भहियं ।
एवं खलु गोयमा ! चंद्रस्स जाव जोइसरन्नो सा दिव्वा
देविट्ठी० । चंदेणं भंते ! जोइसिंदे जोइसराया ताओ देव-
लोगाओ आउक्खएणं ३ चइत्ता कहिं गच्छिहिइ २ ? गोयमा !
महाविदेहे वासे सिज्जिहिइ ५ एवं खलु जम्बू ! समणेणं०
निक्खेवओ ॥ २ ॥

॥ पढमं अज्झायणं समत्तं ॥ १ ॥

छाया-तस्मिन् काले तस्मिन् समये पार्श्वः खलु अहंन् पुरुषादानीय
आदिकरो यथा महावीरः, नवहस्तोच्छायः पौडशभिः श्रमणसाहस्रीभिः, अष्टा-
त्रिंशद् यावत् कोष्ठके समवसृतः, परिपत् निर्गता ।

ततः खलु सः अङ्गतिर्गाथापतिः अस्याः कथाया लब्धार्थः सन् हृष्टो
यथा कार्तिकश्रेष्ठी तथा निर्गच्छति यावत् पर्युपास्ते, धर्मं श्रुत्वा निश्चम्य०
यत् नवरं देवानुप्रिय ! ज्येष्ठपुत्रं कुटुम्बे स्थापयामि, ततः खलु अहं देवानु-
प्रियाणां यावत् प्रव्रजामि यथा गङ्गदत्तस्तथा प्रव्रजितो यावद् गुप्तब्रह्मचारी ।
ततः खलु स अङ्गतिः अनगारः पार्श्वस्य अहंतः नथारूपाणां स्थविराणाम्
अन्तिके सामायिकादीनि एकादशाङ्गानि अधीते, अधीत्य बहुभिश्चतुर्थं० यावद्
भावयन् बहूनि वर्षाणि श्रामण्यपर्यायं पालयति पालयित्वा अर्धमासिक्या संले-
खनया त्रिंशद् भक्तानि अनशनया छित्वा विराधितश्रामण्यः कालमासे कालं
कृत्वा चन्द्रावतंसके विमाने उपपातसभायां देवजयनोये देवदूषयान्तरिते चन्द्रो
ज्योतिरिन्द्रतया उपपन्नः ।

ततः खलु स चन्द्रो ज्योतिरिन्द्रो ज्योतिराजः अधुनोपपन्नः सन् पंच-
विधया पर्याप्त्या पर्याप्तिभावं गच्छति, तद्यथा-आहारपर्याप्त्या शरीरपर्याप्त्या
इन्द्रियपर्याप्त्या श्वासोच्छ्वासपर्याप्त्या भाषामनःपर्याप्त्या ।

चन्द्रस्य खलु भदन्त ! ज्योतिरिन्द्रस्य ज्योतीराजस्य क्रियत्काल स्थितिः
मज्ञप्ता ? गौतम ! पर्योपमं वर्षशतसहस्राभ्यधिकम् । एवं खलु गौतम ! चन्द्रस्य
यावत् ज्योतीराजस्य सा दिव्या देवक्रद्धिः० । चन्द्रः खलु भदन्त ! ज्योति

रिन्द्रो ज्योतीराजस्तस्माद्देवलोकादायुःक्षयेण ३ च्युत्वा कुत्र गमिष्यति २ ?
गौतम ! महाविदेहे वर्षे सेत्स्यति ५ । एवं न्वलु जम्बुः ! श्रमणेन निक्षेपकः ॥२॥

॥ इति प्रथमाध्ययनम् ॥

टीका—‘तेणं कालेणं’ इत्यादि । तस्मिन् काले तस्मिन् समये पार्श्वः
=त्रिविंशः पार्श्वनामा तीर्थङ्करः, अर्हन्=चतुर्विंशत्यातिकर्मनिवारकः केवलज्ञानकेवल-
दर्शनसम्पन्नः, पुरुपादानीयः=पुरुषैः=मुमुक्षुभिर्जनैः स्वकल्याणार्थमादीयत इति
पुरुपादानीयः, यद्वा-पुरुपाणां मध्ये आदेयवचनत्वात् पुरुपादानीयः, आदिकरः=
धर्मस्य आदिकरः, यथा-महावीरः=चतुर्विंशस्तीर्थङ्करः, तथैव सर्वगुणसम्पन्नः,
किन्तु पार्श्वप्रभुः नवहस्तोच्छ्रायः=नवहस्तपरिमितशरीरः षोडशभिः श्रमणसाह-
स्रीभिः, अष्टात्रिंशद्भिः श्रमणीसहस्रैश्च युक्तः यावद् ग्रामानुग्रामं विहरन् कोष्ठके=
कोष्ठनामोद्याने समवसतः=समागतः, परिपत् निर्गता, पार्श्वतीर्थङ्करस्य धर्म-
देशनां श्रुत्वा स्वस्थानं गता ।

‘तेणं कालेणं’ इत्यादि—उस काल उस समयमें पार्श्व प्रभु
तेवीसवें तीर्थङ्कर ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तराय
इन चार घाति कर्मों के निवारक केवलज्ञान, केवलदर्शनसे युक्त,
मुमुक्षुजनोंसे सेव्य अथवा पुरुषोंके बीचमें उनका वचन आदानीय=ग्राह्य
था इसलिये पुरुपादानीय, धर्मके आदिकर भगवान महावीरके समान
सभी गुणोंसे युक्त नौ हाथ उँचे शरीरवाले सोलह हजार श्रमण
और अड़तीस हजार श्रमणियोंसे युक्त एक ग्रामसे दूसरे ग्राम
तीर्थङ्कर परम्परासे विचरते हुए कोष्ठक नामक उद्यानमें पधारे । जन
समुदायरूप परिषद् अपने २ स्थानसे धर्मश्रवणके लिये निकली ।
पार्श्वनाथ भगवानकी धर्मदेशना सुनकर अपने २ स्थान गयी ।

‘तेणं कालेणं’ इत्यादि ते काले ते समये पार्श्व प्रभु तेवीसवा तीर्थङ्कर
ज्ञानावरणीय दर्शनावरणीय, मोहनीय तथा अन्तराय से चार घाती कर्मोंका निवारक,
केवलज्ञान केवलदर्शनसे युक्त, मुमुक्षु जनोत्थी सेव्य, अथवा पुरुषोत्तमी वचनमा तेमनु
वचन आदानीय=ग्राह्य इति अथवा पुरुपादानीय, धर्मना आदि करवावाणा भगवान
महावीर समान सर्वे गुणोत्थी युक्त, नव हाथ उँचा शरीरवाणा, सोलह हजार श्रमण
तथा अड़तीस हजार श्रमणियोंसे युक्त एक गाँवसे धीरे गाँव तीर्थङ्कर परंपरासे
विचरता विचरता कोष्ठक नामका उद्यान (गाँव)मा पधर्या जन समुदायरूप परिषद्
पैत पैताना स्थानसे धर्म सांख्यवा भोंटे नीकणी, पार्श्वनाथ भगवानकी धर्म-
देशना सांख्यी पैतपैताने स्थाने गछ.

ततः खलु सोऽङ्गतिर्गाथापतिः अस्याः कथायाः=‘पुरुषादानीयः, पार्श्व-
नाथः प्रभुश्च कोष्ठके समवसृतः’ इति वार्तायाः-लब्धाथः=ज्ञातवृत्तान्तः सन्
हृष्टः प्रमुदितः यथा कार्तिकश्रेष्ठी तथा निर्गच्छति, यावत् पर्युपास्ते=पार्श्वनाथं
प्रभुं सेवते स्म । धर्म=श्रुतचारित्रलक्षण श्रुत्वा=कर्णपथे कृत्वा, निशम्य=हृदि
समवधार्य देवानुप्रिय ! = हे भगवन् ! यत् नवरं=केवल ज्येष्ठपुत्रं रक्षकतया
कुटुम्बे स्थाप्रयामि, ततः खलु अहं देवानुप्रियाणामन्तिके यावत् प्रव्रजामि=
संयमं गृह्णामि, यथा भगवत्प्रज्ञोक्तो गङ्गदत्तस्तथा प्रव्रजितो यावच्छब्देन-स
हि-‘किंपाकफलोपमं मुणियविसयसोक्खं जलबुद्बुदसमाणं कुशाग्रविन्दुचंचलं जी-
वियं नाऊणमधुवं चइत्ता हिरणं विउलधणकणगरयणमणिमोत्तियसंखसिलप्पवा-
लरत्तरयणमाइयं विच्छड्डइत्ता दाणं दाइयाणं परिभाइत्ता अगाराओ अणगारियं
पव्वइओ जहा तथा अंगईवि गिहनायगो परिच्चइय सव्वं पव्वइओ जाओ य
पंचसमिओ तिगुत्तो अममो अकिंचणो गुत्तिदिको ’ इत्येवं संग्राह्यम् । एतच्छाया
च-स किंपाकफलोपमं ज्ञात्वा विषयसौख्यं जलबुद्बुदसमानं कुशाग्रविन्दुचञ्चलं

उसके बाद वह अङ्गति गाथापति भगवान पार्श्वनाथके आनेका
वृत्तांत सुनकर हृष्ट होकर कार्तिक सेठके समान निकला । पार्श्वनाथ
प्रभुके पास जाकर उसने उनकी सेवा की, और भगवान पार्श्वनाथके
द्वारा उपदिष्ट श्रुत चारित्र लक्षण धर्मको सुना, और उसे अपने
हृदयमें अवधारित किया । उसके बाद उसने हाथ जोडकर प्रार्थना
की-हे भगवन् ! मैं अपने बड़े लडकेको कुटुम्बका भार देकर बादमें
आपके पास संयम ग्रहण करना चाहता हूँ । अनन्तर वह भगवती
अङ्गमें उक्त गंगदत्तके समान ही विषय सुखको किंपाक फलके सदृश
जानकर जीवनको जल बुद्बुद तथा कुशके अग्र भागमें स्थित जल-

त्यार पछी ते अङ्गति गाथापति भगवान पार्श्वनाथना आवराना वृत्तान्त
सांख्यी हृष्ट धर्म कार्तिक शेठनी पंठे नीकएये पार्श्वनाथ प्रभुनी पासे जेठ तेहे
तेमनी सेवा करी तथा भगवान पार्श्वनाथ द्वारा उपदिष्ट श्रुतचारित्र लक्षण धर्म
सांख्यी, अने ते प्रार्थना हृदयमा धारण कर्ये त्यार पछी तेहे हाथ जोडीने प्रार्थना
करी-हे भगवन् ! हुं मारा मोटा दीकराने कुटुम्बको भार सोपी दधने आपनी पासे
संयम ग्रहण करवा छेछा राधु छु. त्यार पछी ते भगवतीसूत्रमां कहेल गंगदत्तनी
पंठे विषय सुनने किंपाक फलनी जेभ समण एवनने पाणीना परपोटा तथा
कुशना अग्र भागमा रहेला जलविन्दु समान यथल अने अनित्य समणने तथा

जीवितं च ज्ञात्वाऽध्रुवं त्यक्त्वा द्विरग्यं त्रिपुल-धन-कनक-रत्न-मणि-मौक्तिक-शङ्ख-शिला-प्रवाल-रक्तरत्नादिकं त्रिमुच्य दानं दायिकानां परिभाज्य अगारतः अनगारितां प्रव्रजितः यथा तथा अङ्गतिरपि गृहनायकः परित्यज्य सर्वं प्रव्रजितो जातश्च पञ्चसमितः, त्रिगुप्तः, अममः, अकिञ्चनः गुप्तेन्द्रियः, इति । गुप्तब्रह्मचारी बभूव, ततः खलु अङ्गतिरनगारः पार्श्वस्यार्हतस्मत्तथारूपाणां स्थविराणामन्तिके सामायिकार्दानि एकादशाङ्गानि अधीत्य च बहुभिः चतुर्थपष्टाष्टम-दशमद्वादशमासार्धमामक्षपणैरात्मानं भावयन्=वामयन् बहूनि वर्षाणि श्रामण्यपर्यायं=मुनिव्रतं पालयति पाठयित्वा विराधिनश्रामण्यः=विराधिनमुनिव्रतः,

विन्दुके समान चंचल एवं अनित्य समझकर और बहुतसा चांदी धन कनक रत्न मणि मौक्तिक शंख रत्न शिला प्रवाल रक्तरत्न आदिको छोड़कर और दान देकर तथा सम्पत्तिके भागियोंको सम्पत्तिका भाग देकर घरसे निकल गङ्गदत्तके समान प्रव्रजित हो गये । प्रव्रज्या लेनेपर वे अङ्गति अनगार ईर्या आदि पाँच समितियोंसे समित मन आदि तीन गुप्तसे गुप्त और ममत्व रहित एवं अकिञ्चन-बद्धाभ्यन्तर परिग्रहसे रहित और पाँचो इन्द्रियोंको दमन करनेवाले अनगार हो गये, और गुप्त ब्रह्मचारी बने । उसके बाद अङ्गति अनगारने अर्हत पार्श्व प्रभुके स्वरूप-बहुश्रुत-स्थविरोके समीप सामायिक आदि ग्यारह अङ्गोंका अध्ययन किया । अध्ययनके बाद बहुतसे चतुर्थ पष्ट अष्टम दशम द्वादश मासार्ध मास क्षपण रूप तपसे अपनी आत्माको भाविक करते हुए बहुत वर्षों तक चारित्र

धनु आदि, धन, सोन, रत्न, मणि (अवे-त), मोती, शंख, शिला, प्रवाल, रक्त (माण्डुक) आदि छोड़ी द - अने दान दईने तथा सपत्तिना भागीदाराने सपत्तिना भाग आपी पोताना घरथी नीकणी गजदरनी पेठे प्रव्रजित थई गया. प्रव्रज्या लईने ते अगति अनगार ईर्या आदि पाय समितिओथी समित मन आदि त्रयु शुषिथी श्रुत तथा ममत्व रहित अने अकिञ्चनणाद्य-अभ्यन्तर परिग्रहथी रहित तथा पाये इन्द्रियोनु दमन करवावाणा अनगार थई गया. तथा श्रुत ब्रह्मचारी बन्या तयार पछी अगति अनगारे अर्हत पार्श्व प्रभुना तथारूप-बहुश्रुत-स्थविरोनी पासै सामायिक आदि अगीयार अ गोनु अध्ययन कर्यु. अध्ययन पछी धनु चतुर्थ, पष्ट, अष्टम, दशम, द्वादश, मासार्ध (११ मास) मास क्षपण रूप अनेक तपथी पोताना आत्माने भावित करता धनु वर्षो सुधी-चारित्र्य पावनकर्यु अथु उत्तर शुषुनी

विराधना द्विधा—मूलगुणविषया उत्तरगुणविषया च, अत्रोत्तरगुणविषया विराधना पिण्डविशुद्ध्यादयो विज्ञेयाः, न तु प्रथमा, तत्र कदाचित् द्विचत्वारिंशदोषविशुद्धाहारस्य न ग्रहणं कृतम्, कदाचित् ईर्यासमित्यादिसमाराधनेऽनादरः कृतः, कदाचित् अभिग्रहाश्च गृहीता अपि न सम्यक् पालिताः, विभूषार्थमङ्गपादक्षालनादि च कृतम्, इत्यादिरूपेण व्रतविराधना कृता, सा च न गुरु-

पालन किया । परन्तु उत्तरगुणकी विराधनाके कारण विराधितचारित्र हो, अर्धमासिकी संलेखनासे अनशनद्वारा तीस भक्तोंका छेदन कर काल मासमें काल करके चन्द्रावतंसक विमानमें उपपात सभामें देवदूष्य वस्त्रोंसे आच्छादित देवशय्यामें वह अङ्गति अनगार [१] आहार-पर्याप्ति [२] शरीर-पर्याप्ति [३] इन्द्रिय-पर्याप्ति [४] श्वासेन्द्वीस-पर्याप्ति भाषामनः पर्याप्ति भावको प्राप्त करके ज्योतिषियोंके इन्द्र चन्द्र होकर उत्पन्न हुए ।

विराधना दो प्रकारकी है—मूलगुणविराधना और उत्तरगुणविराधना । उनमें पांच महाव्रतमें दोष लगाना मूलगुणविराधना है । और पिण्डविशुद्धि आदिमें दोष लगाना जैसे—कभी बयालीस दोष सहित आहार पानीका ग्रहण करना कभी ईर्या आदि समितियोंके आराधनमें प्रमाद करना कभी अभिग्रह लेना किन्तु सम्यक् नहीं पालना तथा विभूषाके लिये शरीर चरण आदिका क्षालन करना, आदि २ उत्तरगुण विषयक विराधना देशविराधना है । अङ्गति

विराधनाने कारणे विराधितचारित्रवाणा थछ अर्धमासिकी संलेखनामा अनशन द्वारा तीस लक्षतनु छेदन करी काल मासमा काल करीने चन्द्रावतसक विमानमा उपपात सभामा देवदूष्य वस्त्रोथी आच्छादित (ढकयेदी) देवशय्यामा ते अंगति अनगार (१) आहार-पर्याप्ति (२) शरीर-पर्याप्ति [३] इन्द्रिय-पर्याप्ति (४) श्वासेन्द्वीस-पर्याप्ति-भाषामन-पर्याप्ति लावने प्राप्त करीने ज्योतिषीना इन्द्र चन्द्र जनीने उत्पन्न थया.

विराधना जे प्रकारनी छे—मूलगुणविराधना अने उत्तरगुणविराधना तेसा पाच महाव्रतमा लगावये जे मूलगुणविराधना छे अने पिण्ड विशुद्ध आदिमा दोष लगावये जेभके—कोषवार जेतादीश दोष सहित आहार पाणी लेवा, कोषवार धर्या वगेरे समितिओना आराधनमा प्रमाद करवये, कोषवार अलिग्रह लेवये परतु सम्यक् (सारी रीते) न पाणवये, तथा विभूषा माटे शरीर अरण्य आदि, घोवा आदि आदि उत्तरगुण विषयक विराधना देशविराधना छे. अंगति अनगारे मूल गुणनी, विराधना इन्द्र चन्द्र जनीने

समीपे समालोचिता, इत्युक्तरूपेणानालोचितातिचारः सन् कृतानशनोऽपि अर्थ-
मासिक्यां संलेखनायामनशनया त्रिंशद् भक्तानि छित्वा कालांतरे कालं कृत्वा=
मृत्वा चन्द्रावतंसके विमाने उपपातसभायां देवशयनीये=देवशय्यायां देवदृष्या-
न्तरिते देवदृष्यवस्त्राच्छादितेऽयं चन्द्रो ज्योतिरिन्द्रतयोपपन्नः=समुद्रपद्म-तस्य
ज्योतिर्देवे जन्म जातमित्यर्थः । निक्षेपो=निगमनम् । शेषं सुगमम् ॥ २ ॥

॥ इति प्रथममध्ययनं समाप्तम् ॥ १ ॥

अनगारने मूलगुणकी विराधना नहीं की, किन्तु उत्तरगुणकी विरा-
धनाकर आलोचना नहीं की । इसलिये यह ज्योतिषी देव हुआ ।

गौतम स्वामी पूछते हैं-

हे भदन्त ! ज्योतिषियोंके इन्द्र, ज्योतिषियोंके राजा चन्द्रकी
स्थिति कितने कालकी है ?

भगवान कहते हैं—

हे गौतम ! ज्योतिषोंके इन्द्र चन्द्रकी स्थिति एक पत्योपम
और एक लाख वर्षकी है । हे गौतम ! ज्योतिषोंके इन्द्र ज्योतिषोंके
राजा चन्द्रको यह दिव्य देव ऋद्धि पूर्व भवमें उपार्जित तप संयमके
कारण मीली है ।

हे भदन्त । चन्द्र देव अपना आयुष्य भव तथा अपनी स्थितिके
क्षय होजानेके बाद च्यवकर कहा जायगा ?

हे गौतम आयु आदि क्षयके बाद यह चन्द्र देव महाविदेह-
क्षेत्रमें जन्म लेकर सिद्ध होंगे ।

पणु उत्तर शुशुनी विराधना करी आलोचना करी नडाती ते माटे ते ज्योतिषी देव थया.
गौतम स्वामी पूछे छे—

हे भदन्त ! ज्योतिषीना इन्द्र ज्योतिषीना राजा चन्द्रनी स्थिति डेटला डालनी छी
भगवान डहे छे—

हे गौतम ! इन्द्र चन्द्रनी स्थिति ओक पत्योपम अने ओक लाख वर्षनी छे हे
गौतम ! ज्योतिषीना इन्द्र ज्योतिषीना राजा चन्द्रने आ दिव्य देवऋद्धि पूर्व भवमां
उपार्जित तप अने संयमना डारणथी भगी छे

हे भदन्त ! चन्द्र देव पोतानु आयुष्य भव तथा पोतानी स्थितिना क्षय थछ
गया पछी च्यवीने कया ज्ये.

हे गौतम ! आयु आदि क्षय थछ गया पछी आ चन्द्र देव महा विदेह क्षेत्रमां
जन्म लधने सिद्ध थये.

मूलम्—जइणं भंते ! समणेणं भगवया जाव पुष्पियाणं
 पहमस्स अज्झयणस्स जाव अयमट्ठे पन्नत्ते, दोच्चस्स णं भंते !
 अज्झयणस्स पुष्पियाणं समणेणं भगवया जाव संपत्तेणं के
 अट्ठे पन्नत्ते ? एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं २ रायगिहे नामं
 नयरे, गुणसिलए चेइए, सेणिये राया, समोसरणं जहा चंदो
 तथा सूरुोऽवि आगओ जाव नट्टविहिं उवदंसित्ता पडिगओ ।
 पुव्वभवपुच्छी, सावत्थी नगरी, सुपइट्ठे नामं गाहावई होत्था,
 अट्ठे, जहेव अंगती जाव विहरति, पासो समोसडे, जहा अंगती
 तहेव पव्वइए, तहेव विराहियसामन्ने जाव महाविदेहे वासे
 सिज्झिहिति जाव अंतकाहिति, एवं खलु जंबू ! समणेणं
 निक्खेवओ ॥ २ ॥

॥ बीयं अज्झयणं समत्तं ॥ २ ॥

छाया—यदि खलु भदन्त ! श्रमणेन भगवता यावत् पुष्पितानां प्रथमस्य

सुधर्मा स्वामी कहते हैं—

हे जम्बू ! इस प्रकार मोक्ष प्राप्त श्रमण भगवान महावीरने
 पुष्पिताके प्रथम अध्ययनका निरूपण किया है ।

इति प्रथम अध्ययन समाप्त हुआ ।

द्वितीय अध्ययन.

‘जइण भंते’ इत्यादि—

हे भदन्त ! श्रमण भगवान महावीरने पुष्पिताके प्रथम अ-

सुधर्मा स्वामी कहे छे—

हे जम्बू ! आ प्रकारे मोक्ष प्राप्त श्रमण भगवान महावीर पुष्पिताना प्रथम
 अध्ययननु निरूपण कथुं छे

इति पुष्पितानुं प्रथम अध्ययन समाप्त.

द्वितीयअध्ययन.

हे भदन्त ! श्रमण भगवान महावीरने पुष्पिताना प्रथम अध्ययनमा पूर्वोक्त

अध्ययनस्य यावत् अयमर्थः प्रज्ञप्तः द्वितीयस्य खलु भदन्त ! अध्ययनस्य पुष्पितानां श्रमणेन भगवता यावत् संप्राप्तेन कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ? एवं खलु जम्बू ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये राजगृहं नाम नगरं, गुणशिलकं चैत्यं, श्रेणिको राजा, समवसरणं यथा चन्द्रः तथा सूर्योऽपि आगतो यावत् नाट्यविधिमुप-दृश्यं प्रतिगतः । पूर्वमवपृच्छा-श्रावस्ती नगरी सुप्रतिष्ठो नाम गाथापतिरभवत् आढ्यः यथैव अङ्गतिर्यावद् विहरति, पार्श्वः समवसृतः, यथा अङ्गतिस्तथैव

अध्ययनमें पूर्वोक्त भावोंका निरूपण किया है तो फिर हे भदन्त ! पुष्पिताके द्वितीय अध्ययनमें उन्होंने किम भावका निरूपण किया है ? हे जम्बू ! उस काल उस समयमें राजगृह नामकी नगरी थी । उस नगरीमें गुणशिलक नामका चैत्य था । उस नगरीमें श्रेणिक नामके राजा थे । वहाँ श्रमण भगवान महावीर पधारे । जिस प्रकार चन्द्रमा आये उसी प्रकार सूर्य भी आये और यावत् नाट्य विधि दिग्वाकर चले गये ।

गौतमने भगवानसे पूछा—

हे भदन्त ! सूर्य पूर्व जन्ममें कौन थे ?

भगवानने कहा—

हे गौतम ! उस काल उस समयमें श्रावस्ती नामकी नगरी थी । उस नगरीमें सुप्रतिष्ठ नामके गाथापति थे । जो अङ्गतिके स-मान ही आढ्य यावत् अपरिभूत होकर विचरते थे । उस नगरीमें

भावोनुं निरूपणं कर्तुं छे पछी छे लहन्त । पुष्पितानां जीज्ज अध्ययनमां तेमणु कथां भावणु निरूपणं कर्तुं छे ?

छे जम्बू ! ते काले ते समये राजगृह नामे नगरी इती ते नगरीमा गुण-शिलक नामे चैत्य (अगीथो) इतो ते नगरीमां श्रेणिक नामे राजा इता त्यां श्रमणु भगवान महावीर पधार्या जेवी रीते चन्द्रमा आव्या तेवी रीते सूर्य पणु आव्या अने अधणी नाटक विधि गतावी अदया गया.

गौतमे भगवानने पूछ्यु—

छे लहन्त ! सूर्य पूर्व जन्ममा कौणु इता ?

भगवाने कहु—

छे गौतम ! ते काले ते समये श्रावस्ती नामे नगरी इती ते नगरीमा सुप्रतिष्ठ नामे गाथापति इता जे अगतिना जेवाज्ज आढ्य अने अपरिभूत थधने विचरता इता ते नगरीमा भगवान पार्श्व प्रणु पधार्या जेभ अगति गाथापति

प्रव्रजितः तथैव विराधितश्रामण्यो यावत् महाविदेहे वर्षे सेत्स्यति यावत् अन्तं करिष्यति, एवं खलु जम्बू :! श्रमणेन० निश्चेषकः ॥ २ ॥

टीका—‘जङ्गं भंते’ इत्यादि सुगमम् ॥ २ ॥

॥ इति द्वितीयमध्ययनं समाप्तम् ॥

मूलम्—जङ्गं भंते! समणेणं भगवया जाव संपत्तेणं उक्खे-
वओ भाणियव्वो, रायगिहे नयरे, गुणसिलए चेइए, सेणिए
राया, सामी समोसढे, परिसा निग्गया । तेणं कालेणं २ सुक्के
महग्गहे सुक्कवडिंसए विमाणे सुक्कंसि सीहासणंसि चउहिं
सामाणियसाहस्सिहिं जहेव चंदो तहेव आगओ, नट्टविहिं उव-
दंसित्ता पडिगओ ! भंते ति कूडागारसाला । पुव्वभवपुच्छा ।

एवं खलु गोयमा ! तेणं कालेणं २ वाणारसी नामं नयरी
होत्था । तत्थ णं वाणारसीए नयरीए सोमिले नामं माहणे
परिवसइ, अडे जाव अपरिभूए रिउव्वेय—जाव सुपरिनिट्टिए ।

भगवान पार्श्व प्रभु पधारे । जैसे अङ्गति गाथापति प्रव्रजित हुए । उसी प्रकार श्रामण्यको विराधित कर काल अवसर काल करके ज्योतिषोंके इन्द्र सूर्य देवपनेमें उत्पन्न हुए । और आयु भव स्थिति क्षय करनेके बाद यह सूर्य देव महाविदेह क्षेत्रमें जन्म लेकर सिद्ध होंगे । और सब दुःग्वोंका अन्त करेगे । हे जम्बू ! इस प्रकार श्रमण भगवान महावीरने द्वितीय अध्ययनके भावोंको निरूपित किया है ।

इति द्वितीय अध्ययन समाप्त हुआ ।

प्रव्रजित तथा तेनीज रीते सुप्रतिष्ठ गाथापति पणु दीक्षित तथा तेज प्रकारे साधु-
पणुाने विराधित करी काल अवसर काल करीने ज्येतिषेाना इन्द्र सूर्य देवपणुां
उत्पन्न तथा तथा आयु भवस्थिति क्षय करीने पछी आ सूर्य देव महा विदेह
क्षेत्रमा जन्म लधने सिद्ध थशे अने सर्वे दु.पनेा अत लावशे. हे जम्बू! आ प्रकारे
श्रमणु भगवान महावीरे पुष्पिताना द्वितीय अध्ययनना लावेनु निइपणु कथुं छे

आ पुष्पितानुं णीणु अध्ययन पुइं थयुं २

पासे समोसडे । परिसा पञ्जुवासइ । तएणं तस्स सोमिलस्स माहणस्स इमीसे कहाए लद्धट्टस्स समाणस्स इमे एयारूवे अज्झत्थिए० जाव समुप्पज्जित्था—एवं खलु पासे अरहा पुरिसा-द्वणीए पुव्वाणुपुव्वि जाव अंबसालवणे विहरइ, तं गच्छामि णं पासस्स अरहओ अंतिए पाउवभवामि । इमाइं च णं एयारूवाइं अट्टाइं हेऊइं जहा पणत्तीए ।

सोमिलो निग्गओ खंडियविहुणो जाव एवं वयासी—जत्ता ते भंते !? जवणिज्जं च ते ? पुच्छा, सरिसवया, मासा, कुलत्था, एगे भवं, जाव संबुद्धे सावगधम्मं पडिवज्जित्ता पडिगए । तए णं पासे अरहा अण्णया कयाइ वाणारसीओ नयरीओ अंबसालवणाओ चेइयाओ पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता वहिया जणवयविहारं विहरइ ।

तएणं से सोमिले माहणे अण्णया कयाइं असाहुदंसणेण यि अपञ्जुवासणयाए य मिच्छत्तपज्जवेहिं । परिवट्ठमाणेहिं ३, सम्मत्तपज्जवेहि परिहायमाणेहिं ३, मिच्छत्तं च पडिवन्ने ।

तए णं तस्स सोमिलस्स माहणस्स अण्णया कयाइं पुव्व-रत्तावरत्तकालसमयंसि कुडुंवजगिरियं जागरमाणस्स अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था—एवं खलु अहं वाणारसीए नय-रीए सोमिले नामं माहणे अच्चंतमाहणकुलप्पसूए । तएणं मए वयाइं चिण्णाइं, वेया य अहीया, दारा आहूया, पुत्ता जणिया, इड्डीओ समाणीयाओ, पसुवधा कया, जन्ना जेट्टा, दक्खिणा दिन्ना, अतिही पूजिया, अग्गी हूया, जूपा निक्खिता, तं सेयं खलु मसं इयाणिं कल्लं जाव जलंते वाणारसीए नय-

रीए बहिया बहवे अंबारामा रोवावित्तए, एवं माउलिंगा,
बिह्या, कविट्टा, चिंचा, गुप्फारामा रोवावित्तए । एवं संपेहेइ
संपेहिन्ता कळं जाव जलंते वाणारसीए, नयरीए बहिया अंबा-
रामे य जाव पुप्फारामे य रोवावेइ । तएणं बहवे अंबारामा
य जाव पुप्फारामा य अणुपुप्वेणं सारक्खिज्जमाणा संगोविज्ज-
माणा संवडियमाणा आरामा जाया, किण्हा किण्होभासा जाव
रम्मा महामेहनिकुरंबभूया पत्तिया पुप्फिया फलिया हरियगरे-
रिज्जमाणसिरीया अईव २ उवसोभेमाणा २ चिट्ठंति ॥३॥

छाया-यदि खलु भदन्त ! श्रमणेन भगवता यावत् सम्प्राप्तेन उत्क्षे-
पको भणितव्यः । राजगृहं नगरम् । गुणशिलक चैत्यम् । श्रेणिको राजा । स्वामी
समवसृतः । परिषत् निर्गता । तस्मिन् काले तस्मिन् समये शुक्रो महाग्रहः
शुक्रावतंसके त्रिमाने शुक्रे सिंहासने चतसृभिः सामानिकसाहस्त्रीभिः, यथैव
चन्द्रस्तथैवागतः, नाट्यविधिमुपदर्श्य प्रतिगतः । भदन्त ! इति कूटाकारशाला ।
पूर्वभवपृच्छा

एवं खलु गौतम ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये वाराणसीनाम
नगरी अभवत् । तत्र खलु वारिणीस्यां नगर्यां सोमिलो नाम ब्राह्मणः परि-
वसति, आढर्यो यावत् अपरिभूतः ऋग्वेद० यावत् सृप्रतिष्ठितः । पार्श्वः
समवसृतः । परिषत् पर्युपास्ते । ततः खलु तस्य सोमिलस्य ब्राह्मणस्य अस्याः
कथायाः लब्धार्थस्य सतः अयमेतद्रूपः आध्यात्मिक ४, यावत् सप्रुदपद्यत-
एवं खलु पार्श्वः अहंन् पुरुपादानीयः पूर्वानुपूर्व्यां यावत् आम्रगालवने विह-
रति, तद् गच्छामि खलु पार्श्वस्य अहंतोऽन्तिके प्रादुर्भवामि, इमान् च खलु
एतद्रूपान् अर्थान् हेतून् यथा प्रज्ञान्याम् ।

सोमिलो निर्गतः खण्डिकविहीनो यावत् एवमवादीत्-यात्रा ते भदन्त !?,
यापनीयं च ते ? पृच्छा, सदृशवयसः, माषाः, कुलस्थाः, एको भवान्, यावत्
संबुद्धः श्रावकधर्मं प्रतिपद्य प्रतिगतः । ततः खलु पार्श्वः अहंन् अन्यदा कदा-
चित् वाराणसीतो नगरीतः आम्रगालवनाच्चैत्यात् प्रतिनिष्कामति, प्रतिनिष्क्रम्य
वर्हिर्जनपदविहारं विहरति ।

ततः स सोमिलो ब्राह्मणः अन्यदा कदाचिन् असाधुदर्शनेन च अप-
युपासनतया च मिथ्यात्वपर्यवैः पवित्रमानैः २, सम्यक्त्वपर्यवैः परिहीयमानैः
२ मिथ्यात्वंच प्रतिपन्नः ।

ततः खलु तस्य सोमिलस्य ब्राह्मणस्य अन्यदा कदाचित् पूर्वरात्रा-
पररात्रकालसमये कुटुम्बाजागरिकां जाग्रतोऽयमेतद्रूप आध्यात्मिकः यावत् समु-
दपद्यत—एवं खलु अहं वाराणस्यां नगर्यां सोमिलो नाम ब्राह्मणोऽत्यन्तब्राह्मण-
कुलप्रसूतः । ततः खलु मया वतानि चीर्गानि वेदाश्राधीताः, दारा आहृताः,
पुत्रा जनिताः, ऋद्धयः समानीताः, पशुवधाः कृताः, यज्ञा इष्टाः, दक्षिणा
दत्ता, अतिथयः पूजिताः, अग्नयो हुताः, गृषा निक्षिप्ताः, तच्छ्रेयः खलु ममे-
दानीं कल्ये यावत् ज्वलति वाराणस्यां नगर्यां वहिर्वहन् आम्रारामान् रोप-
यितुम्, एव मातुलिङ्गान, विल्वान, कपित्थान, चिञ्चान्, पुष्पारामान् रोपयितुम् ।
एवं संप्रेक्षते, संप्रेक्षय कल्ये यावत् ज्वलति वाराणस्यां नगर्यां वहिः आम्रा-
रामांश्च यावत् पुष्पारामांश्च रोपयति । ततः खलु वहव आम्रारामाश्च यावत्
पुष्पारामाश्च अनुपूर्वेण संरक्ष्यमाणाः, सगोप्यमानाः, संबर्ध्यमानाः आरामाः
जाताः कृष्णाः कृष्णावभासा यावत् रम्या महामेघनकुरम्बिभूताः पत्रिताः
पुष्पिताः फलिताः हरितकराराज्यमानश्रीकाः अतीवातीव उपशोभमाना उप-
शाभमानास्तिष्ठन्ति ॥ ३ ॥

टीका—‘जड्गं भंते’ इत्यादि । उत्क्षेपकः=पारम्भवाक्यं यथा—‘जड्गं
भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं दोच्चस्स अज्जयणस्स पुक्कियाणं अयमट्ठे पन्नत्ते,

तृतीय अध्ययन

‘जड्गं भंते’ इत्यादि—

हे भदन्त ! यावत् सिद्धिगतिस्थानको प्राप्त श्रमण भगवान्
‘महावीरने पुष्पिताके द्वितीय अध्ययनमें पूर्वोक्त अर्थोका निरूपण किया
है तो हे भदन्त ! तृतीय अध्ययनमें उन्होंने किन अर्थोका निरूपण
किया है ?

अथ त्रीणुं अध्ययन.

‘जड्गं भंते’ इत्यादि

हे भदन्त ! ये प्रमाणे सिद्धि गति स्थानने प्राप्त भवेत् श्रमण भगवान्
महावीरे पुष्पिताका द्वितीय अध्ययनमा पूर्वोक्त अर्थोनु निरूपणुं कर्तुं छे तो हे
भदन्त ! त्रीणुं अध्ययनमा तेषु कथा अर्थोनु निरूपणुं कर्तुं छे ?

तच्चस्सणं भंते ! अज्जयणस्स पुप्फियाणं समणेणं जात्र संपत्तेणं के अट्टे प-
न्नत्ते ? । एवं खल्लु जंबू ! तेणं कालेणं २ रायगिहे' इत्यादि । प्रादुर्भवामि=
उपस्थितो भवामि, अर्थान्=आत्मकल्याणरूपान् हेतून्=कारणानि, यद्वा-हेतून्=
अनुमानस्य पञ्चावयववाक्यरूपान्, यथा प्रज्ञप्त्यां=व्याख्या प्रज्ञप्त्यां भगवती-
सूत्रे तथा विज्ञेयम् । खण्डिकविहीनः=शिष्यरहितः, सोमिलो ब्राह्मणः पार्श्व-

हे जम्बू ! उस काल उस समयमें राजगृह नामक नगर था !
गुणशिलक नामका चैत्य था । उस नगरीमें श्रेणिक नामके राजा थे ।
वहाँ भगवान महावीर प्रभु पधारे । परिषद् धर्म कथा श्रवण
करनेको निकली ।

उस काल उस समयमे शुक्र महाग्रह शुक्रावतंमक विमानमे
शुक्रसिंहासन पर चार हजार सामानिक देवोंके साथ बैठे हुए थे । वह
शुक्र महाग्रह चन्द्र ग्रह समान भगवानके पास आये और नाटयविधि
दिखाकर वैसे ही चले गये । गौतमको जिज्ञासा हुई कि हे भदन्त !
यह शुक्र महाग्रह इस प्रकार देवताओंके द्वारा नाटयविधि दिखाकर
सबको अन्तर्हित करके अकेले रह गये यह बड़े आश्चर्यकी बात है ।

भगवानने कहा-हे गौतम ! कूटाकारशाला-पर्वत शिखरके
समान ऊंचे विशाल मकानमें वर्षा आदिके भयसे विग्वरा हुवा जन समूह
जिस प्रकार अन्तर्हित होजाता है उसी प्रकार शुक्रकी वैक्रयिकशक्तिसे
उत्पन्न देवगण नाटक दिखाकर उनकी देहमें प्रविष्ट हो गये ।

हे जम्बू ! त काले ते समये राजगृह नामे नगर હતુ . ગુણશિલક નામે
તેમા ચૈત્ય હતુ તે નગરમા શ્રેણિક નામે રાજા હતા . ત્યા ભગવાન મહાવીર પ્રભુ
પધાર્યા પરિષદ્ ધર્મ કથાનુ શ્રવણ કરવા નીકળી

તે કાલે તે સમયે શુક્ર મહાગ્રહ શુક્રાવતંમક વિમાનમા શુક્ર સિંહાસન ઉપર
ચાર હજાર સામાનિક દેવોની સાથે બેઠા હતા તે શુક્ર મહાગ્રહ ચન્દ્રગ્રહની પેઠે
ભગવાનની પાસે આવ્યા અને નાટ્ય વિધિ દેખડીને એમજ આલ્યા ગયા

ગૌતમને જિજ્ઞાસા થઈ કે હે ભદન્ત ! આ શુક્ર મહાગ્રહ આ પ્રકારે દેવતાઓ
દ્વારા નાટ્ય વિધિ દેખડી બધાને અન્તર્હિત કરી એકલા રહી ગયા આ બહુ આશ્ચ-
ર્યની વાત છે

ભગવાને કહ્યુ.—હે ગૌતમ ! કૂટાકારશાળા-પર્વત શિખરની પેઠે બિચા વિશાલ
મકાનમાં વરસાદના ભયથી વિખરાઈ ગયેલા જન સમૂહ જેવી રીતે અન્તર્હિત થઈ બચ
છે તેવી જ રીતે શુક્રની વૈક્રયિક શક્તિથી ઉત્પન્ન થયેલ દેવગણ નાટક દેખડી
તનાજ દેહમા સમાઈ ગયા

नाथमुपेतः एवं=वक्ष्यमाणम् अवादीत्-हे भदन्त ! ते=तव यात्रा वर्त्तते ?, ते
याप्रनीयं वर्त्तते किम् ? इति; तथा 'सरिसत्रया मासा कुल्लेत्था एण भक्खेया
वा अभक्खेया' इति, तथा 'एगे भवं, दुवे भवं' इत्यादि च सोमिलो

गौतम स्वामीने पूछा-हे भगवन् ! यह शुक्र महाग्रह अपने
पूर्व जन्ममें कौन थे ?

हे गौतम ! उस काल उस समयमें वाराणसी नामकी नगरी
थी । उस नगरीमें सोमिल नामका ब्राह्मण रहता था । वह ब्राह्मण
आढ्य यावत् अपरिभूत था । वह ऋग्वेद आदि वेद तथा उनके अङ्ग
उपाङ्गमें परिनिष्ठित था । उस नगरीमें भगवान् पार्श्वनाथ तीर्थङ्कर
पधारे । परिषद् धर्मकथा सुननेके लिये भगवानके पास गयी ।

भगवानके आनेका वृत्तान्त सुनकर उस वाराणसी नगरीमें
रहनेवाले सोमिल ब्राह्मणके हृदयमें इस प्रकार आध्यात्मिक-विचार
उत्पन्न हुआ कि सुमुक्षु जनोंके आश्रयणीय अर्हत् पार्श्वनाथ तीर्थङ्कर
तीर्थङ्करोंकी मर्यादाकी पालन करते हुए यावत् आम्रशाल वनमें पधारे हैं ।

इस लिये जाऊँ और भगवान पार्श्वनाथके समीप उपस्थित
होऊँ । और उनसे अनेकार्थक शब्दोंका अर्थ तथा हेतु=कारण अथवा
अनुमानके पञ्चावयव वाक्योंको पूछूँ । ऐसा विचार कर शिष्योंको
साथलिये बिना अकेला ही भगवानके पास आया और इस प्रकार

गौतमे पूछथु.—

हे भगवन् ! आ शुक्रमडाग्रह तेना पूर्वजन्ममा डेणु इता ?

हे गौतम ते डाले ते समये अेक वाराणसी नामनी नगरी इती ते नगरीमा
सेमिल नामे ब्राह्मणु ग्हेते। इते ते ग्राह्मणु आढ्य यावत् अपरिभूत इते।
ते ऋग्वेद वगेरे वेद तथा तेना अग अने उभागमा परिनिष्ठित इते। ते नगरीमा
भगवान पार्श्वनाथ तीर्थङ्कर पधारे परिषद् धर्मकथा सांभणवा भाटे भगवान पासं गथे

भगवानेना आववाना अमाग्रार सालणी ते वाराणसी नगरीमा र्हेवावाणा
सोमिल ग्राह्मणुना हृदयमा आ प्रकान्ते आध्यात्मिक विचार उत्पन्न थये। डे
सुमुक्षुजनाना आश्रयणीय अर्हत् पार्श्वनाथ तीर्थङ्कर तीर्थङ्कराने मर्यादानु पालन
करता अर्ही आम्रशाल वनमा पधारे। डे

आ भाटे डे गथे भगवान पार्श्वनाथनी पासं उपस्थित था। अने तेमने
अनेक अर्थवाणा-शब्दाना अर्थ तथा हेतु=कारण अथवा अनुमानना पञ्चावयव
वाक्ये। पूछु, आवे विचार करी शिष्येने प्रोत्तानी साथे लीधा वगर-अेकदान-भग-
वाननी पासं आव्ये अने आ प्रकारे भगवानने प्रश्न कर्ये।—

यत्पृष्ठवान् नच्छलेनापहासार्थम् । 'यात्रा' इत्यस्य संयममार्गेषु प्रवृत्तिरिति ।
 'यापनीयम्' इत्यस्य मोक्षमार्गे गच्छतां प्रयोजकं इन्द्रियवश्यत्वलक्षणो धर्म
 इति । 'सरिसवया' इत्यस्य सदृशवयसः सर्पपाश्च भक्ष्या वा अभक्ष्या इति ।
 'मासा' इत्यस्य माषाः पञ्चगुञ्जामानविशेषाः, धान्यविशेषाः 'उडद' इति
 प्रसिद्धाः, मासाः=कालविशेषाश्चेति । 'एगे भवं' इत्यस्य 'एको भवान्' इत्ये-
 कत्वाभ्युपगमे आत्मनः कृते श्रोत्रादिज्ञानानामवयवानाश्चात्मनोऽनेकत्वोपलब्ध्या
 एकत्वं दूषयिष्यामीत्यभिप्रायकस्य, 'दुवे भवं' इत्यस्य द्वौ भवन्ताविति द्वित्व-

भगवानसे प्रश्न किया-है भदन्त ! आपके यात्रा है ? आपके यापनीय
 है ? 'सरिसवया, मास और कुलत्थ' भक्ष्य हैं या अभक्ष्य ? आप
 एक है या दो ? इत्यादि प्रश्न किया ।

यहाँ 'यात्रा' का अर्थ है संयममार्गमें प्रवृत्ति ।

'यापनीय' का अर्थ है-मोक्षमार्गमें जानेवालोंके प्रयोजक
 इन्द्रिय और मनका बश करने रूप धर्म ।

'सरिसवया' का अर्थ है-समान अवस्थावाला और सरसों ।

'मास' का अर्थ है-मास=काल विशेष, माष=उडद, माष=
 प्राचीन रीतिसे पाँच गुञ्जावाला मान विशेष ।

'एको भवान्' इसका अभिप्राय है-यदि भगवान् पार्श्वनाथ
 आत्माकी एकता मान लेंगे तो मैं श्रोत्र आदिके ज्ञान और अवय-
 वोंसे आत्माकी अनेकता सिद्ध करूँगा ।

'द्वौ भवन्तौ' इससे यदि दो आत्मा मानेंगे तो मैं उसका

हे भदन्त ! आपने यात्रा छे णरी ? आपने यापनीय छे ? 'सरिसवया मास,
 अने कुलत्थ' लक्ष्य छे के अलक्ष्य ? आप ओक छे के जे ? इत्यादि प्रश्नो कर्था

अर्था 'यात्रा' नो अर्थ छे संयम मार्गमां प्रवृत्ति

'यापनीय' नो अर्थ छे मोक्षमार्गमां जावावाणाओना प्रयोजक इन्द्रिय अने
 मनने बश करवाइपी धर्म ।

'सरिसवया' नो अर्थ छे समान अवस्थावाणा अने सरसो ।

'मास' नो अर्थ छे मास=कालविशेष, मास=उडद, मास=प्राचीन रीत
 प्रमाणे पाँच गुञ्जावाला मानविशेष

'एको भवान्' आनो ओवो भतलण छे के जे लगवान् पार्श्वनाथ आत्मानी
 ओकता मानी देखे हु श्रोत आदिनु ज्ञान तथा अवयवोधी आत्मानी अनेकता सिद्ध करीश ।

'द्वौ भवन्तौ' आधी जे आत्मा जे मानथे-तो हु तेनु यण्ण णटन करीश ।

स्वीकारे एकत्वविशिष्टस्यार्थस्य द्वित्वेन सहात्यन्तविरोधाद् द्वित्वं दृषयिष्यामीत्यभिप्रायकस्य च एतत्प्रभृतिप्रश्नस्य तत्तदर्थं भगवानवधार्य निखिलदोषरहितं स्याद्वादपक्षमाश्रित्योत्तरमदात् । एतद्विषये विशेषजिज्ञासायां भगवतीसूत्रस्य-अष्टादशशतकदशमोद्देशकादवगन्तव्यम् । 'अत्यन्तब्राह्मणकुलप्रसूतः=अत्यन्तं=निरतिशयितं यद् ब्राह्मणकुलं तत्र प्रसूतः=उत्पन्नः विशुद्धब्राह्मणकुलोत्पन्न इति यावत् । दाराः=स्त्रियः आहुताः=परिणयविधिना स्वीकृताः, यज्ञा इष्टाः=कृताः, दक्षिणा=यज्ञसमाप्तौ कर्मणः साङ्गतासिद्धयर्थं देयं द्रव्यं, दत्ता=ब्राह्मणेभ्यो वि-

भी खण्डन करूँगा । क्यों कि जो एक है वह दो कभी हो ही नहीं सकता ।

इत्यादि सोमिल ब्राह्मणका प्रश्न सुनकर उन प्रश्नोंका उत्तर भगवानने सभी दोषोंसे रहित स्याद्वाद मतका आश्रयण करके दिया ।

इसका विस्तृत वर्णन भगवती सूत्र के अठारहवे शतकके दशवें उद्देशमे देव लेना चाहिये ।

इस प्रकार छलपूर्वक प्रश्न करनेके बाद वह उचित उत्तर पाकर बोध युक्त हो श्रावक धर्मको स्वीकार कर भगवान पार्श्वप्रभुके समीपसे अपने स्थानपर गया ।

एक समय भगवान पार्श्वप्रभु अर्हत् वाराणसी नगरीके आम्रशाल वन नामक चैत्यसे निकलकर देशमें विहार करने लगे ।

उसके बाद वह सोमिल ब्राह्मण एक समय असाधुओंके दर्शनसे तथा सुसाधुओंकी पर्युपासना नहीं करनेसे एवं मिथ्यात्वपर्यायोंके बढने और सम्यक्त्व पर्यायोंके घटनेके कारण मिथ्यात्वी हो गया ।

कैमके ने अक छे ते की पणु ठे थछ न न शके

इत्यादि सोमिल ब्राह्मणना प्रश्न सावणी तेना नवाभे। भगवाने सर्वे दोषोथी न्दित स्याद्वादमतनु आश्रयणु करीने आप्या।

आनुं विस्तारपूर्वकनु वणुंन भगवती सूत्रना अठारभा शतकना दशभा उद्देशभा जेकं लेणु जेधं

आ प्रक्षरे छलपूर्वक प्रश्न कर्या पछी ते उचित उत्तर पाभी बोधयुक्त थछ श्रावक धर्मने स्वीकारीने भगवान पार्श्वनाथ प्रभुनी पासैथी पोताने स्थाने गये।

अेक वणत भगवान पार्श्वप्रभु अर्हत् वाराणसी नगरीना आम्रशाल वन नामे चैत्यमांथी नीकर्णान देशमा विहार करवा लाग्या।

त्यार पछी ते सोमिल ब्राह्मण अेक वणत असाधुओना दर्शनथी तथा सुसाधु-

तीर्णाः । यूपाः=यज्ञस्तम्भाः निक्षिप्ताः=भूमौ निखाताः । हरितकराराज्यमान-
श्रीकाः=हरितको नीलवर्णां दूर्वादिवनस्पतिः तेन राराज्यमाना=शोशुभ्यमाना
श्रीः=छटा येषां ते हरितकराराज्यमानश्रीकाः अत एव अतीवातीव=अत्यन्तं
भृशम् उपशोभमाना उपशोभमानाः, तिष्ठन्ति=सन्ति, शेषं सुगमम् ॥३॥

एक समय मध्यरात्रिमें कुटुम्बजागरणा करते हुए उस
सोमिल ब्राह्मणके हृदयमें इस प्रकारका आध्यात्मिक यावत् मनमें
संकल्प उत्पन्न हुआ कि मैं वाराणसी नगरीका रहेनेवाला अत्यन्त
उच्च कुलमें पैदा हुआ ब्राह्मण हूँ । मैंने व्रत ग्रहण किये वेद पढ़े,
विवाह किया, पुत्रवान बना, समृद्धियोंको एकत्रित किया, पशुवध
किया, यज्ञ किया, दक्षिणा दी, अतिथिकी पूजा की, अग्निमें हवन
किया यूप=यज्ञीय स्तम्भ रोपा, इन सभी कार्योंको किया । अब मुझे
उचित है कि मैं रात बीतने पर प्रातःकालमें वाराणसी नगरीके बाहर
बहुतसे आमके बगीचे लगाऊँ, एव मातुलिङ्ग=विजोरा, वेल, कपित्थ,
(कबिठ), चिञ्चवा=इमली और फूलोंका बगीचा लगाऊँ, इस प्रकार
विचार करता है ।

रात बीतने पर सूर्योदय होते ही उसने वाराणसी नगरीके
बाहर आमके बगीचेसे लेकर फूलके बगीचा तक लगवाया । और
वे बगीचे क्रमसे संरक्षित हो संगोपित हो पूर्णरूपसे बगीचे हो
गये । हरे और हरी भरी कांतिवाले, तथा बरसने वाले नीले मेघ-

ओनी पर्युपासना न करवाथी अने मिथ्यात्व पर्यायना वधवाथी तथा सम्भ्यङ्गत्व पर्या-
यना घटवाथी मिथ्यात्वी थछ गये।

એક વખત મધ્યરાત્રિમાં કુટુમ્બ જાગરણા કરતા કરતા તે સોમિલ બ્રાહ્મણના
હૃદયમાં આવે પ્રકારના આધ્યાત્મિક એટલે મનમાં સંકલ્પ ઉત્પન્ન થયા કે—હું વારાણસી
નગરીમાં રહેવાવાહો બહુ ઊંચા કુળમાં પેદા થયેલો બ્રાહ્મણ છું, મેં વ્રત ગ્રહણ કર્યા
છે, વેદ ભણેલો છું, લગ્ન કરી પુત્રવાન બન્યો, સમૃદ્ધિ એકઠી કરી, પશુવધ કર્યા યજ્ઞ
કર્યા, દક્ષિણા આપી, અતિથિની પૂજા કરી, અગ્નિમાં હવન કર્યા, યૂપ=યજ્ઞીય કાષ્ઠને
ખોડ્યું, આ બધાં કાર્યો કર્યા હવે મારે માટે યોગ્ય છે કે હું રાત્રિ પુરી થઈ બ્યારે
સવાર પડે ત્યારે વારાણસી નગરીની બહાર ખૂબ આંગાના વૃક્ષોનો બગીચો બનાવું
તથા માતુલિંગ=ગિજોરા, વેલ, કપિત્થ, ચિચ્ચા=આમલી તથા ફુલોની વાડી બનાવું આ
પ્રકારે વિચાર કરે છે

રાત્રિ વીતી સૂર્યોદય થતા જ તેણે વારાણસી નગરીની બહાર આંગાના બગીચાથી
માડીને ફુલની વાડી સુધી બધું બનાવ્યું અને તે બગીચા હળવે હળવે સંરક્ષિત અને

मूलम्—तएणं तस्स सोमिलस्स माहणस्स अपणया कयाइ
 पुच्चरत्तावरत्तकालसमयंसि कुडुंबजागरियं जागरमाणस्स अय-
 मेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुपज्जित्था—एवं खलु अहं वाणा-
 रसीए णयरीए सोमिले नामं माहणे अच्चंतमाहणकुलप्पसूए,
 तए णं मए वयाइं चिण्णाइं जाव जूवा णिक्खित्ता, तए णं
 मए वाणारसीए नयरीए बहिया बहवे अंबारामा जाव पुप्फा-
 रामा य रोवाविया, तं सेयं खलु ममं इयाणिं कल्लं जाव
 जलंते सुबहुं लोहकडाहकडुच्छुयं तंबियं तावसभंडं घडावित्ता
 विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं मित्तनाइ० आमंतित्ता तं
 मित्तनाइणियग० विउलेणं असण० जाव संमाणित्ता तस्सेव
 मित्त जाव जेट्टुपुत्तं कुडुंबे ठावेत्ता तं मित्तनाइ जाव आपुच्छित्ता
 सुबहुं लोहकडाहकडुच्छुयं तंबियं तावसभंडगं गहाय जे इमे
 गंगाकूला वाणपत्था तावसा भवंति—तं जहा होत्तिया पोत्तिया
 कोत्तिया जन्नई सडूई थालई हुंबउट्टा दंतुक्खलिया उम्मज्जगा
 संमज्जगा निमज्जगा संपक्खालगा दक्खिणकूला उत्तरकूला संख-
 धमा कूलधमा मियलुच्चया हत्थितावसा उदंडा दिसापोक्खिणो
 वक्खवासिणो बिलवासिणो जलवासिणो रूक्खमूलिया अंबुभक्खिणो
 वायुभक्खिणो सेवालभक्खिणी मूलाहारा कंदाहारा तथाहारा
 पत्ताहारा पुप्फाहारा फलाहारा बीयाहारा परिसडियकंदमूलतय-
 पत्तपुप्फफलाहारा जलाभिसेयकट्ठिणगायभूया आयावणाहिं पंच-

वृन्दोके समान नीलिमा युक्त, एवं पत्रित, पुष्पित, और फलित होकर
 वे हरे भरे होनेके कारण अत्यन्त शोभायमान दीखने लगे ॥ ३ ॥

स गोपित थं पूष्णं इपमा णगीथा थं गया लीला, लीलीछम अन्तिवाणा, पाष्णीथी
 भरेला मेघवृन्दो (वाहणा) डोय तेवा धनीभूत रंगवाणा, पुत्रो तथा पुष्पोवाणा अने
 इणोवाणा डोवाथी तथा हरियंणा डोवाथी अहु शोभायमान हेयोवा वाग्या.

गितावेहिं इंगालसोह्रियं कंदुसोह्रियं पिव अप्पाणं करेमाणा
 विहरंति । तत्थ णं जे ते दिसापोकखिया तावसा तेसिं अंतिए
 दिसापोकखियत्ताए पव्वइत्ताए । पव्वइए वि य णं समाणे इमं
 एयारूवं अभिग्गहं अभिगिण्हिस्सामि कप्पइ मे जावजीवाए
 छट्टं-छट्टेणं अणिकखत्तेणं दिसाचक्कवालेणं तवोकम्मेणं उड्डु
 बाहाओ पगिज्झिय २ सूराभिमुहस्स आयावणभूमीए आया-
 वेमाणस्स विहरित्तएत्ति कट्टु एवं संपेहेइ, संपेहित्ता कल्लं जाव
 जलंते सुबहु लोह जाव दिसापोकखियत्तावसत्ताए पव्वइए ।
 पव्वइए वि य णं समाणे इमं एयारूवं अभिग्गहं अभिगिण्हित्ता
 पढमं छट्टुक्खमणं उवसंपज्जित्ताणं० विहरइ ॥ ४ ॥

छाया-ततः खलु तस्य सोमिलस्य ब्राह्मणस्याऽन्यदा कदाचित् पूर्व-
 रात्रापररात्रकालसमये कुटुम्बजागरिकां जाग्रतोऽयमेतद्रूप आध्यात्मिकः यावत्
 समुद्रप्रवत-एवं खल्वहं वाराणस्यां नगर्या सोमिलो नाम ब्राह्मणः अन्यन्त-
 ब्राह्मणकुलप्रभूतः, ततः खलु मया व्रतानि चीर्णानि यावद् यूपा निक्षिप्ताः ।
 ततः खलु मया वाराणस्या नगर्या बहिर्वहव आम्रारामा यावत् पुष्पारामाश्च
 रोपितास्तच्छ्रेयः खलु ममेदानीं कलये यावज्ज्वलति सुबहु लौहकटाहकटुच्छुकं
 ताम्नीयं तापसभाण्डं घटयित्वा त्रिपुठमशनं पानं खाद्यं स्वाद्यं निव ज्ञाति०
 आमन्त्र्य त मित्र-ज्ञाति-निजक० त्रिपुलेन अशन० यावत् सरमान्य तस्यैव
 मित्र० यावत् ज्येष्ठपुत्रं कुटुम्बे स्थापयित्वा तं मित्रज्ञातियावत् आपृच्छ्य सुबहुं
 लौहकटाहकटुच्छुकं ताम्नीयं तापसभाण्डकं गृहीत्वा ये इमे गङ्गाकलाः वानप-
 स्थास्तापसा भवन्ति तद्यथा-होत्रिकाः, कौत्रिकाः, यज्ञयाजिनः, श्राद्धकिनः,
 स्थालकिनः=गृहीतभाण्डाः, हुण्डिकाश्रमणाः, दन्तोदूलिकाः, उन्मज्जकाः, सम्म-
 ज्जकाः, निमज्जकाः, संपक्षालकाः, दक्षिणकूलाः, उत्तरकूलाः, शङ्खध्माः, कूलध्माः,
 मृगलुब्धकाः, हस्तितापमाः, उद्ण्डाः, दिशाप्रोक्षिणः, वल्कत्रामसः, विलत्रामिनः,
 जलवासिनः, वृक्षमूलकाः, अम्बुभक्षिणः, वायुभक्षिणः, शेवालभक्षिणः, मूला-
 हाराः, कन्दाहाराः, त्वगाहाराः, पत्राहाराः, पुष्पाहाराः, फलाहाराः, बीजाहाराः,
 परिशटितकन्दमूलत्वक्पत्रपुष्पफलाहाराः, जलाभिषेककठिनगात्रभूताः, आताप-

नाभिः पश्चाग्नितापैः अङ्गारगौल्यकं, कन्दुगौल्यकमिव आत्मानं कुर्वाणा विहरन्ति । तत्र खलु ये ते दिशाप्रोक्षकास्तापसास्तेपामन्तिके दिशाप्रोक्षकतया प्रव्रजितुम् । प्रव्रजितोऽपि च खलु सन् इममेतद्रूपमभिग्रहमभिग्रहीष्यामि-कल्पते मे यावज्जीवं पृष्ठ-पृष्ठेनानिक्षिप्तेन दिक्चक्रात्रालेन तपःकर्मणा ऊर्ध्वं वाहू प्रगृह्य २ मुराभिमुखस्याऽऽतापनभूम्यामातापयतो विहर्तुम् ।

इति कृत्वा एवं संप्रक्षते, संप्रेक्ष्य कल्पे यावज्ज्वलति गृवहुं लोह० यावत् दिशाप्रोक्षकतापसतया प्रव्रजितः । प्रव्रजितोऽपि च खलु सन् इममेतद्रूपमभिग्रहमभिग्रह्य प्रथमं पृष्ठक्षणमुपसंपद्य खलु विहरति ॥ ४ ॥

टीका-‘तएणं तस्स’ इत्यादि । लौहकटाहकटुच्छुक्रं लौहं=लोहनिर्मितम् कटाहो=भाजनविशेषः, कटुच्छुक्रो=दूर्वी=परिवेपणाद्यर्थभाजनविशेषः, कटाहकटुच्छुक्रयोः समाहारः, कटाहकटुच्छुक्रं लौहं च तत् इति कर्मधारये कृते तथा, गङ्गाकूलाः=गङ्गाकूटस्थाः गङ्गातीरवासिन इति यावत् ‘मञ्चाः क्रोशन्ति’ इत्य-

‘तएणं तस्स’ इत्यादि—

उसके बाद किसी दूसरे समय कूटुम्बजागरणा करते हुए ऊस सोमिल ब्राह्मणके हृदयमें इस प्रकार आध्यात्मिक-आत्म सम्बन्धी विचार उत्पन्न हुए कि मैंने व्रत आदि क्रिये यावत् स्तम्भ गाडे और मैं वाराणसी नगरीका अत्यन्त उच्च कुल प्रसूत ब्राह्मण हूँ, मैंने वाराणसी नगरीके बाहर बहुतसे आमके बगीचेसे लेकर फूल तकके बगीचे लगवाये अब मुझे उचित है कि रात बीतनेके बाद प्रातःकाल होते ही बहुतसी लोहेकी कडाहियाँ तथा कलछ एवं तापसाँके लिये ताँवेके वर्तन बनवाकर विपुल अशन पान खाद्य स्वाद्य बनवाकर अपने मित्र ज्ञाति आदियों को आमन्त्रित करूं ।

‘तएणं तस्स’ इत्यादि

त्यार पछी डेअ भीजे वषते दुहुंण नगरणु करता करतां ते सोमिल प्राक्षणुना हृदयमा आ प्रकारने आध्यात्मिक-आत्म विचार उत्पन्न थये डे मे व्रत आदि कर्या, यजस्त ल जोऽये अने हु वागसणी नगरीना गहु ७ या दुणमा न-मेदो प्राक्षणु छु. मे वाराणसी नगरीनी गहार धणा आणाना गगीयाथी भाडीने पुलवाडी सहित गनाव्या छे. हुवे भारे भाटे योग्य छे डे रात बीती गया पछी प्रातःकाल थतान धणीन सोढानी कडाहियो, कडहियो आदि तथा तापसाँने भाटे ताणाना वासाणु गनावीने पूण गावापीवाना भाद्य-स्वाद्य पदार्थो गनावरावीने मारा मित्र अने ज्ञातिगधुयो आदिने आमंत्रणु आयु.

त्रेवात्र गङ्गाकूलषट्स्य तत्स्थे लक्षणा बोध्या । यद्वा-गङ्गाकूलं वासत्वेनाऽस्या-
ऽस्तीति 'अर्श आदित्वादचप्रत्यये निष्पन्नोऽयं' तेन कूलशब्दस्य नपु सकत्वेऽपि
नेह पुस्त्वानुपपत्तिः । होत्रिकाः=अग्निहोत्रिकाः, पोत्रिकाः=वस्त्रधारिणो वान-
प्रस्थाः, कौत्रिकाः=भूमिशायिनो वानप्रस्थाः, यज्ञयाजिनः=याज्ञिकाः, श्राद्धकिनः
श्राद्धाः, स्थालकिनः=भोजनपात्रधारिणः, हुण्डिकाश्रमणाः=वानप्रस्थतापसविशेषाः
दन्तोदूखलिकाः=दशनैश्वर्वयित्वा भोजनशीलाः, उन्मज्जकाः=उन्मज्जनमात्रेण ये
स्नान्ति-उपरिष्ठादेव स्नानं कुर्वन्ति ते तथा, सम्मज्जकाः=उन्मज्जनस्यैवासकृत्

अनन्तर वह ब्राह्मण उन बर्तनोंको बनवाकर विपुल अशन
पान खाद्य स्वाद्य तैयार कराकर अपने मित्र ज्ञाति बन्धुओंको आमं-
त्रित कर और उन्हें जिमाकर तथा उन्हें सम्मानित कर और उन्हीं
मित्र-ज्ञाति-स्वजन बन्धुओंके सामने अपने ज्येष्ठपुत्रको कुटुम्बका
भार देकर, अपने उन सभी मित्र-ज्ञाति-बन्धुओं से पूछकर मैं
बहुतसी लोहेकी कडाहियों, कलछू और ताम्बेके बने हुए पात्रोंको
लेकर जो गंगा तीरवासी वानप्रस्थ तापस है जैसे-होत्रिक=अग्निहोत्री,
पोत्रिक=वस्त्रधारी वानप्रस्थ, कौत्रिक=भूमिशायी वानप्रस्थ, यज्ञयाजी=यज्ञ
करनेवाले, श्राद्धकी=श्राद्ध करनेवाले वानप्रस्थ, स्थालकिनः=पात्र धारण
करनेवाले, हुण्डिकाश्रमण=वानप्रस्थ तापस विशेष, दन्तोदूखलिक=दांतसे
केवल चबाकर खानेवाले, उन्मज्जक=उन्मज्जन मात्रसे स्नान करनेवाले,
अर्थात् पानी डालकर स्नान करनेवाले, सम्मज्जक=बार बार हाथसे

पछी ते प्राद्वण्णे ते प्रमाण्णे वासण्णे अनावरावी भूण आनपान आद्य-स्वाद्य
तैयार करावी पोताना मित्र अने ज्ञातिअधुव्योने आमत्रण्णे आप्थु ने जमाडया तथा
तेमनु सन्मान करी ते मित्र-ज्ञाति-स्वजन अधुव्योनी सामे पोताना मोटा पुत्रने
पोतावी कुटुम्बोने भार तेना उपर नाणी, पोताना ते सधणा मित्र-ज्ञाति अधुव्योने,
पूछी हुं धण्णी दोढानी कडाध्वो, कडाध्वो तथा तांभाना अनेवेता वासण्णे लछने ने
गंगा तीरे वसनारा वानप्रस्थ तापस छे नेवाडे-होत्रिक=अग्निहोत्री, पौत्रिक= वस्त्र-
धारी वानप्रस्थ, कौत्रिक=भूमिशायी वानप्रस्थ, यज्ञयाजी=यज्ञ करवावाणा, श्राद्धकी=
श्राद्ध करवावाणा वानप्रस्थ, स्थालकी=पात्र धारण करवावाणा, हुंडिका=श्रमण वान-
प्रस्थ तापस विशेष दन्तोदूखलिक=दातवडे केवण थावीने भावावाणा, उन्मज्जक=
उन्मज्जन मात्रथी स्नान करवावाणा अर्थात् पाण्णी नाणीने स्नान करवावाणा, सम्मज्जक=
बार बार हाथेथी पाण्णीने उछाणीने नडावावाणा, निमज्जक=पाण्णीमा डूणडी भारी नाड-

करणेन ये स्नान्ति हस्तैः पुनः पुनर्जलं गृहीत्वा स्नानं कुर्वन्ति ते तथा, नम-
ज्जकाः=स्नानार्थं निमग्ना एव जले क्षणमात्रं तिष्ठन्ति ते तथा, संप्रक्षालकाः=
ये गात्रं मृत्तिकाघर्षणपूर्वकं जलेन प्रक्षालयन्ति ते तथा, दक्षिणकूलाः=ये गङ्गाया
दक्षिणतटवासिनस्ते तथा, उत्तरकूलाः=ये गङ्गाया उत्तरतटवासिनस्ते तथा,
शङ्खधमाः=शङ्खं धमात्वा=नादयित्वा ये भुञ्जते ते तथा, कूलधमाः=कूले=तटे
स्थित्वा शङ्खं कृत्वा ये भुञ्जते ते कूलधमाः, मृगलुब्धकाः=मृगं हत्वा तेनैव
ये अनेकदिवसं भोजनतो यापयन्ति ते तथा, हस्तितापमाः=हस्तिनं मारयित्वा
तेनैव चिरकालं भोजनतो यापयन्ति ते तथा, उदण्डाः=ऊर्ध्वकृतदण्डा एव ये
संचरन्ति ते तथा, दिशाप्रोक्षिणः=उदकेन दिशःप्रोक्ष्य ये फलपुष्पादिकं समु-
च्चिन्वन्ति ते तथा, वल्कलवाससः=वृक्षत्वग्वस्त्रधारिणः, विलवासिनः=भूमिच्छिद्र-
वासिनः, जलवासिनः=जले निपण्णा एव ये तिष्ठन्ति ते तथा, वृक्षमूलकाः=
तरुतले ये निवसन्ति ते तथा, अम्बुभक्षिणः=जलादाराः, वायुभक्षिणः=पद्मा-

पानीको उछालकर नहानेवाले, निमज्जक=पानीमें डूबकर नहानेवाले,
संप्रक्षालक=मिट्टीसे शरीरको मलकर नहानेवाले, दक्षिणकूल=गङ्गाके
दक्षिण तटपर रहनेवाले, उत्तरकूल=गङ्गाके उत्तर तटपर रहनेवाले, और
शङ्खधमा=शंख बजाकर भोजन करनेवाले, कूलधमा=तटपर स्थित होकर
आवाज करते हुए भोजन करनेवाले, मृगलुब्धक=मृगको मारकर
उसीके मांससे जीवन बितानेवाले, हस्तितापस=हाथीको मारकर उसके
मांससे जीवन बितानेवाले, उदण्ड=दण्डको उँचा उठाकर चलनेवाले,
दिशाप्रोक्षी=दिशाको जलसे सींचकर उसपर पुष्प फल आदिको चू-
कर रखनेवाले, वल्कलवासस=वृक्षकी छालको धारण करनेवाले, विलवासी=
भूमिके नीचेकी खाँहमें रहनेवाले, जलवासी=जलमें ही रहनेवाले, वृक्ष-

वावाण, संप्रक्षालक=माटीथी शरीरने धोणीने नहावावाणा, दक्षिणकूल=गंगा नदीना
दक्षिण दिनारे रहेवावाणा, उत्तरकूल=गंगा नदीने उत्तर दिनारे रहेवावाणा तथा
शङ्खधमा=शंख बजाडीने भोजन करावावाणा कूलधमा=दिनाग उपर फेसी रहीने
अपना करता भोजन करावावाणा, मृगलुब्धक=भृगने मारीने तेना मांसथी खवन
वीताउवावाणा, हस्तितापस=हाथीने मारीने तेना मांसथी खवन वीताउनारा, उदण्ड=
हंडने ठाँधे उपाडी खालनाग, दिशाप्रोक्षी=दिशाओने पाणीथी मारन करीने (पाणी
छाँटीने) तेना उपर पुष्पफल वीणीने राखनारा, वल्कलवासस=वृक्षनी छालने धारण
करवावाणा, विलवासी=भूमिनी नीचेनी शुद्धाभा रहेनारा, जलवासी=जलमांख रहेनारा,

हाराः, शेवालभक्षिणः=जलोपरिस्थितहरितवनस्पतिविशेषभोजिनः, मूलाहाराः=मूलकभक्षिणः, कन्दाहाराः=सूरणादिकन्दभक्षिणः, त्वगाहारः=निम्बादित्वग्भक्षिणः, पत्राहाराः=विल्वदिपत्रभक्षिणः, पुष्पाहाराः=कुन्दशोभाञ्जनादिपुष्पभक्षिणः, फलाहाराः=कदलीफलादिभोजिनः, बीजाहाराः=कूष्माण्डादिवीजभोजिनः, परिशद्वि-तकन्दमूलत्वक्पत्रपुष्पफलाहाराः=विनष्टकन्दमूलत्वक्पत्रपुष्पफलभोजिनः, जलाभिषेककठिनमात्रभूताः=स्नात्वा २ जलाभिषेककठोरशरीरा आतापनाभि पश्चाग्नि-तापैश्च अङ्गारशौल्यं=अङ्गारे=वह्नी शूलं मांसं निपज्य पक्वं, कन्दुशौल्यं=कन्दु=तण्डुलादि भर्जनपात्रमात्रं शूलं च ताभ्यां तत्र वा घृतादिना वह्नी पक्वं कन्दु-शौल्यम् इव=तद्वद् आत्मानं कुर्वाणा विहरन्ति=अवतिष्ठन्ति । 'तत्थणं जे'

मूलक=वृक्षके मूलमें रहनेवाले, अम्बुभक्षी=जल मात्रका आहार करने-वाले, वायुभक्षी=वायु मात्रसे जीवित रहनेवाले, शेवालभोजी=जलमें उत्पन्न शेवाल=सेमारको-खानेवाले, मूलाहार=मूल खानेवाले, कन्दाहार=सूरन आदि कन्दका आहार करनेवाले, त्वगाहार=नीम आदिकी त्वचा खानेवाले, पत्राहार=बीला आदिके पत्तेका आहार करनेवाले, पुष्पाहार=कुन्द सोइजन, गुलाब आदि पुष्पका आहार करनेवाले, फलाहार=केला आदि फल खानेवाले, बीजाहार=कुम्हडा आदिका बीज खानेवाले, सडे हुए कन्द मूल त्वचा, पत्ते फूल और फल खानेवाले, जलके अभिषेकसे कठिन शरीरवाले, सूर्यकी अतापना और पश्चाग्नितापसे अंगार शौल्य=(अंगारेमें शूलपर रग्वकर पकाये हुए मांस) एवं कन्दुशौल्य=(चावल आदि भुंजनेका पात्र=कन्दु, उसमें घृत डालकर शूलपर पकाये

वृक्षमूलक=वृक्षना भूणमा रडेवावाणा, अम्बुभक्षी=जलमात्रनेज आहार लेनारा, वायु-भक्षी=वायु मात्रथीज जवन जवनारा, शेवालभोजी=जलना उपरना लागमा रडेल लीडी वनस्पति (सेवाण) भावावाणा, मूलाहाराः=भूण भावावाणा, कन्दाहाराः=सूरण वगेरे कटना आहार करनारा, त्वगाहाराः=ली भडा आदिनी छाल भावावाणा, पत्राहाराः=जिलीपत्र आदि पत्रेना आहार करवावाणा, फलाहाराः=केणां वगेरे इण भावावाणा, पुष्पाहाराः=पुष्प-कुंद, सरगवा गुलाण आदि कुलेना आहार करवावाणा, बीजाहाराः=केणु वगेरेना भी भावावाणा, सडी गयेला कडभूण, छाल, पान, इल तथा इण भावावाणा, जलना अभिषेकथी कठणु शरीरवाणा, सूर्यनी आतापना अने पश्चाग्निना तापथी अंगारशौल्य=हेवतामा शूल उपर राथीने पकावेला मांस अने कन्दुशौल्य-थीभां वगेरे राधवाना-पात्र=कडु तेभा धी नाथीने शूल पर पकावेला मांसनी पेठे

इत्यादि-अनिक्षिप्तेन=अविच्छिन्नेन दिक्चक्रचालेन=तन्नामकेन तथाहि-एकत्र पारणके पूर्वस्यां दिशि यानि फलादीनि तान्याहत्य भुङ्क्ते, द्वितीये पारणे दक्षिणस्यां दिशि स्थितानि फलादीनि चाहृत्याश्नातीत्येवं दिक्चक्रचालेन दिङ्मण्डलेन यत्र तपःकर्मणि पारणकरणं भवति तत् तपःकर्म 'दिक्चक्रवालं' कथ्यते तेन तपःकर्मणेति ॥ ४ ॥

हुण मांस) के समान अपने शरीरको कष्ट देते हुण विचरते हैं। उनमें जो दिशाप्रोक्षक हैं उनमें प्रव्रजित होनेकी इच्छा रखता हूँ, और प्रव्रजित होकर भी इस प्रकारका अभिग्रह (प्रतिज्ञा) लूंगा कि यावज्जित अन्तर रहित पष्ट पष्ट (बेला-बेलारूप) दिक्चक्रवाल तपस्या करता हुआ सूर्यके अभिमुख भुजा उठाकर आतापनभूमिमें आनापना लेता रहूंगा।

इस प्रकार मनमें सोचकर विचार करता है, और विचार करके सूर्योदय होनेपर बहुतसी लोहेकी कडाहियां यावत् लेकर दिशा-प्रोक्षक तापसके पास आया ओर दिशा-प्रोक्षक तापस हो गया। तापस होकर वह सोमिल पूर्वोक्त अभिग्रह ग्रहण करके पहला पष्ट-क्षपण तप स्वीकार कर विचरने लगा।

यहाँ 'दिक्चक्रवाल' शब्द आया है, इसका अभिप्राय है-तपस्वी तपस्याकी पारणाके लिये अपनी तपोभूमिकी चारों दिशाओंमें फलको इकट्ठा करके रखे। बादमें तपस्याकी पहली पारणामें पूर्व-

पोताना शरीरने कष्ट देता वे विचरे छं तेमा वे दिशाप्रोक्षक छे तेयोनी पासे प्रव्रजित जनवानी इच्छा राषु छु तथा प्रव्रजित यधने पषु आ प्रप्ररना अलिग्रह (प्रतिज्ञा) लभश के-न्या सुधी एषु त्या सुधी अन्तर न्हित छठ-छठ (बेला-बेलारूप) दिक्चक्रवाल तपस्या करते। सूर्यनी सामे हाथ लिया राषीने आतापन भूमिमा आतापना लेतो रहीश

आम विचार करे छे विचार करीने सूर्योदय यता घण्टी लोढानी कडाछयो कडछीयो, ताणाना तापस पात्रो आ लधने दिश प्रोक्षक तापसनी पासे आव्यो अने दिशाप्रोक्षक तापस थडं गयो तापस थधने पषु ते सोमिल पूर्वोक्त अलिग्रह पारणर लधने पडेला पष्टक्षपण स्वीकार करीने विचरवा लाग्ये

अत्रे 'दिक् चक्रवाल' शब्द आव्यो छे तेने अलिप्राय ज्येवे छे छे तपस्वी तपस्यानां पारणा माटे पोतानी तपोभूमिनी आरे दिशाभां इल बेगां करीने राषे

मूलम्—तएणं से सोमिले माहणे रिसी पढमछट्टुक्खमण-
 पारणंसि आयावणभूमीए पच्चोरुहइ, पच्चोरुहत्ता वागलवत्थ
 नियत्थे जेणेव सए उडए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता
 किढिणसंकाइयं गिणहइ, गिण्हत्ता पुरत्थिमं दिसिं पुक्खेइ,
 पुक्खित्ता ‘पुरत्थिमाए दिसाए सोमे महाराया पत्थाणे पत्थियं
 अभिरक्खउ सोमिलमाहणरिसिं, जाणि य तत्थ कंदाणि य
 मूलाणि य तयाणि य पत्ताणि य पुप्फाणि य फलाणि य
 बीयाणि य हरियाणि ताणि अणुजायउ’—त्ति कट्टु पुरत्थिमं
 दिसं पसरइ, पसरित्ता जाणि य तत्थ कंदाणि य जाव हरियाणि
 ण ताइं गिणहइ, गिण्हत्ता किढिणसंकाइयं भरेइ, भरित्ता
 दब्भे य कुसे य पत्तामोडं च समिहाकट्टाणि य गिणहइ, गि-
 ण्हत्ता जेणेव सए उडए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता
 किढिणसंकाइयगं ठवेइ, ठवित्ता बेदिं वड्डेइ वड्डित्ता उवलेवण-
 संमज्जणं करेइ, करित्ता दब्भकलसहत्थगए जेणेव गंगा महानई
 तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता गंगं महानइं ओगाहइ, ओ-
 गाहित्ता जलमज्जणं करेइ, करित्ता जलकिडुं करेइ, करित्ता
 जलामिसेयं करेइ, करित्ता आयंते चोक्खे परमसुइभूए देव-

दिशामें स्थित फलसे पारणा करे । दूसरा पारणा आनेपर दक्षिण
 दिशामें स्थित फलसे पारणा करे । इसी प्रकार अन्य पारणा आनेपर
 पश्चिम उत्तर दिशाओंमें स्थित फलका आहार करे । इस प्रकारकी
 पारणा वाली तपस्याको ‘दिक्रचक्रवाल’ कहते हैं ॥ ४ ॥

पछी तपस्याना पडेला पारणांमां पूर्व दिशाये राणेला इणथी पारणु करे भीणुं पारणु
 करवानु आवे त्यारे दक्षिण दिशाया राणेला इणथी पारणु करे आवी रीते भीण
 पारणां आवे त्यारे पश्चिम-उत्तर दिशायाया राणेला इणथी आहार करे आ प्रकारनी
 पारणायायी तपस्याने ‘दिक्र चक्रवाल’ कडे छे (४).

पिउकयकज्जे दव्भकलसहत्थगए गंगाओ महानईओ पच्चुत्तरइ,
 पच्चुत्तरित्ता जेणेव सए उडए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता
 दव्भेहि य कुसेहि य वालुयाए य वेदिं रएइ, रइत्ता सरयं
 करेइ, करित्ता अरणिं करेइ, करित्ता सरएणं अरणिं महेइ,
 महित्ता अग्गिं पाडेइ, पाडित्ता अग्गिं संधुक्खेइ, समिहाकट्टाइं
 पक्खिवइ, पक्खिवित्ता अग्गिं उज्जालेइ, उज्जालित्ता अग्गिस्स
 दाहिणे पासे सत्तंगाइं समादहे । तं जहा—“ सकत्थं वक्कलं
 ठाणं, सिज्जं भंडं कमंडलु । दंडं दारुं तहप्पाणं, अह ताइं
 समादहे । ” महुणा य घएण य तंदूलेहि य अग्गिं हुणइ,
 चरुं साहेइ, साहित्ता वलिवइस्सदेवं करेइ, करित्ता अतिहिपूर्यं
 करेइ, करित्ता तओ पच्छा अप्पणा आहारं आहारेइ ॥५॥

छाया—ततः खलु सोमिलो ब्राह्मण ऋषिः प्रथमपृक्षणपारणे आता-
 पनभूम्यां प्रत्यवरोहति, प्रत्यवरुह्य वत्कलवस्त्रनिवसितः यत्रैव स्वकं उटजस्त-
 त्रैवोपागच्छति, उपागत्य किट्ठिणसाङ्कायिकं गृह्णाति, गृहीत्वा पौरस्त्यां दिशं
 प्रोक्षति, प्रोक्ष्य “ पौरस्त्याया दिशः सोमो महाराज. प्रस्थाने प्रस्थितमभिरक्षतु
 सोमिलब्राह्मणर्षिम्, यानि च तत्र कन्दानि च मूल्यानि च त्वचश्च पत्राणि च
 पुष्पाणि च फलानि च बीजानि च हरितानि च तानि अनुजानातु,” इति
 कृत्वा पौरस्त्यां दिशं प्रमरति, प्रमृत्य यानि च तत्र कन्दानि च यावत्
 हरितानि च तानि गृह्णाति किट्ठिणसाङ्कायिकं मरति, भृत्वा दर्भश्च कुशाश्च
 पत्रामोटं च समित्काष्ठानि च गृह्णाति, गृहीत्वा यत्रैव स्वकं उटजस्तत्रैवोपा-
 गच्छति, उपागत्य किट्ठिणसाङ्कायिकं स्थापयति, स्थापयित्वा वेदीं वर्धयति, वर्ध-
 यित्वा उपलेपनसम्पार्जनं करोति, कृत्वा दर्भकलशहस्तगतो यत्रैव गङ्गां महानदीमव-
 गाहते, अवगाह्य जलमञ्जनं करोति, कृत्वा जलक्रीडां करोति, कृत्वा जला-
 भिषेकं करोति, कृत्वा आचान्तः स्वच्छः परमशुचिभूतः देवपितृकृतकार्यः, दर्भ-
 कलशहस्तगतो गङ्गातो महानदीतः प्रत्यवत्ररति, प्रत्यवतीर्य, यत्रैव स्वकं उट-
 जस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य दर्भश्च कुशैश्च चालुकया च वेदिं रचयति, रच-

यित्वा शरकं करोति, कृत्वा अरणिं करोति, कृत्वा शरकेणारणिं मथ्नाति मथित्वा अग्निं पातयति, पातयित्वा अग्निं संधुक्षते, संधुक्ष्य समित्काष्ठानि प्रक्षिपति, प्रक्षिप्य अग्निमुज्ज्वालयति, उज्ज्वाल्य, अग्नेर्दक्षिणे पार्श्वे सप्ताङ्गानि समादधाति, तद्यथा “सकत्थं १ वल्कलं २ स्थानं ३ शय्याभाण्डं ४ कमण्डलुम् ५ ॥, दारुदण्डं ६ तथाऽऽत्मानम् ७ अथ तानि समादधीत ॥१॥”

ततो मधुना च घृतेन च तण्डुलैश्चाग्निं जुहोति, चरु साधयति, साधयित्वा बलिवैश्वदेवं करोति, कृत्वाऽतिथिपूजां करोति, कृत्वा ततः पश्चात् आत्मना आहारमाहारयति ॥ ५ ॥

टीका-‘तएणं से सोमिले’ इत्यादि । ‘वागलवत्थ नियत्ये’ इति, वालुकलवस्त्रनिवसितः=वल्कल=टुक्षत्वक् तस्येदं वालुकलं तच्च वस्त्रं वालुकलवस्त्रं, तत् निवसितं=परिहितं येन स तथा परिहितवालुकलवस्त्र इति तदर्थः । आर्षत्वात् निवसितेति निष्ठान्तस्य पूर्वप्रयोगाभावः । उटजः=उटः=तृणपर्णादिस्त-

‘तेएणं सोमिले’ इत्यादि ।

उसके बाद वह सोमिल ब्राह्मण ऋषि पहला षष्ठ-क्षपण पारणेके दिन आतापन भूमि पर आता है । वहाँ आकर वह वल्कल-वस्त्रधारी तापस जहाँ उसकी कुटी थी वहाँ आया । और आकर किटिणसंकायिक (कावड) लेता है । तथा पूर्व दिशाको जलसे प्रोक्षण (सिंचन) करता है और कहता है-‘हे पूर्व दिशाके अधिपति सोम देव’ मैं सोमिल ब्राह्मण ऋषि परलोक माधन मार्गमें चलनेके लिये प्रस्थित हूँ, मेरी रक्षा करो, तथा वहाँ जो कुछ कन्द, मूल, त्वचा, पत्र, पुष्प, फल, बीज और हरित वनस्पति हैं उन्हें लेनेकी आज्ञा दो’ ऐसा कह कर पूर्व दिशामें जाता है । वहाँ जाकर जो कुछ

‘तएणं से सोमिले’ इत्यादि

द्वार पछी ते सोमिल ब्राह्मण ऋषि पडेला षष्ठक्षपणना पारणे आवतां आतापन भूमिपर आवे छे त्या आवीने ते वल्कलवस्त्र धारणु करी रडेव तापस ज्या पेटानी पणु कुटी हुती त्यां आव्यो. त्या आवीने पेटानी कावड लीधी अने ते लघने पूर्व दिशाभा जलथी सिंचन करे छे अने कडे छे—‘हे पूर्व दिशाना अधिपति सोम भडारज! परलोकमाधन मार्गभा जवा माटे प्रस्थित सोमिल ब्राह्मण ऋषिनी रक्षा करे अने त्यां जे काष्ठ कंद, मूल, छाल, पांढडा पुष्प, इल, जी तथा वीडीतरी वस्तु आदि छे ते लेवानी आज्ञा आपो’ जेभ कडीने पूर्व दिशाभा नय छे त्यां जधने

स्माज्जात उटजः=तापसानां पर्णशाला, किट्टिणसांकायिकं=किट्टिणं=वंशमयस्ता-
पसभाजनविशेषः, साङ्कायिकं=भारोद्धहनयन्त्रं किट्टिणसाङ्कायिकं=कावटं 'कावड'
इति प्रसिद्धम्, प्रस्थाने=परलोकसाधनमार्गप्रयाणे, प्रस्थितं=प्रयातम् फलाद्याह-
रणार्थं प्रवृत्तमिति यावत्, पत्राऽऽमोटं=तरुगाखामोटितपत्रसमूहं, वेदिं=अग्नि-
होत्रपूजादिस्थान वर्धयति=प्रमार्जयति, उपलेपनसम्मार्जनम्=मृत्तिकागोमयादिना
भूमिसंस्कार उपलेपनम् सम्मार्जनं=तृणादिनिर्मितसम्मार्जन्या भूमितः पिपीलि-
कादिकानां लघुकाय-जीवानामपसारणम्, देवपितृकृतकार्यः देवाश्च पितरश्च
देवपितरस्तेषां कृतं=सम्पादितं कार्यं पूजनजलाञ्जलिदानप्रभृत्तिकृत्यं येन स तथा,
दर्भकलशहस्तगतः=दर्भाः=कुशाः कलशः=घटश्च हस्ते गताः प्राप्ताः यस्य स

वहाँ कन्द मूल आदि थे उनका ग्रहण करता है और अपना कावड
भरता है। वाद इसके दर्भ, कुश पत्रामोट तोड़े हुए पत्ते और
समित्काष्ठ (हवनके लिये छोटी २ लकड़ियां)को लेकर जहाँ अपनी
कुटी थी वहाँ आया और अपनी कावड रक्खी। कावड रखकर वेदी
को बढ़ाया अर्थात् वेदी बनानेका स्थान निश्चय किया। वाद उपले-
पन और पिपीलिका (कीडी मकोडी) आदि लघुकाय जीवोंकी रक्षाके
लिये सम्मार्जन करने लगा। अनन्तर दर्भ और कलशको हाथमें लेकर
गङ्गाके तटपर आया और गङ्गामें प्रवेश कर स्नान करने लगा।
और जलमज्जन-डुवकी लगाना, जलक्रीडा=तैरना, तथा जलाभिषेक
करने लगा। वाद आचमन करके स्वच्छ और अत्यन्त शुद्ध हो देवता
और पितरोंका कृत्य करके दर्भ और कलश हाथमें लेकर गङ्गा
महानदीसे बाहर निकला, ओर अपनी कुटीमें आया। वहाँ आकर

ये कार्य कद मूल आदि इतां ते अहणु करे छे अने पोतानी कावड लरे छे पछी
तेनां दर्भ, कुश, पादडा अने समिध (डोभना काष्ठ) अने गंधुं लछ न्यां पोतानी
पर्णकुटी इती त्या आव्ये। त्यां आवीने, तेणे पोतानी कावड राभी कावड राभीने
वेदीने मोटी करी अर्थात् वेदी बनाववानुं विरतृत स्थान निश्चित कर्युं पछी उपलेपन
(लीपणु) तथा कीडी आदि लघुकाय एवेनी रक्षाने माटे सम्मार्जन करवा लाग्ये।
पछी दर्भ तथा कलशने हाथमा लछने गगाने कठे आव्ये अने तेमा प्रवेशीने
स्नान करवा लाग्ये, तथा जलमज्जन=डुवकी लगावपुं, अने जलाभिषेक करवा लाग्ये।
पछी आचमन करीने स्वच्छ अने अत्यंत शुद्ध करीने, देवता तथा पितृओंना कर्म
करीने, दर्भ तथा कलश हाथमा लछने, गंगा महानदीमाथी गडार निकळ्ये अने
पोतानी कुटीमा आव्ये त्या आवीने दर्भ अने कुशने अेक तरफ राणे छे तथा रेतीथी

तथा कुशकलशहस्त इति, शरकेण=निर्मन्थनकाष्ठेन अरणिं=घर्षणीयकाष्ठं मन्थनाति=घर्षयति, अग्निं संधुक्षते=फूत्करोति । 'समादहे'=समादधाति=स्थापयति, अत्र लटोऽथ लिङ् सौत्रत्वात्, तद्यथा=तानि अङ्गानि यथा, चरु=हवनार्थं दुग्धेन सह तण्डुलादिहविर्घृताभिघारितं साधयति=सम्पादयति, रन्धयतीति यावत् ॥५॥

दर्भ और कुश एक तरफ रखता है और बालूसे वेदी बनाता है । बादमें शरक=निर्मन्थन काष्ठ, जो अग्निके लिए धिसा जाता है; अरणि=निर्मन्थ्यमान काष्ठ, जिसपर अग्नि उत्पन्न करनेके लिए शरक धिसा जाता है, उन्हें तैयार करता है । अनन्तर शरक के द्वारा अरणि का मन्थन करता है, और मन्थन कर उससे अग्नि निकालता है फिर फूककर उसे सुलगाना है । उसमें समिध काष्ठ डालकर उसे प्रज्वलित कर अग्निके दाहिने पार्श्व (जीमणी बाजू) में सात अङ्गो (वस्तुओ) का स्थापन करता है, वे ये हैं—

(१) सकल्य तापसोंका एक उपकरण विशेष, (२) वल्कल, (३) स्थान, (४) शय्या भाण्ड, (५) कमण्डल, (६) लकड़ीका दण्डा तथा (७) आत्मा अर्थात् अपनेको अग्निके दाहिनी तरफ रखे ।

इसके अनुसार सब वस्तुओंको यथास्थान रखकर वह मधु घृत और तण्डुलसे हवन करता है । चरु=(घीसे चुपडकर हवनके लिये पकाने योग्य चावल) को सिद्धाता है । वलि-वैश्वदेव (नित्य यज्ञ) करता है । बादमें अतिथिको भोजन कराकर स्वयं भोजन करता है ॥५॥

वेदी बनावे छे पछी शरक=निर्मन्थन काष्ठ, जे अग्नि भाटे घसवामा आवे छे, ते तथा अरणि=निर्मन्थ्यमान काष्ठ, जेना उपर अग्नि उत्पन्न करवा भाटे 'शरक' घसाय छे ते तैयार करे छे. अने शरक द्वारा अरणीनु मन्थन करे छे मन्थन करी तेभाथी अग्नि प्रगट करे छे अने कुक भारी तेने सणगावे छे तेमा समाधीना काष्ठ नाथीने प्रज्वलित करे छे अग्नि प्रज्वलित करीने अग्निनी जमणी भाण्डुमा सात अंगो (वस्तुओ) नु स्थापन करे छे-जेवाके —

(१) सकल्य-तापसोनु एक उपकरण विशेष, (२) वल्कल, (३) स्थान, (४)-शय्याभाण्ड, (५) कमण्डल, (६) लकड़ीना दण्ड तथा (७) आत्मा अर्थात् पोताने अग्निनी जमणी भाण्डुमे राणे.

आ प्रमाणे अधी वस्तुओने यथास्थान राणी राध, धी तथा योभाथी अग्निमा हवन करे छे चरु=घीथी योपदीने हवनने भाटे राधवाना आवल सीआवे छे अइने सिआवी वलि वैश्वदेव, (नित्य यज्ञ) करे छे. पछी अतिथिने जमाडी पोते लोअन करेछे (५)

मूत्रम्—तए णं से सोमिले माहणरिसी दोच्चंसि छट्टुक्ख-
 मणपारणगंसि तं चेव सव्वं भाणियव्वं जाव आहारं आहारेइ,
 नवरं इमं नाणत्तं—दाहिणाए दिसाए जमे महाराया पत्थाणे
 पत्थियं अभिरक्खउ सोमिलं माहणरिसिं जाणि य तत्थ कंदाणि
 य जाव अणुजाणउ त्ति कट्टु दाहिणं दिसिं पसरइ । एवं
 पच्चत्थिमे णं वरुणे महाराया जाव पच्चत्थिमं दिसिं पसरइ ।
 उत्तरेणं वेसमणे महाराया जाव उत्तरं दिसिं पसरइ । पुव्व-
 दिसागमेणं चत्तारि विदिसाओ भाणियव्वाओ जाव आहारं
 आहारेइ ।

तए णं तस्स सोमिलमाहणरिसिस्स अण्णया कयाइ पु-
 व्वरत्तावरत्तकालसमयंसि अणिच्चजागरियं जागरमाणस्स अय-
 मेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था—एवं खलु अहं वाणा-
 रसीए नयरीए सोमिले नामं माहणरिसी अच्चंतमाहणकुलप्पसूए,
 तएणं मए वयाइं चिण्णाइं जाव जूवा निक्खित्ता । तएणं
 मए वाणारसीए जाव पुप्फारामा य जाव रोविआ । तएणं
 मए सुवहु लोह० जाव घडावित्ता जाव जेट्टुपुत्तं कुडुंवे ठावित्ता
 जाव जेट्टुपुत्तं आपुच्छित्ता सुवहु लोह० जाव गहाय मुंडे जाव
 पव्वइए वि य णं समाणे छट्टं छट्टेणं जाव विहरामि, तं सेयं
 खलु मम इयाणिं कल्लं पाउ जाव जलंते बहवे तावसे दिट्ठा-
 भट्टे य पुव्वसंगइए य परियाय संगइए य आपुच्छित्ता आ-
 समसंसियाणि य बहूइं सत्तसथाइं अणुमाणइत्ता वागलवत्थ-

नियत्थस्स किट्ठिणसंकाइयगहियसभंडोवगरणस्स कट्टमुद्दाए मुहं
 बंधिता उत्तरदिसाए उत्तराभिमुहस्स महपत्थाणं पत्थावेत्तए ।
 एवं संपेहेइ, संपेहिता कल्लं जाव जलंते बहवे तावसे य
 दिट्ठाभट्ठे य पुव्वसंगइए य तं चैव जाव कट्टमुद्दाए मुहं बंधइ,
 बंधिता अयमेयारूवं अभिग्गहं अभिगिण्हइ, जत्थेव णं अहं
 जलंसि वा एवं थलंसि वा दुग्गंसि वा निन्नंसि वा पच्च-
 यंसि वा विसमंसि वा गड्ढाए वा दरीए वा पक्खलिज्ज वा
 पवडिज्ज वा, नो खलु मे कप्पइ पच्चुट्ठित्तए त्ति कट्टु अय-
 मेयारूवं अभिग्गहं अभिगिण्हइ, अभिगिण्हित्ता उतराए दिसाए
 उत्तराभिमुहमहपत्थाणं पत्थिए से सोमिले माहणरिसी पुव्वा-
 वरण्हकालसमयंसि जेणेव असोगवरपायवे तेणेव उवागए,
 असोगवरपायवस्स अहे किट्ठिणसंकाइयं ठवेइ, ठवित्ता वेदिं
 वड्ढइ, वड्ढित्ता उवलेवणसंमज्जणं करेइ, करित्ता दब्भकलसहत्थ-
 गए जेणेव गंगा महानई जहा सिवो जाव गंगाओ महानईओ
 पच्चुत्तरइ, पच्चुत्तरित्ता जेणेव असोगवरपायवे तेणेव उवागच्छइ,
 उवागच्छित्ता दब्भेहिं य कुसेहिं य बालुयाए य वेदिं रएइ,
 रइत्ता सरगं करेइ, करित्ता जाव बलिवइस्सदेवं करेइ, करित्ता
 कट्टमुद्दाए मुहं बंधइ, तुसिणीए संचिट्ठइ ॥ ६ ॥

छाया-ततः खलु स सोमिलो ब्राह्मणऋषिर्द्वितीये षष्ठक्षपणपारणके
 तदेव सर्वं भणितव्यं-यावद् आहास्माहारयति । नवरमिदं नानात्वम्-दक्षिणस्यां

‘तएणं से सोमिले’ इत्यादि—

उसके बाद वह सोमिल ब्राह्मण ऋषिने द्वितीय छट्ट (बेला)

तएणं से सोमिले इत्यादि

सुन्दरबोधिनी टीका वर्ग ३ अ. ३ सोमिलब्राह्मणवर्णनम् ऋषिभ्यो द्वितीय षष्ठ (बेला) नु प्राश्नु
 आवता पूर्वोक्त प्रकारे णंधा उभो कथा तथा छेदवे आहार कथो. विशेष ये छे डे

दिशि यमो महाराजः प्रस्थाने प्रस्थितमभिरक्षतु सोमिलं ब्राह्मणर्षिं, याश्च तत्र कन्दांश्च यावद् अनुजानातु, इति कृत्वा दक्षिणां दिशं प्रसरति । एवं पश्चिमे खलु वरुणो महाराजो यावत् पश्चिमां दिशं प्रसरति । उत्तरे खलु वैश्रवणो महाराजो यावद् उत्तरां दिशं प्रसरति । पूर्वदिग्गमेन चतस्रो विदिशो भणितव्या यावद् आहारमाहारयति ।

ततःखलु तस्य सोमिलब्राह्मणर्षेरन्यदा कदाचित् पूर्वरात्रापररात्रकाल-समये अनित्यजागरिकां जाग्रतोऽयमेतद्रूप आध्यात्मिको यावत् समुदपद्यत एवं

का पारणा आनेपरं पूर्वोक्त प्रकारसे सभी कार्य किये और अन्तमें आहार किया । विशेष यह है कि यहाँ यमकी प्रार्थना करता है—दक्षिण दिशामें महाराज यम परलोक साधक मार्गमें प्रस्थित मुझ सोमिल ब्राह्मण ऋषिकी रक्षा करें, उस दिशामें जो कन्द, मूल, फल फूल आदि हों उन्हें लेनेकी मुझे आज्ञा दें । ऐसा कह कर दक्षिण दिशामें जाता है । इसी प्रकार पश्चिम दिशामें महाराज वरुण देव परलोक साधक मार्गमें प्रस्थित मुझ सोमिल ब्राह्मण ऋषिकी रक्षा करें, इत्यादि पूर्वोक्त त्रिधिसे पश्चिम दिशा में जाता है । बाद उत्तर दिशामें जानेके लिये उसी प्रकार महाराज वैश्रवण (कुबेर)—की प्रार्थना की और उत्तर दिशामें गया । इसी प्रकार इसने चारों—पूर्व आदि दिशाके समान चारों विदिशाओं (कोणों) में भी पूर्वोक्त त्रिधिका आचरण किया, और आहार किया ।

उसके बाद एक समय अनित्य जागरणा करते हुए उस सोमिल ब्राह्मण के हृदयमें इस प्रकारका आध्यात्मिक विचार उत्पन्न

‘दक्षिण दिशामां महाराज यम, परलोक साधक मार्गमां प्रस्थित सोमिल ब्राह्मणर्षि-रक्षा करे ते दिशामां जे कन्द, मूल, फल, फूल वगेरे होय ते देवानी आज्ञा आपो’ ओम कहीने दक्षिण दिशामां नय छे ओम प्रकारे पश्चिम दिशामां महाराज वरुण, परलोक साधक मार्गमां प्रस्थित सोमिल ब्राह्मण ऋषिनी रक्षा करे, वगेरे पूर्वोक्त विधिशी पश्चिम दिशामां नय छे, पछी उत्तर दिशामां नवा भाटे ओम प्रकारे महाराज वैश्रवण (कुबेर) नी प्रार्थना करी अने उत्तर दिशामां गयो, आपी रीते तेणे पूर्व आदि आदि दिशाओनी पेठे आदि दिशाओ (भूषा) मां पण पूर्वोक्त विधिनु आचरण करुं अने पछी आहार कर्यो ।

त्यार पछी ओम वयत अनित्य जागरण करतां करतां ते सोमिल ब्राह्मणर्षि-हृदयमां ओम प्रकारेना आध्यात्मिक विचार-उत्पन्न थयो छे—हुं वाराणसी नगरीने।

खलु अहं वाराणस्यां नगर्या सोमिलो नाम ब्राह्मणऋषिरत्यन्तब्राह्मणकूलप्रभृतः,
ततः खलु मया व्रताति चीर्णानि यावत् यूषा निक्षिप्ताः, ततः खलु मया
वाराणस्यां यावत् पुष्पारामाश्च यावद् रोपिताः, ततः खलु मया सुवहुलोह०
यावद् घटयित्वा यावत् ज्येष्ठपुत्रं कुटुम्बे स्थापयित्वा यावद् ज्येष्ठपुत्रमापृ-
च्छय सुवहुलोह० यावद् गृहीत्वा मुण्डो यावत् प्रव्रजितोऽपि च खलु सन्
पृष्ठपृष्ठेन यावत् विहरामि, तच्छ्रेयः खलु ममेदानीं कलये प्रादुर्यावज्ज्वलति
बहून् तापसान् दृष्ट-भ्रष्टांश्च पूर्वसङ्गतिकांश्च पर्यायसगतिकांश्च आपृच्छय आश्र-

हुआ कि-में वाराणसी नगरीका रहनेवाला अत्यन्त उच्च कुलमें
उत्पन्न सोमिल नामका ब्राह्मण ऋषि हैं। मैंने बहुतसे व्रत किये,
तथा यज्ञ आदि करनेसे लेकर यज्ञस्तम्भ तक गाडा। अनन्तर मैंने
वाराणसी नगरीके बाहर आमके बगीचेसे लेकर फूल तकके बगीचे
लगवाये। बाद मैंने बहुतसी लोहेकी कडाहियाँ कलछू और तापसके
लिये उपयुक्त बहुतसे ताम्बेके पात्र बनवाकर और अपने सभी
मित्र-ज्ञाति-स्वजन-बन्धुओंको बुलाकर उन्हें भोजन आदिके द्वारा
सम्मानित कर, उन ज्ञाति बन्धुओके समक्ष अपने पुत्रको कुटुम्बकी
रक्षाके लिये स्थापित कर यावत् उससे सम्मति लेकर उन लोहेकी
कडाहियाँ आदि लेकर मुण्ड होकर प्रव्रजित हुआ। और अनन्तर
रहित पृष्ठ-पृष्ठ दिक्चक्रवाल तप करता हुआ विचरण कर रहा
हूँ अब मुझे उचित है कि सूर्योदय होते ही बहुतसे दृष्टभ्रष्ट दृष्ट=जो
कभी देखे हुए यथार्थ भाव है उनसे भ्रष्ट स्वलित हैं. तथा पूर्वसंगतिक-

रहेवावाणे। अत्यन्त उच्च कुलमा जन्मला सोमिल नामना ब्राह्मण ऋषि छु मे
घण्टा घण्टा व्रत कर्था तथा यज्ञ वगेरेया भाडी यज्ञस्तम्भ जोडवा सुधी कर्म कर्था
त्यां पछी मे वाराणसी नगरीयाँ गारा आंगाना गगीयायाँ भाडी कुलवाणा गाग
सुधी गनाया पछी मे घण्टी लोढानी डडाधयो, डडणी तथा तापसने भाटे उपयेगी
अवा घण्टा ताणाना पात्रो वगेरे प्रस्तुत गनावरापी अने गारा पोताना यधगा मित्र-
ज्ञाति-स्वजन-गधुओने जे लायीने तेमने लोअन वगेरे द्वारा सम्मानित कर्था ते
ज्ञाति गधुओनी समक्ष गारा पोताना पुत्रने कुटुम्बनी रक्षने भाटे स्थापित करीने
तेनी समित लधने ते लोढानी डडाध वगेरे गधु लध मुडित यध प्रव्रजित थये
अने अन्तररहित छठ-छठ दिक् चक्रवाल तप करतो करतो विचरु छु आ भाटे मने
ओ योग्य छु के सूर्यादय थता न घण्टा दृष्ट भ्रष्ट=जो क्यारेक जेवागा आवेला

मसंश्रितानि च वह्नि सत्त्वशतानि अनुमान्य बालकलवस्त्रनिवसितस्य किङ्किण-
संक्रायिकगृहीतसभाण्डोपकरणस्य काष्ठमुद्रया मुखं बध्वा उत्तरदिशि उत्तराभिमु-
खस्य महाप्रस्थानं प्रस्थापयितुम्, एवं संपेक्ष्य कल्पे यावत् ज्वलति वह्नौ
तापसांश्च दृष्ट-भ्रष्टांश्च पूर्वमङ्गतिंश्च तदेव यावत् काष्ठमुद्रया मुखं बन्धाति,
बध्वा इममेतद्रूपमभिग्रहमभिगृह्णाति-यत्रैव खलु अहं जले वा, एवं स्थले वा
दुर्गे वा निम्ने वा पर्वते वा विषमे वा गर्त्तियां वा दर्या वा प्रखलेयं वा

पूर्वकालमें जिनसे संगति=मित्रता हुई थी ऐसे, पर्यायसंगतिक=समान
तापस पर्यायवालोंको पूछकर; आश्रम संश्रित = आश्रममें रहनेवाले
अनेक शत प्राणियोंको वचन आदिसे सन्तुष्ट कर बालकल वस्त्र पहना
हुआ कावडमें अपने भाण्डोपकरणको लेकर तथा काष्ठमुद्रासे बांधकर
उत्तराभिमुख होकर उत्तर दिशामें महाप्रस्थान (मरणके लिये जाना) करे।

वह सोमिल ब्राह्मण ऋषि इस प्रकार विचार करता है और
सूर्योदय होने पर, अपने विचारके अनुसार सभी दृष्टभ्रष्ट
आदि तापस पर्यायवालोंको पूछकर तथा आश्रमस्थ अनेक शत
प्राणियोंको वचन आदिसे सन्तुष्टकर अन्तमें काष्ठ मुद्रासे अपना मुख
बांधता है, और इस प्रकारका अभिग्रह (प्रतिज्ञा) लेता है कि-जहाँ
कहीं भी-चाहे वह जल हो या स्थल हो वा दुर्ग (विकट स्थान) हो,
अथवा नीचा प्रदेश हो वा पर्वत हो, विषम भूमि हो, वा गड्ढा हो,
वा गुफा हो, इन सबोंमेंसे कहीं भी प्रखलित होऊँ या गिर पडूँ,

यथार्थ लावेथी भ्रष्ट-स्थलित छे ते तथा पूर्व संगतिक=समान तापस पर्याय वर्ति-
ओने पूछीने, आश्रम संश्रित=आश्रममा रहेवावाणा अनेक सेकडे प्राणियोंने वचन
आदिथी संतुष्ट करी बालकल वस्त्र धारी कावडमा पोताना भाण्डोपकरण लई तथा काष्ठ
मुद्राथी भेढाने बांधी उत्तर दिशामा उत्तराभिमुख थडने महाप्रस्थान (मरणने
भाटे जलुं) करे।

ते सोमिल ब्राह्मण ऋषि आवे विचार करे छे अने सूर्योदय थता पोताना
विचार प्रमाणे गधा दृष्ट-भ्रष्ट-आदि समान तापस पर्यायवर्तियोंने पूछीने तथा
आश्रममा रहनेवाला अनेक सेकडे प्राणियोंने संतुष्ट करी काष्ठमुद्रा बडे पोतानुं
भेढु बांधे छे अने ओवे अभिग्रह (प्रतिज्ञा) ले छे डे-‘नया नया पणु ते जल
डोय डे स्थल डोय डे दुर्ग (विकट स्थान) डोय, नीचो प्रदेश डोय डे पर्वत डोय,
विषम भूमि डोय डे गडो डोय, डे गुफा डोय ओ गधाभाथी जमे ते डोय-त्या

प्रपतेयं वा नो खलु मे कल्पते प्रत्युत्थातुम्, इति कृत्वा इममेतद्रूपमभिग्रह-
मभिगृह्णाति, उत्तरस्यां दिशि उत्तराभिसुखमहाप्रस्थानं प्रस्थितः । स सोमिलो
ब्राह्मण ऋषिः पूर्वापराह्णकालसमये यत्रैव अशोकवरपादपस्तत्रैवोपागतः । अशो-
कवरपादपस्याधः किङ्किणमाङ्गायिकं स्थापयति, स्थापयित्वा वेदिं वर्धयति,
उपलेपनसम्मार्जनं करोति, कृत्वा दर्भकलशहस्तगतो यत्रैव गङ्गा महानदी यथा
शिवो यावद् गङ्गातो महानदीतः प्रत्युत्तरति, प्रत्युत्तोर्यं यत्रैव अशोकवरपाद-
पस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य दर्भैश्च कुशैश्च बालुकया च वेदीं रचयति, रच-
यित्वा शरकं करोति, कृत्वा यावद् बलिवैश्वदेवं करोति, कृत्वा काष्ठमुद्रया
मुखं बन्धाति, तूष्णीकः संतिष्ठते ॥ ६ ॥

टीका-‘तएणं से सोमिले’ इत्यादि । पूर्वदिशागमेन=कन्दमूलाद्यर्थपूर्व-
दिशागमनेन चतस्रो विदिशो भणितव्याः, अयं भाव-चतुर्दिक्षु या क्रिया कृता
सा क्रिया विदिक्ष्वपि । दृष्टभ्रष्टान्=सम्यक्त्वम्बलितान् पूर्वसङ्गतिकान्=पूर्वस्मिन्

तो मुझे वहाँसे उठना नहीं कल्पता’ ऐसा विचार करके इस प्रकारका
अभिग्रह लेता है । तथा उत्तर दिशाकी ओर महाप्रस्थानके लिए
प्रस्थित होता है । फिर वह सोमिल ब्राह्मण ऋषि अपराह्ण काल
(दिनके तिसरे प्रहर) में जहाँ सुन्दर अशोक वृक्ष था वहाँ आया ।
और उस अशोक वृक्षके नीचे अपना कावड रखा । अनन्तर वेदि=
बैठनेकी जगहको साफ किया, साफ करके जहाँ गङ्गा महानदी थी
वहाँ आया । और शिवराजऋषिके समान उस गंगा महानदीमें
स्नान आदि कृत्यकर वहाँसे ऊपर आया और जहाँ अशोक वृक्ष था
वहाँ आकर दर्भ कुश ओर बालुकासे यज्ञ वेदीकी रचना की । यज्ञ
वेदीकी रचना करके शरक और अरणिसे अग्निको प्रज्वलित कर

प्रज्वलित था उँके पडी ङउ तो गारे त्याथी उँवु न्हि कल्पे’ येम विचारी येयो
अलिथड दे छे अने उत्तर दिशा तरश् महाप्रस्थान भाटे प्रस्थित थाय छे पछी ते
सोमिल ब्राह्मण ऋषि अपराह्ण काल (द्विपसना त्रीणप्रहर) भा न्या सुद्व अशोक
वृक्ष इतु त्या आव्ये अने ते अशोक वृक्षनी नीचे पोतानी कावड राणी. अनन्तर
वेदि-अस्वनी न्याने साई करी, ते साई करीने न्या गंगा महानदी इती त्या
आव्ये अने शिवराज ऋषिनी पँडे ते गंगा महानदीभा स्नान आदि कर्म करी
त्याथी उँपर आव्ये तथा न्या अशोक वृक्ष इतु त्या आवीने-दर्भ, कुश तथा
रेतीथी यज्ञ वेदीनी रचना करी यज्ञ वेदीनी रचना करीने शरक तथा अरणीथी

आंते चर्चिताः=चर्चिताः वेः सः वाच नया पूर्वमित्राणि, पर्यायसूत्रिकान्=
नान्यपर्यायचर्चिताः, आत्तुष्टुय=हृत्तुष्टुयवचनम् । गर्वावां=परहर्षा स्वहा-
वेत्, वेत्=परहर्षाय, वेत् सः ॥ ६ ॥

सूत्र-नारणं तस्म सोमिन्समाह्वणिसिम्भ पुत्रवत्तावत्त-
कान्तसमर्थमि एणं देवं अंतियं पादवभृत् । नारणं मे देवं सोमिलं
साह्वणं सर्वं वयस्यै-दंभो सोमिन्समाह्वणा ! पत्रद्वया ! दुष्पत्रद्वयं
मे । नारणं मे सोमिले तस्म देवस्म दोषेषि तत्रेषि गयसहे
ना आहाह सो गिजागह जाव नृमिर्माणं मंत्रिद्वय । नारणं
मे देवं सोमिलेगं साह्वणिसिम्भ अणाहाहजमाणे जामेव दिमि
पादवभृत् नामेव दिमं पदवभृत् । नारणं मे सोमिले कच्छं जाव
जम्भेने वागन्वन्थानियन्थे क्रिद्वणसंक्राद्वयं गहाय गहियसंडो
वगणो कष्टमुद्राय मुहं वंथद, वंथिता उन्नगामिमुद्रे मंपथिए ।
नारणं मे सोमिले विद्वयादिमास्मि पच्छावगहकालममर्थमि
नेगेव सन्वद्रे नेगेव उवताच्छद, उवताच्छिता मन्तवणगस्म
अद्रे क्रिद्वण-संक्राद्वयं वंथद, वंथिता वंथं वंथेद, वंथिता जहा
अमोगवगपायत्रं जाव अन्ति इणद, कष्टमुद्राय मुहं वंथद,
नृमिर्माणं मंत्रिद्वय ।

नार णं तस्म सोमिन्सम्भ पुत्रवत्तावत्तकान्तसमर्थमि एणं
देवं अंतियं पादवभृत् । नारणं मे देवं अंतलिक्रवपडिवद्रे
जहा अमोगवगपायत्रं जाव पदवभृत् । नारणं मे सोमिले
कच्छं जाव जम्भेने वागन्वन्थानियन्थे क्रिद्वणसंक्राद्वयं गिणहद,

पादव वंथितवद्रेव विन्थ गज काना हे, आठ सुदामे सुव वंथिता
हे, और जैन जेव उवता हे ॥ ६ ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय (जिल २६) ॐ नमो भगवते वासुदेवाय
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॐ नमो भगवते वासुदेवाय (६)

गिण्हिता कट्टमुद्दाए मुहं बंधइ, उत्तरदिसाए उत्तराभिमुहे संपत्थिए ।

तएणं से सोमिले तइयदिवसम्मि पच्छावरण्हकालसमयंसि जेणेव असोगवरपायवे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छिता असो-
गवरपायवस्स अहे किट्ठिणसंकाइयं ठवेइ, वेइं वड्डेइ जाव गंगं
महानइं पच्चुत्तरइ, पच्चुत्तरिता जेणेव असोगवरपायवे तेणेव
उवागच्छइ, उवागच्छिता वेइं रएइ जाव कट्टमुद्दाए मुहं बंधइ,
बंधिता तुसिणीए संचिट्ठइ । तएणं तस्स सोमिलस्स पुव्वरत्ता-
वरत्तकाले एगे देवे अंतियं पाउब्भूए तंचेव भणइ जाव
पडिगए । तएणं से सोमिले जाव जलंते वागलवत्थनियत्थे
किट्ठिण संकाइयं जाव कट्टमुद्दाए मुहं बंधिता उत्तराए दिसाए
उत्तराभिमुहे संपत्थिए ।

तएणं से सोमिले चउत्थे दिवसे पच्छावरण्हकालसमयंसि
जेणेव वडपायवे तेणेव उवागए, वडपायवस्स अहे किट्ठिणसं-
काइयं ठवेइ, ठवित्ता वेइं वड्डेइ, उवलेवणणसंमज्जणं करेइ जाव
कट्टमुद्दाए मुहं बंधइ, तुसिणीए संचिट्ठइ । तइणं तस्स सोमिल-
स्स पुव्वरत्तावरत्तकाले एगे देवे अंतियं पाउब्भूए तं चेव भणइ
जाव पडिगए । तएणं से सोमिले जाव जलंते वागलवत्थ-
नियत्थे किट्ठिणसंकाइयं जाव कट्टमुद्दाए मुहं बंधइ, बंधिता
उत्तराए दिसाए उत्तराभिमुहे संपत्थिए ।

तएणं से सोमिले पंचमदिवसम्मि पच्छावरण्हकालसम-
यंसि जेणेव उंवरपायवे तेणेव उवागच्छेइ, उंवरपायवस्स अहे
किट्ठिणसंकाइयं ठवेइ, वेइं वड्डेइ जाव कट्टमुद्दाए मुहं बंधइ
जाव तुसिणीए संचिट्ठइ ।

तएणं तस्स सोमिलमाहणस्स पुव्वरत्तावरत्तकाले एगे देवे
जाव एवं वयासी-हंभो सोमिला ! पव्वइया । दुप्पव्वइयं
ते पढमं भणइ, तहेव तुसिणीए संचिट्ठइ । देवो दोच्चंपि
तच्चंपि वदइ सोमिला ! पव्वइया दुप्पव्वइयं ते । तएणं से
सोमिले तेणं देवेणं दोच्चंपि तच्चंपि एवं वुत्ते समाणे तं देवं
एवं वयासी-कहणं देवाणुप्पिया ! मम दुप्पव्वइयं ? । तएणं
से देवे सोमिलं माहणं एवं वयासी-एवं खलु देवाणुप्पिया !
तुमं पासस्स अरहओ पुरिसादाणीयस्स अंतियं पंचाणुव्वए
सत्तसिक्खावए दुबालसविहे सावगधम्मे पडिवन्ने, तएणं तव
अण्णया कयाइ असाहुदंसणेण पुव्वरत्ता० कुडुंव० जाव पुव्वचिं-
तियं देवो उच्चारेइ जाव जेणेव असोगवरपायवे तेणेव उवा-
गच्छसि, उवागच्छित्ता किट्ठिणसंकाइयं जाव तुसिणीए संचिट्ठइ ।
तएणं पुव्वरत्तावरत्तकाले तव अंतियं पाउव्वभवामि हं भो सोमिला !
पव्वइया ! दुप्पव्वइयं ते तह चेव देवो नियवयणं भणइ जाव
पंचमदिवसम्मि पच्छावरण्हकालसमयंसि जेणेव उंवरवरपायवे
तेणेव उवागए किट्ठिणसंकाइयं ठवेसि, वेइं वड्ढेसि, उवलेवणं
संमज्जणं करेसि, करित्ता कट्टमुद्दाए मुहं बंधेसि, बंधित्ता तुसि-
णीए संचिट्ठसि, तं चेवं खलु देवाणुप्पिया ! तव पव्वइयं दुप्प-
व्वइयं । तएणं से सोमिले तं देवं एवं वयासी-कहणं देवा-
नुप्पिया ! मम सुप्पव्वइयं ? तएणं से देवे सोमिलं एवं वयासी
जइणं तुमं देवाणुप्पिया । इयाणिं पुव्वपडिवण्णाइं पंच अणु-
व्वयाइं सत्तसिक्खावयाइं सममेव उवसंपजित्ताणं विहरसि,
तोणं तुज्झ इदाणिं सुपव्वइयं भविज्जा । तइणं से देवे सोमिलं

वंदइ नमंसइ, वंदिता नमंसिता जामेव दिंसि पाउब्भूए
जाव पडिगए ।

तएणं से सोमिले माहणरिसी तेणं देवेणं एवं बुत्ते
समाणे पुव्वपडिवन्नाइ पंच अणुवयाइ सयमेव उवसंपज्जिताणं
विहरइ ।

तएणं से सोमिले बहूहिं चउत्थ छट्ठम जाव मासद्ध-
मासखमणेहिं विचित्तेहिं तवोवहाणेहिं अप्पाणं भावेमाणे बहुइं
वासाइं समणोवासगपरियागं पाउणइ, पाउणित्ता अद्धमासियाए
संलेहणाए अत्ताणं झूसेइ, झूसित्ता तीसं भत्ताइं अणसणाए
छेदेइ, छेदिता तस्स ठाणस्स अणालोइयपडिक्कंते विराहियसम्मत्ते
कालमासे कालं किच्चा सुक्कवडिसए विमाणे उववायसभाए
देवसयणिज्जंसि जावतोगाहणाए सुक्कमहग्गहत्ताए उववन्ने ।
तएणं से सुक्के महग्गए अहुणोववन्ने समाणे जाव भासा-
मणपज्जत्तीए० ।

एवं खलु गोयमा ! सुक्केणं महग्गहेणं सा दिवा जाव
अभिसमन्नागया, एणं पलिओवमं ठिई । सुक्के णं भंते !
महग्गहे तओ देवलोगाओ आउक्खएणं ३ कहिं गच्छहिइ ?
२ गोयमा ! महाविदेहे वासे सिज्झहिइ ५ । एवं खलु
जंबू ! समणेणं निक्खेवओ ॥ ७ ॥

॥ तइयं अज्झयणं समत्तं ॥ ३ ॥

छाया-ततः खलु तस्य सोमिल ब्राह्मणऋषेः पूर्वरात्रापररात्रकालसमये
एको देवोऽन्तिकं प्रादर्भूतः । ततः खलु स देवः सोमिलं ब्राह्मणमेवमन्नादीत्-
हं भो सोमिलब्राह्मण ! प्रव्रजित ! दुष्प्रव्रजितं ते । ततः खलु स सोमिल-
स्तस्य देवस्य द्वितीयमपि तृतीयमपि एतमर्थं नो आद्रियते नो परिजानाति

यावत् तृष्णीकः संतिष्ठते । ततः खलु स देवः सोमिलेन ब्राह्मणपिणा अनाद्रि-
यमाणः यस्या दिगः प्रादुर्भूतन्तामेव दिशं प्रतिगतः । ततः खलु स सोमिलः
कल्ये यावत् ज्वलति बालकलवस्त्रनिवसितः किट्टिणसाङ्कायिकं गृहीत्वा गृहीत-
भाण्डोपकरणः काष्ठमुद्रया मुग्धं वध्नाति, वध्न्वा उत्तगामिमुखः संप्रस्थितः ।
ततः खलु स सोमिलो द्वितीयदिवसे पश्चादपराह्णकालममये यत्रैव सप्तपर्णः
तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य सप्तपर्णस्य अधः किट्टिणसाङ्कायिकं रथाप्यति, स्था-

‘तएण तस्स’ इत्यादि—

उसके बाद उस सोमिल ब्राह्मण ऋषिके नामने मध्य रात्रिके
समय एक देवता प्रकट हुआ । उसके बाद वह देव सोमिल ब्राह्मण-
को इस प्रकार कहा—है प्रव्रजिन सोमिल ब्राह्मण ! तेरी यह दुष्प्र-
व्रज्या है । इस प्रकार उस देवके द्वारा दो तीन बार कहे जानेपर
भी वह सोमिल उस देवताकी बातका आदर नहीं करता है न उसकी
तरफ ध्यान ही देता है, किंतु मौन होकर रहता है उसके बाद उस
सोमिल ब्राह्मणसे अनादृत वह देव जिस दिशासे आया उसी दिशामें
चला गया ।

उसके बाद बालकलवस्त्रधारी वह सोमिल सूर्योदय होनेपर
काष्ठको उठाकर अपना भाण्ड-उपकरण लेकर काष्ठमुद्रासे अपना
मुँह बांधकर उत्तर दिशाकी ओर प्रस्थान करता है ।

अनन्तर वह सोमिल ब्राह्मण दूसरे दिन अपराह्ण कालके अंतिम
प्रहारमें जहां सप्तपर्ण वृक्ष था वहां आया । और सप्तपर्ण वृक्षके

तएणं तस्स इत्यादि

त्यां पछी ते सोमिल ब्राह्मणु ऋषिणी आमे मध्यरात्रिने वपंत अेक देवता
प्रकट थयो पछी ते देवे सोमिल ब्राह्मणुने आम उद्युं;—हे प्रव्रजित सोमिल ब्राह्मण !
तारी आ प्रव्रज्या दुष्प्रव्रज्या (दोषवाणी) छे अे प्रकारे ते देवनी द्वारा अे त्रणु वार
उडेवामा आवता छता पणु ते सोमिल ते देवतानी वार्तना आदर करतो नथी छे नथी
तेना तरङ्ग ध्यान पणु देतो पणु अेइहम मौन थय जय छे त्यां पछी ते सोमिल
ब्राह्मणुथी अनादर पामेवो देव न्णानुथी आव्यो हतो ते पणुअे आव्यो गयो

त्यां पछी बालकलवस्त्रधारी ते सोमिल सूर्योदय थला कावड उपाडी पोताना अड
उपकरणु लधने काष्ठमुद्राथी पोतानु मोहुं पांथीने उत्तर तरङ्ग प्रस्थान करे छे

पछी ते सोमिल ब्राह्मणु थीने दिवस अपराह्ण कालना छेइला पडारमां (सांज)
न्या सप्तपर्ण वृक्ष हतुं त्यां आव्यो, अने सप्तपर्णनी नीचे पोतानी कावड राभीने

पयित्वा वेदिं वर्धयति, वर्धयित्वा यथा अशोकवरपादपे यावत् अग्निं जुहोति,
काष्ठमुद्रया मुखं वध्नाति, तूष्णीकः संतिष्ठते ।

ततः खलु तस्य सोमिलस्य पूर्वरात्रापररात्रकालसमये एको देवोऽन्तिकं
प्रादुर्भूतः । तत खलु स देवोऽन्तरिक्षप्रतिपन्नः यथा अशोकवरपादपे यावत्
प्रतिगतः । ततः खलु स सोमिलः कल्पे यावत् ज्वलति बालकलवस्त्रनिवसितः
कण्ठिणसाङ्कायिकं गृह्णाति, गृहीन्वा काष्ठमुद्रया मुखं वध्नाति, बद्ध्वा उत्तरा-
भिमुखः संप्रस्थितः

नीचे अपना कावड रखता है, कावड रखकर वेदी बनाता है, और
जैसे अशोक वृक्षके नीचे उसने किया वैसे ही सभी कार्य किये ।
अन्तमें उसने हवन किया और काष्ठमुद्रासे अपना मुँह बांधकर
मौन होकर बैठ गया । उसके बाद उस सोमिल ब्राह्मणके समक्ष
मध्यरात्रिके समय एक देव प्रकट हुआ । और आकाशमें खड़ा होकर
अशोक वृक्षके नीचे जिस प्रकार पहले उस सोमिल ब्राह्मणको देवता
ने कहा था उसी प्रकार फिर भी कहा, परन्तु उस सोमिल ब्राह्मण-
को देवताने कहा था उसी प्रकार फिर भी कहा, परन्तु उस सोमिल
ब्राह्मणने उस देवताकी बातपर कुछ भी ध्यान नहीं दिया । सुनी
अनसुनी करके केवल चुप रह गया । वह देवता अन्तर्हित हो गया ।
उसके बाद बालकलवस्त्रधारी वह सोमिल ब्राह्मण अपना कावड ग्रहण
करता है और काष्ठमुद्रासे अपना मुँह बांधता है । अनन्तर वह
उत्तर दिशामें उत्तराभिमुख होकर प्रस्थित हुआ ।

उसके बाद वह सोमिल ब्राह्मण तीसरे दिन चौथे पहरमें जहाँ

वेदी बनावे छे अने जेवी रीते अशोक वृक्षनी नीचे तेहे कर्या हुता तैवान् जधा
कर्मा करी अन्ते तेहे हवन कर्यो अने काष्ठमुद्राथी पोतानुं भेहु जाथी मौन धर
रहेवा लाग्यो । पछी ते सोमिल ब्राह्मणनी समक्ष मध्यरात्रिने वधते अक देव प्रकट
थयो अने आकाशमा उलो रही अशोकवृक्षनी नीचे जेभ पडेवा ते सोमिल ब्राह्मणने
देवताअे उछु हुतु तेवी न रीते वणी करीने उछु । परतु ते सोमिल ब्राह्मणु ते देवतानी
वात उपर काष्ठ पणु ध्यान न आप्थु सांभण्यु न सांभण्यु करीने जिलकल चुप धर
रह्यो ते देवता अतुर्ध्यान धर गयो । पछी बालकलवस्त्रधारी ते सोमिल ब्राह्मणु पोतानी
कावड दीधी अने काष्ठमुद्राथी पोतानु भेहु जाथे छे । त्याज पछी उत्तर दिशामा
उत्तराभिमुख थरने आवा भांड्युं ।

ततः खलु स सोमिलस्तृतीयदिवसे पश्चादपराह्णकालसमये यत्रैवाशोकवरपादपस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य अशोकवरपादपस्याधः किट्टिणसाङ्काधिकं स्थापयति, वेदि वर्धयति, यावद् गङ्गां महानदीं प्रत्युत्तरति, प्रत्युत्तीर्य यत्रैवाशोकवरपादपस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य वेदिं रचयति, यावत् काष्ठमुद्रया मुखं वध्नाति, वद्ध्वा तूष्णीकः संतिष्ठते । ततः खलु तस्य सोमिलस्य पूर्वसात्रापररात्रकाले एको देवोऽन्तिकं प्रादुर्भूतः तदेव भणति यावत् प्रतिगतः । ततः खलु स सोमिलो यावत् ज्वलति बालकलवस्त्रनिवसितः किट्टिणसाङ्काधिकं यावत् काष्ठमुद्रया मुखं वध्नाति, वद्ध्वा उत्तरभ्यां दिशि उत्तराभिमुखं सप्रस्थिनः ।

ततः खलु स सोमिलः चतुर्थे दिवसे पश्चादपराह्णकालसमये यत्रैव वटपादपस्तत्रैवोपागतः, वटपादपस्याधः किट्टिणसाङ्काधिकं स्थापयति, स्थाप-

अशोक वृक्ष था वहाँ आया । वहाँ आकर कावड रखता है, और बैठनेके लिये वेदी बनाता है ओर पहलेके ही तरह सभी कार्य करके काष्ठमुद्रासे मुँह बाँधता है, अनन्तर मौन होकर बैठ जाता है । उसके बाद मध्यरात्रिमें उस सोमिल ब्राह्मणके समीप एक देव प्रकट हुआ और फिर उसने उसी प्रकार कहा और यावत् चला गया । उसके बाद सूर्योदय होनेपर बालकल वस्त्रधारी वह सोमिल ब्राह्मण अपना कावड उठाता है और काष्ठमुद्रासे अपना मुख बाँधता है और उत्तराभिमुख हो उत्तर दिशामें प्रस्थान करता है ।

उसके बाद वह सोमिल ब्राह्मण चौथे दिवसके चौथे पहरमें जहाँ वडका वृक्ष था वहाँ आया । और उस वट वृक्षके नीचे अपना

पछी ते सोमिल ब्राह्मण त्रीजे दिवसे यथा पहारमा न्यां अशोक वृक्ष उतु त्या आवी डावड भूकीने भेसवा माटे वेदी गनावे छे पहिलानी प्रमाणे अधा कर्भो-करी डाष्ठमुद्राथी भोदु गाधी पछी मौन थछ भेसी नय छे त्यार पछी मध्यरात्रिमा ते सोमिल ब्राह्मणनी पासे ओडे देव प्रगट थये अने वणी तेणे तेज प्रकारे कहुं अने पछी आव्यो गयो त्यार पछी सूर्योदय थता वडकलवस्त्र धारी ते सोमिल ब्राह्मण पोतानी डावड उपाडे छे अने डाष्ठमुद्राथी पोतानु भोदु गाधे छे अने पछी उत्तर दिशामा उत्तराभिमुख थधने आलवा माडे छे

त्यार पछी ते सोमिल ब्राह्मण चौथे दिवसे यथा पहारमा न्यां वडनु वृक्ष उतु त्या आव्यो अने ते वरना आउनी नीचे पोतानी डावड गणी पछी भेसवानी

यित्वा वेदिं वर्धयति, उपलेपनसंमार्जनं करोति यावत् काष्ठमुद्रया मुखं बन्धाति तूष्णीकः संतिष्ठते । ततः खलु तस्य सोमिलस्य पूर्वरात्रापररात्रकाले एको देवोऽन्तिकं प्रादुर्भूतः । तदेव भणति यावत् प्रतिगतः । ततः खलु स सोमिलो यावज्ज्वलति वालकलत्रस्त्रनिवमितः किङ्किणसाङ्कायिक यावत् काष्ठमुद्रया मुखं बन्धाति वद्ध्वा उत्तरस्यां दिशि उत्तगामिमुखः संप्रस्थितः ।

ततः खलु स सोमिलः पञ्चमदिवसे पश्चादपराह्णकालसमये यत्रैव उदुम्बरपादपस्तत्रैवोपागच्छति, उदुम्बरपादपम्बाधः किङ्किणसाङ्कायिकं स्थापयति, वेदिं वर्धयति यावत् काष्ठमुद्रया मुखं बन्धाति यावत् तूष्णीकः संतिष्ठते ।

ततः खलु तस्य सोमिलब्राह्मणस्य पूर्वरात्रापररात्रकाले एको देवः यावत् एवमवादीत्—हं भो सोमिल ! प्रव्रजित ? दुष्प्रव्रजितं ते प्रथमं भणति तथैव तूष्णीकः संतिष्ठते, देवो द्वितीयमपि तृतीयमपि वदति सोमिल ! प्रव्र-

कावड रखा । अनन्तर बैठनेकी वेदीको बनाया और उमको गोबर मिट्टीसे लीपा और साफ कियों बाद में मौन होकर बैठ गया, उसके बाद मध्य रात्रिके समय उस सोमिल ब्राह्मणके समीप एक देव प्रगट हुआ । और उसने वैसे ही कहा यावत् अन्तर्हित हो गया ।

उसके बाद वह सोमिल पांचवे दिनके चौथे पहरमें जहां उदुम्बर (गुलर) का वृक्ष था वहां आता है और उदुम्बर वृक्षके नीचे अपना कावड रखता है और वेदी बनाता है, यावत् काष्ठमुद्रासे मुख बांधता है और मौन होकर रहता है । उसके बाद मध्य रात्रिमें उस सोमिल ब्राह्मणके पास एक देव प्रकट हुआ और यावत् इस प्रकार कहा—हे सोमिल प्रव्रजित ! तुम्हारी यह प्रव्रज्या दुष्प्रव्रज्या है, इस प्रकार पहली बार उस देवताके मुखसे बाणी सुनकर वह

वेदी बनायी तो छाया भाटाथा लीपी अने साइ करी पछा मौन थयन भेठो त्यार पछा मध्यरात्रिने वपते ते सोमिल ब्राह्मणुनी पासे अक देव प्रगट थयो अने तेणे अमन्य अगाडि प्रभाणे कहु अने अतर्धान थय गयो

त्यार पछी ते सोमिल पाचमा दिवसे योथा पडोरे ज्या उदुम्बर (उमरे) नुं वृक्ष इतु त्या आवे छे अने ते उदुम्बर वृक्षनी नीचे पोतानी कावड राणी वेदी बनावे छे पडेलानी साइक गधा कृत्यो करी पछी काष्ठमुद्राथी मोदु गाधी मौन रहे छे त्यार पछी मध्यरात्रिमां ते सोमिल ब्राह्मणुनी पासे अक देव प्रगट थयो अने आ प्रकारे कहु—हे सोमिल प्रव्रजित ! तारी आ प्रव्रज्या दुष्प्रव्रज्या छे आ प्रकारनी पडेलीवारनी वाणी ते देवताने मुखेथी सावणी ते सोमिल मान रहं छे पछी ते देव

जित् ? दुष्प्रजितं ते । ततः खलु म सोमिल्लमेन देवेन द्वितीयमपि तृतीय-
मप्येवमुक्तः मन तं देवमेववार्दान-कथं खलु देवानुप्रिय ! मम दुष्प्रजितम

ततः खलु म देवः सोमिल्लं ब्राह्मणयेवमवार्दान-एवं खलु देवानुप्रिय !
त्वं पार्श्वम्याहंतः पुनवादानार्तीयम्याल्लिकं पञ्चानुव्रतानि ममशिक्षाव्रतानि द्वादश-
विध श्रावक्यमं प्रतिपन्नः, ततः खलु तवाऽन्यथा कदाचिन् असावुदर्शनेन
पूर्वात्रा० कुटुम्ब० यावत् पूर्वचिन्तितं देव उच्चारयति यावत् यत्रैवाऽऽंक-

सोमिल्ल सोम रहता है । अनन्तर उस सोमिल्लने उस देवतासे
दुवाग निवाग कहे जानेपर इस प्रकार कहा-हे देवानुप्रिय ! मेरी
प्रज्या दुष्प्रज्या क्यों है ?

सोमिल्लके इस प्रकार पूछनेपर उस देवतासे इस प्रकार कहना
आरम्भ किया—

सोमिल्लके इस प्रकार पूछनेपर उस देवतासे इस प्रकार कहना
आरम्भ किया—

हे देवानुप्रिय ! तुम मुमुक्षु जनोंसे संव्य पार्श्व अहंतके
समीप पाँच अनुव्रत इस प्रकार शिक्षाव्रत, इस प्रकार बारह व्रतस्य
श्रावक धर्मको स्वीकार किया । उसके बाद असावुओंके दर्शनसे
तुमने इस धर्मका परित्याग कर दिया । अनन्तर एक समय मध्य
रात्रिमें कुटुम्ब जागरणा करते हुए तुम्हारे मनमें विचार पैदा हुआ
कि-‘गङ्गाके किनारोंमें तपस्या करनेवाले विविध प्रकारके वानप्रस्थ
तापस हैं, उन तापसोंमें जो दिशाप्रोक्षक तापस हैं उनके पास
छोटेकी कडाहियाँ बल्लु और नाम्बेका तापसपात्र बनवाकर उसे

देव श्री००० वृ श्री०००० पर्यु देमिदने तेव प्रशदे उहे छे. येमिदे ते देवतानी वल्ली
श्रावणी आ प्रशदे उहे—

हे देवानुप्रिय ! मेरी प्रज्या दुष्प्रज्या हैम छे ?
येमिदना क प्रशदे पूछवथी ते देवता आ प्रशदे उहेव सारथेः—

हे देवानुप्रिय ! मैं मुमुक्षुजनोंकी सेवाता पार्श्व अहंतनी पाँच पाँच वल्लु
व्रत, सात शिक्षा व्रत येव सणी बार व्रत रूप श्रावक धर्मने स्वीकार थ्यो.
त्यार पछी असावुकेना दर्शनथी तमे आ धर्मने परित्याग थ्यो. पछी केठ समय
मध्यरात्रिमें कुटुम्ब जागरणु उरतां उरतां तमारुं मतमा केयो विचार उन्पत्त थ्यो दे,
जगंम उहे तपस्यः असावु पा वल्लु वल्लु प्रशदेना वानप्रस्थ तापस छे ते तापसेमा
ने दिशाप्रोक्षक तापस छे तेनी पये, देवतानी उरथके उरथी तथा पाँचाना तापसपात्र

वरपादपस्तत्रैवोपागच्छसि, उपागत्य किट्ठिणसाङ्कायिकं यावत् तूष्णीकः संतिष्ठसे । ततः पूर्वरात्रापररात्रकाले त्वान्तिकं प्रादुर्भवामि—हं भो सोमिल ! प्रव्रजित ? दुष्प्रव्रजितं ते तथैव देवो निजवचनं भणति यावत् पश्चमदिवसे पश्चादपराह्णकालसमये यत्रैव उदुम्बरपादपस्तत्रैवोपागतः किट्ठिणसाङ्कायिकं स्थापयसि, वेदीं वर्धयसि, उपलेपनं संमार्जनं करोषि, कृत्वा काष्ठमुद्रया मुखं वर्धयसि, वदध्वा तूष्णीकः संतिष्ठसे, तदेवं खलु देवानुप्रिय ! तत्र प्रव्रजितं दुष्प्रव्रजितम् ।

लेकर जाऊँ और दिशाप्रोक्षक तापस बनूँ । इत्यादि सोमिल ब्राह्मणके द्वारा पूर्व चिंतित विचारोंको देवताने उससे कहा । और फिर उसने कहा कि—‘बादमें तुमने दिशाप्रोक्षक तापसके समीप दीक्षा ली और अभिग्रह लिया यावत् जहाँ अशोक वृक्ष था वहाँ आये और वहाँ कावड रख अपना सभो कृत्य किया बाद मेरे द्वारा प्रतिबोधित होनेपर भी तुमने उसपर ध्यान नहीं दिया और मौन होकर रह गये । इस प्रकार मैने चार दिन तक तुम्हें समझाया पर तुमने ध्यान नहीं दिया । बाद आज पाँचवें दिवस चौथे पहरमें यहाँ उदुम्बर वृक्षके नीचे तुमने अपना कावड रखा, बैठनेकी जगहको साफ किया, अनन्तर उपलेपन और सम्मार्जन किया और काष्ठमुद्रासे अपना मुँह बाँधकर तुम मौन होकर बैठे । हे देवानुप्रिय ! इस प्रकार तुम्हारी यह प्रव्रज्या दुष्प्रव्रज्या है !

पनावरावी ते लघने ङठि अने दिशाप्रोक्षक तापस गनु.’ वगेरे सोमिल ब्राह्मणुना मनमा पूर्व चिंतन करेला जे विचारा हुता ते देवताअ तेने कहेला इरी तेणे कहु के-त्यारे ङाह तमे दिशाप्रोक्षक तापसनी पासे दीक्षा लीधी अने अभिग्रह लीधी त्यारथी ज्यां अशोक वृक्ष हुतु त्या आव्या अने त्या कावड राभी तमे तमारा सर्वे कर्मा कर्मा पछी मारा द्वारा प्रतिबोधित कराया छता पणु तमे ते उपर ध्यान न आप्यु अने मौन रह्या. आ प्रकार मे चार दिवस सुधी तमने समज्ज्या पणु तमे ध्यान न आप्यु. ङाह आगे पाचमा दिवसना चौथा पहरमा अही उदुम्बर वृक्षनी नीचे तमे तमारी कावड राभी जेसवानी जग्याने साफ करी पछी ते लीधी अने सम्मार्जन कर्यु अने काष्ठमुद्राथी पोतानु मोहु ङाधी मौन थर्यु जेठा छे. हे देवानुप्रिय ! आ प्रकारनी तमारी आ प्रव्रज्या दुष्प्रव्रज्या छे.

ततः खलु स सोमिलस्तं देवमेवमवादीत्—अथं खलु देवानुप्रिय !-मम सुप्रव्रजितं ? । ततः खलु स देवः सोमिलमेवमवादीत्—यदि खलु त्वं देवानुप्रिय ! इदानीं पूर्वप्रतिपन्नानि पञ्चानुव्रतानि सप्तशिक्षाव्रतानि स्वयमेव उपसंपद्य खलु विहरसि तर्हि खलु तवेदानीं सुप्रव्रजितं भवेत् । ततः खलु स देवः सोमिल वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्थिता यस्या दिशः प्रादुर्भूतः यावत् प्रतिगतः ।

ततः खलु सोमिलो ब्राह्मण ऋषिस्तेन देवेन एवमुक्तः सन् पूर्वप्रतिपन्नानि पञ्चानुव्रतानि सप्तशिक्षाव्रतानि स्वयमेव उपसंपद्य खलु विहरति । ततः खलु स सोमिलो बहुभिश्चतुर्थषष्ठाष्टमयावन्मासाद्धैमासक्षपणैर्विचित्रैस्तपउपधानैरात्मनं भावयन् वह्नि वर्षाणि श्रमणोपासकपर्यायं पालयति, पालयित्वा अर्थ-

उसके बाद सोमिलने कहा—हे देवानुप्रिय ! अब आप ही बताओ कि मैं कैसे सुप्रव्रजित बनूँ । उसके बाद उस देवने सोमिल ब्राह्मणसे इस प्रकार कहा—हे देवानुप्रिय ! यदि तुम पहले ग्रहण किया हुआ पाँच अनुव्रत और सात शिक्षाव्रतको स्वयमेव स्वीकार कर विचरण करो तो यह तुम्हारी प्रव्रज्या सुप्रव्रज्या हो जाय । उसके बाद उस देव सोमिल ब्राह्मणको वन्दन और नमस्कार कर जिस दिशासे प्रादुर्भूत हुआ उसी दिशामें अन्तर्हित हो गया ।

उस देवके अन्तर्हित होजानेपर उसके कथनानुसार वह सोमिल ब्राह्मण ऋषि प्रथम स्वीकृत पाँच अनुव्रत और सात शिक्षाव्रत अपने हीसे स्वीकार कर विचरण करता है । उसके बाद वह सोमिल बहुतसे चतुर्थ षष्ठ अष्टम यावत् मासार्ध मासक्षपणरूप

त्यार बाद सोमिले कहुः—हे देवानुप्रिय ! तो हुवे आपण जातावो हे हुं देवीरीते सुप्रव्रजित अनु ? त्यार पत्र ते देवताणे सोमिल ब्राह्मणने आ प्रकारे कहुः—हे देवानुप्रिय जे तमं हुमण्णा अगाउ अणुणु करला पात्र अणुव्रत अने सात शिक्षाव्रतने पोतानी भेजे स्वीकार करीने विचरणु करे तो आ तमारी प्रव्रज्या सुप्रव्रज्या थरं नथ त्यार पछी ते देव-सोमिल ब्राह्मणने वदन अने नमस्कार करे छे पछी जे दिशाभांथी ते प्रादुर्भूत थये। हुता तेज दिशामा अतर्हित थरं गथे..

ते देव अतर्हित थरं गया पछी तेना कथन अनुसार ते सोमिल ब्राह्मण ऋषिणे अगाउ स्वीकरेला पात्र अणुव्रत अने सात शिक्षाव्रत पोतानी जते स्वीकारी विचरणु करे छे. पछी ते से गिल घण्णा चतुर्थ षष्ठ अष्टमथी भाडी यावत् मासार्ध

मासिक्या संलेखनया आत्मानं जोपयति, जोपयित्वा त्रिंशद् भक्तानि अनश-
नेन छिनत्ति, छित्त्वा तस्य स्थानस्यानालोचिताऽप्रतिक्रान्तो विराधितसम्यक्त्वः
कालमासे कालं कृत्वा शुक्रावतंसके विमाने उपपातसभायां देवशयनीये याव-
ताऽवगाहनया शुक्रमहाग्रहतया उपपन्नः । ततः खलु स शुक्रो महाग्रहः अधु-
नोपपन्नः सन् यावद् भाषामनःपर्याप्त्या० ।

एवं खलु गौतम ! शुक्रेण महाग्रहेण सा दिव्या यावत् अभिसमन्वा-
गता । एकं पत्न्योपमं स्थितिः । शुक्रेण खलु मदन्त ! महाग्रहस्ततो देवलोकात्
आयुःक्षयेण ३ कुत्र गमिष्यति, २ ? गौतम ! महाविदेहे वर्षे सेन्स्यति ५ !
एवं खलु जम्बूः ! श्रमणेन० निक्षेपकः ॥ ७ ॥

विचित्र तप उपधानोंसे अपनी आत्माको भावित करता हुआ बहुत
वर्षों तक श्रमणोपासक (श्रावक) पर्यायका पालन करता है । अन्तमें
अर्धमासिकी संलेखना द्वारा आत्माको भावित कर तथा तीस भक्त
(आहार) को अनशनसे छेदित कर उस पूर्वकृत पापस्थानकी
आलोचना और प्रतिक्रमण नहीं करता हुआ सम्यक्त्वकी विराधनासे
काल मासमें कालकर शुक्रावतंसक विमानमें उपपात सभाके अन्दर
देवशयनीय शय्यामें जिस प्रमाणकी अवगाहनासे ज्योतिष देवोकी
उत्पत्ति होती है, उस प्रमाणवाली अवगाहना अर्थात् जघन्य-अङ्ग-
लके असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट-सात हाथ परिमाणवाली अव-
गाहनासे शुक्र महाग्रहपने उत्पन्न हुआ । उसके बाद वह शुक्र महा-
ग्रह उत्पन्न होकर भाषापर्याप्ति सनःपर्याप्ति आदि पाँचों प्रकारकी
पर्याप्तिसे पर्याप्तिभावको प्राप्त हुआ ।

तथा मासक्षणपत्रप विचित्रतप उपधानेथी पोताना आत्माने भावित करता धरु
वर्षों सुधी श्रमणोपासक (श्रावक) पर्यायनुं पालन करे छे अतमा अर्ध मासिकी
संलेखना द्वारा आत्माने भावित करी तथा तीस भक्त (आहार) नु अनशनथी
छेदित करी ते पूर्वकृत पापस्थानकी आलोचना अने प्रतिक्रमण नहीं करता सम्यक्-
त्वने विराधित करी कालमासमा काल करीने शुक्रावतंसके विमानमा उपपात सभानी
अन्दर देवशयनीय शय्यामा जे प्रमाणनी अवगाहनाथी ज्योतिष देवानी उत्पत्ति
थाय छे ते प्रमाणवाली अवगाहना अर्थात्-जघन्य-अङ्गलना असंख्यातमा भाग
अने उत्कृष्ट सात हाथ परिमाणवाणी अवगाहनाथी शुक्रमहाग्रहपणामा उत्पन्न थया-
पछी ते शुक्रमहाग्रह उत्पन्न थय लोषापर्याप्ति सनःपर्याप्ति आदि पांचे प्रकारनी
पर्याप्तिथी पर्याप्ति भावने प्राप्त थया

टीका—‘तएणं तस्स’ इत्यादि । असाधुदर्शनेन=साधुदर्शनाभावात्साधु-
दर्शनाच्च विराधितसम्यक्त्वः सोमिलस्तस्य स्थानस्याऽनालोचिताऽप्रतिक्रान्ततया
शुक्रावतंसके विमाने देवशयनीये यावत्याऽवगाहनया—यावत्या=यत्परिमितत-
याऽवगाहनया ज्योतिर्देवस्योपपातो भवति तावत्या जघन्यतोऽङ्गुलासङ्ख्येय-
भागया उत्कृष्टतः सप्तहस्तपरिमाणया अवगाहनया शुक्रमहाग्रहतया समुत्पन्नः ।
शेषं स्पष्टम् ॥ ७ ॥

॥ इति पुष्पिताया तृतीयमध्ययनं समाप्तम् ॥ ३ ॥

हे गौतम ! शुक्र महाग्रहने इस कारण ऐसी दिव्य देव ऋद्धिको
प्राप्त की है । शुक्र महाग्रहकी स्थिति एक पल्योपमकी है ।

गौतम स्वामी पूछते हैं—

हे भदन्न ! वह शुक्र महाग्रह आयु भव स्थिति क्षय होनेके
बाद उस देवलोकसे च्यवकर कहां जायगा ?

हे गौतम ! यह शुक्र महाग्रह महाविदेहक्षेत्रमें जन्म लेकर
यावत् सिद्ध होगा ।

सुधर्मा स्वामी कहते हैं—

इस प्रकार हे जम्बू ! श्रमण भगवान महावीर प्रभुने पुष्पि-
ताके तृतीय अध्ययनमें इस भावका निरूपण किया है ॥ ७ ॥

। पुष्पिताका तृतीय अध्ययन समाप्त हुआ ।

हे गौतम ! शुक्रमहाग्रह आ कारणुथी पोतानी आवी, देव ऋद्धिको प्राप्त
करी छे. शुक्रमहाग्रहनी स्थिति एक पल्योपमनी छे

गौतम स्वामी पूछे छे—

‘हे लहन्त ! ते शुक्रमहाग्रह आयुभव स्थितिक्षय यता ते देवद्वीकथी व्यवीने
क्या नथे ?

हे गौतम ! आ शुक्रमहाग्रह महाविदेह क्षेत्रमा जन्म लथ सिद्ध थथे

सुधर्मा स्वामी कहे छे.—

आ प्रकारे हे जम्बू ! श्रमणु लणवान महावीर प्रभुणे पुष्पिताना त्रीण
अध्ययनमा आ लावनु निरूपणु कर्तुं छे (७)

पुष्पितानुं तृतीय अध्ययन समाप्त

॥ अथ बहुपुत्रिकाख्यं चतुर्थमध्ययनम् ॥

मूलम्—जङ्गलं भंते ! उक्खेवओ । एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं २ रायगिहे नामं नयरे, गुणसिलए चेइए, सेगिए राया, सामी समोसढे, परिसा निग्गया । तेणं कालेणं २ बहु पुत्तिया देवी सोहम्ममे कप्पे बहपुत्तिए विमाणे सभाए सुहम्माए बहपुत्तियंसि सीहासणंसि चउहिं सामाणियसाहस्सीहिं चउहिं महत्तरियाहिं जहा सूरियाभे जाव भुंजमाणी विहरइ, इमं च णं केवलकप्पं जंबूदीवं दीवं विउलेणं ओहिणा आभोएमाणी २ पासइ, पासित्ता समणं भगवं महावीरं जहा सूरियाभो जाव णमंसित्ता सीहासणवरंसि पुरत्थाभिसहा सन्निसन्ना । आभियोगा जहा सूरियाभस्स, सूमरा घंटा, आभिओगियं देवं सद्दावेइ जाणविमाणं जोयणसहस्सवित्थिणं, जाणविमाणवण्णओ, जाव उत्तरिल्लेणं निज्जाणमग्गेणं जोयणसाहस्सिएहिं विग्गहेहिं आगया जहा सूरियाभे । धम्मकहा समत्ता । तएणं सा बहुपुत्तिया देवी दाहिणं भुयं पसारेइ देवकुमाराणां अट्टसय, देवकुमारियाण य वामाओ भुयाओ अट्टसय, तथाणंतरं च णं बहवे दारगा दारियाओ य डिंभए य डिंभियाओ य विउव्वइ, नट्टविहिं जहा सूरियाभो उवदंसित्ता पडिगया भंतेत्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ, कूडागारसाला० । बहुपुत्तियाए णं भंते ! देवीए सा दिवा देविड्डी पुच्छा जाव अभिसमण्णागया ॥ १ ॥

छाया—यदि खलु भदन्त ! उत्क्षेपकः । एवं खलु जम्बू ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये राजगृहं नाम नगरं, गुणशिककं चैत्यं, श्रेणिको राजा, स्वामी समवसृतः । परिपत् निर्गता । तस्मिन् काले तस्मिन् समये बहुपुत्रिका देवी सौधर्म कल्पे बहुपुत्रिके विमाने सभायां सुधर्मायां बहुपुत्रिके सिंहासने चतसृभिः सामानिकसाहस्रीभिः चतसृभिः महत्तरिकाभिः यथा सूर्यासौ याद्

चौथा अध्ययन.

‘ जड्णं भंते ’ इत्यादि—

जम्बूस्वामी पूछते हैं—

हे भदन्त ! यदि पुष्पिता (पुष्पिका) के तृतीय अध्ययनमें भगवानने पूर्वोक्त भावका वर्णन किया है तो फिर उसके बाद चतुर्थ अध्ययनके भावको उन्होंने किस प्रकार निरूपण किया है ।

सुधर्मा स्वामी कहते हैं—

हे जम्बू ! उस काल उस समयमां राजगृह नामक नगर था उस नगरका राजा श्रेणिक था । उस नगरमें महावीर स्वामी पधारे ! परिपद् उनके दर्शनके लिये निकली । उस काल उस समयमें बहुपुत्रिका देवी सौधर्मकल्पके बहुपुत्रिक विमानमें सुधर्मा सभाके अन्दर बहुपुत्रिक सिंहासन पर चार हजार सामानिक देवियों तथा चार महत्तरिकाओं=तुल्य विभववाली कुमारियोंसे, जिनका

चौथा अध्ययन.

जड्णं भंते इत्यादि.

जम्बू स्वामी पूछे छे—

हे भदन्त ! जे पुष्पिता ना तृतीय अध्ययनमा भगवानं पूर्वोक्त भावनां वर्णन क्युं छे तो पछी तेना पछी चौथा अध्ययनमा भावने तेमछे क्या प्रकारे निरूपण क्यो छे ?

सुधर्मा स्वामी कहे छे—

हे जम्बू ! ते काले ते समये राजगृह नामे नगर छु ते नगरमां गुणशिकक चैत्य छुने ते नगरमां महावीर स्वामी पधारे परिपद् तेमनां दर्शन माटे निकली ते काल ते समये बहुपुत्रिकादेवी सौधर्मा कल्पे बहुपुत्रिक विमानमा सुधर्मासभानी अन्दर बहुपुत्रिक सिंहासन पर चार हजार सामानिक देवियों तथा चार महत्तरिकाओं =समान वैभववाणी कुमारियोंसे, जेनु वचन उल्लेखन न करी शक्य अथै प्रथोतमं

भुञ्जाना विहरति, इमें च खलु केवलकल्पं जम्बूद्वीपं द्वीपं त्रिपुलेन अवधिना
आभोगयन्ती २ पश्यति, दृष्ट्वा श्रमणं भगवन्तं महावीरं यथामूर्याभो यावद्
नमस्यित्वा सिंहासनवरे पौरस्त्याऽभिमुखी संनिपण्णा । आभियोगा यथा सूर्या-
भस्य सुस्वरा घण्टा आभियोगिक देवं शब्दयति यानविमानं योजनसहस्रत्रिस्तीर्णं,
यानविमानवर्णकः, यावत् उत्तरीयेण निर्याणमार्गेण योजनसाहस्रिकैः त्रिग्रहै-
रागता यथा सूर्याभः । धर्मकथा समाप्ता । ततः खलु सा बहुपुत्रिकादेवी

वचन उल्लङ्घित नहीं किया जा सकता एसी, प्रधानतम चार दिशा
कुमारिकाओंसे परिवृत सूर्याभदेवके समान गीतवादित्रादि नानाविध
दिव्य भोगोंको भोगती हुई विचर रही है, और वह इस सम्पूर्ण
जम्बूद्वीपको विशाल अवधिज्ञानसे उपयोगपूर्वक देखती हुई राजगृहमें
समवसृत भगवान महावीर स्वामीको देखती है । और उनको देख-
कर सूर्याभदेवके समान यावत् नमस्कार करके अपने श्रेष्ठ सिंहासन-
पर पूर्व दिशाकी ओर मुख करके बैठी । सूर्याभदेवके समान आभि-
योगिक (भृत्य) देवको बुलवाकर उमने सुस्वरा घण्टा बजानेकी आज्ञा
दी । अनन्तर सुस्वरा घण्टा बजवाकर भगवान महावीरके दर्शन
करनेको जानेके लिए सभी देवताओंको सूचित किया । उसका यान-
विमान हजार योजन त्रिस्तीर्ण था साढे बामठ योजन उंचा था ।
उममें लगा हुआ महेन्द्रध्वज पचीस योजन उंचा था । अन्तमें वह
बहुपुत्रिका देवी यावत् उत्तर दिशाके मार्गसे सूर्याभ देवके समान
हजार योजनका वैक्रयिक शरीर बनाकर उतरी । बादमें भगवानके

यारे दिशा कुमारीओ सहित सूर्याभदेव समान गीत वादित्र आदि नाना विध दिव्य
लोगोने लोगवती विचरण करती હતી અને તે આ ૩ પૂર્ણ જમ્બૂદ્વીપને વિશાલ
અવધિજ્ઞાન વડે ઉપયોગપૂર્વક જોતી જોતી રાજગૃહમાં પધારેલ ભગવાન મહાવીર
સ્વામીને જુઓ છે, તેમને જોઈને સૂર્યાભદેવની પેઠે યાવત્ નમસ્કાર કરવું તે તના
શ્રેષ્ઠ સિંહાસન ઉપર પૂર્વ દિશાની તરફ મોઢું રાખીને બેઠી સૂર્યાભદેવની પેઠે જ
આભિયોગિક (ભૃત્ય) દેવને બોલાવીને તેણે સુસ્વરા ઘટા વગાડવાની આજ્ઞા આપી
પછી સુસ્વરા ઘટા વગાડીને ભગવાન મહાવીરના દર્શન કરવાને જવા માટે સર્વ
દેવતાઓને સૂચના આપી તેનું યાન વિમાન હજાર યોજનના વિસ્તારવાળું હતું.
સાડા બાસઠ યોજન ઊંચું હતું તેમાં ચડાવેલો મહેન્દ્રધ્વજ પચીસ યોજન ઊંચો હતો.
છેવટે તે બહુપુત્રિકા દેવી યાવત્ ઉત્તર દિશાનાં માર્ગથી સૂર્યાભદેવની પેઠે હજાર યોજનનું
વૈક્રયિક શરીર બનાવીને ઉતરી પછી સિંહાસનની યાંસે આવી અને ધર્મકથા સાંભળી.

दक्षिणं भुजं प्रसारयति देवकुमाराणामष्टगतम्, देवकुमारिकाणां च वामतो भुज-
तोऽष्टशतम्, तदनन्तरं च खलु बहून् दारकांश्च दारिकाश्च डिम्भकांश्च डिम्भि-
काश्च त्रिकुरुते, नाट्यविधिं यथा सूर्याभः, उपदर्श्य प्रतिगता । भदन्त !
इति भगवान् गौतमः श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति, ऋटागार
शाला० । बहुपुत्रिकया खलु भदन्त ! देव्या सा दिव्या देवर्द्धिः, पृच्छा
यावत् अभिममन्वागता ॥ १ ॥

समीप आई, और धर्मकथा सुनी । उमके बाद वह बहुपुत्रिका देवी
अपनी दाहिनी भुजाको फैलाती है । और उससे एक सौ आठ देव-
कुमारोंको निकालती है । फिर बायीं भुजाको फैलाती है, उससे
एकसौ आठ देवकुमारियोंको निकालती है । उसके बाद बहुतसे दारक
दारिका=बड़ी उमरवाले बच्चेबच्चियोंको तथा डिम्भक डिम्भिका=अल्प
उमरवाले बच्चेबच्चियोंको अपनी वैक्रयिक शक्तिसे बनानी है । और
सूर्याभदेवके समान नाट्यविधि दिखाकर चली जाती है । उमके
जानेके बाद भगवान् गौतमने 'हे भदन्त' इस प्रकार सम्बोधन कर
भगवान् महावीरको वन्दन और नमस्कार किया और पूछा की-हे
भगवन् ! इस बहुपुत्रिका देवीकी दिव्य ऋद्धि दिव्य द्युति और
दिव्य देवानुभाव कहाँ गया और किसमें समा गया !

भगवानने कहा-

हे गौतम ! वह देवऋद्धि उसीके शरीरसे निकली और
उसीमें विलीन हो गयी ।

त्यार पछी ते णडुपुत्रिकदेवी पोतानी जमणी बुद्ध (हाथ) ने देवावे छे अने
तेमाथी ओकसे आठ देवकुमारने कठे छे पछी डाणी बुद्धने देवावे छे तेमाथी ओकसे
आठ देवकुमारिओने कठे छे पणु घणु दारक अने दारिकाओ (भेटी उमरवाणा
छेकरी छेकरीओ) तथा डिम्भक डिम्भिका (नाना णाणके अने णाणिकाओ) ने पोतानी
वैक्रयिक शक्तिथी णतावे छे अने सूर्याभदेवनी पेठे नाट्यविधि णतावीने आदी नय
छे तेना गया पछी भगवान गौतमे ' भदन्त ' ओबु सम्बोधन करी भगवान महावीरने
वन्दन तथा नमस्कार कर्या अने पूछ्यु छे छे भगवन् ! आ णडुपुत्रिकादेवीनी दिव्य
ऋद्धि अने दिव्य द्युति तथा दिव्य देवानुभाव क्या गया अने शमा समाछ गया ?

भगवानने कछु-

हे गौतम ! ते देवऋद्धि तेना शरीरमाथी निकली अने तेमात्र विलीन थछे अछे

टीका—‘जङ्गं भंते’ इत्यादि—महत्तरिकाभिः=प्रधानतमाभिः तुल्यवि-
भवादि कुमारिकागामनतिक्रमणीयवचनाभिः दिशाकुमारिकाभिः, उत्तरीयेण=उ-
त्तरदिग्भवेन, विग्रहैः=शरीरैः, देवकुमाराणाम्=देवानां=सुराणां कुमाराः=बहु-
कालिकाः पुत्राः तेषाम् । दारकान्=बहुकालिकान् बालकान्, दारिकाः=वालिकाः,
पुत्राः तेषाम् । दारकान्=बहुकालिकान् बालकान्, दारिकाः=वालिकाः, डिम्भान्
=अल्पकालिकान् बालकान्, शेषं निगदसिद्धम् ॥

एतया ‘दिव्या देविद्वी पुच्छे’ त्ति, ‘किण्णा लद्धा’=केन हेतुनो-
पार्जिता ? ‘किण्णा पत्ता’=केन हेतुना प्राप्ता=स्वायत्तीकृता ? ‘किण्णा अभिमम-
न्नागया’=स्वायत्तीकृताऽपि केन हेतुनाऽऽभिमुख्येन सांगत्येन च उपार्जनस्य
पश्चाद् भोग्यतामुपगतेति ? ॥ १ ॥

गौतम स्वामीने पूछा--

हे भगवन् ! वह विशाल देवऋद्धि उसमें कैसे विलीन हो गयी ?

भगवानने कहा--

हे गौतम ! जिस प्रकार किसी उत्तमव आदिके कारण फैला
हुआ जन समूह वर्षा आदिके कारण पर्वत शिखरके समान उंचा
और विशाल घरमें समा जाता है, उसी प्रकार ये देवकुमार और
देवकुमारियाँ आदि देवऋद्धि बहुपुत्रिकाके शरीरमें अन्तर्हित हो गयीं ।

गौतमने फिर पूछा--

हे भदन्त ! इस बहुपुत्रिकादेवीको इस प्रकारकी दिव्य देव-
ऋद्धि किस प्रकार मिली ? और किस प्रकार उसको प्राप्त हुई ?
और किस पुण्यसे उपभोगमें आई है ? और उन ऋद्धियोंके भोग-
नेमें कैसे समर्थ हुई ? ॥ १ ॥

गौतमे पूछ्यु —

हे भगवन् ! ते विशाल देवऋद्धि तेभा देवी शीते विलीन थछु गछ ?
त्यारे भगवान कडे छे —

हे गौतम ! जेरी शीते उत्सव प्रसंगे अकठो थयेवेो जनसमूह वसाह वगेरेना
कारणथी पर्वत शिखरना पेठे छिया अन विशाल घरमा समाछु जय छे तेज प्रकारे
आ देवकुमार अने देवकुमारीयो वगेरे देवऋद्धि बहुपुत्रिकाना शरीरभा अन्तर्हित
थछु गछु ।

गौतमे वणी पूछ्युः—हे भदन्त ! आ बहुपुत्रिका देवीने आ प्रकृतनी दिव्य
देवऋद्धि देवी शीते मली ? अने देवी शीते प्राप्त थछु अने देवा पुण्यथी तेना
उपभोगभा उपवी छे ? जणी ते ऋद्धिअने उपभोगभा देवी शीते समर्थ थछु ? (१)

एवं पृष्टे सति भगवानाह—‘एवं खलु’ इत्यादि ।

मूलम्—एवं खलु गोयमा ! तेणं कालेणं २ वाणारसी नामं नयरी, अंवसालवणे चेइए । तत्थ णं वाणारसीए नयरीए भद्दे नामं सत्थवाहे होत्था, अड्डे अपरिभूए । तस्स णं भद्दस्स य सुभदा नामं भारिया सुकुमाल० वंझा अविघाउरी जाणु-कोप्परमाता यावि होत्था । तए णं तीसे सुभदाए सत्थवाहीए अन्नया कयाइं पुवरत्तापरत्तकाले कुडुंवजागरियं जागरमाणीए इमेयाख्वे जाव संकप्पे समुप्पजित्था—एवं खलु अहं भद्देणं सत्थवाहेणं सद्धिं विउलाइं भोगभोगाइं मुंजमाणी विहरामि, नो चैव णं अहं दारगं वा दारियं वा पयामि, तं धन्नाओ णं ताओ अम्मगाओ जाव सुलद्धे णं तासिं अम्मगाणं मणुयज-म्मजीवियफले, जासिं मन्ने नियकुच्छिसंभूयगाइं थणदुद्धलु-द्धगाइं महुरसमुल्लावगाणि मंजुल (मम्मण) प्पजंपियाणि थण-मूलकखदेसभागं अभिसरमाणगाणि पण्हयंति, पुणो य कोमल-कमलो वमेहिं हत्थेहिं गिण्हऊणं उच्छंगनिव्वेसियाणि देति, समुल्लावए सुमहुरे पुणो पुणो मम्मण (मंजुल) प्पभणिए अहं णं अधण्णा अपुण्णा अकयपुण्णा एत्तो एगमवि न पत्ता ओहय० जाव झियाइ ।

तेणं कालेणं २ सुवयाओ णं अज्जाओ इरियासमियाओ भासासमियाओ एसणासमियाओ आयाणभंडमत्तनिक्खेवणास-मियाओ उच्चारपासवणखेलजह्जसिंघाणपारिट्टावणासमियाओ मणु-गुत्तीओ वयगुत्तीओ कायगुत्तीओ गुत्तिंदियाओ गुत्तवंभयारिणीओ

बहुस्सुयाओ बहुपरिवाराओ पुव्वाणुपुव्विं चरमाणीओ गामाणुगामं
दूइज्जमाणीओ जेणेव वाणारसी नयरी तेणेव उवागया, उवा-
गच्छित्ता अहापडिरूवं ओग्गहं ओगिण्हित्ताणं संजसेणं तवसा
अप्पाणं भावेमाणीओ विहरंति ।

तएणं तासि सुव्वयाणं अज्जाणं एगे संघाडए वाणारसी-
नयरोए उच्चनीयमज्झिमाइं कुलाइं घरसमुदाणस्स भिक्खायशियाए
अडमाणे भइस्स सत्थवाहस्स गिहं अणुपविट्ठे ।

तएणं सुभद्दा सत्थवाही तओ अज्जाओ एज्जमाणीओ
पासइ, पासित्ता हट्टु जाव खिप्पामेव आसणाओ अब्भुट्ठेइ
अब्भुट्ठित्ता सत्तट्टुपयाइं अणुगच्छइ, अणुगच्छित्ता वंदइ नमंसइ,
वंदित्ता नमंसित्ता विउलेण असणपाणखाइमसाइसेणं पडिला-
मित्ता एवं वयासी-एव खल्लु अहं अज्जाओ ! भइेणं सत्थ-
वाहेणं सद्धिं विउलाइं भोगभोगाइ भुंजमाणी विहरामि, नो
चेव णं अहं दारणं दारियं वा पयामि, तं धन्नाओ णं ताओ
अम्मगाओ जाव एत्तो एगमवि न पत्ता, तं तुब्भे अज्जाओ !
बहुणायाओ बहुपढियाओ वहुणि गामागरनगरं जाव सण्णि-
वेसाइं आहिंडह, बहूणं राईसरतलवर जाव सत्थवाहप्पभिईणं
गिहाइं अणुपविसह, अत्थि से केइ कहिं चि विज्जापओए वा
संतप्पओए वा वसणं वा विरेयणं वा वत्थिकम्मं वा ओसहे
वा भेसजे वा उबलद्धे, जेणं अहं दारणं वा दारियं वा
पयाएज्जा ॥ २ ॥

छाया-एवं खलु गौतम ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये वाराणसी नाम नगरी, अम्रगालवनं चैत्यम् । तत्र खलु वाराणस्यां नगर्या भद्रो नाम सार्थवाहोऽभवत्, आढ्योऽपरिभूतः । तस्य खलु भद्रस्य च सुभद्रा नाम भार्या सुकुमारपाणिपादा बन्ध्या अविजनयित्री जानुकूर्परमता चापि अभवत् । ततः खलु तस्याः सुभद्रायाः सार्थवाहिकायाः अन्यदा कदाचिन् पूर्वरात्रापररात्रकाले कुटुम्बजागृहिकां जाग्रत्या अयमेतद्गृहो यावत् संकल्पः समुत्पद्यत-एवं खलु अहं भद्रेण सार्थवाहेन सार्द्धं विपुलान् भोगभोगान् भुञ्जाना विहरामि, नो चैव खलु अहं दारिकं वा दारिकां वा प्रजनयामि, तद् धन्याः खलु ताः अस्विकाः (मातरः) यावत् गुल्बन्धं खलु तासाम् अस्विकानां (मातृणां) मनुजजन्मजीवितफलम्, यांनां मन्ये निजकुक्षिमंभूतकाः स्तनदुग्धलुब्धकाः मधुरसमुल्लापकाः मञ्जुल (मम्मण) प्रजल्पिताः स्तनमूलरक्षदेशभागम् अभिसरन्तः प्रस्नुवन्ति । पुनश्च कोमलकमलोपमाभ्यां हस्ताभ्यां गृहीत्वा उत्सङ्गनिवेशिताः (सन्तः) ददति समुल्लापकान् मृमधुरान् पुनः पुनर्मम्मण (मञ्जुल) प्रमणितान्, अहं खलु अधन्या अपुण्या अकृतपुण्या (अस्मि यदहं) एततः (एतेषां मध्यात्) एकमपि न प्राप्ता । (एवं) अपहतमनः-संकल्पा यावत् ध्यायति ।

तस्मिन् काले २ मुत्रताः खलु आर्याः ईर्यासमिताः, भापासमिताः, एपणासमिताः, आदानभाण्डामत्रनिक्षेपणासमिताः, उच्चारपस्रवणश्लेष्ममलसिंघाणपरिष्ठापनासमिताः, मनोगुप्तिकाः, वचोगुप्तिकाः, कायगुप्तिकाः, गुपेन्द्रियाः, गुप्तवह्न्यचारिण्यः, बहुश्रुताः, बहुपरिवाराः पूर्वानुपूर्वं चरन्त्यः ग्रामानुग्रामं द्रवन्त्यः यत्रैव वाराणसी नगरी नत्रवोपागताः, उपागत्य यथाप्रतिरूपम् अवग्रहम् अवगृह्य संयमेन तपसा आत्मानं भावयन्त्यो विहरन्ति ॥

ततः खलु तासां सुव्रतानामार्याणाम् एकः सङ्घाटको वाराणसीनगर्या उच्चनीचमध्यमानि कुलानि गृहसमुदानस्य भिक्षाचर्यायै अटन् भद्रस्य सार्थवाहस्य गृहमनुप्रविष्टः ।

ततः खलु सुभद्रा सार्थवाहिका ता आर्याः एजमानाः पश्यति, दृष्ट्वा हृष्ट यावत् क्षिप्रमेव आसनात् अभ्युत्तिष्ठति, अभ्युत्थाय सप्ताष्टपदानि अनुगच्छति, अनुगत्य वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्त्रित्वा विपुलेन अशनपानखाद्यम्वाजेन प्रतिलम्भ्य एवमवादीत्-एवं खलु अःम् आर्याः ! भद्रेण सार्थवाहेन सार्द्धं विपुलान् भोगभोगान् भुञ्जाना विहरामि नो चैव खलु अहं दारिकं दारिकां वा प्रजनयामि, तद् धन्याः खलु ताः अस्विकाः (मातरः)

यावत्-एततः एकमपि न प्राप्ता, तद् गृयम् आर्याः ! बहुज्ञाऽयः बहुपठिताः
 बहून् ग्रामाऽऽकरनगरं यावत् सन्निवेशान् आदिण्डध्वे बहूनां राजेश्वरतल-
 वरं यावत् सार्थवाहप्रभृतीनां गृहान् अनुप्रविश्य, अस्ति स कश्चित् क्वचित्
 विद्याप्रयोगो वा मन्त्रप्रयोगो वा वमनं वा विरेचनं वा वस्तिकर्म वा औषध
 वा भैषज्यं वा उपलब्धं येनाहं दारकं वा दारिकां वा प्रजनयामि ॥ २ ॥

टीका-‘ एवं खलु गोयमा ’ इत्यादि-हे गौतम ! एवं खलु तस्मिन्
 काले तस्मिन् समये ‘ वाराणसी ’ नाम नगरी ‘ आश्रशालवनं ’ चैत्यं चासीत्
 तत्र=वाराणस्यां नगर्यां खलु भद्रो नाम सार्थवाहोऽभूत् आढ्यः अपरिभूतः,
 एतद्व्याख्या प्रागेवोक्ता । तस्य खलु भद्रस्य च सुभद्रो नाम भार्या सुकुमार-
 पाणिपादा० बन्ध्या अविजनयित्री=पुत्रादिकानामप्रसवशीला, अत एव ‘ जानु-
 कूर्परमाता ’-जानुकूर्परामेव साता=जननी या सा तथा, यद्वा-जानुकूर्परामेव
 नत्वपत्यं मिमते=स्पृशन्ति तस्याः स्तनौ इति, अथवा-जानुकूर्परमात्रेतिच्छाया-

ऐसे पूछनेपर भगवान कहते हैं—

‘ एवं खलु ’ इत्यादि—

हे गौतम ! उम काल उम समयमें वाराणसी नामकी नगरी
 थी । उस वाराणसी नामकी नगरीमें- आश्रशालवन नामक उद्यान
 था । उस नगरीमें भद्र नामका सार्थवाह रहता था जो धनधान्यादिसे
 समृद्ध और दूसरोंसे अपरिभूत था । उस भद्र सार्थवाहकी पत्नीका
 नाम सुभद्रा था, जो सुकुमार हाथ पैरवाली थी । परन्तु वह बन्ध्या
 थी । अतएव उसने एक भी सन्तानको जन्म नहीं दिया था ।
 केवल जानु और कूर्परकी साता थी । यहाँ “जानुकूर्परमाता” का यह
 भी अर्थ होता है=जिसके स्तनोंको केवल घुटने और कोहनियाँ स्पर्श

गौतम स्वामीय आवा प्रश्नो पूछवाथी भगवान कहु —

‘ एवं खलु ’ इत्यादि

हे गौतम ! ते काल ते समये वाराणसी नामे नगरी હતી તે વારાણસી નગરીમાં
 આશ્રશાલવન નામનો ઉદ્યાન, (બાગ) હતો તે નગરીમાં ભદ્ર નામનો સાર્થવાહ રહેતો
 હતો કે જે ધનધાન્યાદિથી સમૃદ્ધ અને બીજાઓથી અપરિભૂત (અછત) હતો તે ભદ્ર
 સાર્થવાહની સ્ત્રી નામ સુભદ્રા હતું. જે સુકુમાર હાથપગવાળી હતી ; પરંતુ તે વાળી
 હતી એટલે તેણે એક પણ સંતાનને જન્મ આપ્યો નહોતો કેવળ જાનુ અને કૂર્પરની
 માતા હતી. અહીં “જાનુકૂર્પરમાતા” નો એવો અર્થ થાય છે કે જેના સ્તનોને કેવળ

जानुकूर्परण्येव मात्रा=परिकरः=क्रोडनिवेशनीयः परकीय-पुत्रादिसहायतासमर्थ-
रूपो यस्याः न तु स्वपुत्रलक्षण उत्सङ्गनिवेशनीयः परिकरः, इति जानुकूर्पर-
मात्रा च अपि अभवत् । ततः=तदनन्तरं तस्याः=पूर्वोक्तायाः खलु सुभद्रायाः
सार्थवाहिकायाः अन्यदा कदाचित् पूर्वरात्रापररात्रकाले रात्रिपूर्वपरभागसमये
कुटुम्बजागरिकां जाग्रत्याः=कुटुम्बार्थं जागरणां कुर्वन्त्याः अयमेतद्रूपः=वक्ष्यमा-
णलक्षणः 'यावत्' शब्देन आध्यात्मिकः, चिन्तितः, प्रार्थितः, मनोगतः संकल्पः
समुदपद्यत=जातः, आध्यात्मिकादिसंकल्पान्तानां पदानां व्याख्या प्रागेव कृता ।
सुभद्रायाः संकल्पस्वरूपमाह—' एवं खल्वि ' त्यादिना—अहं=सुभद्रा सार्थवाहिका
भद्रेण=तन्नामकेन सार्थवाहेन स्वपतिना सार्द्धं=सह विपुलान्=बहुन् भोगभोगान्=
शब्दादीन् विषयान् भुञ्जाना विहरामि, किन्तु नो चैव खलु अहं दारिकं=पुत्रं
दारिकां=कन्यां वा प्रजनयामि=प्रमूये, तत्=तस्मात् हेतोः खलु ताः अम्बिकाः=
मातरो धन्याः धनं=प्रशंसारूपमर्हन्तीति धन्याः=कृतार्थाः, यावच्छब्देन—पुण्याः,

करती थी, नकि सन्तान । अथवा यहाँ " जानुकूर्परमात्रा' यह भी
छाया होती है । इसका अर्थ होता है—जिसके जानु और कूर्पर
अर्थात् गोदी और हाथ दूसरोंके पुत्रोंके लाड प्यारमें ही समर्थ थे,
नकि अपने पुत्रोंके लाड प्यारमें । क्योंकि उसको अपनी कोई
सन्तान नहीं थी ।

उसके बाद एक समय पिछली रातमें कुटुम्बजागरणा करती
हुई उस सुभद्रा सार्थवाहीके हृदयमें यह इस प्रकारका आध्यात्मिक,
चिन्तन प्रार्थित और मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ कि—मैं भद्रसार्थवाहके
साथ अनेक प्रकारके शब्दादि विपुल भोगोंको भोगती हुई विचरण
कर रही हूँ । पर आजतक मेरे एक भी सन्तान नहीं हुई । वे माताएँ

गोष्ठ्यु अने ठाणीयो ज रूपश करती हुती नहि के सन्तान. अथवा अहीं 'जानुकूर्पर-
मात्रा' ओवी पण्य छाया थाय छे—ओनेो अर्थ ओवेो थाय छे के नेना जानु अने कूर्पर
ओटके गोणो अने हाथ भीजना पुत्रोने लाड प्यारभांग समर्थ हुता; नहि के पोताना
पुत्रोने लाड प्यारभां. कारण के तेने पोतानु सतान नहोतुं.

त्यार पछी ओक वषत पाछवी रात्रिमा कुटुम्ब जागरणु करता ते सुभद्रा सार्थ-
वाहीना हृदयभां आ ओक ओवा प्रकारने आध्यात्मिक, चिन्तित, प्रार्थित, अने मनोगत
संकल्प उत्पन्न थयो के हु लक्ष सार्थवाहनी साथे अनेक प्रकारना शब्द आदि विपुल
भोगोने भोगवती विचरं छु पण्य आज सुध्री भने ओक पण्य सतान थयु नथी ते

कृतपुण्याः, कृतलक्षणाः, इत्येषां सङ्ग्रहो विधेयः, तत्र पुण्याः=पवित्राः कृत-
पुण्याः=विहितसुकृताः, कृतलक्षणाः=सफलीकृतलक्षणाः, पुनस्तासाम् अम्बिकानां=
मातृणां मनुजजन्म, जीवितफलम्=जीवनफलम् च सुलब्धं=सम्यक्प्राप्तम् सफल-
मिति यावत् मन्ये=स्वीकुर्वे, यासां मातृणां निजकुक्षिसम्भूताः=स्वकीयोदरजाताः
शिशवः, अत्र सूत्रे नपुंसकत्वं प्राकृतत्वात् । स्तनदुग्धलुब्धकाः=स्तनयोर्दुग्धं तस्मिन्
लुब्धाः=प्रसक्ताः त एव लुब्धकाः मधुरसमुल्लापकाः मधुराः= श्रवणरमणीयाः
समुल्लापाः=सम्यगुच्चैः- शब्दाः येषां ते तथा, मञ्जुल (मम्मण) प्रजल्पिताः=
मञ्जुलं=रुचिरं हृदयस्पृहणीयमिति यावत्, प्रजल्पितं (मा-मा प्रभृति)
शब्दोच्चारणं येषां ते तथा, स्तनमूलकक्षदेशभागम्=स्तनयोर्मूलम् स्तनमूलम्
तस्मात् कक्षावेव देशौ 'वाहुमूले उभे कक्षौ' इत्यमरात्, वाहुमूलप्रदेशौ
तयोर्भागः=प्रान्तस्तम् अभिसरन्तः सम्प्रुखाभिसरणं कुर्वाणः प्रस्तुवन्ति=मातृ-
स्तन्यं प्रक्षारयन्तीत्यन्तर्भावित्पर्ययः । तथा पुनश्च कोमलकमलोपमाभ्यां=कोम-

धन्य हैं, पुण्यशील हैं, उन्होंने पुण्योंका अर्जन किया है, उनका
स्त्रीत्व सकल है और उन माताओंने अपने मनुष्य जन्म और जीवनका
फल अच्छीतरह पाया है, जिन माताओंकी अपने उदरसे उत्पन्न,
स्तनके दूधकी लोभो, कानोंको लुभानेवाली वाणीको उच्चारण करनेवाली
माँ ! माँ !! इस हृदयस्पर्शी शब्दको बोलनेवाली, तथा स्तनमूल
और कक्षके बीच भागमें अभिसरण करनेवाली सन्तान उन माताओंके
स्तनोंको दूधसे परिपूर्ण करती है अर्थात् सन्तानके वात्सल्यसे माताके
स्तनोमें दूधभर आता है । फिर वे सन्तान कोमल कमल सदृश
हाथोंके द्वारा गोदमें बैठायी जानेपर उच्च स्वरसे उच्चारित कानोंको
अच्छे लगनेवाले मधुर शब्दोको सुनाकर माताओंको प्रसन्न करती है ।

माताने धन्य छे-ते पुण्यशील छे-तेभण्णे पुण्य भेणव्यु छे तेभनु स्त्रीपणु सक्षण छे
अने ते माताओअे, पोताने मनुष्य जन्म अने ज्वननु क्षण सारी रीते भेणव्युं छे
केअे माताओअे, पोताना उदरथी उत्पन्न, स्तनना दूधना लोभवाणा, कानेने ललयाव-
नारी वाणी ओलतां, मा मा ओवा हृदय स्पर्शी शब्द ओलता तथा स्तनमूल अने
कंधना वयला लागमा अभिसरणु करेवावालां संतान ते माताओना स्तननं दूधथी
परिपूर्णुं करे छे. अर्थात् संतानना स्नेहथी माताना स्तनोमा दूध लसथु जय छे.
पछो ते संतान केअण कभणना ओवा हाथो वडे ओणामां ओसाडवामा आवे त्यारे
उया स्वरथी ओक्षीने कानेने साइं लागे ओवा मधुर शब्दोने साभणीने माताओने
प्रसन्न करे छे.

लपङ्कजसदृशाभ्यां हस्ताभ्यां गृहीत्वा उत्सङ्गनिवेगिताः=उत्सङ्गः क्रोडः (अङ्क)
 तत्र निवेगिताः=स्थापिताः मन्तः समुल्लापकान्=सम्यगुच्चैः गव्दान् सुमधुरान्
 पुनः पुनः=भूयो भूयः मम्मण (मञ्जुल) प्रमणितान्=मा मा इति श्रवणरमणी-
 यमापितान् ददति=मातृभृतिश्रवणाय वितरन्ति तादृशान् गव्दान् कुर्वन्तीति भावः ।

अहं=सुमद्रा खलु = निश्चयेन अधन्या, अपुण्या=अयत्रिचा यद्वा एत-
 स्मिन् जन्मनि पुण्यगहिता, अकृतपुण्या=असञ्चितगुकृता पूर्वजन्मन्यपि अस-
 म्पादितदानादिसु कर्मकल्यापेति तात्पर्यम्, अस्मि, यद् एततः=एतन्मध्यात्
 पूर्वीकविशेषणविशिष्टानां पुत्राणां मध्यात् एकमपि सन्तानं न प्राप्ता=न लब्ध-
 वती, इत्येवं प्रकारेण अपहतमनःमंकल्पया=त्रिनष्टमनोऽभिलषितकामना 'वाचत्'
 शब्देन अशोमुषीत्यादीनां प्रागुक्तानां सग्रहो बोध्यः, ध्यायति=आर्तध्यानं

मैं भाग्यहीन हूँ, पुण्यहीन हूँ और मैंने पूर्वजन्ममें कभी
 पुण्योपार्जन नहीं किया इसी लिये इनमेंसे सन्तान सम्बन्धी एक
 भी सुखको न पामकी क्योंकि मुझे एक भी संतान नहीं हुई ।
 इस प्रकार सोच-विचार करती हुई वह अत्यन्त दीन तथा मलीन
 हो नीचा झुग्न करके आर्तध्यान करने लगी ।

उस काल उस समयमें ईर्ष्यासमिति, आपासमिति, एषणासमिति
 तथा आदान, आण्ड और अमत्रके निक्षेपणाकी समिति, और उच्चार
 प्रसन्नवण-श्लेषम-निङ्काग-परिष्ठापना समिति, इन समितियोंसे तथा
 मनोशुषि, वचोशुषि और कायशुषि, इन तीनों शुषियोंसे युक्त,
 इन्द्रियोंको दमन करनेवाली, सुसद्वृत्तचारिणी, बहुश्रुता=बहुत शास्त्रोंका
 जाननेवाली, और बहुत परिदारो युक्त, सुव्रता नामकी आर्षाएँ,

हु भाग्यहीन छु-पुण्यहीन छु-अने में पूर्वजन्ममा करी पुण्यनु उपार्जन
 नहीं क्यु तेया सतान मणोधी आ सुणेमांतु ओक पणु सुणे भेगवी शकी नथी डेमके
 मने ओक पणु सतान यथु, थी आ प्रकारे सोय विचार कन्ती त-अन्यत हीन तथा
 महीन थध नीचे मुणं करी आर्तध्यान करवा लगी
 त शत्रु तं समये धर्षासमिति, आपासमिति, एषणासमिति, तथा आदान, आण्ड
 अने असत्रनी निक्षेपणाकी समिति तथा उच्चारण-प्रसन्नवण, इष्टम-निङ्काग परिष्ठापना
 समिति आ गथी समितिओथी तथा मनोशुषि, वचोशुषि अने, कायशुषि अने त्रय
 शुषिओथी युक्त इन्द्रियोंके दमन करवावाणी, सुसद्वृत्तचारिणी बहुश्रुता=गहृशसस्त्रांत
 ज्ञानवावाणी अने गहु परिदारो युक्त, सुव्रता नामनी आर्षाओ. तीर्थ इह परियच्छती

करोति । सुव्रताः=तन्नामिका आर्यिकाः । सङ्घाटकः=साध्वी समूहः, गृहसमु-
दानस्य=गृहेषु=अनेकेषु गृहेषु समुदानं=भिक्षाटनं, गृहसमुदानम् अनेकगृहगृहीतं
भैक्षं तस्य तथा, शेषं सुगमम् ॥ २ ॥

तीर्थङ्कर परम्परासे विचरण करती हुई ग्रामानुग्राम विहार करती हुई
वाराणसी नगरीमें आयी । वहाँ आकर कल्पानुसार अवग्रह=आज्ञा
लेकर उपाश्रयमें उतरी और स्वयम् तपके द्वारा अपनी आत्माको
भावित करती हुई विचरने लगी ।

उमके बाद उन सुव्रता आर्याओंका एक मंवाडा बागणमी
नगरीके उच्च नीच मध्यम कुलोमें गृहसमुदानी भिक्षा (अनेक घरोंसे
लीजानेवाली भिक्षा) के लिये फिरना हुआ भद्रासार्थवाहके घरमें
आया । उसके बाद सुभद्रा सार्थवाही आतो हुई उन आर्याओंको
देखा और उनको देखकर उमका हृदय हृष्ट और तुष्ट हो गया,
और विनयके लिये शीघ्र ही आसनके उठी । उठकर सात आठ
पग सामने गई । सामने जाकर उनको वन्दन नमस्कार किया । बाद,
विपुल अशन पान खाद्य स्वाद्यका प्रतिलाभ कराकर इस प्रकार बोली.

हे देवानुप्रिये ! मैं भद्रासार्थवाहके साथ अनेक प्रकारके विपुल
भोगोंको भोगती हुई विचरती हूँ । परन्तु आज तक मेरे एक भी
सन्तान नहीं हुई । वे माताएँ भन्य हैं, पुण्यशीला हैं उन्होंने पूर्व

विचरती अक गामथी भीजे गाम विहार करती करती वाराणसी नगरीमा आवी अरी
आवीने उदयानुगार अवग्रह=अज्ञा लधने उपाश्रयमा उतरी अने मयम तथा तपद्वारा
पोताना अत्माने भावित करती करती विचरवा लागी ।

त्यार पछी ते सुव्रता आर्याओंने अक सगाडे वाराणसी नगरीना उच नीच
अने मध्यम कुलमा गृहसमुदानी भिक्षा (अनेक घरमाथी देवानी भिक्षा) ने माटे
इरता इरता भद्रासार्थवाहना घरमा आव्यो । त्यार पछी सुभद्रा सार्थवाहीअे ते आर्याओंने
आवती जेध अने तेमने जेधने ते सार्थवाहीनु हृदय हृष्ट अने तुष्ट थध ग.सु अने
तेमनु स्वागत विनय करवा माटे तुरत पोताने आसनेथी उठी उठीने सात आठ
पगला सामे गध. अने तेमने वदन नमस्कार कर्या । त्यार पछी विपुल अशन (पान)
पान पाद्य स्वद्यना प्रतिलाभ करानी आ प्रकारे बोली

हे देवानुप्रिये ! तु भद्रा सार्थवाहनी साथे अनेक प्रकारका विपुल भोग
लेखीने विचरुं छु परन्तु आज तक मेरे एक भी सन्तान थयु नहीं ते
माताओंने भन्य छु-ते पुण्यशीला छु-तेमने पूर्वजन्ममा पुण्य उपाजन करुं छु

जन्ममें पुण्य उपार्जन किया है और उन माताओंने ही अपने मनुष्य जन्म और जीवनका फल अच्छी तरह पाया है. जिन माताओंकी अपने उदरसे उत्पन्न, स्तनके दूधकी लोभी, कानोको लुभानेवाली वाणीको उच्चारण करनेवाली, माँ ! माँ !! इस हृदयस्पर्शी शब्दको बोलनेवाली, तथा स्तन मूल और कक्षके बीच भागमें अभिसरण करनेवाली सन्तान, उन माताओंके स्तनोंको दूधसे परिपूर्ण करती है फिर वे कोमल कमल सदृश हाथोंके द्वारा गोदीमें बैठाये जानेपर उच्च स्वरोसे उच्चारित, कानोंको अच्छे लगनेवाले, मधुर शब्दोंको बोलकर माताओंको प्रसन्न करती है । मैं भाग्यहीन हूँ, पुण्यहीन हूँ, मैंने कभी पुण्याचरण नहीं किया इसी लिये इन सभी सुखोंमेंसे एक भी सुखको न पा सकी । क्यों कि मुझे एक भी संतान नहीं हुई ।

हे देवानुप्रियों ! आप लोग बहुत ज्ञानवाली हैं, बहुतसी बातोंको जानती हैं और बहुतसे ग्राम नगर यावत् सन्निवेशोमे विचरती हैं बहुतसे राजा, ईश्वर, तलवर आदिसे लेकर सार्थवाहोंके घरोंमें भिक्षार्थ आपका जाना होता है । क्या कहीं कोई विद्या-प्रयोग वा मंत्र प्रयोग, ब्रमन अथवा विरेचन, वस्तिकर्म वा औषध

अने ते माताओंने जे पोताना मनुष्यजन्म अने जवनतु इण सारी रीते भोग्युं छे ते जे माताओंना पोताना उदरथी उत्पन्न, स्तनना दूध भाटे बोली कानोने ललयावनारी वाणी भोलता, माँ-माँ जेवा हृदयस्पर्शी शब्दने भोलवावाणा तथा स्तनमूल अने कूपनी वयला लागमा अभिसरण करवावाणा सतान ते माताओंना स्तनोने दूधथी परिपूर्ण करे छे. वणी ते कोमल कमल जेवा छथे वडे भोगामा भेसाडतां उथा स्वरथी बोली कानोने साइ लागे तेवा मधुर शब्दो बोलीने माताओंने प्रसन्न करे छे हुँ भाग्यहीन छु, पुण्यहीन छु मे कही पुण्यनु आचरण कर्युं नथी. तेथी आवा प्रकारना सुणोमाथी हुँ अक पण सुणने भेजनी शकी नहि केभडे मने अक पण सतान थरुं नथी

हे देवानुप्रियो ! आप लोक बहु ज्ञानवाणां छे धणीओ वातोने जणो छे. अने धणा गाम नगर यावत् सन्निवेशोमा विचरो छे. धणा धणा राजा, ईश्वर, तलवर आदिथी भाडीने सार्थवाहोना घरामा भिक्षार्थ आपने जवानु पण थारु छे. तो शु कथांय कोई विद्याप्रयोग अथवा मंत्रप्रयोग, ब्रमन अथवा विरेचन, वस्तिकर्म

मूलम्—तएणं ताओ अज्जाओ सुभदं सत्थवाहिं एवं वयासी
—अम्हे णं देहाणुप्पिए ! समणीओ निग्गंथीओ इरियासमियाओ
जाव गुत्तबंभयारीओ, नो खलु कप्पइ अम्हं एयमट्ठं कण्णेहिं
वि णिसामित्तए, किमंग ! पुण उद्दिसित्तए वा समायरित्तए वा,
अम्हे णं देवाणुप्पिये ! णवरं तव विचित्तं केवल्लिपण्णत्तं धम्मं
परिकहेमो ।

तए णं सुभदा सत्थवाही तासिं अज्जाणं अंतिए धम्मं
सोच्चा निसम्म हट्टुट्टा ताओ अज्जाओ तिखुत्तो वंदइ नमंसइ,
वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी—सद्दहामिणं अज्जाओ ! निग्गंथं
पावयणं, पत्तियामिणं रोएमिणं अज्जाओ ! निग्गंथं पावयणं !
एवमेयं, तहमेयं, अवितहमेयं, जाव सावगधम्मं पडिवज्जए ।
अहासुहं देवाणुप्पिए ! मा पडिवंधं करेह । तएणं सा सुभदा
सत्थवाही तासिं अज्जाणं अंतिए जाव पडिवज्जइ, पडिवज्जित्ता
ताओ अज्जाओ वंदइ नमंसइ पडिविसज्जइ ।

तएणं सुभदा सत्थवाही समणोवासिया जाया जाव विह-
रइ । तएणं तीसे सुभदाए समणोवासियाए अण्णया कयाइ
पुव्वरत्तावरत्तकालसमए कुडुंबजागरियं जागरमाणीए समाणीए
अयमेयारूवे अज्झित्थिए जाव संकप्पे समुपज्जित्था—एवं खलु
अहं भद्वेणं सत्थवाहेण सद्धिं विउलाइं भोगभोगाइं भुज्जमाणी
जाव विहरामि, नो चेव णं अहं दारगं वा दारिगं वा पयामि,

अथवा भैषज्य आपको मिला है ? जिससे मेरे लडका या लडकी
हो सके ॥ २ ॥

डे औषध अथवा लेषण्य तमने न्यु छं ? नेथा मने पुत्र डे पुत्री थछ शडे ? (२)

तं सेयं खलु ममं कल्लं पाउप्पभायाए जाव जलंते भइस्स
 आपुच्छित्ता सुवयाणं अज्जाणं अंलिए अज्जा भवित्ता अगाराओ
 जाव पव्वइत्तए, एवं संपेहेइ, संपेहित्ता, कल्ले जेणेव भइ
 सत्थवाहे तेणेव उवागया, करतल-जाव एवं वयासी-एवं खलु
 अहं देवाणुप्पिया ! तुवभेहिं सद्धिं वहुइं वासाइं विउलाइ
 भोगभोगाइं भुंजमाणी जाव विहरामि, नो चेव णं दारणं वा
 दारियं वा पयामि; तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया ! तुवभेहिं
 अवभणुण्णाया समाणी-सुवयाणं अज्जाणं जाव पव्वइत्तए ।
 तएणं से भइ सत्थवाहे सुभइं सत्थवाही एवं वयासी-मा
 णं तुमं देवाणुप्पिया ! इदाणिं मुंडा जाव पव्वयाहि, भुजाहि
 ताव देवाणुप्पिए ! मए सद्धिं विउलाइ भोगभोगाइं, ततो
 पच्छा भुत्तभोइ सुवयाणं अज्जाणं जाव पव्वयाहि । तए णं
 सुभइा सत्थवाही भइस्स० एयमइं नो आढाइं नो परिजाणइं
 दोच्चं पि तच्चंपि भइा सत्थवाही एवं वयासी-इच्छामि णं
 देवाणुप्पिया ! तुवभेहिं अवभणुण्णाया समाणी जाव पव्वइत्तए ।
 तए णं से भइ सत्थवाहे जाहे नो संचाएइ वहुहिं आघयणाहिय
 एवं पन्नवणाय सन्नवणाहिय विणवणाहिय आघवित्तए वा
 जाव विणवित्तए वा ताहे अकामए चेव सुभइाए नि-
 क्खमणं अणुत्तज्जित्था ॥ ३ ॥

छाया—ततः खलु ता आर्थिकाः सुभद्रां सार्थवाहीमेवमवादिषुः—वयं
 खलु देवानुप्पिये ! श्रमण्यो निर्ग्रन्थ्य ईर्यासमिता वावत् गुप्तब्रह्मचारिण्यः,

नो खलु कल्पते अस्माकम् एतमर्थं कर्णाभ्यामपि निशामयितुं किमङ्ग ! पुनरु-
पदेष्टुं वा समाचरितुं वा, वयं खलु देवानुप्रिये ! नवरं तव त्रिविधं केवल-
प्रज्ञप्तं धर्मं परिकथयामः ।

ततः खलु सुभद्रा सार्थवाही तासामार्याणामन्तिके धर्मं श्रुत्वा निगम्य
हृष्टतुष्टा ता आर्यास्त्रिकुन्वो वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत्—
श्रद्दयामि खलु आर्याः ! निर्ग्रन्थं प्रवचनं, प्रत्येमि खलु, रोचयामि खलु
आर्याः ! निर्ग्रन्थं प्रवचनम् एवमेतत्, तथ्यमेतत्, अत्रितथमेतत्, यावत् श्रावक-

‘तएणं ताओ’ इत्यादि—

उसके बाद वह साध्वी उस सुभद्रा सार्थवाहीसे इस प्रकार
बोली—

हे देवानुप्रिये ! हम लोग ईर्यासमिति आदि समितियोंसे
तथा तीन गुप्तियोंसे युक्त, इन्द्रियको वशमें रखनेवाली गुप्तवह्यचारिणी
निर्ग्रन्थ श्रमणी है ? हमको इन बातोंका कानोंसे सुनना भी नहीं
कल्पता, तो फिर हम लोग इनका उपदेश या आचरण कैसे कर
सकती हैं । हे देवानुप्रिये ! विशेष यह है कि हम लोग केवल
प्ररूपित दानशील आदि नाना प्रकारके धर्मका ही उपदेश करती
हैं । उसके बाद वह सुभद्रा सार्थवाही उन आर्याओंसे धर्म सुनकर
उसे हृदयमें धारण कर हृष्ट-तुष्ट हृदयसे उनको तीनवार वन्दन
और नमस्कार कर इस प्रकार बोली—हे देवानुप्रिये । मैं निर्ग्रन्थ प्रव-
चनपर श्रद्धा करती हूँ, विश्वास करती हूँ । निर्ग्रन्थ प्रवचनपर मेरी

‘तएणं ताओ’ इत्यादि

त्यार णाह ते साध्वी (आर्या) ते सुभद्रा सार्थवाहीने आ प्रकारे बोली.—
हे देवानुप्रिये ! अमे लोक धर्मा समिति आदि समितिओथी तथा त्रय
गुप्तियोथी युक्त इन्द्रियाने वशमा राभवावाणी, युक्त प्रह्यचारिणी निर्ग्रन्थ श्रमणी
छीअे अमान लोकाने आर्या णाणत कानोथी सालणवी यथु कल्पयती नथी तो पछी तेना
उपदेशे अथवा आचरणे केवी रीते करी शक्ये ? हे देवानुप्रिये ! विशेष अे छे क
अमे लोक केवली प्ररूपित दान शील आदि नाना प्रकारना धर्मनाउ उपदेश करीअे
छीअे त्यार णह ते सुभद्रासार्थवाही ते आर्याओ पासेथी धर्म सालणीने ते हृदयमां
धारण करी हृष्ट-तुष्ट हृदयथी तेमने त्रय वार वदन अने नमस्कार करी आ प्रमाणे
ओली—हे देवानुप्रिये ! हे निर्ग्रन्थ प्रवचन पर श्रद्धा कइं छु-विश्वास कइं छु.

धर्मं प्रतिपद्ये । यथामुखं देवानुप्रिये ! मा प्रतिबन्धं कुरु । ततः खलु सा सुभद्रा सार्थवाही तासामार्याणामन्तिके यावत् प्रतिपद्यते, प्रतिपद्य ता आर्याः वन्दते नमस्यति प्रतिविसर्जयति ।

ततः खलु सुभद्रा सार्थवाही श्रमणोपासिका जाता यावद् विहरति । ततः खलु तस्याः सुभद्रायाः श्रमणोपासिकाया अन्यदा कदाचित् पूर्वरात्रापर-रात्रकाले कुटुम्बजागरिकां जाग्रत्या सत्याः अयमेतद्रूपो यावत् समुदपद्यत-एवं खलु अहं भद्रेण सार्थवाहेन सार्द्धं त्रिपुञ्जान् भोगभोगान् भुञ्जाना यावद् विहरामि, नोचैव खलु अहं दारकं वा दारिकां वा प्रजनयामि, तत् श्रेयः खलु मम कल्ये प्रादुर्यावत् ज्वलति भद्रमापृच्छय सुव्रतानामार्याणामन्तिके आर्या

रुचि हुई है । आपने जो उपदेश दिया है वह सत्य है, -सर्वथा सत्य है, मैं यावत् श्रावक धर्मको स्वीकार करती हूँ । उन आर्याओंने कहा-हे देवानुप्रिये ! जिस प्रकार तुम्हें सुख हो वैसा ही करो धर्माचरणमें प्रमाद मत करना । उसके बाद उस सुभद्रा सार्थवाहीने उन आर्याओंके समीप निर्ग्रन्थ धर्मको स्वीकार किया । अनन्तर उन आर्याओंका वन्दन और नमस्कारके साथ विसर्जन किया ।

उसके बाद वह सुभद्रा सार्थवाही श्रमणोपासिका हो गयी, यावत् श्रावकधर्म पालती हुई विचरने लगी । उसके बाद एक समय पिछली रातमें कुटुम्बजागरणा करती हुई उस सुभद्रा सार्थवाहीके हृदयमें इस प्रकारका आध्यात्मिक यावत् विचार उत्पन्न हुआ कि-मैं भद्र सार्थवाहके साथ विपुल भोगोंको भोगती हुई यावत् विचर रही हूँ । पर आजतक मेरे एक भी सन्तान नहीं हुई । इसलिये मुझे उचित है कि सूर्योदय होनेपर भद्र सार्थवाहको पूछकर सुव्रता

निर्ग्रन्थ प्रवचन पर मने इत्थी धर्म छे आप ने उपदेश आये छे ते सत्य छे-सर्वथा सत्य छे हु यावत् श्रावक धर्मने स्वीकार कइ छु ते आर्याओंके कहुं —

हे देवानु प्रिये ! तने ने प्रकारे सुभ थाय तेमज कर धर्माचरणमां प्रमाद न करये । त्पार पछी ते सुभद्रासार्थवाहीके आर्याओंनी पासे निर्ग्रन्थ धर्मने स्वीकार कये ने पछी ते आर्याओंने वन्दन अने नमस्कार करीने विसर्जन कयुं (विदाय आपी)

त्पार पछी ते सुभद्रा सार्थवाही श्रमणु उपासिका थर्म गछ तमात्र श्रावक-धर्मनु पालन करती विचरवा लागी त्पार पछी केक समये पाछही रात्रिके कुटुम्ब जागरणा करती करती ते सुभद्रासार्थवाहीना हृदयमा आ प्रकारने आध्यात्मिक-विचार आये छे हु भद्र सार्थवाहनी साथे विपुल भोगोने भोगवती विचरणु कइ छु पण आज पर्यन्त मने केक पण सन्तान थयु नथी आथी मने के योग्य छे छे सूर्योदय थतान भद्र सार्थवाहने पूछीने सुव्रता आर्याओंनी पासे आर्या थर्म धर

भूत्वा अगाराद् यावत् प्रव्रजितुम् । एवं संपेक्षते, संपेक्ष्य कल्ये यत्रैव भद्रः
सार्थवाहस्तत्रैवोपागता, करतल-यावत् एवमवादीत्-एवं खलु अहं देवानुप्रियाः !
युष्माभिः सार्द्धं बहूनि वर्षाणि विपुलान् भोगभोगान् भुञ्जानां यावद् विहरामि,
नो चैव खलु दारकं वा दारिकां वा प्रजनयामि, तद् इच्छामि खलु देवानु-
प्रियाः ! युष्माभिरभ्यनुज्ञाता सती सुव्रतानामार्याणामन्तिके यावत् प्रव्रजितुम् ।
ततः खलु स भद्रः सार्थवाहः सुभद्रां सार्थवाहीम् एवमवादीत्-मा खलु त्वं
देवानुप्रिये ! इदानीं मुण्डा यावत् प्रव्रज । भुङ्क्ष्व तावद् देवानुप्रिये ! मया
सार्द्धं विपुलान् भोगभोगान् ततः पश्चात् भुक्तभोगिनी सुव्रतानामार्याणामन्तिके
यावत् प्रव्रज । ततः खलु सुभद्रा सार्थवाही भद्रस्य० एतमर्थं नो आद्रियते
नो परिजानाति द्वितीयमपि तृतीयमपि भद्रा सार्थवाही एवमवादीत्-इच्छामि

आर्याओंके समीप आर्या हो घर छोड़कर प्रव्रजित बन् । ऐसा विचार
कर भद्रसार्थवाहके पास आयी और हाथ जोड़ कर इस प्रकार बोली
हे देवानुप्रिय ! मैं तुम्हारे साथ बहुत वर्षों तक विपुल भोगों को
भोगती हुई विचर रही हूँ, पर आजतक मेरे एक भी सन्तान नहीं
हुई । इसलिये मैं चाहती हूँ कि तुमसे आज्ञा लेकर सुव्रता आर्या-
ओंके समीप दीक्षा लेकर प्रव्रजित हो जाऊँ । उसके बाद वह भद्र
सार्थवाह सुभद्रा सार्थवाहीसे इस प्रकार कहने लगा:-

हे देवानुप्रिये ! तुम अभी दीक्षा मत लो । तुम अभी संसार-
में ही रहो । विपुल भोग भोगनेके बाद सुव्रता आर्याओंके समीप
दीक्षा लेकर प्रव्रजित होना । भद्र सार्थवाहके द्वारा इस प्रकार कहे
जानेपर भी उस सुभद्रा सार्थवाहीने भद्रके वचनोंका आदर नहीं

गधुं छोडी दधने प्रव्रजित भनुं जेवो विचार करीने भद्रसार्थवाहनी पासे आवी
अने हाथ नेडी आ प्रकारे भोली.—हे देवानुप्रिय ! हुं तमारी साथे धनु वर्षो
सुधी विपुल भोगविलास भोगवती इइ छु पणु आजसुधी भने जेक पणु सतान
नथी थयु भाटे हुं आहुं छु के तमारी आज्ञा लई सुव्रता आर्याओंनी पासे दीक्षा
लधने प्रव्रजित थई जई तयार पछी ते भद्रसार्थवाह सुभद्रा सार्थवाहीने आ प्रभाषे
कडेवा लाग्योः—

हे देवानुप्रिये ! तमे डभणु दीक्षा न लो । तमे डभणुं स सास्मा न रडे।
विपुलभोग भोगवी लीधा पछी सुव्रता आर्याओंनी पासे दीक्षा लधने प्रव्रजित थजे
भद्र सार्थवाह आ प्रभाषे कडेवाथी ते सुभद्रासार्थवाहीजे लदना वचने मान्यो

खलु देवानुप्रियाः ! युष्माभिरभ्यनुज्ञाता सती यावत् प्रव्रजितुम् । ततः खलु स भद्रः सार्थवाहो यदा नो शक्नोति-वह्नीभिराख्यापनाभिश्च एवं प्रज्ञापनाभिश्च संज्ञापनाभिश्च, विज्ञापनाभिश्च, आख्यापयितुम् वा, यावत् विज्ञापयितुं वा, तदा अकामतश्चैव सुभद्राया निष्क्रमणमन्वमन्यत ॥ ३ ॥

टीका-‘तएणं ताओ’ इत्यादि-रोचयामि=रुचिविपयीकरोमि, प्रतिपद्ये=अङ्गीकरोमि, भोगभोगान्-भोगाः=गन्दादयस्तेषां भोगाः=आसेवनानि तान् । आख्यापनाभिः=‘गृहवासः श्रेयान्’ इति तत्परीक्षार्थं सामान्यतः कथनैः, प्रज्ञापनाभिः=‘त्वं मा परिव्रज’ ‘सयमाऽऽचरणं दुष्करम्’ इतिविशेषतः कथनैः, ‘संज्ञापनाभिः=संयमाऽऽराधनं सुक्तभोगावस्थायां सुकरम्’ इति संबोधनाभिः, विज्ञापनाभिः=संयमग्रहणे तदन्तःकरणद्रविमपरीक्षार्थं नप्रेमप्रतिपादनैः, अकामतः=संयममार्गं तां सुभद्रां निरोद्ध्युमक्षमः सन्ननिच्छन्नपि सुभद्रायाः निष्क्रमणं=परिव्रजनम् अन्वमन्यत=स्वीचकार । शेषं सुबोधम् ॥ ३ ॥

क्रिया, और न उसके वचनों पर विचार ही क्रिया । दूसरी बार तोसरी बार भी सुभद्रा सार्थवाहीने इस प्रकार कहा-हे देवानुप्रिय ! तुमसे आज्ञा पाकर प्रव्रज्या लेनेकी इच्छा करती हूँ ।

उसके बाद वह भद्र सार्थवाह बहुत प्रकारकी ‘आख्यापना’=‘घरमें रहना ही श्रेयस्कर है’ इस प्रकार उसकी परीक्षाके लिये जो सामान्य कथन, तत्स्वरूप आख्यापनाओंसे एवं ‘प्रज्ञापना’=‘तुम प्रव्रजित मत होओ, संयमका आचरण दुष्कर है’ इस प्रकार विशेष रूपसे कथन स्वरूप प्रज्ञापनाओंसे, और ‘संज्ञापना’=‘भोगोंको भोग लेनेके बाद ही संयमका आराधन सुकर है’ इस प्रकारका समझना रूप संज्ञापनाओंसे, ‘विज्ञापना’=संयम ग्रहणमें उसके अन्तःकरणकी

नहि तेग तेना वचने। उपर विचार पथ न कर्ये। भीष्मवार त्रीलवार पथ सुभद्रा-सार्थवाहीअे आ प्रमाणे कथुः-हे देवानुप्रिय ! तमारी आज्ञा लधने प्रव्रज्या देवानी इच्छा हु कइ थु

त्यानं पछा ते लद्रसार्थवाह धर्या प्रकारे आख्यापना=‘घ-मा रहिषु अेअ श्रेयस्कं छे’ अे प्रकारे तेनी परीक्षाने माटे अे सामान्य कथन छे तेना अेवी आख्यापनाअेथी, तथा प्रज्ञापन=‘तमे प्रव्रजित न थाअो संयमं नुं आचरण मुशकेल छे’ आ प्रकरनु विशेषरूपे कथन-तेवी कथनरवइप प्रज्ञापनाअेथी तथा संज्ञापना=‘लोगो ले गयी छीधा पछी अे संयमं नुं आराधन सुकर (सहज) छे’ अे प्रकारे समग्रवचन-इपी संज्ञापनाथी, तथा विज्ञापन=‘संयमअेडथु करतां सेना अत करणनी दृढतानी

मूलम्—तएणं से भद्दे सत्थवाहे विउलं असणं ४ उव-
 क्खडावेइ, मित्तनाइ जाव आमंतेइ, पच्छा भोयणवेलाए जाव
 मित्तनाइ० सक्कारेइ सम्माणेइ, सुभदं सत्थवाहिं ण्हायं जाव
 पायच्छित्तं सवालंकारविभूसियं पुरिससहस्सवाहिणिं सीयं दुरू-
 हेइ । तओ सा सुभदा सत्थवाही मित्तनाइ जाव संबंधि-
 संपरिवुडा सद्विड्डीए जाव रवेणं वाणारसीनयरीए मज्झं मज्झेणं
 जेणेव सुव्वयाणं अज्जाण उवस्सए तेणेव उवागच्छइ, उवा-
 गच्छित्ता पुरिससहस्सवाहिणिं सीयं ठवेइ, सुभदं सत्थवाहिं
 सीयाओ पच्चोरुहेइ । तएणं भद्दे सत्थवाहे सुभदं सत्थवाहिं
 पुरओ काउं जेणेव सुव्वया अज्जा तेणेव उवागच्छइ, उवाग-
 च्छित्ता सुव्वयाओ अज्जाओ वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता
 एवं वयासी—एवं खलु देवाणुप्पिया ! सुभदा सत्थवाही ममं
 भारिया इट्ठा कंता जाव मा णं वाइया पित्तिया सिंभिया
 सन्निवाइया विविहा रोगातंका फुसंतु, एसणं देवाणुप्पिया !
 संसारभउव्विग्गा, भीया जम्मणमरणाणं, देवाणुप्पियाणं अंतिए
 मुंडा भवित्ता जाव पव्वयाइ, तं एयं अहं देवाणुप्पियाणं सीसि-
 णीभिक्खं दलयाणि, पडिच्छंतु णं देवणुप्पिया ! सीसिणीभि-
 क्खं । अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबेधं ।

दृढताकी परीक्षाके लिये युक्ति प्रतिपादनरूप विज्ञापनाओंसे समझा-
 नेमें समर्थ नहीं हो सका तब उसने अनिच्छापूर्वक सुभद्राको दीक्षा
 लेनेकी आज्ञा दी ॥ ३ ॥

परीक्षाने भाटे युक्तिप्रतिपादनरूप विज्ञापनाओंकी आज्ञा समर्थववाभा समर्थ न थरु
 शक्यो त्पारे तेरे अनिच्छापूर्वक सुभद्राने दीक्षा देवानी आज्ञा आपी (३)

तएणं सा सुभद्रा सत्थवाही तुट्टा सुवयाहिं अज्जाहिं
एवं वुत्ता समाणी हट्टं सयमेव आभरणमल्लालंकारं ओमुयइ,
ओमुइत्ता, सयमेव पंचमुट्टियं लोयं करेइ, करित्ता जेणेव सुव-
याओ अज्जाओ तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सुवयाओ
अज्जाओ तिकखुत्तो आयाहिणपयाहिणेणं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता
नमंसित्ता एवं वयासी-आलित्तेणं भंते ! जहा देवाणंदा तथा
पवइया जाव अज्जा जाया जाव गुत्त बंभयारिणी ॥ ४ ॥

छाया-ततः खलु स भद्रः सार्थवाहो विपुलम् अशनं पानं खाद्यं स्वा-
द्यम् उपस्कारयति मित्रज्ञाति यावदामन्त्रयति । ततः पश्चात् भोजनवेलायां
यावत् मित्रज्ञाति- सत्करोति सम्मानयति, सुभद्रां सार्थवाहीं स्नातां यावत्
कृतप्रायश्चित्तां सर्वालङ्कारविभूषितां पुरुषसहस्रवाहिनीं शिविकां दूरोहयति । ततः
सा सुभद्रा सार्थवाही मित्रज्ञाति- यावत् सम्बन्धिसंपरिवृता सर्वक्रुद्धया यावत्

‘तएणं से भदे’ इत्यादि—

उसके बाद उस भद्र सार्थवाहने विपुल अशन पान खाद्य स्वाद्यको
तैयार करवाया और अपने सभी मित्र ज्ञाति स्वजन बन्धुओंको बुलाया
और आदर सत्कार के साथ सभी मित्र ज्ञाति स्वजन बन्धुओंको
भोजन कराया । बादमें स्नानको हुई यावत् मसीतिलक आदिसे युक्त,
सभी अलङ्कारोंसे विभूषित सुभद्र हजार मनुष्योंके द्वारा वाहित शिविका
पर बैठायी गई । उसके बाद वह सुभद्रा सार्थवाही मित्र ज्ञाति स्वजन-
बन्धु और सम्बन्धियोंसे युक्त सभी प्रकारकी क्रुद्धि यावत् भेरी आदि

‘तएणं से भदे’ इत्यादि

त्यार पछी ते लद्रसार्थवाडे विपुल अशनपान आद्य स्वाद्य तैयार कराव्यु अने
पोताना अधा मित्रे ज्ञाति-स्वजन बन्धुओंने बोलाव्या अने अदर सत्कार करीने ते
अधाने भोजन कराव्यु पछी सुभद्राने नवराणी यावत् मसी तिलक (याडो) आदि
करावी तमाभ अलङ्कार (धरेणु) शणुगारी इन्तर मनुष्योंके उपाडेवी शिविका (पालभी
उपर भेसाडवाभा आवी

त्यार पछी ते सुभद्रासार्थवाही मित्र, ज्ञाति, स्वजन-बन्धु तथा सम्बन्धियोंनी
साथे तमाभ प्रकारनी क्रुद्धि, भेरी आदि वाणना स्वर साथे वाराणुषी नगरीनी

रवेण वाराणसीनगर्या मध्यमध्येन यत्रैव सुव्रतानामार्याणामुपाश्रयस्तत्रैव उपा-
गच्छति, उपागत्य पुरुषसहस्रवाहिनीं शिविकां स्थापयति, सुभद्रा सार्थवाही
शिविकातः प्रत्यवरोहति । ततः खलु भद्रः सार्थवाहः सुभद्रां सार्थवाहीं पुरतः
कृत्वा यत्रैव सुव्रता आर्याः तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य सुव्रता आर्या वन्दते
नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत्—एवं खलु देवानुप्रियाः ! सुभद्रा
सार्थवाही मम भार्या इष्टा कान्ता यावत् मा खलु वातिकाः पैत्तिका श्लैष्मिकाः
सान्निपातिका त्रिविधा रोगातङ्काः स्पृशन्तु, एषा खलु देवानुप्रियाः ! संसार-
भयोद्विग्ना, भीता जन्ममरणाभ्यां, देवानुप्रियाणामन्तिके मुण्डा भूत्वा यावत्
प्रव्रजति ! तद् एतामहं देवानुप्रियभ्यो शिष्याभिक्षां ददामि, प्रतीच्छन्तु खलु
देवानुप्रियाः ! शिष्याभिक्षाम् । यथासुखं देवानुप्रियाः मा प्रतिबन्धम् ।

बाजोंके स्वरके साथ वाराणसी नगरीके बीचोबीचसे होती हुई सुव्रता
आर्याओंके उपाश्रयमें आई, और हजार पुरुषोंसे वाहित उस शिवि-
कासे उतरी । बादमें वह भद्र सार्थवाह सुभद्रा सार्थवाहीको आगे
कर सुव्रता आर्याके पास आया, और वन्दन नमस्कार किया । बाद
उसको उसने इस प्रकार कहा :—

हे देवानुप्रियों ! यह मेरी भार्या सुभद्रा सार्थवाही मेरी अ-
त्यन्त इष्ट और कान्त है । इसको वात पित्त कफ आदि रोग तथा शीत-
उष्ण आदिके दुःख स्पर्श न कर सके इसके लिए सर्वदा यत्न करता
आ रहा हूँ, सो यह सार्थवाही संसारके भयसे उद्विग्न हो तथा जन्म
मरणसे डरकर आप लोगोंके पास मुण्डित होकर प्रव्रजित हो रही
है, इसलिये मैं आप लोगोंको यह शिष्यारूप भिक्षा दे रहा हूँ ।
हे देवानुप्रियों ! इसको आप लोग स्वीकार करें ।

वन्द्योवन्द्य यद्यने सुव्रता आर्याभ्याना उपाश्रयमा अवी अने इन्दर पुश्याये उपाडेकी
ते शिषिकाभाथी उनरी पछी ते लद्रसार्थवाह सुभद्रा सार्थवाहीने आगण करीने सुव्रता
आर्यानी पासे आव्यो अने वन्दन नमस्कार कर्या पछी तेहे आ प्रकारे कह्यु—

हे देवानुप्रियो ! आ भारी श्री सुभद्रा सार्थवाही भारी घलीज छष्ट अने कान्त
(प्रिय) छे तेने वात पित्त कफ वगेरे रोग ठही गरभी वगेरेना इण स्पर्श करी न
शके ते भाटे हु इमेशा यत्न करतो आवु छु ते आ सार्थवाही संसारना लयथी
थितातुर गनीने तथा जन्ममरणना उरथी आप लोकेनी पासे मुण्डित थछ प्रव्रजित
थाय छे भाटे हु आप लोकेने आ शिष्यारूप भिक्षा आपु छु हे देवानुप्रियो, आने
आप लोके स्वीकार करे।

ततः खलु सा सुमद्रा सार्थवाही सुव्रताभिरार्याभिरेवमुक्ता सती स्वयमेव आमरणमालयालङ्कारमवमुञ्चति, अवमुच्य स्वयमेव पञ्चमुष्टिकं लोचं करोति, कृत्वा यत्रैव सुव्रता आर्यास्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य सुव्रता आर्यास्त्रिकृत्व आदक्षिणप्रदक्षिणेन वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा, एवमवादीत्—आदीप्तः खलु भदन्न ! यथा देवानन्दा तथा प्रव्रजिता यावत् आर्या जाता यावद् गुप्तवन्नचारिणी ॥ ४ ॥

भद्र सार्थवाहके इस प्रकार कहने पर उस महासतीने उस सार्थवाहीसे कहा—हे देवानुप्रिये ! जैसी तुम्हारी खुशी हो, शुभ काममें प्रमाद मत करो । सुव्रता महासती द्वारा इस प्रकार कहे जानेपर वह सुमद्रा सार्थवाही अपने हाथोंसे माला और आभूषणोंको उतार दिया, और उसने अपने हाथसे पञ्चमुष्टिक लुञ्चन किया । बादमें वह सुव्रता आर्योंके समीप आकर तीन बार आदक्षिण—प्रदक्षिणा पूर्वक वन्दन नमस्कार करके बोली—

हे महासती ! यह संसार जरा—मरण रूप आगसे जल रहा है,—अत्यन्त जल रहा है । जिस तरह कोई गृहस्थ घरमें आग लगनेपर जलती हुई वस्तुओंसे बहुमूल्य और थोड़े बचनवाली वस्तुको निकाल लेता है और उसे सुरक्षित रखता है उसी प्रकार मैं अपनी आत्माको जो मेरी इष्ट है, कान्त है, प्रिय है, संमत=सम्मानित है अनुमत—बड़े प्रेमसे सुरक्षित है, बहुमत है अनेक प्रकारसे लालित पालित है, उमको गीत, उष्ण, भूख, तृषा, चोर, सिंह, सर्प, डांस,

भद्र सार्थवाहना आ प्रकारे कहेवाथी ते भद्रासतीये ते सार्थवाहने कहु— हे देवानुप्रिये ! जेवी तमारी खुशी केथ शुभ काममा प्रमाद न करे सुव्रता भद्रासतीये आ प्रमाणे कहेवाथी ते सुमद्रासार्थवाहीये पोताना हाथेथी माला अने धरेणुं उतारी नाण्या अने तेणुं पोताना हाथेथी पञ्च मुष्टिक 'लुञ्चन कर्तुं' पछी ते सुव्रता आर्यानी पासे आवीने त्रयु बार आदक्षिण प्रदक्षिणापूर्वक वन्दन नमस्कार करीने बोली.—

हे महासती ! आ संसार जरा—मरणरूप अग्नि वडे जणी रह्यो छे—भूख जणे छे जेभ केथ गृहस्थ घरमा आग लागे त्यारे जणी जती वस्तुयोमाथी गहु डिमवाणी अने ओछा वजनवणो वस्तुने कटी ले छे अने तेन सुरक्षित राखे छे तेवीज रीते हू मारे आत्मा—के जे मारे इष्ट छे—कान्त छे प्रिय छे—समत=सम्मानित छे, अनुमत =गहु-प्रेमथी सुरक्षित छे, बहुमत छे, बहुमतछे=अनेक प्रकारथी लालित पालित छे, तेन इंडी, गरमी, भूख, तरस, चोर, सिंह, सर्प, डांस, मच्छर, तथा वात, पित्त,

टीका—‘तएण से भदे’ इत्यादि—एतस्य व्याख्या निगदतिद्वेति बोध्यम् ॥४॥

मूलम्—तएणं सा सुभदा अज्जा अन्नया कयाइ बहुजणस्स
चेडरूवे संमुच्छिया जाव अज्जोववण्णा अब्भंगणं च उव्वट्ठणं
फासुयपाणं च अलत्तगं च कंकणाणि य अंजणं च वण्णगं
च चुण्णगं च खेह्णगाणि य खज्जह्णगाणि य खीरं च दुप्फाणि
य गवेसइ, गवेसिता बहुजणस्स दारए वा दारियाए वा
कुमारे य कुमारियाए य डिंभए य डिंभियाओ य अप्पेगइ-
याओ अब्भंगेइ, अप्पेगइयाओ उव्वट्ठेइ, एवं अप्पेगइयाओ
फासुयपाणएणं षहावेइ, अप्पेगइयाणं पाए रयइ, अप्पेगइयाणं
उडे रयइ, अप्पेगइयाणं अच्छीणि अंजेइ, अप्पेगइयाणं उमुए
करेइ, अप्पेगइयाणं तिलए करेइ, अप्पेगइयाओ दिगिंदलए
करेइ, अप्पेगइयाणं पंतियाओ करेइ, अप्पेगइयाइं छिज्जाइं

मच्छर तथा वात पित्त कफ आदि रोग परीषह उपसर्ग कोई नुक-
सान न पहुँचा सकें तथा मेरी आत्मा परलोकमें हित रूप, सुख-
रूप कुशल रूप और परम्परासे कल्याण रूप रहे। इस लिये मैं
आपके पास मुण्डित होकर प्रव्रजित होती हूँ। मैं प्रतिलेखना आदि
क्रियाको सीखूँगी। आपकी आज्ञासे संयमकी सब क्रियाको पालूँगी।
इस प्रकार वह सार्थवाही देवानन्दाके समान प्रव्रजित हुई और
आर्या हो गई तथा पंचसमिति और तीन गुप्तियोंसे युक्त हो सकल
इन्द्रियोंका दमन कर वह शुभव्रह्मचारिणी हो गयी ॥ ४ ॥

कई वगेरे रोग, परीषद, उपसर्ग काँछ नुकसान पडोयाडी न शकें तथा भारे आत्मा
परलोकमा छितरूप, सुभरूप, कुशलरूप तथा परम्पराथी कल्याणरूप रहे ते भाटे तभारी
पासे मुडित थधने प्रव्रजित जनु छु हु प्रतिलेखना आदि क्रियाने शीपीश आपनी
आज्ञाथी सयमनी जधी क्रियाओनु पालन करीश आ प्रकारे ते सार्थवाही देवानन्दाना
पेठे प्रव्रजित जनी जने आर्या यथ गथ तथा पाथ समिते जने त्रय गुप्तियेथी
युक्त थधने जधी छिन्द्रिओनु दमन करीने ते गुप्त ब्रह्मचारणी थथ गथ (४)

करेइ, अप्पेगइया वन्नएणं समालभइ, अप्पेगइया चुन्नएणं
समालभइ, अप्पेगइयाणं खेह्णगाइं दलयइ, अप्पेगइयाणं
खञ्जुह्णगाइं दलयइ, अप्पेगइयाओ खीरभोयणं भुंजवेइ, अप्पे-
गइयाणं पुप्फाइं ओमुयइ, अप्पेगइयाओ पाएसु ठवेइ, अप्पे-
गइयाओ जंघासु करेइ, एवं ऊरुसु, उच्छंगे, कढीए, पिट्टे,
उरसि, खंधे, सीसे य करतलपुडेणं गहाय हलउलेमाणी २
आगायमाणी २ परिगायमाणी २ पुत्तपिवासं च धूयपिवासं च
नत्तुयपिवासं च नत्तिपिवासं च पच्चणुवभवमाणी विहरइ ।

तएणं ताओ सुवयाओ अज्जाओ सुभद्दे अज्जं एवं वयासी-
अम्हे णं देवाणुप्पिए ! समणीओ निग्गंथीओ इरियासमियाओ
जाव गुत्तवंभयारिणीओ नो खलु अम्हं कप्पइ जातककम्मं
करित्तए, तुमं च णं देवाणुप्पिया ! बहुजणस्स चेडरूवेसु
मुच्छिया जाव अज्झोववन्ना अवभंगणं जाव नत्तिपिवासं वा पच्च-
णुवभवमाणी विहरसि, तं णं तुमं देवाणुप्पिया एयस्स ठाणस्स
आलोएहि जाव पायच्छित्तं पडिवजाहि । तएणं सा सुभद्दा
अज्जा सुवयाणं अज्जाणं एयमट्टं नो आडाइ नो परिजाणइ,
अणाढायमाणी अपरिजाणमाणी विहरइ !

तएणं ताओ समणीओ निग्गंथीओ सुभद्दं अज्जं हीलेंति
निंदंति खिसंति गरहंति अभिक्खणं २ एयमट्टं निवारेंति ।
तएणं तीसे सुभद्दाए अज्जाए समणीहिं निग्गंथीहिं हीलि-
ज्जमाणीए जाव अभिक्खणं २ एयमट्टं निवारिज्जमाणीए अय-
मेयारूवे अज्झस्थिए जाव समुपज्जित्था-जयाणं अहं अगार-

वासं वसामि तथाणं अहं अप्पवसा, जप्पभिइं च णं अहं
 मुंडा भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्ता, तप्पभिइं च णं
 अहं परवसा, पुविं च समणीओ निग्गंथीओ आढेंति परिजाणेंति,
 इणाणिं नो आढाइंति नो परिजाणंति, तं सेयं खल्लु मे कल्लं
 जाव जलंते सुव्वयाणं अज्जाणं अंतियाओ पडिनिक्खमित्ता
 पाडियक्कं उवस्सयं उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए । एवं संपेहेइ,
 संपेहित्ता कल्लं जाव जलंते सेव्वयाणं अज्जाणं अंतियाओ
 पडिनिक्खमेइ, पडिनिक्खमित्ता पाडियक्कं उवस्सयं उवसंपज्जि-
 त्ता णं विहरइ । तए णं सा सुभद्दा अज्जा अज्जाहिं अणो-
 हट्टिया अणिवारिया सच्छंदभई बहुजणस्स चेडरूवेसु मुच्छित्ता
 जाव अब्भंगणं जाव नत्तिपिवासं च पच्चणुब्भवमाणी विहरइ ।

तएणं सा सुभद्दा अज्जा पासत्था पासत्थविहारी एवं
 ओसण्णा० ओसण्णविहारी कुसीला कुसीलविहारी संसत्ता संस-
 त्तविहारी अहाच्छंदा अहाच्छंदविहारी बहूइं वासाइं सामन्नपरि-
 यागं पाउणइ, पाउणित्ता अद्धमासियाए संलेहणाए अत्ताणं
 झुसित्ता तीसं भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता तस्स ठाणस्स अणा-
 लोइयप्पडिक्कंत. कालमासे कालं किच्चा सोहम्ममे कप्पे बहुपुत्ति-
 याविमाणे उववायसभाए देवसयणिज्जंसि देवदूसंतस्सियाए अंगु-
 लस्स असंखेज्जमागमेताए ओगाहणाए बहुपुत्तियदेवित्ताए
 उववण्णा ।

तए णं सा बहुपुत्तिया देवी अहुणोववन्नमित्ता समाणी
 पंचविहाए पज्जतीए जाव भासामणपज्जतीए० । एवं खल्लु

गोयमा ! बहुपुत्तियाए देवीए सा दिव्वा देविड्डी जाव अमि-
समण्णागया । से केणट्टेणं भंते ! एवं वुच्चइ बहुपुत्तिया
देवी २ ? गोयमा बहुपुत्तिया णं देवी जाहे जाहे सकस्स
देविंदस्स देवरण्णो उवत्थाणियणं करेइ, ताहे २ वहवे दारए
य दारियाए य डिंभए य डिंभिडाओ य विउव्वइ, विउव्वित्ता
जेणेव सक्के देविंदे देवराया तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता
सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो दिव्वं देविड्ढिं दिव्वं देवज्जुइं दिव्वं
देवाणुभागं उवदंसेइ, से तेणट्टेणं गोयमा । एवं वुच्चइ बहु-
पुत्तिया देवी ॥ ५ ॥

छाया—ततः खलु सा सुभद्रा आर्या अन्यदा कदाचित् बहुजनस्य
चेटरूपे संमूर्च्छिता यावद् अद्युपपन्ना अभ्यञ्जनं च उद्वर्त्तनं च प्राग्मुकपानं च
अलक्तकं च कङ्कणानि च अञ्जनं च वर्णकं च चूर्णकं खेलकानि च खज्जल
कानि च क्षीरं च पुष्पाणि च गवेपयति, गवेपयित्वा बहुजनस्य दारकान्
दारिका वा कुमारान्श्च कुमारिकाश्च डिंभान्श्च डिंभिकांश्च अप्येककान् अभ्यङ्गयति
अप्येककान् उद्वर्त्तयति, एवम् अप्येककान् प्राग्मुकपानकेन स्नपयति, अप्येककानां
पादौ रञ्जयति, अप्येककानाम् आंष्टौ रञ्जयति, अप्येककानाम् अक्षिणी अञ्जयति
अप्येककानाम् इपुकान् करोति, अप्येककानां तिलकान् करोति, अप्येककान्
दिलिन्दलके करोति, अप्येककानां पङ्क्तीः करोति, अप्येककान् लेद्यान् (छिघ्नान्)
करोति, अप्येककान् वर्णकेन समालभते, अप्येककान् चूर्णकेन समालभते,
अप्येककेभ्यः खेलकानि ददाति, अप्येककेभ्यः खज्जुलकानि ददाति, अप्येककान्
क्षीरभोजनं भोजयति, अप्येककानां पुष्पाणि अवमुञ्चति, अप्येककान् पादयोः
स्थापयति, अप्येककान् जङ्घयोः करोति, एवं ऊर्वीः, उत्सङ्गे, कट्यां, पृष्ठे,
उरसि, स्कन्धे, शीर्षे च करतलपुटेन गृहीत्वा हलउल्लसन्ती २ आगायन्ती २
परिगायन्ती २ पुत्रपिपासां च दुहितृपिपासां च नप्तृकपिपासां च नपूत्रीपि-
पासां च प्रत्यनुभवन्ती विहरति ।

ततः खलु ताः सुव्रता आर्याः सुभद्रामार्यामेवमवादीत्—वयं खलु
देवानुप्रिये ! श्रमण्यो निर्ग्रन्थ्य इर्यासमिता यावद् गुह्यब्रह्मचारिण्यो नो खलु

अस्माकं कल्पते जातकर्म कर्तुम्, त्वं च खलु देवानुप्रिये ! बहुजनस्य चेटरूपेषु मूर्च्छिता यावत् अध्युपपन्ना अभ्यञ्जनं च यावत् नप्त्रीपिपासां वा प्रत्यनुभवन्ती विहरसि, तत् खलु देवानुप्रिये ! एतस्य स्थानस्य अलोचय यावत् प्रायश्चित्तं प्रतिपद्यस्व । ततः खलु सा सुभद्रा आर्या सुव्रतानामार्याणामेतमर्थं नो आद्रियते नो परिजानाति, अनाद्रियमाणा अपरिजानन्ती विहरति ।

ततः खलु ताः श्रमण्यो निर्ग्रन्थ्यः सुभद्रामार्या हीलन्ति निन्दन्ति खिसन्ति गर्हन्ते अभीक्षणम् २ एतमर्थं निवारयन्ति । ततः खलु तस्याः सुभद्राया आर्यायाः श्रमणीभिर्निर्ग्रन्थीभिर्हीलप्रमानाया यावत् अभीक्षणम् २ एतमर्थं निवारयन्त्या अयमेतद्रूप आध्यात्मिको यावत् समुदपद्यत-यदा खलु अहम् अगारवासं वसामि तदा खलु अहम् आत्मवशा, यतः प्रभृति च खलु अहं मुण्डा भूत्वा अगारात् अनगारतां प्रव्रजिता ततः प्रभृति च खलु अहं परवशा, पूर्वं च श्रमण्यो निर्ग्रन्थ्य आद्रियन्ते, परिजानन्ति, इदानीं नो आद्रियन्ते नो परिजानन्ति, तत् श्रेयः खलु मे कलये यावत् ज्वलति सुव्रतानामार्याणामन्तिकात् प्रतिनिष्क्रम्य प्रत्येकम् उपाश्रयम् उपसंपद्य खलु विहर्तुम्; एवं संप्रेक्षते, संप्रेक्ष्य कलये यावत् ज्वलति सुव्रतानामार्याणामन्तिकात् प्रतिनिष्क्राम्यति, प्रतिनिष्क्रम्य प्रत्येकमुपाश्रयमुपसंपद्य खलु विहरति । ततः खलु सा सुभद्रा आर्या आर्याभिः अनपवट्टिका अनिवारिता स्वच्छन्दमतिः बहुजनस्य चेटरूपेषु मूर्च्छिता यावत् अभ्यञ्जनं च यावत् नप्त्रीपिपासा च प्रत्यनुभवन्ती विहरति ।

ततः खलु सा सुभद्रा आर्या पार्श्वस्था पार्श्वस्थविहारिणी एवमवसन्ना अवसन्नविहारिणी कुशीला कुशीलविहारिणी संसक्ता संसक्तविहारिणी यथाच्छन्दा यथाच्छन्दविहारिणी बहूनि वर्षाणि श्रामण्यपर्यायं पालयति, पालयित्वा अर्द्धमासिक्या संलेखनया आत्मनं जोषयित्वा त्रिंशद् भक्तानि अनगनेन छित्त्वा तस्य स्थानस्य अनालोचिताऽप्रतिक्रान्ता कालमासे कालं कृत्वा सौधर्मे कल्पे बहुपुत्रिकादिमाने उपपातसभायां देवशयनीये देवदूष्यान्तरिता अङ्गलस्य असंख्येयभागमात्रया अवगाहनया बहुपुत्रिकादेवीतया उपपन्ना ।

ततः खलु सा बहुपुत्रिका देवी अधुनोपपन्नमात्रा सती पञ्चविधया पर्याप्त्या यावद् भाषामनःपर्याप्त्या० । एवं खलु गौतम ! बहुपुत्रिकया देव्या दिव्या देवद्विः यावत् अमिसमन्वागता । अथ सा केनार्थेन भदन्त ! एवमुच्यते बहुपुत्रिका देवी २ ! गौतम ! बहुपुत्रिका खलु देवी यदा यदा शक्रस्य देवन्द्रस्य देवराजस्य उपस्थानं (प्रत्यासत्तिगमनं) करोति । तदा

तदा वहन् दारकांश्च दारिकाश्च डिम्भांश्च डिम्भिकाश्च विकुरुते, विकृत्य यत्रैव
गक्रो देवेन्द्रो देवराजस्तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य शक्रस्य देवेन्द्रस्य देवराज-
स्य दिव्यां देवर्द्धिं दिव्यं देवज्योतिः दिव्यं देवानुभागमुपदर्शयति । तत्तेनाऽर्थेन
गौतम ! एवमुच्यते बहुपुत्रिका देवी ॥ ५ ॥

टीका—‘तएणं सा’ इत्यादि—ततः=तदनन्तरं खलु इति वाक्यालङ्कारे
सा=पूर्वोक्ता प्रसिद्धा वा आर्या=माध्वी मुमद्रानाम्नी, अन्यदा=अन्यस्मिन्
समये कदाचित्=अनिश्चितकाले बहुजनस्य=बहुलोकस्य चेटरूपे=कुमारम्बरूपे
सम्प्लिखिता=संमोहिता यावद् अशुपपन्ना=वालप्रेमासक्ता संजाता अत एव
अभ्यङ्गनं=तैलादिमर्दनम्, चकारः सर्वत्र वाक्यालङ्कारार्थकः, उद्वर्तनं=गात्रमला-
पनयनाय पिष्टादिमुगन्धद्रव्यविशेषम्, प्रासुकपानं=प्रगता असवः उन्मृष्टामनिच्छा-
मात्मकाः प्राणा यतस्तत् प्रासुकं, पीयते यत् तत् पानं, प्रासुकं च तत्पानं
प्रासुकपानं सकलजीवोपाधिरहितमचित्तजलम् अलक्तकम्=हस्तचरणादिरञ्जकं मेहं-
द्यादिद्रव्यविशेषम्, कङ्कणानि=वलयानि करभूषणविशेषान्, अञ्जनं=कलज्जम्,
वर्णकं=चन्दनादिविशेषम्, चूर्णकं=गन्धद्रव्यसम्बन्धिरजः, खेलकानि=शालभञ्जि-
कादीनि (‘खिलौना’ इति भाषायाम्) खज्जलकानि=खाद्यद्रव्यविशेषान्

‘तएणं सा’ इत्यादि—

उसके बाद वह सुभद्रा आर्या एक समय गृहस्थके बालवच्चों-
पर प्रेम करने लगी और प्रेमके आवेशमें उन बच्चोंके लिये वह आर्या
लगानेके लिये तेल, शरीरका मैल दूर करनेके लिये उबटन, पीनेके
लिये प्रासुक जल, उन बच्चोंके हाथ पैर रंगनेके लिए मेंहदी आदि
रञ्जक द्रव्य, कङ्कण=हाथोंमें पहननेका कडा, अञ्जन=काजल, वर्णक=
चन्दन आदि, चूर्णक=सुगन्धित द्रव्य, खेलक=खेलनेके लिये शाल-
भञ्जिका (पुतली) आदि खिलौने, लिये खाजे, पीनेके लिये दूध और

‘तएण मा’ इत्यादि

त्यार पत्नी ते सुभद्रा आर्या के ३ वणत गृहस्थना बालवच्चों ७पर प्रेम
करवा लागी अने प्रेमना आवेशमा ते जणयाने माटे ते आर्या, खोणवा माटे तेल,
शरीरने मैल दूर करवा माटे उबटन (पीठी), पीवा माटे प्रासुक पाणी ते
जणयाना हाथ पज रंगवा माटे मेदी वगेरे रञ्जक द्रव्य, कङ्कण=हाथमां पहनेवा
माटे कडा, जणडी, अञ्जन=काजण, वर्णक=चन्दन आदि, खेणुं=सुगन्धित द्रव्य,
खेसक=रमवा माटे पुतलीयो आदि रमकडा भावा माटे खाना पीवा माटे दूध तथा

(खाजा इति भाषायाम्) क्षीरं=दुग्धं पुष्पाणि=कुसुमानि च गवेषयति=अन्वेषयति, गवेषयित्वा=अभ्यङ्गनादिपुष्पान्तवस्तूनि अन्वेष्य बहुजनस्य=विपुललोकस्य दारकान् = बहुकालिकावालकान् दारिकाः = बहुकालिका-वालिका वा=अथवा कुमारान्=अधिकतरवर्षकान् वालकान् कुमारिकाः=बहु-तरवार्षिका वालिकाः, डिम्भान्=अल्पकालिकशिशून् डिम्भिकाः=अल्पकालिक-वालिकाश्च, अप्येककान्=काश्चन अभ्यङ्गयति=तैलेन गात्रं मर्दयति, अपीति समुच्चयार्थकः, तेन एकमपि तदतिरिक्तञ्च अनेकमित्यर्थः । एकान् उद्धर्तयति=गात्रमलापनयनाय पिष्टादिसुगन्धिद्रव्यं लेपयति, एवम्=अनेन प्रकारेण एककान् प्रासुकपानीयेन स्नपयति, एककानां पादौ=चरणौ रञ्जयति=अलक्तकादिना रक्तवर्णौ करोति, एककानाम् औष्ठौ=अधरौ रञ्जयति=रक्तवर्णौ विदधाति, एककानाम् अक्षिणी=नेत्रे अञ्जयति=अञ्जनेन भूपिते करोति, एककानाम् इपुकान्=ललाटदेशे बाणाकारान् तिलकविशेषान् करोति, एककानां तिलकान्=केशरकुङ्कु-मादिना ललाटे विन्यासविशेषान् करोति, एककान् दिगिन्दलके देशीशब्दो-

माला आदिके लिये अचित्त फूल, इन सभी वस्तुओंका अन्वेषण करती थी । बादमें उन गृहस्थोंके लडके लडकियों में से, कुमार कुमारियों में से बच्चे बच्चियों में से, किसी एक को तेलकी मालिश करती थी, किसीकी देहमें उबटन लगातीथी, किसी एकको प्रासुक जलसे स्नान कराती थी, किसी एकके पैरोंको रंगती थी, एकके ओठोंको रंगती थी, किसीकी आँखोंमें अंजन लगाती थी, किसीके ललाट पर बाण आदिके आकारका तिलक लगाती थी, किसीके ललाटपर केशर आदिके द्वारा तिलक विशेषका विन्यास करती थी, किसी एक बच्चेको हिण्डोलेमें रखकर झुलाती थी, और कुछ बच्चोंको एक कतार (पंक्ति) में खड़ा करती थी,

माला (हार) ने भाटे अचित्त फूल, आ अधी वस्तुओंके भेगववानी शोध करती હતી પછી તે ગૃહસ્થોના છોકરા, છોકરીઓમાથી, કુમાર કુમારિકાઓમાથી, બાળકો અને બાળાઓમાથી કોઈને તેલ માલીસ કરતી હતી, કોઈને શરીરે ઉબટન (પીઠી) લગાડતી હતી, કોઈને પ્રાસુક પાણીથી સ્નાન કરાવતી હતી, કોઈના પગ રંગી દેતી હતી, કોઈના હોઠ રંગતી હતી, કોઈને આબજી આજતી હતી તે કોઈના કપાળ ઉપર બાજી આદિના આકારને ચાડવો ચોડતી હતી, કોઈના કપાળે કેશર આદિની ચુંદા ચુંદા પ્રકારના તિલક આદિના વિન્યાસ કરતી હતી, કોઈ એક બાળકને હીચકા નાખતી હતી તથા કેટલાક બાળકની એક હાર કરી ઊભા રાખતી હતી અને તે

ऽयं तेन-‘ हिन्दोलकं ’ इत्यर्थः करोति, एककानां पङ्क्तीः=श्रेणीः करोति, एककान् लिघ्नान्=लिघ्नभिघ्नान् एकत्रस्थितान् पृथक् पृथक् करोति, एककान् वर्षकैः=चन्दनविशेषेण समालभते=अनुलेपयति, एककान् चूर्णकैः=सुगन्धिद्रव्यविशेषेण समालभते=सुवासयति, एककेश्यः खेलकानि=शालभञ्जिकादीनि ददाति, एककेश्यः गज्जुलकानि =खाद्यद्रव्यविशेषान् ‘ खाजा ’ इति भाषाप्रसिद्धान् ददाति, एककान् क्षीरभोजनं=दुग्धपानं भोजयति=कारयति, एककानां पुष्पाणि=कुसुमानि अवसोचयति=कण्ठादितांऽधस्ताद्विसर्जयति, एककान् पादयोः=चरणयोः स्थापयति, एककान् जङ्घयोः करोति, एवम्=अनेन प्रकारेण ऊर्वाः, उन्मंगे=क्रोडे, कट्यां=श्रोण्यां, पृष्ठे=पृष्ठभागे, उरसि=वक्षसि, स्कन्धे =अंसे जीर्षे=शिरसि, करतलपुटेन=पाणितलपुटेन गृहीत्वा हलउल्लयन्ती=वाल्सरङ्गनाय मधुरावापं ‘ हलरात्रा ’ इति भाषाप्रसिद्धं कुर्वती, आगायन्ती=वाल्सरङ्गनाय मन्दं मन्दं गायन्ती, परिगायन्ती=वाल्यान् रुदतां शिलोक्य उच्चस्वरेण

तथा पंक्तिमें ग्वडे हुए बच्चोंको अलग २ ग्वडा करनी थी, एकके शरीरमें चन्दन लगानी थी, तो एकके शरीर को सुगन्धिन चूर्णक (पाउडर) से सुवासित करतो थी, एकको खेलनेके लिये ग्विलाना देती थी, तथा किसीको ग्वानके लिये ग्वाने देती थी, और किसीको दूध पीलानी थी, किसीके कण्ठमें पडी हुई अचित्त (कागदके) फूलोंकी माला उतार लेती थी, किसीको अपने पैरोंपर बैठानी थी तो किसीको अपनी जङ्घापर रखती थी और इसी प्रकार किसीको ऊपर, किसीको अपनी गोदीमें किसीको अपनी कमरपर, किसीको पीठपर किसीको अपनी छातीपर किसीको कन्धेपर किसीको अपने शिरपर रखती थी, किसीको हाथसे पकडकर हलगानी हुई और बालकोंके मनोरंजनके लिये मन्द स्वरसे गाती हुई, बालकोंको

हाथमा उभेबाभार्थी डेटवाड भाण्डाने खुदा खुदा जिला राखनी હતી એકના શરીરને ચંદન લગાવતી હતી તે એકને સુગન્ધિત પાઉડરથી સુવાસિત કરતી હતી એકને રમવા માટે રમકડા દેતી તે એકને ખવા માટે ખાણ દેતી હતી અને કોઈને દૂધ પાતી હતી કોઈની કોઈમંથી અચિત્ત (કાગળના) ફૂલની માળા ઉતારી લેતી કોઈને પોતાના પગ ઉપર બેસાડતી તે કોઈને પોતાના ખોળામા રાખતી કોઈને પેટ ઉપર તે કોઈને સાથળ ઉપર અને કોઈને કોઈ તે કોઈને પીઠ ઉપર, કોઈને છાતી ઉપર તે કોઈને કાંધ ઉપર કોઈને માથા ઉપર રાખતી તે કોઈને હાથેથી પકડીને હલગવતી. ખાણકને આનંદ માટે ધીમા ધીમા સ્વરથી ગાતી અને રાતાં ખાણકને બેઠને તાણીને

गायन्ती, पुत्रपिपासां=पुत्रलालसां दुहितृपिपासां=पुत्रीवाञ्छां नप्तृकपिपासां=पौत्रदौहितृलालसां नपत्रीपिपासां=पौत्री दौहित्री स्पृहां च प्रत्यनुभवन्ती=एतत्कार्येण सन्तोषं मन्यमाना विहरति=आस्ते । ततः खलु ताः=दीक्षादात्र्यः सुवृता आर्याः=साध्यः सुभद्रामेवं=वक्ष्यमाणम् अत्रादिषुः-हे देवानुप्रिये ! वयं श्रमण्यः ससारविषयविरक्ताः साध्यः निर्ग्रन्थ्यः=ग्रन्थिरहिताः इर्यासमिताः यावत् शब्देन भाषासमिताः, इत्यादीनां संग्रहः, गुप्तब्रह्मचारिण्यः=सुरक्षितब्रह्मचर्याः, नो खलु अस्माकं=श्रमणीनां निर्ग्रन्थीनाम् जातकर्म=शिशुक्रीडनादिक्रियां कर्तुम्=अनुष्ठातुं कल्पते=युज्यते, हे देवानुप्रिये ! सुभद्रे ! त्वं बहुजनस्य चेटरूपेषु=कुमारस्वरूपेषु मूर्च्छिता=संमोहिता यावत् अद्युपपन्ना दत्तचित्ता अभ्यङ्गनं यावच्छब्देन वर्णकादीनां सङ्ग्रहः, नपत्रीपिपासां=पौत्रीदौहित्रीस्पृहां प्रत्यनुभवन्ती

रोते हुए देखकर उच्च स्वरसे गाती हुई पुत्रकी लालसा, पुत्रीकी वाञ्छा, पोते और दौहित्रीकी वाञ्छा, पौत्री और दौहित्रीकी इच्छाका अनुभव करती हुई, अपने उक्त कार्योंसे सन्तुष्ट होती हुई विचरण कर रही थी ।

उसके ऐसे आचरणको देखकर सुवृता आर्या सुभद्रा आर्यासे इस प्रकार बोली-हे देवानुप्रिये ! अपन लोग संसारिक विषयोंसे विरक्त, ईर्यासमिति आदिसे युक्त यावत् गुप्तब्रह्मचारिणी निर्ग्रन्थ श्रमणी हैं, इसलिये हम लोगोंको बालक्रीडा करना कराना आदि नहीं कल्पता है । हे देवानुप्रिये ! तुम गृहस्थोंके बच्चोंसे प्रेम करने लग गयी हो बच्चोंको तेल आदि लगानेकी क्रिया आदि अकल्पनीय कार्य कर रही हो । तथा पुत्र पुत्री, पौत्र पौत्री और दौहितृ

गाती, पुत्रनी लालसा, पुत्रीनी वाञ्छा, पौत्र अने दौहितृनी वाञ्छा, तथा पौत्री अने दौहितृनी वाञ्छाना अनुभव करीने पोनाना ये कार्येथी सतोप मानी विचरण करती हुनी

तेना आवा आचरणे। जेधने सुवृता आर्या सुभद्रा आर्याने आ प्रकारे कडेवा लागी-डे देवानुप्रिये ! आपणे दोडे सासारिक विषयेथी विरक्त धर्यासमिति आदिथी युक्त यावत् गुप्त ब्रह्मचारिणी निर्ग्रन्थ श्रमणी छीजे माटे आपणे गाणकने रमाडवु आदि कल्पवानु नथी डे देवानुप्रिये ! तमे गृहस्थेना गण्याने प्रेम करवा लागी गया छे। गण्याने तेल आदि लगाडवानी क्रियाथी माडीने अधा अकल्पनीय कार्ये करी न्छा छे। तथा पुत्र-पुत्री पौत्र-पौत्री अने दौहितृ-दौहितृनी वाञ्छाना अनुभव करता

विहरसि, तत्=तस्मात् कारणात् हे देवानुप्रिये ! एतस्य स्थानस्य एतत्कर्त-
व्यस्य आलोचय=आलोचनां कुरु यावत् प्रायश्चित्तं=पापापनोदनरूपाम् क्रियां
प्रतिपद्यस्व स्वीकुरु । ततः खलु सुभद्रा आर्यां सुव्रतानामार्याणामेतम्=अव्य-
वहितोक्तम् अर्थम्=निर्दिष्टविषयम् नो आद्रियते=न सत्करोति नो परिजानाति=
कर्तव्यत्वेन नो स्वीकरोति, अनाद्रियमाणा=उपेक्षमाणा, अपरिजानन्ती=कर्तव्य-
त्वेन तदुक्तमस्वीकुर्वाणा विहरति ।

ततः खलु ताः श्रमण्यो निर्ग्रन्ध्यः सुभद्रामार्थं द्विलन्ति=जन्मकर्मम-
सीद्धाटनपूर्वकं निर्भत्सयन्ति, निन्दन्ति=कुत्सितशब्दपूर्वकं दोषोद्धाटनेन अनाद्रि-
यन्ते, खिसन्ति=हस्तमुखादिविकारपूर्वकमवमन्यन्ते, गर्हन्ते=गुर्वांसिसमक्षं दोषा-

दौहित्रीकी वाञ्छाका अनुभव करती हुई विचर रही हो, सो हे देवानुप्रिये ! तुम अपने इस कार्यपर विचार करो और इस पापकी विशुद्धिके लिये आलोचना करो और प्रायश्चित्त लो ।

उन आर्याओंके द्वारा इस प्रकार अकल्पनीय बातोंका निषेध करनेपर भी उस सुभद्रा आर्याने न उन बातोंका कुछ आदर किया और न उन बातोंपर कुछ ध्यान ही दिया अपितु उसी प्रकारका व्यवहार करती हुई विचरने लगी ।

उसके बाद वे आर्याय सुभद्रा आर्याकी 'तुम उत्तम कुलमें जन्म लेकर और उत्तम संयम अवस्थामें आकर ऐसे तुच्छ कर्म करती हो' इस प्रकारकी 'हीलना' करती हैं, और वे कुत्सित शब्द बोलकर उसका दोष प्रकट करती हुई 'निन्दना' करती हैं । हाथ मुख आदिको विकृत करके अपमान करती हुई 'खिसना' करती हैं । गुरु जनोंके समीप उसके दोषोंका उद्धाटन करती हुई तिर-

विचरो छे। माटे छे देवानुप्रिये ! तमे तमारा आ कर्यो माटे विचार करो अने आ पापनी विशुद्धिने माटे अलोचना करो अने प्रायश्चित्त दो।

ते आर्याओना आ प्रकारे अकल्पनीय बातोना निषेध करवा छता पथु ते सुभद्रा आर्याओ न तो ते बातोने मानी के न तेना उपर काछ ध्यान आथु, पथु तेन प्रकारना व्यवहार करती विचरवा लागी।

त्यार पछी ते आर्याओ कछेती के — 'तमे उत्तम कुलमां जन्मीने उत्तम संयम अवस्थामा आवी आवा तुच्छ कर्म करे छे' आवा प्रकारनी हीलना करती, कुत्सित शब्दो (भेषा) बोलीने तेना दोष जखेर करती करती निन्दना करवा लागी, हाथ भों आदिकी आणा पाडी अपमान करती खिसना करवा लागी, शुश्रूणोनी पासतेना दोषो

ऽऽविष्करणपूर्वकं तिरस्कुर्वन्ति, अभीक्षणं २=वारंवारम् एतमर्थं=पुत्रादिलालनादि-
विषयं निवारयन्ति=अवरुन्धन्ति । ततः खलु तस्याः सुभद्राया आर्यायाः
श्रमणीभिर्निर्ग्रन्थीभिः हिल्यमानाया यावत् अभीक्षणम् २ एतमर्थं निवार्यमाणाया
अयमेतद्रूपः=वक्ष्यमाणलक्षणः आध्यात्मिकः=अन्तःकरणगतः संकल्पो यावत् समुद-
पद्यत । अनपघट्टिका=अविद्यमानोऽपघट्टकोयदृच्छया प्रवर्त्तमानाया हस्तग्रहणादिना

स्कार रूप 'गर्हणा' करती हैं और वे बालक बालिकाओं आदिका
लालन विषय का बार बार निवारण करती हैं ।

उसके बाद उन सुव्रता आदि आर्याओंके द्वारा पूर्वोक्त
प्रकारसे हीलना निन्दना आदि करनेपर तथा वारम्बार निवारण
करनेपर उस सुभद्रा आर्याके अन्तःकरणमें इस प्रकारका विचार
उत्पन्न हुआ कि 'जब मैं अपने घरमें थी तो स्वतंत्र थी, जब मैं
घर छोडकर मुण्डित हो प्रवर्जित हो गई तबसे मैं पराधीन हूँ ।
पहले ये श्रमण निर्ग्रन्थियाँ मेरा आदर करती थीं और मेरे साथ
प्रेमका वर्ताव करती थीं, पर आज ये न मेरा आदर ही करती हैं
और न प्रेमका वर्ताव ही करती हैं, अपितु ये सर्वदा मेरी निन्दा
करती रहती हैं । इसलिये मुझे उचित है कि प्रातःकाल होते ही
इन सुव्रता आर्याओंको छोडकर अलग उपाश्रयमें जाकर उतरूँ ।
ऐसा विचार कर सूर्योदय होते ही सुव्रता आर्याओंको छोडकर वह
सुभद्रा आर्या निकल गयी और अलग उपाश्रयमें जाकर अकेली
ही रहने लगी । उसके बाद वह सुभद्रा आर्या गुरुणी आदिके द्वारा

शुद्धा करीने तिरस्काररूपे गर्हणा करती बार बार पुत्र आदिना लालन विषयनु निवारण
करे छे

ते सुव्रता आदि आर्याओना उपरोक्त प्रभरे हीलना-निन्दना आदि करवाथी
अने निवारण (मनाथ) करवामा आवता ते सुभद्रा आर्याना अत करणुमा ओवो
विचार उत्पन्न थयो के 'ज्यारे हुं मारे धेर डती त्यारे स्वतंत्र डती हुये ज्यारे घर
छोडी मुडित थथ प्रवर्जित थथ, त्यारथी हुं पराधीन छु पडेला आ श्रमण निर्ग्रन्थियो
मारो आदर करती डती अने मारो साथे प्रेमनेो वर्ताव करती डती पणु आज ते
नथी मारो आदर करती के नथी मारी साथे प्रेमनेो वर्ताव करती डती ते हुमेथां
मारी निन्दा कर्या करे छे. माटे सवार पडना ज आ सुव्रता आर्याओने छोडी दथ डेथ
बुद्धा उपाश्रयमा उतरुं ओ मारो माटे उचित छे. ओम विचार करी सूर्योदय थता ज
सुव्रता आर्याओने छोडीने ते सुभद्रा आर्या नीकणी पडी अने बुद्धा उपाश्रयमां जथ

निर्द्वन्द्वं यस्याः सा तथा, स्वच्छन्दप्रवृत्ता, पार्श्वस्था पार्श्वे=साधुगुणानामेकतः=
 साधुगुणैः । पृथग्विपर्ययः, तिष्ठतीति तथा, अवमन्ना=सामाचारीपालने अवसीदति=
 नैवमनुमन्तीति तथा, कृशीला=कृ=कृन्वितं उत्तरगुणप्रतिसेवनया संज्वलनकपा-
 यकालेन सा दृषितव्यात् शीलं यस्याः सा तथा, संसक्ता=गृहस्थादिप्रेमयन्त्रनेन
 स्यात् न होनेके कारण स्वच्छन्द मति हो गृहस्थोंके वचनोंसे
 प्रवेदन व्यवहार करने लगी ।

उसके बाद वह सुभद्रा आर्या पार्श्वस्था=साधुके गुणोंसे दूर
 थी, पार्श्वस्थ-विहारिणी हो गयी, इसी प्रकार अवमन्त्र=सामाचारी
 पालनमें मिला हो अवमल विहारिणी हो गयी । और उत्तर गुणमें
 दोष लगानेमें तथा संज्वलन कपायके उदयसे कृशीला हो कृशील
 विहारिणी हो गई और संसक्ता=गृहस्थ आदिके साथ प्रेम यन्त्रन
 करनेके कारण सामाचारीमें जिथिलतासे प्रवृत्त हो संसक्तविहारिणी
 हो गयी, स्याच्छंदा=अपने अभिप्रायसे कल्पित मार्गमें प्रवृत्त हो
 स्याच्छंदाविहारिणी हो गयी । इस प्रकार बहुत वर्षों तक उसने
 साधुगुण पर्यायका पालन किया । अन्तमें अर्थमायिकी संश्लेषना द्वारा
 अपनी आत्माको संवित कर नीम भक्तोंको अनमन द्वारा छेदन
 कर अपने उत्तरगुण प्रतिसेवनरूप पापस्थानकी आलोचना और
 प्रतिशमन नहीं करके, फाल अवसरमें फालकर सौभर्म फल्पके बहू-

सामाचारी शिथिलीकरणपूर्वकं प्रवृत्ता यथाच्छन्दा=स्वामिप्रायपूर्वकस्वमतिकल्पितमार्गे प्रवृत्ता । शेषं सुगमम् ॥५॥

पुत्रिका विमानमें उपपात सभाके अन्दर देवशयनीय शय्यामें देवदूष्य वस्त्रोंसे आच्छादित जघन्य अंगुलके असंख्यातवें भागमात्र अवगाहनावाली बहुपुत्रिका देवी होकर उत्पन्न हुई । उसके बाद यह बहुपुत्रिका देवी भाषापर्याप्ति मनःपर्याप्ति आदि पांच प्रकारकी पर्याप्तिसे पर्याप्त अवस्थाको प्राप्त कर उत्कृष्ट सात हाथकी अवगाहनावाली देवी होकर देवअवस्थामें विचरने लगी ।

हे गौतम ! बहुपुत्रिकादेवी इस प्रकार अपनी दिव्य देव ऋद्धि आदिसे यावत् समन्वित हुई है ।

हे भदन्त ! किस कारणसे इसका नाम बहुपुत्रिका हुआ ?

हे गौतम ! बहुपुत्रिकादेवी जब-जब देवराज इन्द्रके पास जाती है तब-तब वह बहुतसे लडके लडकियोंकी और बच्चे बच्चियोंकी विकुर्वणा करती है । विकुर्वणा करनेके बाद जहाँ देवताओंके राजा इन्द्र है वहाँ आती है, और देवताओंके राजा इन्द्रको अपनी दिव्य ऋद्धि, दिव्य देव ज्योति और दिव्य तेजको दिखलाती है । हे गौतम ! इसलिये यह बहुपुत्रिका देवी कहलाती है ॥ ५ ॥

उपपात सभानी अंदर देवशयनीय शय्यामा देवदूष्य वस्त्रोथी आच्छादित जघन्य अंगुलना असंख्यातमा भाग मात्र (अवगाहना) वाणी बहुपुत्रिका देवी यद्यने उत्पन्न यद्य त्पार पथी जन्मती वधने आ बहुपुत्रिका देवी भाषापर्याप्ति मनपर्याप्ति आदि पाच प्रकारानी पर्याप्तथी पर्याप्त अवस्थाने पासी उत्कृष्ट-सात हाथनी अवगाहनावाणी देवी यद्य देव अवस्थामा विचरवा लागी

हे गौतम ! बहुपुत्रिका देवी आ प्रकारे पोतानी दिव्य देव ऋद्धिथी समन्वित (परिपूष्य) यद्य छे.

हे भदन्त ! क्या कारणथी तेनु नाम बहुपुत्रिका पड्यु ?

हे गौतम ! बहुपुत्रिका देवी न्यारे न्यारे देवाना राजा इन्द्रनी पास न्य छे त्पारे त्पारे ते धरुा छोकंरा-छोकरी तथा गाणके अने गाणाओनी विकुर्वणा कर्या पथी न्य देवताओना राजा इन्द्र छे त्या आवे छे अने ते देवताओना राजा इन्द्रने पोतानी दिव्य ऋद्धि-दिव्य देवज्योति तथा दिव्य तेज देआडे छे. हे गौतम ! अंभारे ते बहुपुत्रिका देवी कडेवाय छे. (५).

मूलम्—बहुपुत्तियाए णं भंते ! देवीए केवइयं कालं ठिइं पणत्ता ? गोयमा ! चत्तारि पलिओत्रमाइं ठिइं पणत्ता । बहुपुत्तिया णं भंते ! देवी ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं ठिइक्खएणं भवक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता कहिं गच्छिहिइ ? कहिं उववज्जिहिइ ? गोयमा ! इहेव जंबूदीवे दीवे भारहे वासे विंज्जगिरिपायमूले विभेलसंनिवेसे माहणकुलंसि दारियत्ताए पच्चायाहिइ । तएणं तीसे दारियाए अम्मापियरो एक्कारसमे दिवसे वितिकंते जाव वारसेहिं दिवसेहिं वितिकंतेहिं अयमेयारूवं नामधिज्जं करेति, होउ णं अम्हं इमीसे दारियाए नामधिज्जं सोमा । तएणं सोमा उम्मुक्कवालभवां विणयपरिणयमेत्ता जोव्वणगमणुप्पत्ता रूवेण य जोव्वणेण य लायण्णे य उक्किट्ठा उक्किट्ठसरीरा जाव भविस्सइ । तएणं तं सोमं दारियं अम्मापियरो उम्मुक्कवालभावं विणयपरिणयमित्तं जोव्वणगमणुप्पत्तं पडिकूविणं सुक्कणं पडिरूवएणं नियगस्स भायणिज्जस्स रट्टुकूडयस्स भारियत्ताए दलइस्सइ । सा णं तस्स भारिया भविस्सइ इट्ठा कंता जाव भंडकरंडगसमाणा तेह्लकेला इव सुसंगोविआ चेलपेला (डा) इव सुसंपरिग्गहिया रणकरंडगओ विवसुसारक्खिया सुसंगोविया मा णं सीयं जाव मा णं विविहा रोगातंका फुसंतु ।

तए णं सा सोमा माहिणी रट्टुकूडेणं सद्धिं विउलाइं भोगभोगाइं भुंजमाणी संवच्छरे २ जुयलगं पयायमाणी सोलसेहिं संवच्छरेहिं वत्तीसं दारणरूवे पयाइ । तए णं सा सोमा

माहणी तेहिं बहूहिं दारगेहि य दारियाहि य कुमारएहि य
 कुमारियाहि य डिंभएहि य डिंभियाहि य अप्पेगइएहि उता-
 णसेज्जएहि य अप्पेगइएहि थणियाएहि य अप्पेगइएहि पीह-
 गपाएहिं अप्पेगइएहिं परंगणएहिं अप्पेगइएहिं परक्कममाणेहिं,
 अप्पेगइएहिं पक्खोलणएहिं अग्पेगइएहिं थणं मग्गमाणेहिं
 अप्पेगइएहिं खीरं मग्गमाणेहिं अप्पेगइएहिं खिल्लणयं मग्ग-
 माणेहिं अप्पेगइएहिं खज्जगं मग्गमाणेहिं अप्पेगइएहिं कूरं
 मग्गमाणेहिं पाणियं मग्गमाणेहिं हसमाणेहिं रूसमाणेहिं अक्कोस्स-
 माणेहिं अक्कुस्समाणेह हणमाणेहिं विप्पलायमाणेहिं अणुगम्ममा
 णेहिं रोवमाणेहिं कंदमाणेहिं विलवमाणेहिं कूवमाणेहिं उक्कूवमाणेहिं
 निद्धायमाणेहिं पलंबमाणेहिं दहमाणेहिं दंसमाणेहिं वममाणेहिं
 छेरमाणेहिं मुत्तमाणेहिं मुत्तपुरीसवमियसुलित्तोवलित्ता मइलवस-
 णपुच्चडा जाव असुइवीभच्छा परमदुग्गंधा नो संचाएइ रट्टुकूडेणं
 सद्धिं विउलाइं भोगभोगाइं भुंजमाणी विहरित्तए ॥ ६ ॥

छाया-बहुपुत्रिकाया भदन्त ! देव्याः कियन्तं कालं स्थितिः प्रज्ञप्ता ?
 गौतम ! चतुःपत्योपमा स्थितिः प्रज्ञप्ता । बहुपुत्रिका खलु भदन्त ! देवी
 तरमाद्देवलोकादायुःक्षयेण स्थितिक्षयेण भवक्षयेण अनन्तरं चयं न्युत्वा क
 गमिष्यति क उत्पत्स्यते ? गौतम ! अस्मिन्नेव जम्बूद्वीपे द्वीपे भारते वर्षे
 विन्ध्यगिरिपादमूले विभेलसन्निवेशे ब्राह्मणकुले दारिकातया प्रत्यायास्यति ।
 ततः खलु तस्या दारिकाया अम्बापितरौ एकादशे दिवसे व्यतिक्रान्ते यावद्
 द्वादशभिर्दिवसैर्व्यतिक्रान्तैरिदमेतद्रूपं नामधेयं कुरुतः, भवतु अस्माकमस्या दारि-
 काया नामधेयं सोमा । ततः खलु सोमा उन्मुक्तवालभावा विज्ञकपरिणतमात्रा
 यौवनमनुप्राप्ता रूपेण च यौवनेन च लावण्येन च उत्कृष्टा उत्कृष्टशरीरा यावद्
 भविष्यति । ततः खलु तां सोमां दारिकाम् अम्बापितरौ उन्मुक्तवालमात्रां

विज्ञकपरिणतमात्रां यौवनमनुप्राप्तां प्रतिक्रूजितेन शुल्केन प्रतिरूपेण निजकाय भागिनेयाय राष्ट्रकूटकाय भार्यातया दारयति । सा खलु तस्य भार्या भविष्यति इष्टा कान्ता यावद् भाण्डकरण्डकसमाना तैलकेला इव सुनंगोपिता चेलपेटा इव सुसंपरिगृहीता रत्नकरण्डक इव सुसंरक्षिता सुसंगोपिता मा खलु शीतं यावद् मा विविधाः रोगातङ्काः स्पृशन्तु । ततः खलु सा सोमा ब्राह्मणी राष्ट्रकूटेन सार्द्धं विपुलान् भोगभोगान् भुञ्जाना संवत्सरे युगलं प्रजनयन्ती षोडशभिः संवत्सरैः द्वात्रिंशद् दारकरूपाणि प्रजनयति । ततः खलु सा सोमा ब्राह्मणी तैर्वहुभिर्दार्कैश्च दारिकाभिश्च कुमारैश्च कुमारिकाभिश्च डिम्भैश्च डिम्भिकाभिश्च अप्येककैः उत्तानशयकैश्च, अप्येककैः रतनितैश्च अप्येककैः स्पृहकपादैः, अप्येककैः पराङ्गणकैः, अप्येककैः पराक्रममाणैः, अप्येककैः, प्रखलनकैः, अप्येककैः स्तनं मृग्यमाणैः, अप्येककैः, क्षीरं मृग्यमाणैः, अप्येककैः, खेलनक मृग्यमाणैः, अप्येककैः स्वाद्यकं मृग्यमाणैः, अप्येककैः कूरं (भक्तं) मृग्यमाणैः, पानीयं मृग्यमाणैः, हसद्भिः, रुष्यद्भिः, आक्रोशद्भिः, आक्रुश्यद्भिः, धद्भिः, हन्यमानैः, विप्रलपद्भिः, अनुगम्यमानैः, रुदद्भिः, क्रन्दद्भिः, विलपद्भिः, कूजद्भिः, उत्कूजद्भिः, निर्धावद्भिः, प्रलम्बमानैः, दहद्भिः, दगद्भिः, वमद्भिः, छेरद्भिः, मूत्रयद्भिः, मूत्रपुरीषवान्तमुलिप्तोपलिप्ता मलिनवमनपुच्छा यावद् अशुचिवीभक्ता परमदुर्गन्धा नो शक्नोति राष्ट्रकूटेन सार्द्धं विपुलान् भोगभोगान् भुञ्जाना विहर्तुम् ॥ ६ ॥

टीका—‘बहुपुत्रियाणं’ इत्यादि—हे भदन्त ! बहुपुत्रिकाया देव्याः कियन्तं कालं स्थितिः प्रज्ञप्ता ? हे गौतम ! चतुःपत्योपमा स्थितिः प्रज्ञप्ता । हे भदन्त ! बहुपुत्रिका देवी तस्माद् देवलोकाद् आयुःक्षयेण=आयुर्दलिक-निर्जरणेन देवलोकवासोचितावधिव्यतिगमेन स्थितिक्षयेण=आयुःकर्षणः

‘बहुपुत्रियाणं’ इत्यादि—

हे भदन्त ! बहुपुत्रिकादेवीकी स्थिति कितने कालकी है ?
हे गौतम ! बहुपुत्रिकादेवीकी स्थिति चार पत्योपमकी है !
हे भदन्त ! वह बहुपुत्रिकादेवी आयुक्षय भवक्षय और स्थिति-

‘बहुपुत्रियाणं’ इत्यादि.

हे भदन्त ! बहुपुत्रिका देवीनी स्थिति कितने कालकी है ?

हे गौतम ! बहुपुत्रिका देवीनी स्थिति चार पत्योपम है

हे भदन्त ! ते बहुपुत्रिका देवी आयुक्षय, भवक्षय तथा स्थितिक्षय पछी देवलोकाभासी व्यतीने क्या जशे ? क्या जन्म लेशे ?

स्थितिनिर्जरणेन भवक्षयेण=देवभवकारणभूतकर्मणां गत्यादीनां निर्जरणेन क= कुत्र उत्पत्स्यते ?=जनिष्यते ? गौतम ! अस्मिन्नेव जम्बूद्वीपे=तन्नामके द्वीपे= मध्यजम्बूद्वीपे भारते=तन्नामके वर्षे विन्ध्यगिरिपादमूले=विन्ध्याचलाधस्तले विभेलसंनिवेशे=विभेलनामकग्रामविशेषे ब्राह्मणकुले=ब्राह्मणवंशे दारिकातया= पुत्रीत्वेन प्रजनिष्यते=समुत्पत्स्यते । ततः=जननानन्तरं खलु तस्या दारिकाया अम्बापितरौ=मातापितरौ एकादशे दिवसे=दिने व्यतिक्रान्ते=व्यतीते यावत् द्वादशभिर्दिवसैः इदमेतद्रूपं=वक्ष्यमाणलक्षणं नामधेयं कुरुतः, अस्माकमस्याः दारिकायाः=पुत्र्याः 'सोमा' इति नामधेयं=नाम भवतु । ततः=तदनन्तरम् खलु=निश्चयेन सोमा उन्मुक्तबालभावा=व्यतीतबाल्यावस्था, विज्ञकपरिणतमात्रा= विषयसुखाभिज्ञा यौवनम्=युवतिदशाम् अनुप्राप्ता=अनु=बाल्यात् पश्चात् प्राप्ता, रूपेण=आकृत्या, च=पुनः, यौवनेन=तारुण्येन, च=पुनः लावण्येन=मुक्ताफल- गतच्छायातरलतासदृशशरीरावयवान्तःप्रविष्टचाकचिक्येन, उक्त च—

“ मुक्ताफलेषुच्छायायास्तरलत्वमिवान्तरे ।

प्रतिभाति यदङ्गेषु तल्लावण्यमिहोच्यते ॥ १ ॥

क्षयके बाद देवलोकसे च्यवकर कहाँ जायगी ? कहाँ उत्पन्न होगी ?

हे गौतम ! यह बहुपुत्रिकादेवी जम्बूद्वीप नामक द्वीपके अन्दर भरत क्षेत्रमें विन्ध्यपर्वतके समीप विभेल संनिवेश (गाम) में ब्राह्मणकी कन्या होकर जन्म लेगी । उसके बाद उसके माता पिता ग्यारह दिन बीतनेपर बारहवे दिन अपनी लडकीका नाम सोमा रखेंगे । वह सोमा बालभाव छोडती हुई विषय सुखके परिज्ञानके साथ यौवनावस्थामें प्रवेशकर रूप-यौवन-लावण्यसे उत्कृष्ट और उत्कृष्ट शरीरवाली होगी ।

गौर आदि सुन्दर वर्णवाले आकारको 'रूप' कहते हैं ।

हे गौतम ! आ बहुपुत्रिका देवी जम्बूद्वीपनी अंदर भरत क्षेत्रमा विन्ध्य पर्वतनी पास विभेल (संनिवेश) गाममा ब्रह्मणुनी कन्या थडने जन्म लेशे त्पार पछी तना मातापिता अगीयार दिवस वीती गया पछी पारमे दिवसे पोतानी छोडरीनु नाम सोमा रापशे ते सोमा बालभाव छोडी विषय सुखना परिज्ञानवाणी यौवन अवस्थां प्रवेश करशे त्तारे उपयौवन-लावण्यथी उत्कृष्ट अने उत्कृष्ट शरीरवाणी थसे.

गौर आदि सुंदरवर्णवाणा आकारने 'रूप' अहे छे मोतीनी अंदरनी अमकना

उत्कृष्टा=उत्कृष्टशरीरा=मनोहरकाया यावद् भविष्यति, ततः=परिणययोग्यता-
 प्राप्त्यनन्तरं खलु तां सोमां दारिकाम् अम्बापितरौ=उन्मुक्तवाल्मवां विव्र-
 कपरिणतमात्रां यौवनमनुप्राप्तम् एतेषां व्याख्याऽत्रैव सूत्रे प्रागुपपादिता, प्रति-
 कृतितेन=स्वीकृतितया प्रतिभापितेन शुल्केन देयद्रव्येण प्रचुराभरणादिना
 विभूषितां कृत्वेति शेषः, प्रतिरूपेण=अनुकूलेन प्रियवचनेन ' भवद्योग्येय '
 मितिप्रभृतिना वचसा, निजकाय = स्वकीयाय भागिनेयाय = भगिनीपुत्राय
 राष्ट्रकूटाय भार्यातया=स्त्रीत्वेन दास्यति । सा=सोमा खलु तस्य=राष्ट्रकूटस्य
 भार्या भविष्यति, इष्टा=वल्लभा कान्ता कमनीयत्वात्, यावच्छब्देन, प्रिया
 सदाप्रेमविषयत्वात्, मनोज्ञा सुन्दरत्वात् एवं ' मणामा संमया अणुमया '
 इत्यादि दृश्यम् । एतद्व्याख्या पूर्वं प्रतिपादिता । भाण्डकरण्डकसमाना=भूषणा-
 दिकरण्डकवत्, तैलकेला=तैलधानी सौराष्ट्रदेशप्रसिद्धो मृन्मयतैलपात्रविशेषः
 तद्वत् सुसंरक्षिता=अनितरां परिपालिता, सुसंगोपिता=यत्नेन रक्षिता चेलपेटा
 इव=वस्त्रमञ्जूपावत् सुसंपरिगृहीता=मुष्टु परिग्रहत्वेन संरक्षिता । रत्नकरण्डकवत्=
 इन्द्रनीलादिरत्नमञ्जूपावत् सुसंगोपिता च, शीतं=शीतवाधाः यावत् विविधाः=

मोतीके अन्दरकी चमकके समान जो शरीरकी चमक हो उसे
 ' लावण्य ' कहते हैं ।

उसके बाद माता पिता, बाल्यावस्था पारकर यौवनावस्थामें
 प्रविष्ट उस सोमा बालिकाको विषय सुखसे अभिज्ञ जानकर निश्चित
 देने योग्य द्रव्य और प्रियवचनके साथ अपने भानजे राष्ट्रकूटके
 साथ उसका विवाह कर देंगे । वह सोमा उसकी इष्टा कान्ता और
 वल्लभा होगी, और वह उस सोमाकी आभूषणके करण्डकके समान,
 तैलके सुन्दर वर्तनके समान यत्नपूर्वक रक्षा करेगा, दल्लोंकी पेटी
 के समान उसको अच्छी तरह रखेगा और इन्द्रनील आदि रत्न-

वेषी शरीरना चमक साथ तेने लावण्य कडे छे.

त्यार पछी मातापिता, बाल्यावस्था वीती गया पछी यौवन अवस्था मां आवेली
 ते सोमा बालिकाने विषय सुखशी अभिज्ञ (जान्तीती) थयेली ज्ञानी निश्चित देवायोग्य
 द्रव्य तथा प्रिय वचन साथै पोताना बाण्डक राष्ट्रकूटनी साथे तेना विवाह करशे ते
 सोमा तेनी इष्टा कान्ता अने वल्लभा थशे अने ते, सोमानी आभूषणना करण्डकनी
 पेटे, तैलना सुदृग् वासणुनी पेटे यत्नपूर्वक रक्षा करशे. दल्लोनी पेटनी पेटे तेने सारी
 रीते राखशे अने इन्द्रनील आदि रत्नकरण्डकनी पेटे प्राण्थी चक्षु वधरि मडल

नाना प्रकाराः रोगातङ्काः=रोगाः=चिरघातिनः, ज्वरादयः आतङ्काः सद्योघातिनः, मस्तक शूलादय ! इमां मा खलु=नैव स्पृशन्तु=आश्रयन्तु । ततः खलु सा सोमा ब्राह्मणी राष्ट्रकूटेन सार्द्धं विपुलान् बहून् भोगभोगान्=विषयभोगान् भुञ्जाना संवत्सरे संवत्सरे=प्रतिवर्षं युगलं=सन्तानयुग्मं प्रजनयन्ती=प्रसूयमाना षोडशभिः संवत्सरैः वर्षैः द्वात्रिंशद्=द्वयधिकत्रिंशद् दारकरूपान्=वालकलक्षणान् अत्र दारिकाश्च दारिकाश्चेत्यर्थे एकशेषेण दारिका शब्दस्य लोपे रूपशब्देन समासे पुत्रीपुत्ररूपान् इति तदर्थः, प्रजनयति=उत्पादयति । ततः खलु सा सोमा ब्राह्मणी तैः बहुभिः=अनेकैः दारकैः=पुत्रैः दारकाभिः=पुत्रीभिः बहुकालिकीभिः, कुमारैः=बहुतरकालिकैः, पुत्रैः, कुमारिकाभिः=बहुतरकालिकीभिः पुत्रीभिश्च, अप्येकैः उत्तानशयकैः=ऊर्ध्वमुखशयनशीलैः, अप्येकैः स्तनितैः=चीत्कारशब्दितैः, अप्येकैः स्पृहकपादैः=स्पृहन्ति= गमनं वाञ्छन्ति, इति स्पृहकाः पादाः=चरणा येषामिति ते तथा गमनेच्छुचरणाः, गमनोत्सुकपादा इत्यथः अत्र गमनेच्छायाश्चेतनवृत्तित्वेऽपि पादेष्वारोपात् 'स्थाली पचति' स्थाल्या पच्यते, इत्यादिवत् साधुता बोध्या । उक्तञ्च—

करण्डकके समान प्राणोंसे अधिक महत्व देकर रक्षा करेगा, और उसको वात पित्त आदि रोग और आतङ्क न स्पर्श कर सकें इस प्रकार सवदा रक्षाकी चेष्टा करता रहेगा । उसके बाद वह सोमा दारिका राष्ट्रकूटके साथ विपुल भोगोंको भोगती हुई प्रत्येक वर्षमें एक २ सन्तान-युगलको जन्म देगी । और वह सोलह वर्षमें बत्तीस बच्चोंकी माँ होजायगी बाद उसके वह सामा ब्राह्मणी अपने उन छोटे बड़े बच्चे बच्चयोंसे तंग आजायगी । उसके उन बच्चोंमें कोई अल्पकालका जन्मा हुआ बच्चा उत्तान होकर सोता रहेगा, कोई चीत्कार मार कर रोना रहेगा, कोई चलनेकी इच्छा करेगा, कोई

दृष्टने तेनी रक्षा करेशे. तथा तेने वात पित्त आदि रोग तथा आतङ्क पशु स्पर्श न करी शके ओवी रीते दुभेशां रक्षा करवानी व्यवस्था करतो रहेशे त्यार पछी ते सोमा दारिका राष्ट्रकूटनी साथे विपुल लोगोने लोगवती हर वरसे ओक ओक संतानना जेडलाने जन्म देशे अने ते सोण वर्षमा अत्रीस भाण्डक भाण्डकीओनी मा थर्ष जशे. पछी नाना भेटा भाण्डेथी ते सोमा ब्राह्मणी तंग थर्ष जशे तेना ओ अर्याओमां डेअ थोडाअ भाण्डां जन्मेला अर्या उत्तान थर्षने सुध रहेशे, डेअ राडे पाडीने देवा लागशे, डेअ बालवानी धर्या करेशे, डेअ भीन्तना क्षणीयामां जतुं रहेशे, अथवा



द्भिः=चीत्कुर्वद्भिः, विलपद्भिः=आर्तस्वरं कुर्वाणैः, कूजद्भिः=स्फुटदधरपूर्वक-
मप्रकटशब्दं कुर्वद्भिः, उत्कूजद्भिः=उच्चैः शब्दं कुर्वाणैः पूत्कुर्वद्भिः, निद्राद्भिः=
निद्रां सेवमानैः, (स्वपद्भिः) प्रलम्बमानैः=वस्त्राञ्चलं समालम्बमानैः दहद्भिः=
ज्वलद्भिः, दशद्भिः=दन्तैः कृन्तद्भिः वमद्भिः=उद्विलद्भिः (प्रच्छर्दयद्भिः)
छेरद्भिः=वारंवारं हृदमानैः, मूत्रयद्भिः=मूत्रं कुर्वद्भिः मूत्रपुरीषवान्तसुलि-
प्तोपलिप्ता प्रस्त्रावविष्टोद्गीर्णौतप्रोता, मलिनवसनपुच्छडा=मलयुक्तवस्त्रैः पुच्छडा=
निश्शोभा कान्तिहीनेत्यर्थः, यावद् अशुचिवीभत्सा=अशुचित्वेन नितरां दुर्नि-
रीक्षणीया (घृणिता) परमदुर्गन्धा=अतिदुर्गन्धयुक्ता, राष्ट्रकूटेन स्वपतिना
सार्द्धं विपुलान्=बहून् भोगभोगान् भुज्यन्ते=भोगविषयीक्रियन्त इति भोगाः
शब्दादयो विषयास्तेषां भोगाः=सेवनानि तान् तथा भुञ्जाना=सेवमाना
विहर्तुम्=अवस्थातुं नो शक्नोति=न भवति ॥ ६ ॥

मूलम्—त्तएणं तीसे सोमाए माहणीए अण्णया कयाइं
पुवरत्तावरत्तकालसमयंसि कुडुंबजागरियं जागरमाणीए अयमेया-
रूवे जाव समुपज्जित्था—एवं खलु अहं इमेहिं बहूहिं दारगेहिं
य जाव डिंभियाहि य अप्पेगइएहि उत्ताणसेज्जएहि य जाव

र्तस्वरसे रोयेगा, कोइ बच्चा कूजता-अव्यक्त शब्द करता रहेगा,
कोइ जोरसे अव्यक्त शब्द करता रहेगा, कोइ सोता रहेगा, कोइ
कपडेका अंचल पकडकर लटकता रहेगा, कोई आगसे जल जायगा,
कोई दांतसे काटता रहेगा, कोई वमन करता रहेगा, कोई पाखाना
करता रहेगा, कोई मूत्र करता रहेगा। इसलिये उन बच्चोंका पेशाव
पाखाना वमनसे भरी हुई तथा मैले कपडोंसे कान्तिहीन, यावत्
अशुचि, विभत्स, अत्यन्त दुर्गन्धित हो राष्ट्रकूटके साथ अपने विपुल
भोगोंको भोगनेमें समर्थ न हो सकेगी ॥ ६ ॥

कूजता (टीका करता) अव्यक्त न समझय तेवा शब्द जेव्या करशे डोअं जेरथी
अव्यक्त शब्द कर्या करशे, डोअं सुता रडेथे, डोअं कपडाना छेडा पकडीने लटक्या करशे
डोअं अग्निमा जणी जशे, डोअं दात वडे करडवा लागथे, डोअं उलटी करशे, डोअं
अडे इरता रडेथे, डोअं भूतर्या करशे आ. माटे ते जन्थाना पेशाव-पायपान-उलटीथी
लदेथी मेला कपडथी कान्तिहीन जेटवे अशुचि, पीलत्स अत्यन्त दुर्गन्धित थकने
राष्ट्रकूटनी साथे पोताना विपुल भोग भोगववा समर्थ नडि थथ शकथे (६)

अप्येगइहिं मुत्तमाणेहिं दुज्जाएहिं दुज्जम्मएहिं हयविप्पहयभग्गेहिं
एगप्पहारपडिएहिं जाणं मुत्तपुरीसवमियमुलित्तोवलित्ता जाव
परसदुद्धिभगंधा नो संचाएमि रट्टुकूडेण सद्धिं जाव भुंजमाणी
विहरित्तए । तं थन्नाओ णं ताओ अम्मयाओ जाव जीविय-
फले जाओणं वंझाओ अविद्याउरीओ जाणुकोप्परमायाओ
सुग्गिसुग्गंधगंधियाओ विउलाइं माणुस्सगाइं भोगभोगाइं भुंज-
माणीओ विहरंति, अहं णं अधन्ना अपुण्णा अकयपुण्णा नो
संचाएमि रट्टुकूडेणं सद्धिं विउलाइं जाव विहरित्तए ।

तेणं कालेणं २ सुव्रयाओ नाम अज्जाओ इरियासमियाओ
जाव बहुपरिवाराओ पुत्राणुपुत्रिं जेणंविभेले संनिवेसे तेणेव
उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अहापडिरुवं ओग्गहं जाव विहरंति ।
तएणं तासिं सुव्रयाणं अज्जाणं एगे संवाडए विभेले सन्नि-
वेसे उच्चनीय जाव अडमाणे रट्टुकडस्स गिहं अणुपविट्ठे ।
तएणं सा सोमा माहणी ताओ अज्जाओ एज्जमाणीओ पासइ,
पासित्ता हट्टुत्तुट्ठा० खिप्पामेव आसणाओ अव्वमुट्ठेइ, अव्वमुट्ठित्ता
सत्तट्टुपयाइं अणुगच्छइ, अणुगच्छित्ता वंदइ नमंसइ, विउलेणं
असण ४ पडिलाभेइ, पडिलमित्ता एवं वयासी-एवं खलु अहं
अज्जाओ रट्टुकूडेणं सद्धिं विउलाइं जाव संवच्छरे २ जुगलं
पयामि, सोलसहिं संवच्छरेहिं वत्तीसं दारगरुवे पयाया ।
तएणं अहं तेहिं वहूहिं दारएहि य जाव डिंभियाहिय अप्येगइ-
एहिं उत्ताणसिज्जएहिं जाव मुत्तमाणेहिं दुज्जाएहिं जाव नो
संचाएमि रट्टुकूडेणं सद्धिं विउलाइं भोगभोगाइं भुजमाणी
विहरित्तए, तं इच्छामि णं अज्जाओ ! तुम्हं अंतिए धम्मं
निसामित्तए । तएणं ताओ अज्जाओ सोमाए माहणीए

विचित्तं जाव केवल्लिपणत्तं धम्मं परिकहेइ । तएणं सा सोमा
माहणी तासिं अज्जाणं अंतिए धम्मं सोच्चा निसम्म हट्टुट्टा
जाव हियया ताओ अज्जाओ वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता
एवं वयासी सहहामि णं अज्जाओ ! निग्गथं पावयणं जाव
अब्भुट्टेमि णं अज्जाओ जाव से जहेयं तुब्भे वयह, जं नवरं
अज्जाओ ! स्टूकडं आपुच्छामि । तएणं अहं देवाणुप्पियाणं
अंतिए मुंडा जाव पव्वयामि । अहासुहं देवाणुत्पिए ! मा पडि-
बंधं । तएणं सा सोमा माहणी ताओ अज्जाओ वंदइ नमंसइ,
वंदित्ता नमंसित्ता पडिविसज्जेइ ॥ ७ ॥

छाया—ततः खलु तस्याः सोमाया ब्राह्मण्या अन्यदा कदाचित्
पूर्वरात्रापररात्रकालसमये कुटुम्बजागरिकां जाग्रत्या अयमेतद्रूपो यावत् समुद-
पद्यत—एवं खलु अहमेभिर्वहुभिर्दारिकैश्च यावद् डिम्भिकाभिश्च अप्येककै उत्तान-
शयकैश्च यावद् अप्येककैर्मूत्रयद्भिः दुर्जातैः दुर्जन्मभिः हतत्रिप्रहतभाग्यैश्च
एकप्रहारपतितैः या खलु मूत्रपुरीषवमितसुलिप्तोपलिप्ता यावत् परमदुरभिगन्धा
नो शक्नोमि राष्ट्रकूटेन सार्द्धं यावद् भुञ्जाना विहर्तुम् । तद् धन्याः खलु

‘तएणं तीसे’ इत्यादि—

उसके बाद एक समय पिछली रातमें कुटुम्बजागरणा करती
हुई उस सोमा ब्राह्मणीके आत्मामें इस प्रकारका विचार उत्पन्न
होगा—किं अहो ! मैं मलमूत्र करनेवाले इन बहुतसे अभागो दुःख-
दायी थोड़े २ दिनोमें उत्पन्न होनेवाले, दुर्जन्मा छोटे बड़े और नव-
जात शिशुओंके द्वारा मलमूत्र और वमनसे लिपी-पुती अत्यन्त
दुर्गन्धमयी होकर राष्ट्रकूटके साथ सुखका अनुभव नहीं कर पाती हूँ ।

‘तएणं तीसे’ इत्यादि

त्यार पछी ओक समय पाछली राते कुटुम्ब जागरणु करता ते सोमा ब्राह्मणीना
मनमां ओवो विचार उत्पन्न थसे केः—अहो ! हु मणमूत्र करवावाणां घण्टा कमनशील
हु अदायी थोडा दिवसोमा जन्म लेवावाणा दुर्जन्मा नाना मोटा अने नवा जन्मेला
माणकेना मणमूत्र तथा वमनथी लीपांथेल, भरडांथेल अत्यंत दुर्गन्धमयी णनी होवाथी
राष्ट्रकूटनी साथे सुणनेना अनुभव लक्ष शकती नथी

ता अम्बिका यावद् जीवितफलं याः खलु वन्ध्या अविजननशीला जानुकूर्पर-
मातरः सुरभिमुगन्धगन्धिका विपुलान् मानुष्यकान् भोगभोगान् भुञ्जाना विहरन्ति,
अहं खलु अधन्या अपुण्या नो शक्नोमि राष्ट्रकूटेन सार्द्धं विपुलान् यावद् विवर्तुम् ।

तस्मिन् काले तस्मिन् समये सुव्रता नाम आर्या इर्यासमिता यावद्
वहुपरिवाराः पूर्वांशुपूर्वा यत्रैव वेभेलः सन्निवेशस्तत्रैवोपागच्छन्ति, उपागत्य
यथाप्रतिरूपमम् अवग्रहं यावद् विहरन्ति । ततः खलु तासां सुव्रतानामार्या-
णाम् एकः संघाटको वेभेले सन्निवेशे उच्चनीच० यावत् अटन् राष्ट्रकूटस्य
गृहमनुप्रविष्टः । ततः खलु सा सोमा ब्राह्मणी ता आर्या एजमानाः पश्यति
दृष्ट्वा हृष्टतुष्टा० क्षिप्रमेव० आसनादभ्युत्तिष्ठति अभ्युत्थाय सप्ताष्टपदानि अनु-

वे माताएँ धन्य हैं और उनका जीवन सफल है, जो वन्ध्या
हैं, जिन्हें, जिन्हें वच्चा नहीं होता, जो जानुकूर्परमाता हैं जो सुगन्ध
द्रव्योंसे सुवासित हो मनुष्य सम्बन्धी भोगोंको भोगती हुई विचर
रही हैं, मैं अधन्य हूँ, अपुण्य हूँ, जो कि मैं राष्ट्रकूटके साथ विपुल
भोगोंको नहीं भोग सकती हूँ ।

उस काल उस समयमें सुव्रता नामकी आर्याएँ इर्यासमिति
आदिसे युक्त बहुत सी साध्वियोंके साथ तीर्थंकर परम्परासे विच-
रती हुई वेभेल सन्निवेशमें आवेंगी और यथोचित अवग्रह लेकर
वहाँ रहने लगेगी । बाद उसके एक दिन उन सुव्रता आर्याओंका
एक संघाटक वेभेल सन्निवेशके उच्च नीच मध्यम कुलमें फिरता
हुआ राष्ट्रकूटके घरमें आयेगा । उसके बाद वह सोमा ब्राह्मणी
आती हुई उन आर्याओंको देखेगी देखकर हृष्ट तुष्ट हृदय हो

ते माताओंने धन्य छे अने तेभना एवन सङ्ग छे के ने वाञ्छणी छे-नेने
छेअङ्ग थतु नथी, ने नतुङ्कर्परमाता छे, ने सुगन्धी द्रव्योथी सुवासित थर्धने मनुष्य
गन्धी लोगो लोगवती विचरे छे हु अधन्य छुं, अपुण्या छु नेथी हु राष्ट्रकूटनी
साथे विपुल ले गोने लोगवी शक्ती नथी

ते काले ते समये सुव्रता नामनी आर्याओं इर्यासमिति आदि युक्त धर्णी
साध्वीओंनी साथे तीर्थंकर परपराथी विचरती गिलेस सन्निवेशमा आवशे अने यथोचित
अवग्रह लर्धने त्यां रडेवा लागशे पछी अेक दिवस ते सुव्रता आर्याओंतु अेक सघाटुं
गिलेस सन्निवेशना गिया नीया अने मध्यम कुलमां इरतां इरता राष्ट्रकूटना घरमां
आवशे त्पार पछी ते सोमा ब्राह्मणी ते आर्याओंने आवती जेशे अने तेभने जेधने

गच्छति, अनुगत्य वन्दते नमस्यति विपुलेन अशन० ४ प्रतिलम्भयति, प्रतिलम्भय एवमगदीत्—एवं खलु अहमार्याः ? राष्ट्रकूटेन सार्द्धं विपुलान् यावत् संवत्सरैः द्वात्रिंशद् दारकरूपान् प्रजाता । ततः खलु अहं तैर्वहुमिदारकैश्च यावद् डिम्भिकाभिश्च अप्येकैः उत्तानशयकैः यावत् सूत्रयद्भिः दुर्जातै यावद् नो शक्नोमि राष्ट्रकूटेन सार्द्धं विपुलान् भोगभोगान् भुञ्जाना विहर्तुम्, तदिच्छामि खलु आर्याः ! युष्माकमन्तिके धर्मं निशामयितुम् । ततः खलु ता आर्याः सोमायै ब्राह्मण्यै विचित्रं यावत् केवलिप्रज्ञप्तं धर्मं परिकथयन्ति । ततः खलु सा सोमा ब्राह्मणी तासामार्याणामन्तिके धर्मं श्रुत्वा निगम्य हृष्टतुष्टा० यावद् हृदया ता आर्या वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमंस्यित्वा

शीघ्रातिशीघ्र अपने आसनसे उठ कर खड़ी होगी । और उन आर्याओंका आदर सत्कार करनेके लिए सात आठ पग आगे जायेगी । अनन्तर वन्दन नमस्कार कर विपुल अशन पान आदिसे प्रतिलाभित करेगी । और उनसे इस प्रकार कहेगी—हे देवानुप्रिये । राष्ट्रकूटके साथ विपुल भोगोंको भोगती हुई हमने प्रत्येक वर्षमें युगल बच्चोंको जन्म देकर सोलह वर्षोंमें बत्तीस बच्चोंको जन्म दिया है । मैं दुर्जन्मा उन बच्चोंका मल-सूत्र और वमन आदिसे सनी-पुती दुर्गन्धित शरीर हो अपने पतिके साथ कुछ भी आनन्द भोग नहीं कर पाती । हे आर्याएँ ! मैं आप लोगोंके समीप धर्म सुनना चाहती हूँ । उसके बाद वे साध्वियों सोमा ब्राह्मणीको विचित्र यावत् केवली प्ररूपित धर्मका उपदेश देंगी ।

हुष्टतुष्ट अतःऋषिणी नलनी नलही पोताने आसनेथी उठीने उली थशे अने ते आर्याओंनो आदर सत्कार करवा भाटे सात आठ पगला सामे नशे त्यार पछी वन्दन अने नमस्कार करीने मारी रीते अशनपान आदिथी प्रतिलाभित करशे (वडोरावशे) अने तेमने आ प्रकारे कडेशे—

हे देवानुप्रिये । राष्ट्रकूटनी साथे विपुल लोगोने लोगवती मे प्रत्येक वर्षे अेक न्नेडका जन्मकने जन्म आपता सोण वर्षमां जत्रीस जन्माने जन्म आप्ये छे हुं दुर्जन्मा ते जन्माना भगभूत्र अने उत्रटी आदिथी वीपायेवी दुर्गन्धवाणा शरीरे मान् पतिनी साथे केछे नतने आनद लोग करी शकती नथी हे आर्याओं ! हुं आप वीडोनी पासे धर्म सालणवा भागुं छुं त्यार पछी ते साध्वीओ सोमा ब्राह्मणीने विचित्र अेदसे केवली प्ररूपित धर्मनो उपदेश आपशे

एवमवादीत्—श्रद्धधामि खलु आर्याः ! निर्गन्थं प्रवचनम्, इदमेतद् आर्याः ! यावत् यद् यथेदं यूयं वदथ, यद् नवरमार्याः ! राष्ट्रकूटमापृच्छामि । ततः खलु अहं देवानुप्रियाणामन्तिके मुण्डा यावत् प्रव्रजामि । यथामुखं देवानुप्रिये ! मा प्रतिबन्धम् । ततः खलु सा सोमा ब्राह्मणी ता आर्यां वन्दते नमस्यति, वन्दिता नमस्यित्वा प्रतिविसर्जयति ॥ ७ ॥

टीका—‘तएणं तीसे’ इत्यादि—दुर्जातैः—दृष्टं जातं=प्रादुर्भावो येषां ते तथा तैः, अत एव—दुर्जन्मभिः=दुष्टं=कुत्सितं येषां मम दुःखदायित्वात् ते तथा तैः, हतविप्रहतभाग्यैः=सर्वथा भाग्यहीनैः । एकप्रहारपतितैः=अल्पकाले-नैव मम कुक्ष्यवर्तीणैः । शेषं सुगमम् ॥ ७ ॥

उसके बाद वह सोमा ब्राह्मणी उन आर्याओंसे धर्म सुनकर उसे हृदयमें अवधारित कर हृष्ट तुष्ट हो अत्यन्त हर्षयुक्त हृदयसे उन आर्याओंका वन्दन और नमस्कार करके इस प्रकार कहेगी—
हे आर्याओ ! मैं निर्गन्थ प्रवचनपर श्रद्धा रखती हूँ, और निर्गन्थ प्रवचन का सम्मानित करती हूँ ।

हे देवानुप्रिये ! जो आप कहती हैं वही सत्य है । मैं राष्ट्रकूटको पूछती हूँ, बादमें आपके पास मुण्डित होकर प्रव्रजित होऊँगी ।
उसके बाद आर्याने कहा—जिस प्रकार तुम्हें सुख हो वैसा करो । शुभ काममें प्रमाद मत करो । उसके बाद वह सोमा ब्राह्मणी उन आर्याओंको वन्दन और नमस्कार कर विसर्जन करेगी ॥ ७ ॥

त्यार पछी ते सोमा ब्राह्मणी ते आर्याओ पासेथी धर्म साभणीने ते हृदयमा धारणु करीने हृष्ट तुष्ट थधने अत्यत हर्षयुक्त हृदयथी ते आर्याओने वदन अने नमस्कार करीने आ प्रकारे कडेशेः—

हे आर्याओ ! हुं निर्गन्थ प्रवचन उपर श्रद्धा राखु छुं अने निर्गन्थ प्रवचनने सम्मानित करु छुं

हे देवानुप्रिये ! ने आप कडे छे तेज सत्य छे हुं राष्ट्रकूटने पूछु छु, पछी आपनी पासे मुडित थधने प्रव्रजित थधथ

त्यार पछी आर्याओ कडे छे—नेवी रीते तने सुथ थाय तेम कर शुभ काममा प्रमाद न कर. त्यार पछी ते सोमा ब्राह्मणी ते आर्याओने वदन अने नमस्कार करी विसर्जन करथे (७)

मूलम्—तएणं सा सोमा माहणी जेणेव रट्टकडे तेणेव उवागया करतल० एवं वयासी—एवं खलु मए देवाणुप्पिया ! अज्जाणं अंतिए धम्मे निसंते, से वि य णं धम्मे इच्छिए जाव अभिरुचिए, तएणं अहं देवाणुप्पिया ! तुव्भेहिं अब्भणुन्नाया सुव्वयाणं अज्जाणं जाव पव्वइत्तए । तए णं से रट्टकडे सोमं माहणिं एवं वयासीं—मा णं तुमं देवाणुप्पिए ! इदाणिं मुंडा भवित्ता जाव पव्वयाहि । भुंजाहि ताव देवाणुप्पिए ! मए सद्धिं विउलाइं भोगभोगाइं, ततो पच्छा भुत्तभोई सुव्वयाणं अज्जाणं अंतिए मुंडा जाव पव्वयाहि । तएणं सा सोमा माहणी ण्हाया जाव सरीरा चेडियाचक्कवालपरिकिण्णा साओ गिहाओ पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता विभेलं संनिवेसं मज्झंमज्झेणं जेणेव सुव्वयाणं अज्जाणं उवस्सए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सुव्वयाओ अज्जाओ वंदइ नमंसइ, पज्जुवासइ । तएणं ताओ सुव्वयाओ अज्जाओ सोमाए माहणीए विचित्तं केवलपण्णत्तं धम्मं करिकहेइ, जहा जीवा वज्झंति । तएणं सा सोमा माहणी सुव्वयाणं अज्जाणं अंतिए जाव दुवालसविहं सावगधम्मं पडिवज्जइ, पडिवज्जित्ता सुव्वयाओ अज्जाओ वंदइ नमंसइ, थंदित्ता नमंसित्ता जासेव दिस्सिं पाउब्भूया तामेव दिसं पडिगया । तएणं सा सोमा माहणी समणोवासिया जाया अभिगत० जाव अप्पाणं भावे माणी विहरइ ।

तएणं ताओ सुव्वयाओ अज्जाओ अण्णया कयाइं विभेलाओ संनिवेसाओ पडिनिक्खमंति, पडिनिक्खमित्ता, वहिया जणवयविहारं विहरंति ॥ ८ ॥

छाया—ततः खलु सा सोमा ब्राह्मणी यत्रैव राष्ट्रकूटस्तत्रैव उपागता
 करतल० एवमवादीत—एवं खलु मया देवानुप्रियाः ! आर्याणामन्तिके धर्मो
 निगन्तः (श्रुतः) सोऽपि च खलु धर्म इष्टो यावद् अभिरुचितः, ततः खलु
 अहं देवानुप्रियाः ! युष्माभिरभ्यनुज्ञाता सुव्रतानामार्याणां यावत् प्रव्रजितुम् ।
 ततः खलु च राष्ट्रकूटः सोमां ब्राह्मणीमेवमवादीत्—मा खलु देवानुप्रिये !
 इदानीं मुण्डा भूत्वा यावत् प्रव्रज, भुङ्क्ष्य तावद् देवानुप्रिये ! मया सादं
 विपुलाग भोगभोगान्, ततः पश्चाद् युक्तभोगा सुव्रतानामार्याणामन्तिके मुण्डा
 यावत् प्रव्रज । ततः खलु सा सोमा ब्राह्मणी राष्ट्रकूटस्य एतमर्थं प्रति-
 श्रुणोति । ततः खलु सा सोमा ब्राह्मणी स्नाता यावत् सर्वालङ्कारभूषित-

‘तष्णं सा’ इत्यादि—

उसके बाद वह सोमा ब्राह्मणी राष्ट्रकूटके पास आवेगी
 और हाथ जोड़कर इस प्रकार कहेगी—हे देवानुप्रिय ! मैंने आर्या-
 ओंके समीप धर्म सुना । वह धर्म भी मुझे इष्टप्रिय और हितकारक
 जान पडा और अच्छा लगा, इसलिये हे देवानुप्रिय ! मेरी इच्छा है
 कि तुमसे आज्ञा लेकर मैं उन आर्याओंके पास जाऊँ, और दीक्षा ग्रहण
 करूँ । सोमा ब्राह्मणीका ऐसा वचन सुनकर राष्ट्रकूट उससे कहेगा—

हे देवानुप्रिये ! अभी तुम मुण्डित होकर प्रव्रजित मत होओ !
 हे देवानुप्रिये ! अभी तुम मेरे साथ विपुल भोगोंका भोग करो ।
 उसके बाद भुक्तभोगा होकर सुव्रता आर्योंके पास प्रव्रजित होना ।
 सोमा ब्राह्मणी राष्ट्रकूटकी इस सलाहको मान जायगी । बादमें वह
 सोमा ब्राह्मणी स्नान करके सभी प्रकारोंके अलङ्कारोंसे अलङ्कृत

‘तष्णं सा’ इत्यादि

त्यार पछी ते सोमा ब्राह्मणी राष्ट्रकूटनी पासे आवशे अने हाथ जोडीने आ
 प्रकारे श्रुतिशे —हे देवानुप्रिय ! मे आर्याओं पासेथी धर्मनु श्रवणु कथुं ते धर्म
 पणु अने इष्ट प्रिय अने हितकारक लाग्ये ने सादरे पणु नलाये छे माटे हे देवानु-
 प्रिय ! मारी इच्छा छे हे तमारी आज्ञा लधने हुं ते आर्याओं पासे नठि अने दीक्षा
 ग्रहणु करुं सोमा ब्राह्मणीना जेवा वचन सालणी राष्ट्रकूट तेने श्रुतिशे —

हे देवानुप्रिये ! हाल तु मुण्डित थाने प्रव्रजित न था हे देवानुप्रिय ! हाल
 तो मारी साथे विपुल भोगेने भोगव त्यार पछी भुक्तभोगा थछ सुव्रता आर्यानी
 पासे प्रव्रजित थने सोमा ब्राह्मणी राष्ट्रकूटनी आ सलाहने मानी नथे पछी ते
 सोमा ब्राह्मणी स्नान करीने तमाम नतन धरेछा—गाथी अलङ्कृत करुं दास्येओमी

शरीरा चेटिकाचक्रवालपरिकीर्णां स्वस्माद् गृहात् प्रतिनिष्क्रामतिः, प्रतिनिष्क्रम्य विभेलं सन्निवेशं मध्यमध्येन यत्रैव सुव्रतानामार्याणामुपाश्रयस्तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य सुव्रतां आर्या वन्दते नमस्यति पर्युपास्ते । ततः खलु ताः सुव्रताः आर्याः सोमायै ब्राह्मण्यं विचित्रं केवलिप्रज्ञप्तं धर्मं परिकथयन्ति, यथा जीवा वध्यन्ते । ततः खलु सा सोमा ब्राह्मणी सुव्रतानामार्याणामन्तिके यावद् द्वादशविधं श्रावकधर्मं प्रतिपद्यते, प्रतिपद्य सुव्रतां आर्या वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा यस्या एव दिशः प्रादुर्भूता तामेवदिशं प्रतिगता । ततः खलु सा सोमा ब्राह्मणी श्रमणोपासिका जाता अभिगत० यावत् आत्मानं भाषयन्ती विहरति ।

हो दासियोंके समूहसे घिरी हुई अपने घरसे निकल कर विभेल सन्निवेशके मध्य भागसे होती हुई सुव्रता आर्योंके उपाश्रयमें आयेगी । आकर वह सुव्रता आर्योंको वन्दन और नमस्कार कर सेवा करेगी । उसके बाद वे सुव्रता आर्या उस सोमा ब्राह्मणीको अनेक प्रकारसे विचित्र केवली प्रज्ञप्त धर्मका उपदेश करेगी—'जिस प्रकार जीव कर्मसे बद्ध होते हैं और मुक्त होते हैं' । इस प्रकार केवलि प्रज्ञप्त धर्म सुनकर वह सोमा ब्राह्मणी सुव्रता आर्योंके पाल यावत् बारह प्रकारका श्रावक धर्मको स्वीकार करेगी । बाद उन आर्योंको वन्दन नमस्कार कर जिस दिशासे आयेगी उसी दिशामें लौट जायगी ।

तदन्तर वह सोमा ब्राह्मणी श्रमणोपासिका बनेगी । और सभी जीव अजीव आदि तत्वोंको जानकर श्रावकव्रतसे आत्माका

मण्डलीमां घेराधने पोताना घरमाथी नीकणी णिलेद सन्निवेशना मध्य लागमाथी थधने सुव्रता आर्याओना उपाश्रयमा आवशे आवीने ते सुव्रता आर्याने वंदन नमस्कार करी सेवा करशे त्यार पछी ते सुव्रता आर्याओ ते सोमा ब्राह्मणीने विचित्र केवली प्रज्ञप्त धर्मने अनेक प्रकारे उपदेश करशे वे प्रकारे एव कर्मथी गधाय छे अने मुक्त थाय छे भत्यादि केवली प्रज्ञप्त धर्म सालणीने ते सोमा ब्राह्मणी सुव्रता आर्याओनी पासे गार प्रकारना श्रावकधर्मने स्वीकार करशे. पछी ते आर्याओने वंदन-नमस्कार करीने वे दिशाथी तेओ आवी हुशे ते दिशामा पाछी नशे.

त्यार पछी ते सोमा ब्राह्मणी श्रमण उपासिका बनशे 'अने गधा एव अणुव आदि तत्वोने नखी श्रावक व्रतथी आत्माने लावित करैती विचरशे त्यार'

ततः खलु ताः सुव्रता आर्या अन्यदा कदाचित् वेभेयात् संनिवेशात्
प्रतिनिष्क्रामन्ति, वहिर्ननपदविहारं विहरन्ति ॥ ८ ॥

टीका—‘तएण सा’ इत्यादि—व्याख्या पठित्तासद्धा ॥ ८ ॥

मूलम्—तएणं ताओ सुव्रयाओ अज्जाओ अन्नया कयाइं
पुवाणुपुविं जाव विहरइ । तएणं सा सोमा माहणी इमीसे
कहाए लच्छट्टा समाणी हट्टुट्टा णहाया तहेव निग्गया जाव
वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता धम्मं सोच्चा जाव नवरं
रट्टुकुडं आपुच्छामि, तएणं पव्वयामि । अहासुहं । तएणं सा
सोमा माहणी सुव्रयं अज्जं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता
सुव्रयाणं अंतियाओ पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खसमित्ता जेणेव सए
गिहे जेणेव रट्टुकुडे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता करतल
परिग्गहियं० तहेव आपुच्छइ जाव पव्वइत्तए । अहासुहं देवा-
णुप्पिए ! मा पडिवंधं । तएणं से रट्टुकुडे विउलं असणं
तहेव जाव पुव्वभवे सुभद्दा जाव अज्जा जाता, इरियासमिया
जाव गुत्तवंभयारिणी । तएणं सा सोमा अज्जा सुव्रयाणं अज्जाणं
अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ, अहिज्जित्ता
वहूहिं छट्टुट्टम दसम दुवालस० जाव भावेमाणी बहुइं वासाइं
सामण्णपरियागं पाउणइ, पाउणित्ता मासियाए संलेहणाए
सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता आलोइयपडिक्कंता समाहि-
पत्ता कालमासे कालं किच्चा सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो सा-

भावित करती हुई विचरेगी उसके बाद वह सुव्रता आर्या किसी समय
विमेल सन्निवेश ले निकलकर बाहर देशमें विहार करती हुई विचरेगी । ८ ।

पछी सुव्रता आर्याओ केरु समये निक्खेव सन्निवेशथी नीकणीने थीज्ज देशमा
विहार करती विचरेशे (८)

माणियदेवत्ताए उववन्ना । तत्थणं अत्थेगइयाणं देवाणं दोसा-
गरोवमाइं ठिई पणत्ता, तत्थ णं सोमस्स वि देवस्स दोसा-
गरोवमाइं ठिई पणत्ता ।

से णं भंते ! सोमे देवे ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं
जाव चयं चइत्ता कहिं गच्छिहिइ ? कहिं उववज्जिहिइ ?
गोयमा ! महाविदेहे वासे जाव अंतं काहिइ । एवं खलु
जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं चउत्थस्स अज्जयणस्स अयमट्ठे
पणत्ते ॥ ९ ॥

॥ पुप्फियाए चउत्थं अज्जयणं संमत्तं ॥ ४ ॥

छाया—ततः खलु ताः सुव्रता आर्या अन्यदा कदाचित् पूर्वानुपूर्वा
यावद् विहरन्ति । ततः खलु सा सोमा ब्राह्मणी अस्याः कथाया लब्धार्थी
सती हृष्टतुष्टा० स्नाता तथैव निर्गता यावद् वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा
नमस्यित्वा धर्मं श्रुत्वा यावद् नवरं राष्ट्रकूटमापृच्छामि, यथासुखम्० । ततः

‘तएणं ताओ’ इत्यादि—

उसके बाद वह सुव्रता आर्या किसी समय पूर्वानुपूर्वी
विचरती हुई फिर विभेल सन्निवेशमें आएगी और वसतिकी आज्ञा
लेकर वहाँ तप संयमसे आत्मको भावित करती हुई रहेगी । बाद
वह सोमा ब्राह्मणी उन आर्याओंके आनेका समाचार पाकर हृष्ट
तुष्ट हृदय हो स्नान कर तथा सभी अलङ्कारोंसे विभूषित हो
पूर्ववत् उन आर्याओंके पास जाकर यावत् वन्दन और नमस्कार
करेगी । वन्दन नमस्कार करके धर्म सुनकर उस आर्यासे

‘तएणं ताओ’ इत्यादि

त्यार पछी ते सुव्रता आर्याओ केअ सभये पूर्वानुपूर्वी विचरएणु करता करतां
पाछी णिलेद सन्निवेशमा आवशे अने वस्तीनी आज्ञा लए त्या तपसयमथी
आत्माने भावित करती रहेशे त्यार पछी ते सोमा ब्राह्मणी ते आर्याओना आववाना
समाचार भणता हृष्ट तुष्ट हृदयथी स्नान करी तथा धरेणुं आलूषणुथी विभूषित थए
अगाठनी नेम ते आर्याओनी पासे नधने वदन नमस्कार करेशे अने वदन नमस्कार

खलु सा मोमा ब्राह्मणी सुव्रतामार्या वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा सुव्रतानामन्तिकत् प्रतितिष्कामति, प्रतितिष्कम्य यत्रैव स्वकं गृहं यत्रैव राष्ट्र-कूटस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य करतलपरिगृहीत० तथैव आपृच्छति यावत् प्रव्रजितुम् । यथागुखं देवानुप्रिये ! मा प्रतिवन्धम् । ततः खलु स राष्ट्र-कूटो विपुलमशनं तथैव यावत् पूर्वभवे सुभद्रा यावद् आर्या जाता, ईर्याममिता यावद् गुप्तब्रह्मचारिणी । ततः खलु सा मोमा आर्या सुव्रतानामार्यागामन्तिके

कहेगी—हे देवानुप्रिये ! मैं राष्ट्रकूटसे पूछकर आपके समीप मुण्डित होकर प्रव्रज्या लेना चाहती हूँ । वह आर्या उमसे कहेगी—हे देवानु-प्रिये ! तुम्हें जिस प्रकार सुख हो वैसा करो । प्रमाद मत करो । उसके बाद सोमा ब्राह्मणी उन आर्याओंको वन्दन और नमस्कार कर उनके पाससे अपने घरमें राष्ट्रकूटके पास आयेगी । आकर हाथ जोड़ राष्ट्रकूटसे पूर्ववत् पृछेगी कि हे देवानुप्रिय ! मेरी इच्छा है कि मैं तुमसे आज्ञा लेकर सुव्रता आर्याओके पास प्रव्रजित होऊँ । इस बातको सुनकर राष्ट्रकूट कहेगा—हे देवानुप्रिये ! जैसा तुम्हें सुख हो वैसा करो । इस कार्यको करनेमें प्रमाद मत करो । उसके बाद वह राष्ट्रकूट विपुल अशन पान स्वाद्य स्वाद्य चार प्रकारके भोजन बनवाकर अपने मित्र ज्ञाति स्वजन वन्धुओंको आमंत्रित करेगा । और आदर सत्कारके साथ उनको भोजन करायेगा । जिस प्रकार पूर्वभवमें सुभद्रा आर्या हुई थी उसी प्रकार यह भी आर्या

करी धर्म आभणीने ते आर्याओने कहेथे—हे देवानुप्रिये ! हुं राष्ट्रकूटने पूछीने आपनी पासे मुडित थधने प्रव्रज्या लेवा आहु छुं ते आर्या तेने कहेथे—हे देवानु-प्रिये ! तेने ने प्रकारे सुभ थाय तेम कर प्रमाद न कर त्पार पछी सोमा ब्राह्मणी ते आर्याओने वदन नमस्कार करी तेमनी पासेथी पोताने घेर राष्ट्रकूटनी पासे आवशे आवीने हाथ जोडी राष्ट्रकूटने अगाठनी नेम पूछथे हे—हे देवानुप्रिय ! मारी धण्डा छे हे हुं तमारी आज्ञा लधने सुव्रता आर्याओनी पासे प्रव्रजित थाठ आ पान आभणी राष्ट्रकूट कहेथे—हे देवानुप्रिये ! नेम तेने सुभ थाय तेम कर आ कार्य करवामां प्रमाद न कर त्पार पछी ते राष्ट्रकूट विपुल (धण्डा) अन्नपान, पाद्य-स्वाद्य आर प्रकारना भोजन बनवावरावी पोताना मित्र, ज्ञाति, स्वजन वन्धुओने आमंत्रण्य आपथे अने आदर सत्कार सहित तेमने भोजन करावशे ने प्रकारे आगत्य सत्रमा सुभद्रा आर्या थध डती तेज प्रकारे आ पण्य आर्या थधने धर्याममिता आदिथी

सामायिकादिनि एकादशाङ्गानि अधीते, अधीत्य बहुभिः पष्ठाष्टमदशमद्वादश० यावद् भावयन्ती बहूनि वर्षाणि श्रामण्यपर्यायं पालयति, पालयित्वा मासिक्या संलेखनया पष्टि भक्तानि अनशनेन छिस्वा आलोचितप्रतिक्रान्ता समाधिप्राप्ता कालमासे कालं कृत्वा शक्रस्य देवेन्द्रस्य देवराजस्य सामानिकदेवतया उदपद्यत। तत्र खलु अस्त्येकैकेषां देवानां द्विसागरोपमा स्थितिः प्रज्ञप्ता, तत्र खलु सोमस्यापि देवस्य द्विसागरोपमा स्थितिः प्रज्ञप्ता।

स खलु भदन्त ! सोमो देवः तस्माद् देवलोकाद् आयुःक्षयेण यावत् चयं च्युत्वा क्व गमिष्यति ? क्व उत्पत्स्यते ? गौतम ! महाविदेहे वर्षे यावद्

होकर ईर्यासमिति आदिसे युक्त हो यावत् गुप्तब्रह्मचारिणी होवेगी। उसके बाद वह सोमा आर्या उन सुव्रता आर्याओंके समीप सामागिक आदि ग्यारह अङ्गोंका अध्ययन करेगी, और बहुतसे पष्ठ, अष्टम, दशम, द्वादश आदि तर्षोंके द्वारा आत्माको भावित करती हुई बहुत वर्षों तक श्रामण्य पर्यायका पालन कर मासिकी संलेखनासे साठ भक्तोंको अनशनसे छेदन कर अपने पाप स्थानोंका आलोचन और प्रतिक्रमण कर समाधिको प्राप्त हो काल मासमें काल कर देवेन्द्र शक्रके सामानिक देव होकर उत्पन्न होगी। वहाँ एक २ देवकी स्थिति दो सागरोपम है। उस देवलोकमें सोमदेवकी भी स्थिति दो सागरोपम होगी।

गौतम स्वामी पूछते हैं—हे भदन्त ! वह सोमदेव आयु भव स्थिति क्षयके बाद उस देवलोकसे च्यवकर कहाँ जायगा ? और कहाँ उत्पन्न होगा।

युक्तं यद्य यावत्गुप्तं ब्रह्मचारिणीं यशे त्वार पछी ते सोमा आर्या ते सुव्रता आर्याओंकी पासे सामायिक आदि अग्यारह अंगोनु अध्ययन करशे अने घण्टाये तप-षष्ठ, अष्टम, दशम, द्वादशम आदि तर्षोथी आत्माने लावित करती घण्टा वर्षो सुधी दीक्षा पर्यायनु पालन करी पछो मासिकी संलेखनाथी साठ लक्षताने अनशन द्वारा (उपवासथी) छेदन करी पोताना पापस्थानाना आशोधन अने प्रतिक्रमण करी समाधिने प्राप्त यद्यं काल मासमां काल करी देवेन्द्र शक्रनी सामानिक देव यद्यने उत्पन्न थशे। त्यां अेक अेक देवनी स्थिति अे सागरोपम अे। ते देवलोकमां सोमदेवनी पणु स्थिति अे सागरोपमनी थशे।

गौतम स्वामी पूछे अे —हे भदन्त ते सोमदेव आयुभव अने स्थितिक्षय पछी ते देवलोकमाथी अ्यवीने कयां अशे ! अने कया उत्पन्न थशे ?

अन्तं करिष्यति । एवं खलु जम्बू । श्रमणेन यावत् सम्प्राप्तेन चतुर्थस्याध्य-
यस्य अयमर्थः प्रज्ञप्तः ॥ ९ ॥

॥ पुष्पितायां चतुर्थमध्ययनं समाप्तम् ॥ ४ ॥

टीका—‘तएणं ताओ’ इत्यादि—व्याख्या निगदसिद्धा ॥ ९ ॥

पञ्चममध्ययनम्

मूलम्—जइणं भंते ! समणेणं भगवया उक्खेवओ० । एवं
खलु जंबू ! तेणं कालेणं २ रायगिहे नामं नयरे गुणसिलए
चेइए, सेणियराया, सामी समोसरिए, परिसा निग्गया ।
तेणं कालेणं २ पुण्णभद्दे देवे सोहम्ममे कप्पे पुण्णभद्दे विमाणे
सभाए सुहम्माए पुण्णभद्दंसि सीहासणंसि चउहिं सामाणिय-
साहस्सीहिं जहा सूरियाभो जाव वत्तीसविहं नट्टविहिं उव-
दंसित्ता जाप्पेव दिंसि पाउब्भूए तामेव दिंसि पडिगए । कूडा-
गारसाला० पुव्वभवपुच्छा । एवं गोयमा ! तेणं कालेणं २
इहेव जम्बूदीवे दीवे भारहे वासे मणिवइया नामं नयरी
होत्था रिद्ध०, चंदो राया, ताराइण्णे चेइए । तत्थणं मणि-
वइयाए नयरीए पुण्णभद्दे नाम गाहाव्हं परिवसइ अड्ढे ।
तेणं कालेणं २ थेरा भगवंतो जातिसंपण्णा जाव जीवियास-

भगवान् कहते हैं—हे गौतम ! महाविदेह क्षेत्रमें उत्पन्न होकर
यावत् सिद्ध होगा, और सब दुःखोंका अन्त करेगा ।

सुधर्मा स्वामी कहते हैं—हे जम्बू ! इस प्रकार श्रमण भग-
वान् महावीरने पुष्पिताके चतुर्थ अध्ययनके भावोंका निरूपण
किया है ॥ ९ ॥

। पुष्पिताका चौथा अध्ययन समाप्त हुआ ।

भगवान् कहे छे :—हे गौतम ! महा विदेहक्षेत्रमा उत्पन्न थरने ते सिद्ध
थशे अने तमाम दुःखेनो अंत करेशे,

सुधर्मा स्वामी कहे छे—हे जम्बू ! आ प्रकरी श्रमणु भगवान् महावीरे
पुष्पिताका चतुर्थ अध्ययनका भावोनु निरूपणु कथुं छे (९)

पुष्पितानुं चोथुं अध्ययन समाप्त.

मरणभयविष्णुमुक्का बहुस्सुया बहुपरिवारा पुवाणुपुद्धिं जाव
समोसढा, परिसा निग्गया । तएणं से पुण्णभदे गाहावइ
इमीसे कहाए लद्धदे समाणे हट्टुं जाव पण्णत्तीए गंगदत्ते
तहेव निग्गच्छइ जाव निक्खंतो जाव गुत्तबंभयारी । तएणं
से पुण्णभदे अणगारे भगवंताणं अंतिए सामाइयमादियाइं
एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ, अहिज्जिता बहुहिं चउत्थच्छट्टुद्धम
जाव भावित्ता बहूइं वासाइं सामण्णपरियागं पाउणइ, पाउ-
णित्ता मासियाए संलेहणाए सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए
छेदित्ता आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा
सोहम्मे कप्पे पुण्णभदे विमाणे उववायसभाए देवसयणिज्जंसि
जाव भाषामणपज्जत्तीए । एवं खलु गोयमा ! पुण्णभदेणं
देवेणं सा दिवा देविडी जाव अभिसमण्णागया । पुण्णभदस्स
णं भंते ! देवस्स केवइयं कालं ठिई पण्णत्ता ? गोयमा !
दोसागरावमा ठिई पण्णत्ता । पुण्णभदे णं भंते ! देवे ताओ
देवलोगाओ जाव कहिं गच्छिहिइ ? कहिं उववज्जिहिइ ?
गोयमा ! महाविदेहे वासे सिज्जिहिइ जाव अंत काहिइ ?
एवं खलु जंबू ! समणेणं भगवया जाव संपत्तेणं निक्खेवओ । १ ।

॥ पंचमं अज्झयणं समत्तं ॥ ५ ॥

छाया—यदि खलु भदन्त ! श्रमणेन भगवता उत्क्षेपकः । एवं खलु
जम्बू : ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये राजगृहं नगरं गुणशिलं नाम चैत्यम्,
श्रेणिकी-राजा, स्वामी समवसृतः, परिषद् निर्गता । तस्मिन् काले २ पूर्ण-

भद्रो देवः सौधर्मे कल्पे पूर्णभद्रे विमाने सभायां सुधर्मायां पूर्णभद्रे सिंहासने चतुर्भिः सामानिकसदस्यैः यथा सूर्याभो यावद् द्वात्रिंशद्विधं नाट्यविधिमुप-
दर्श्य यस्या दिशः प्रादुर्भूतस्तामेव दिशं प्रतिगतः, कृटागारशाला, पूर्वभवपृच्छा।

पाँचवाँ अध्ययन ।

‘जडणं भते’ इत्यादि—

हे भदन्त ! श्रमण भगवान महावीरने पुष्पिताके चतुर्थ अध्य-
यनमें पूर्वोक्त भावाँका वर्णन किया है, तो हे भगवन् ! पञ्चम
अध्ययनमें भगवानने किस अभिप्राय का निरूपण किया है ।

आर्य सुधर्माने कहा—

हे जम्भू ! उस काल उस समयमें राजगृह नामक नगर था ।
वहाँ गुणशिलक नामक चैत्र था । उस नगरका राजा श्रेणिक था ।
उस कालमें श्रमण भगवान महावीर स्वामी उस नगरीमें पधारे ।
भगवानके दर्शनके लिये परिपद निकली । उस काल उस समयमें
पूर्णभद्र देव सौधर्म कल्पके पूर्णभद्र विमानमें सुधर्मा सभाके अन्दर
पूर्णभद्र सिंहासन पर चार हजार सामानिक देवोंके साथ बैठे हुए
थे वह पूर्णभद्र देव सूर्याभ देवके समान भगवानको यावत् वत्तीस
प्रकारकी नाट्यविधि दिग्ग्राकर जिस दिशासे आये उसी दिशामें
चले गये । गौतमने भगवानसे पूर्णभद्र देवकी देव ऋद्धिके विषयमें

‘अध्ययन पाँचम’

‘जडणं भते’ इत्यादि

हे भदन्त ! श्रमण भगवान महावीरने पुष्पिताका यथा अध्ययनमा पूर्वोक्त
भावोनु वर्णन कर्तुं छे तो हे भगवन् ! पाचमा अध्ययनमा भगवाने क्या अलि-
प्रायणु निरूपणु कर्तुं छे ?

आर्य सुधर्मान्णि इत्थु :—

हे जम्भू ! ते काले ते समये राजगृह नामे नगर इत्तुं त्या गुणशिलक
नामनु अत्य इत्तु ते नगरने गण्ट श्रेणिक इत्तो, ते काले श्रमण भगवान महावीर
स्वामी ते नगरीमा पधार्या. भगवानना दर्शन भाटे परिपद- नीकणी. ते काल ते
समये पूर्णभद्र देव सौधर्मकल्पना पूर्णभद्र विमानमा सुधर्मा सगानी अदर पूर्णभद्र
सिंहासन उपर आर इत्तर सामानिक देवोनी साथे ठेठेला इत्ता. ते पूर्णभद्र देव,
सूर्याभदेवना सेवा भगवानने पत्रीस प्रकारनी नाट्यविधि पतावी ते दिशामाथी- आख्या
ते-दिशामो पाछा गया गौतमे भगवानने, पूर्णभद्र देवनी, देवऋद्धिना, विप्रयमा

एवं गौतम ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये अत्रैव जम्बूद्वीपे द्वीपे भारते वर्षे मणिपदिका नाम नगरी अभवत्, ऋद्धस्तिमितसमृद्धा, चन्द्रो राजा, ताराकीर्णं चैत्यम् । तत्र खलु मणिपदिकायां नगर्यां पूर्णभद्रो नाम गाथापतिः परिवसति, आढ्यः । तस्मिन् काले तस्मिन् समये स्थविरा भगवन्तो जाति-सम्पन्नाः, यावत् जीविताशामरणभयविप्रमुक्ता बहुश्रुता बहुपरिवाराः पूर्वानुपूर्वी यावत् समवसृताः । परिपत् निर्गता । ततः खलु स पूर्णभद्रो गाथापतिः अस्याः कथाया लब्धार्थः सन् हृष्टतुष्टो० यावत् प्रज्ञप्त्यां गङ्गदत्तस्तथैव निर्गच्छति

पूछा भगवानने पूर्ववत् कूटागार शालाके दृष्टान्तसे उन्हें प्रतिबोधित किया । फिर गौतमको उस देवके पूर्वभव जाननेकी जिज्ञासा होने पर, भगवानने कहा—उस काल उस समय इसी मध्य जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्रमें मणिपदिका नामकी नगरी थी, जो बड़ी २ अट्टालिकाओंसे युक्त तथा बाहरी भीतरी शत्रुओंसे रहित एवं धनधान्य आदिसे सम्पन्न थी । उस नगरीके राजाका नाम चन्द्र था । उसमें ताराकीर्ण नामक एक उद्यान था । उस नगरीमें पूर्णभद्र नामक धनधान्यसम्पन्न गाथापति रहता था । उस काल उस समयमें जाति-सम्पन्न कुल सम्पन्न स्थविरपदभूषित मुनिराज यावत् जीवनकी आशा और मरणभयसे रहित, बहुश्रुत तथा बहुत मुनि परिवारसे युक्त तीर्थकर परम्परासे विचरते हुए मणिपदिका नगरीमें पधारे । जनसमुदायरूप परिषद् उनके दर्शनार्थ निकली । उसके बाद वह पूर्णभद्र गाथापति उन स्थविरोके आनेका वृत्तान्त जानकर हृष्ट तुष्ट

पूछथु, भगवाने पूर्ववत् कूटागारशालाना दृष्टातथा तेने प्रतिबोधित कर्था पछी गौतमने ते देवना पूर्वभव ज्ञानुवानी जिज्ञासा थवाथी भगवाने कथुः—ते काल ते समय आ मध्य जम्बूद्वीपना भरत क्षेत्रमा मणिपदिका नामे नगरी इती जेमा मोटी मोटी अट्टालिकावाणी हुवेलीओ इती तथा अड्डार तेमज अदर शत्रुओथी रहित अने धनधान्य आदिथी संपन्न इती ते नगरीना राजानु नाम चन्द्र इतु तेमा ताराकीर्ण नामे एक उद्यान इतो, ते नगरीमां पूणभद्र नामे धनधान्य संपन्न गाथापति रहता इता ते काल ते समये जातिसंपन्न-कुलसंपन्न स्थविरपदथी भूषित ओवा मुनिराज जे जवननी आशा अने मरणना भयथी रहित तथा बहुत श्रुत अने बहुत मुनि परिवारथी युक्त तीर्थकर परंपराथी विचरण करता मणिपदिका नगरीमा पधार्या जनसमुदायरूप परिषद् तेमना दर्शन भाटे निकली तारि पछी ते पूणभद्र गाथापति ते स्थविरोना आववाना अणर ज्ञानु हुष्ट तुष्ट हुदयथी भगव-

यावद् निष्क्रान्ती यावद् गुप्तब्रह्मचारी । ततः खलु स पूर्णभद्रोऽनगारो भग-
वतामन्तिके सामायिकादीनि एकादशाङ्गानि अधीते; अधीत्य चतुर्थं षष्ठाष्टमं
यावद् भावयित्वा बहूनि वर्षाणि श्रामण्यपर्यायं पालयति, पालयित्वा मासि-
क्या संलेखनया षष्टि भक्तानि अनशनेन छित्त्वा आलोचित-प्रतिक्रान्तः समा-
धिप्राप्तः कालमासे कालं कृत्वा सौधर्मं कल्पे पूर्णभद्रे विमाने उपपातसभायां
देवशयनीये यावद् भाषामनःपर्याप्त्या । एवं खलु गौतम ! पूर्णभद्रेण देवेन
सा दिव्या देवद्विः यावद् अभिसमन्वागता । पूर्णभद्रस्य खलु भदन्त ! देवस्य

हृदयसे भगवती सूत्रमें उक्त गङ्गदत्तके समान उनके दर्शनके लिये
गया और धर्मकथा सुनकर यावत् प्रव्रजित होगया । तथा ईर्यासमिति
आदिसे युक्त हो यावत् गुप्तब्रह्मचारी हो गया । उसके बाद उस
पूर्णभद्र अनगारने उन स्थविरोंके पास सामायिक आदि ग्यारह
अंगोका अध्ययन किया और बहुतसे चतुर्थ षष्ठ अष्टम आदि
तपसे आत्मा को भावित करके बहुत वर्षों तक श्रामण्यपर्याय पाला ।
बादमें मासिक संलेखनासे साठ भक्तोंको अनशनसे छेदकर अपने
पापस्थानोंकी आलोचना और प्रतिक्रमणकर समाधि प्राप्त की । तथा
काल अवसरमें कालकर सौधर्म कल्पके पूर्णभद्र विमानमें उपपात
सभाके अन्दर देवशयनीय शय्यामें यावत् पूर्णभद्र देवपनेमें उत्पन्न
होकर भाषापर्यासि मनःपर्यासि आदि पर्यासिभावको प्राप्त किया । हे
गौतम ! पूर्णभद्र देवने इस प्रकारसे इस दिव्य देव ऋद्धिको प्राप्त किया ।

वतीसूत्रमा कडेल गगदत्तनी पेठे तेमना दर्शनने भाटे गया अने धर्मकथा सांख-
णीने यावत् प्रव्रजित थछ गया तथा ईर्यासमिति आदिथी युक्त थछने गुप्तब्रह्म-
चारी थछ गया त्यार पछी ते पूर्णभद्र अनगारे ते स्थविरानी पासे सामायिक
आदि अगीयार अ गोनु अध्ययन कथुं अने धया चतुर्थषष्ठ अष्टम आदि तपेथी
आत्माने लावित करीने गहु वर्षी सुधी दीक्षा पर्यायनु पालन कथुं । पछी मासिकी
संलेखनाथी साठ लकतोनु अनशन वडे छेदन करी पोताना पापस्थानानी आलो-
चना तथा प्रतिक्रमण करी समाधि प्राप्ति करी । तथा काल अवसर आवतां काल करी
सौधर्म कल्पना पूर्णभद्र विमानमां उपपात मलानी अहं देवशयनीय शय्यामां ते
पूर्णभद्र देवपण्यामा उत्पन्न थछने लाषापर्यासि मनःपर्याप्ति आदि पर्याप्तिआथी
पर्याप्तिभावने प्राप्त कथीं हे गौतम ! पूर्णभद्रदेवे आ प्रकारे आ दिव्य देवनी
ऋद्धिने प्राप्त करी ।

कियन्तं कालं स्थितिः प्रज्ञप्ता ? गौतम ! द्विसागरोपमा स्थितिः प्रज्ञप्ता । पूर्ण-
भद्रः खलु भदन्त ! देवस्तस्माद् देवलोकाद् यावत् क्व गमिष्यति ? क्व उन्प-
त्स्यते ? गौतम ! महाविदेहे वर्षे सेत्स्यति यावदन्तं करिष्यति । एवं खलु
जम्बूः श्रमणेन भगवता यावत् सम्प्राप्तेन निक्षेपकः ॥ १ ॥

॥ पञ्चममध्ययनं समाप्तम् ॥ ५ ॥

टीका—‘जडणं भंते’ इत्यादि व्याख्या स्पष्टा ॥ १ ॥

॥ इति पञ्चममध्ययन समाप्तम् ॥ ५ ॥

गौतम स्वामी पूछते हैं—

हे भदन्त ! पूर्णभद्र देवकी स्थिति कितने कालकी है ?

भगवान कहते हैं—हे गौतम ! पूर्णभद्र देवकी स्थिति दो
सागरोपमकी है ।

गौतमने फिर पूछा—हे भदन्त ! यह पूर्णभद्र देव देवलोकसे
च्यवकर कहाँ जायगा तथा कहाँ उत्पन्न होगा ।

भगवानने कहा—

हे गौतम ! यह पूर्णभद्र देव महाविदेह क्षेत्रमें उत्पन्न होकर
सिद्ध होगा और यावत् सब दुःखोका अन्त करेगा ।

सुधर्मा स्वामी कहते हैं—

हे जम्बू ! मोक्ष प्राप्त श्रमण भगवान महावीरने इस प्रकार
पुष्पिताके पांचवें अध्ययनका भाव कहा है सो मैंने तुम्हे कहा ॥१॥

। पुष्पिताका पाँचवाँ अध्ययन समाप्त हुआ ।

गौतम स्वामी पूछे छे —

छे भदन्त । पूर्णभद्र देवकी स्थिति कितनी कालकी छे ?

भगवान छे छे — छे गौतम । पूर्णभद्र देवकी स्थिति दो सागरोपमकी छे

गौतमने वणी पूछथुः—छे भदन्त आ पूर्णभद्रदेव देवलोककी स्थिति कितने कालकी छे
अने कया उत्पन्न थशे ?

भगवाने कहु —

छे गौतम ! आ पूर्णभद्रदेव महाविदेह क्षेत्रमाँ उत्पन्न थछे सिद्ध थशे अने
तमाभ दुःखोको अन्त आणथे

सुधर्मा स्वामी कहे छेः छे जम्बू ! मोक्ष प्राप्त श्रमण भगवान महावीरने आ
प्रकारे पुष्पिताका पांचवाँ अध्ययनका भाव कही छे ते में तने कही छे

पुष्पितानुं पांचम अध्ययन समाप्त.

मूत्रम्—जडुणं भंते ! समणेणं भगवया जावं संपत्तेणं
उक्खेवओ०, एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं २ रायगिहे नयरे,
गुणसिलए चेइए, सेणिए राया, सामी समोसरिए । तेणं
कालेणं २ माणिभदे देवे सभाए मुहम्माए माणिभदंसि
सीहासणंसि चउहिं सामाणियसाहस्सीहि जहा पुण्णभदो, तहेव
आगमणं, नट्टविही, पुव्वभवपुच्छा, सणिवया नयरी, माणिभदं
गाहावई, थेराणं अंतिए पव्वजा, एक्कारस अंगाडं अहिज्जइ,
वहूडं वासाइं परियाओ, मासिया संलेहणा, सट्ठिं भत्ताइं०,
माणिभदे विमाणे उववाओ, दोसागरोवमा ठिई, महाविदेहे
वासे सिज्झिहिइ । एवं खलु जंबू ! निक्खेवओ ॥

॥ छट्टं अज्झयणं समत्तं ॥ ६ ॥

छाया—यदि खलु मदन्त ! श्रमणेन भगवता यावत् सम्प्राप्तेन उत्क्षेपकः ।
एवं खलु जम्बू ! तस्मिन् काले २ राजगृहं नगरं, गुणगिलं चैत्यं, श्रेणिको

छठा अध्ययन.

‘जडुणं भंते’ इत्यादि—

जम्बू स्वामी पूछते हैं—

हे मदन्त ! मोक्ष प्राप्त श्रमण भगवान महावीरने पाँचवें
अध्ययनका पूर्वोक्त भाव बनलाया है, तो फिर छठे अध्ययनमें
उन्होंने किस भावका निरूपण किया है ?

भगवान कहते हैं—

हे जम्बू ! उस काल उस समयमें राजगृह नामका नगर था ।
उस नगरमें गुणगिलक चैत्य था । श्रेणिक नामके राजा उसमें

छठुं अध्ययन.

‘जडुणं भंते’ इत्यादि

जम्बू स्वामी पूछे थे—

हे मदन्त ! मोक्ष प्राप्त श्रमण भगवान महावीर पांचवा अध्ययनमें पूर्वोक्त
भाव बताये थे तो पछी छठ्ठा अध्ययनमें तेमण्णे क्या लावनु निरूपण कर्तुं

भगवान कहे थे—

हे जम्बू ! ते काले ते समये राजगृह नामे नगर इत्तुं. ते नगरमां गुणगिलक

राजा, स्वामी समवसृतः तस्मिन् काले तस्मिन् समये माणिभद्रो देवः सभायां सुधर्मायां माणिभद्रे सिंहासने चतुर्भिः सामानिकसहस्रैर्यावत् पूर्णभद्र-स्तथैवाऽऽगमनं, नाट्यविधिः, पूर्वभवपृच्छा, मणिपदा नगरी, माणिभद्रो गाथा-पतिः, स्वपिराणामन्तिके प्रब्रज्या, एकादशाङ्गानि अधीते, बहूनि वर्षाणि पर्यायः, मासिकी संलेखना, षष्टिं भक्तानि०, माणिभद्रे विमाने उपपातः, द्विसागरोपमा

राज्य करते थे । भगवान महावीर स्वामी उस नगरमें पधारे । परिषद् भगवानके वन्दनके निमित्त गई । उस काल उस समयमें माणिभद्र देव सुधर्मा सभामें माणिभद्र सिंहासन पर चार हजार सामानिक देवोंके साथ बैठे हुए थे । वे माणिभद्र देव पूर्णभद्रके समान भगवानके पास आये और नाट्यविधि दिखाकर चले गये । गौतमने माणिभद्रको दिव्य देवऋद्धिके बारेमें पूर्ववत् प्रश्न किया । भगवानने कूटागारशालाके दृष्टान्तसे उसका उत्तर दिया । गौतमने माणिभद्र देवके पूर्व जन्मके बारेमें प्रश्न किया ।

भगवानने कहा—

उस काल उस समयमें मणिपदिका नामकी नगरी थी, उसमें माणिभद्र नामका एक गाथापति था । जिसने स्थविरोके समीप प्रब्रज्या ग्रहणकर ग्यारह अंगों का अध्ययन किया । बहुत वर्षों तक श्रामण्य पर्यायका पालन किया और मासिक संलेखना की, अनशन द्वारा साठ भक्तोंको छेदनकर पापस्थानोंका आलोचन प्रतिक्रमण

नामे येत्ये इतो श्रेष्ठिक नामना राजा तेमा राज्य करता इता भगवान महावीर स्वामी ते नगरमा पधर्या परिषद् भगवानने वदन करवा गध ते काल ते समये माणिभद्र देव सुधर्मा सभामा माणिभद्र सिंहासन उपर चार हजार सामानिक देवोनी साथे भेठेला इता. माणिभद्र देव पूर्णभद्रनी पेठे भगवाननी पासे आव्या अने नाट्य विधि देणाडी अन्तर्धान थर्छ गया—पाछा जता रह्या गौतमे माणिभद्रनी दिव्य देव ऋद्धिना भागत अगाउनी पेठे प्रश्न कर्यो भगवाने कूटागारशालाना दृष्टातथी तेना उत्तर आप्यो. गौतमे माणिभद्र देवना पूर्वजन्म विषे प्रश्न कर्यो.

भगवाने कहे :—

ते काल ते समये मणिपदिका नामनी नगरी इती तेमा माणिभद्र नामे अेक अेक गाथापति इतो जेहे स्थविरोनी पासे प्रब्रज्या ग्रहण करी अगीयार अंगोनुं अध्ययन कर्युं. धर्या वर्षो सुधी दीक्षा पर्याय, शरित्र पर्यायनुं पालन कर्युं. मासिकी संलेखनाथी अनशन द्वारा साठ भक्तोनु छेदन करी पाप स्थानोनी आलोचन प्रतिक्रमण

मूलम्—एवं दत्ते ७ सिवे ८ बले ९ अणादिए १० सर्वे
जहा पुण्णभदे देवे । सर्वेसिं दोसागरोवमाइं ठिई । विमाणा
देवसरिसनामा । पुव्वभवे दत्ते चंदणाए, सिवे मिहिलाए बला
हस्थिणपुरनयरे, अणादिए काकंदीए, चेइयाइं जहा संगहणीए ॥

॥ तइओ वग्गो सम्मत्तो ॥

स्थितिः, महाविदेहे वर्षे सेत्म्यति । एवं खलु जम्बूः ! निक्षेपकः ॥ १ ॥

॥ इति पष्ठाध्ययनं समाप्तम् ॥ ६ ॥

टीका— 'जङ्गं भंते' इत्यादि—व्याख्या स्पष्टा ॥ १ ॥

छाया—एवं दत्तः ७ शिवः ८ बलः ९ अनादृतः १० सर्वे यथा पूर्णभद्र
देवः ! सर्वेषां द्विसागरोपमा स्थितिः, विमानानि देवसदृशनामानि, पूर्वभवे

करके काल अवसरमें कालकर माणिभद्र विमानमे उत्पन्न हुआ । यहाँ
उसकी स्थिति दो सागरोपम है । अन्तमें देवलोकसे च्यव कर महा
विदेह क्षेत्रमें जन्म लेकर सिद्ध होगा और सब दुःखोंका अन्त करेगा ।

सुधर्मा स्वामी कहते हैं—

हे जम्बू ! इस प्रकार श्रमण भगवान महावीरने पुष्पिताके
छटे अध्ययनके भावका प्रतिपादन किया ।

। पुष्पिताका छठा अध्ययन समाप्त हुआ ।

इसी प्रकार ७ दत्त, ८ शिव, ९ बल, १० अनादृत, इन
सभी देवोंका वर्णन पूर्णभद्र देव के समान जानना चाहिये । सभीकी
स्थिति दो दो सागरोपम है । इन देवोंके नामके समान ही इनके

करी क्षण अवसरमां क्षण करीने माण्डिभद्र विमानमा उत्पन्न थया त्या तेनी स्थिति
मे सागरोपम छे. आपरे देवद्वीकथी थयी महाविदेह क्षेत्रमा जन्म लध सिद्ध थये अने
सर्वे दुःखोना अत लावये

सुधर्मा स्वामी छडे छेः—

हे जम्बू ! आ प्रकारे श्रमण भगवान महावीरे पुष्पिताना छटा अध्ययन
लावनु प्रतिपादन थयुं.

पुष्पितानुं छटु अध्ययन समाप्त.

आ प्रकारे ७ दत्त, ८ शिव, ९ बल, १० अनादृत आ षष्ठी देवोनु वरुण
भद्र देवना वरुण षष्ठी देवुं लोभये षष्ठीनी स्थिति षष्ठी सागरोपम छे ते

अथ पुष्पचूलिकाख्यश्रुतुर्थो वर्गः ॥ ४ ॥

मूलम्—जड़णं भंते ! समणेणं भगवया उक्खेवओ जाव
दस अज्झयणा पणत्ता । तं जहा—

“सिरि—हिरि—घिइ—कित्तीओ, बुद्धी लच्छी य होइ बोधव्वा ।
इलादेवी सुरादेवी, रसदेवी गंधदेवी य ॥ १ ॥”

जड़णं भंते ! समणेणं भगवया जाव संपत्तेणं उवंगाणं
चउत्थस्स वग्गस्स पुप्फचूलाणं दस अज्झयणा पणत्ता ।
पढमस्स णं भंते ! उक्खेवओ, एवं खल्लु जंबू ! तेणं कालेणं
२ रायगिहे नयरे, गुणसिलए चेइए, सेणिए राया, सामी

दत्तः चन्दनायाम्, शिवो मिथिलायां, बलो हस्तिनापुरे नगरे, अनादृतः
काकन्धां, चैत्यानि यथा संग्रहण्याम् ॥ १ ॥

॥ इति पुष्पितायां सप्तमाष्टमनवमदशमान्यध्ययनानि समाप्तानि ॥
७ । ८ । ९ । १० ॥

॥ इति तृतीयो वर्गः समाप्तः ॥

टीका— ‘एवं’ इत्यादि—व्याख्या स्पष्टा ॥ २ ॥

पुष्पिताख्यस्तृतीयो वर्गः समाप्तः ॥ ३ ॥

विमानोंका नाम है ! ‘दत्त’ अपने पूर्व जन्ममें चन्दना नगरीमें,
‘शिव’ मिथिलामें, ‘बल’ हस्तिनापुरमें, ‘अनादृत’ काकन्दीमें
जन्मे थे । संग्रहणी गाथाके अनुसार उद्यान जानना चाहिये ।
॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ पुष्पिताका सातवाँ, आठवाँ, नववाँ,
और दसवाँ अध्ययन समाप्त हुआ ।

पुष्पिता नामका तृतीय वर्ग समाप्त हुआ ॥ ३ ॥

देवोना नामना जेवाञ्च तेमना विमानना नाम छे. दत्त पोताना पूर्वजन्ममा
चन्दना नगरीमा, शिव मिथिलाभां, बल हस्तिनापुरमा अनादृत काकन्दीमा जन्ममा
इतां संग्रहणी गाथा अनुसार उद्यान जाणी देवां जेठये ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥
पुष्पितानु सातमु—आठमु—नवमु—दशमु अध्ययन समाप्त.

पुष्पिता नामे तृतीय वर्ग समाप्त.

समोसढे, परिस्ता निग्गया । तेणं कालेणं २ सिरि देवी सोहम्मे कप्पे सिरिवडिंसए विमाणे सभाए सुहम्माए सिरिसि सीहा-सणंसि चउहिं सामाणियसाहस्सेहिं चउहिं महत्तरियाहिं सपरिवाराहिं जहा बहुपुत्तिया जाव नट्टविहिं उवदंसित्ता पडिगया । नवरं [दारय] दारियाओ नत्थि । पुव्वभवपुच्छा । एवं खलु गोयसा ! तेणं कालेणं २ रायगिहे नयरे गुणसिलए चेइए ज्ञियसत्तू राया । तत्थं णं रायगिहे नयरे सुदंसणे नामं गाहावड् परिवसइ, अड्ढे । तस्स णं सुदंसणस्स गाहावड्स्स भूया पियाए गाहावड्णीए अत्तया भूया नामं दारिया होत्था बुड्ढा बुड्ढुकुमारी जुण्णा जुण्णकुमारी पडियपुयत्थणी वरगपरिवज्जिया यावि होत्था । तेणं कालेणं २ पासे अरहा पुरिसादाणीए जाव नवरयणिए, वण्णओ सो चेव, समोसरणं, परिस्ता निग्गया । तएणं सा भूया दारिया इमीसे कहाए लद्धट्टा समाणी हट्ट-तुट्टा जेणेव अम्मापियरो तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता एवं वयासी—एवं खलु अम्मताओ ! पासे अरहा पुरिसादाणीए पुवाणुपुविं चरमाणे जाव देवगणपरिवुडे विहरइ, तं इच्छामि णं अम्मयाओ ! तुब्भेहि अब्भणुण्णाया समाणी पासस्स अरहओ पुरिसादाणीयस्स पायवंदिया गमित्तए । अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं ।

तए णं सा भूया दारिया ण्हाया० जाव सरीरा चेडी-चक्रवालपरिकिण्णा साओ गिहाओ पडिनिक्खमइ, पडिनिक्ख-मित्ता जेणेव वाहिरिया उवट्टाणसाला तेणेव उवागच्छइ, उवा-गच्छित्ता धम्मियं जाणप्पवरं दुख्खं । तएणं सा भूया दारिया

नियपरिवारपरिवुडा रायगिहं नयरं मज्झंमज्झेण निग्गच्छइ
निग्गच्छित्ता जेणेव गुणसिलए चेइए तेणेव उवागच्छइ, उवा-
गच्छित्ता छत्तादीए तित्थकरातिसए० पासइ, धम्मियाओ जाण-
प्पवराओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहा चेडीचक्कवालपरिकिण्णत्ता जेणेव
पासे अरहा पुरिसादाणीए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता
तिक्खुत्तो जाव पज्जुवासइ । तएणं पासे अरहा पुरिसादाणीए
भूयाए दारियाए तीसे महइ० धम्मकहा, धम्मं सोच्चा णिसम्म
हट्ट० वंदइ, वंदित्ता एवं वयासी सद्दहामि णं भंते ! निग्गंथं
पावयणं जाव अब्भुट्टेमिणं भंते ! निग्गंथं पावयणं, से जहे
तं तुब्भे वदेह, जं नवरं देवाणुप्पिया ! अम्मापियरो आपु-
च्छामि, तएणं अहं जाव पवइत्तए । अहासुहं देवाणुप्पिया !
तएणं सा भूया दारिया तमेव धम्मियं जाणप्पवरं जाव दुरू-
हइ, दुरूहित्ता जेणेव रायगिहे नयरे तेणेव उवागया, रायगिहं
नयरं मज्झं मज्झेण जेणेव सए गिहे तेणेव उवागया, रहाओ
पच्चोरुहित्ता जेणेव अम्मापियरो तेणेव उवागया, करतल० जहा
जमाली आपुच्छइ । अहासुहं देवाणुप्पिए ! तएणं से सुदंसणे
गाहावई विउलं असणं ४ उवक्खडावेइ, मित्तनाइ० जाव
जिमियभुत्तुत्तरकाले सुईभूए निक्खमणमाणित्ता कोडुंविद्यपुरिसे
सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी—खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया !
भूयादारियाए पुरिससहस्सवाहिणीं सीयं उवट्टवेह, उवट्टवित्ता
जाव पच्चप्पिणह । तएणं ते जाव पच्चप्पिणंति ॥ १ ॥

--- छाया- यदि खलु भदन्त ! श्रमणेन भगवता उत्क्षेपको यावद् दग
अध्यायनानि प्रज्ञप्तानि । तद् यथा-

“श्री-ही-धृति-कीर्तयो बुद्धिलक्ष्मीश्च भवति बोद्धव्या ।

इलादेवी सुरादेवी, रसदेवी गन्धदेवी च ॥ १ ॥ ”

यदि खलु भदन्त ! श्रमणेन भगवता यावत् संप्राप्तेन उपाद्धानां चतुर्थस्य वर्गस्य पुष्पचूलानां दशाऽध्ययनानि प्रज्ञप्तानि, प्रथमस्य खलु भदन्त । उत्क्षेपकः, एवं खलु गौतम ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये राजगृहं नाम नगरं,

चतुर्थ वर्ग (४)

पुष्पचूलिका.

‘जडणं’ भंते इत्यादि-

जम्भू स्वामी पृच्छते है-

हे भदन्त ! श्रमण भगवान महावीरने पुष्पिता वर्गमें इस अध्ययनोंका निरूपण किया है । उसके बाद उन्होंने क्या कहा है ?

सुधर्मा स्वामी कहते हैं-

हे जम्भू ! उसके बाद भगवानने पुष्पचूलिका वर्गका निरूपण किया है । उसमें उन्होंने दस अध्ययन बतलाये हैं । जोकि इस प्रकार है-(१) श्री, (२) ही, (३) धी, (४) कीर्ति, (५) बुद्धि, (६) लक्ष्मी, (७) इलादेवी, (८) सुरादेवी, (९) रसदेवी (१०) गन्धदेवी ॥

हे जम्भू ! इस प्रकार भगवानने दस अध्ययनोंका निरूपण किया है ।

चतुर्थ वर्ग (४)

पुष्पचूलिका.

‘जडणं भंते’ इत्यादि.

जम्भू स्वामी पृच्छे छे:-

हे भदन्त ! श्रमण भगवान महावीरने पुष्पिता वर्गमां दश अध्ययननुं निरूपण कर्तुं छे त्थार पछी तेमणे शुं कलु छे ?

सुधर्मा स्वामी कहे छे-

हे जम्भू ! त्थार पछी भगवाने पुष्पचूलिका वर्गनुं निरूपण कर्तुं छे तेम तेमोअणे दश अध्ययन गताव्या छे. जेना नाम आवा प्रकारना छे:- (१) श्री, (२) ही, (३) धी, (४) कीर्ति, (५) बुद्धि, (६) लक्ष्मी, (७) इलादेवी, (८) सुरादेवी, (९) रसदेवी, (१०) गन्धदेवी.

हे जम्भू ! आ प्रमाणे भगवाने दश अध्ययनोनुं निरूपण कर्तुं छे:-
जम्भू स्वामी पृच्छे छे:-

गुणाशिलं चैत्यं, श्रेणिको राजा, स्वामी समवसृतः, परिषद् निर्गता । तस्मिन् काले तस्मिन् समये श्रीदेवी सौधर्मे कल्पे श्यवतंसके विमाने सभायां सुधर्मायां श्रियि सिंहासने चतुर्भिः सामानिकसदस्यैः चतसृभिर्महत्तरिकाभिः सपरिवाराभिः यथा बहुपुत्रिका यावद् नाटयविधिमुपदर्श्य प्रतिगता । नवरं [दारक] दारिका न सन्ति । पूर्वभवपृच्छा । एवं खलु गौतम ! तस्मिन् काले

जम्बू स्वामी पूछते हैं—

हे भदन्त ! श्रमण भगवान महावीरने पुष्पचूलिका नामक चतुर्थवर्ग रूप उपाङ्गमें दस अध्ययनोंका निरूपण किया है, तो प्रथम अध्ययनका उन्होंने क्या भाव फरमाया है ।

सुधर्मा स्वामी कहते हैं—

हे जम्बू ! प्रथम अध्ययनके भावको भगवानने इस प्रकार निरूपण किया है—उस काल उस समयमें राजगृह नामक नगर था । उस नगरमें गुणशिलक नामक चैत्य था । उस नगरीके राजा श्रेणिक थे, वहाँ श्रमण भगवान महावीर पधारे । परिषद् उनके दर्शनके लिये निकली । उस काल उस समयमें श्री-देवी सौधर्म कल्पके श्री-अवतंसक विमानमें सुधर्मा सभाके अन्दर श्री-सिंहासनपर चार हजार सामानिक देवोंके साथ तथा सपरिवार चार महत्तरिकाओंके साथ बैठी हुई थी । वह श्री-देवी बहुपुत्रिका देवीके समान भगवानके लिये आई और नाटयविधि दिखाकर वापस गयी । बहुपुत्रि-

हे भदन्त ! श्रमण भगवान महावीरने पुष्पचूलिका नामके चौथा वर्ग ३५ उपाङ्गमा दस अध्ययनोंको निरूपण कर्युं छे तो प्रथम अध्ययनमा तेमण्णे क्यो भाव अताव्यो छे ?

सुधर्मा स्वामी कहे छेः—

हे जम्बू ! प्रथम अध्ययनमा भावने आवी रीते निरूपण कर्यो छेः—
ते काल ते समये राजगृह नामके नगर छतु ते नगरमा गुणशिलक नामके चैत्य छतु ते नगरीने राजा श्रेणिक छते । त्या श्रमण भगवान महावीर पधर्या परिषद् तेमना दर्शन माटे निकली ते काल ते समये श्री देवी सौधर्मकल्पमा श्री अवतंसक विमानमा सुधर्मासभानी अन्दर श्री सिंहासन पर चार हजार सामानिक देवोनी साथे तथा सपरिवार चार महत्तरिकाओंकी साथे बैठी छती ते श्रीदेवी बहुपुत्रिका देवीनी पेठे भगवानमा दर्शन माटे आवी अने नाटयविधि देखाडी पाछी आवी गथ.

तस्मिन् समये राजगृहं नगरं, गुणशिलं चैत्यं, जितशत्रू राजा । तत्र खलु राजगृहे नगरे सुदर्शना नाम गाथापतिः परिव्रसति, आढयः । तस्य खलु सुदर्शनस्य गाथापतेः प्रिया नाम भार्या अभवत् सुकुमारा । तस्य खलु सुदर्शनस्य गाथापतेः वृद्धिता प्रियाया गाथापतिकाया आत्मजा भूता नाम दारिका-अभवत् वृद्धा वृद्धकुमारी जीर्णा जीर्णकुमारी पतितपुत्रस्तनी वरपरि-

कासे विशेष केवल इतना ही है कि इसने कुमार कुमारियोंको वैकिक शक्तिसे उत्पन्न नहीं किया ।

गौतमने पूछा—

हे भद्रन्त ! यह श्री देवी पूर्व जन्ममें कौन थी ।

भगवानने कहा—

हे गौतम ! उस काल उस समयमें राजगृह नामका नगर था । उस नगरमें गुणशिलक नामक चैत्य था । उस नगरके राजाका नाम जितशत्रु था । उसमें सुदर्शन नामका गाथापति रहता था जो धनधान्या दिसे सम्पन्न था । उस गाथापतिकी पत्नीका नाम प्रिया था । जो अत्यन्त सुकुमार थी । उस सुदर्शन गाथापतिकी पुत्री तथा प्रिया गाथापत्नीकी आत्मजा- लडकीका नाम भूता था, जो कि वृद्धा और वृद्ध कुमारी (अधिक वयवाली कन्या) तथा जीर्णा और जीर्ण कुमारी थी, एवं शिथिल नितम्ब और स्तनवाली थी, तथा अविवाहित थी । उस काल उस समयमें पुरुषादानीय (पुरुषोंमें श्रेष्ठ) नौ हाथके अवगाहनावाले

गृहपुत्रिकाथी विशेष मात्र ये हतु डे आणे कुमार कुमारियोंने वैकिक शक्तिथी उत्पन्न करी नडेता

गौतमे पूछ्यु.—हे भद्रन्त ! आ श्रीदेवी पूर्वजन्ममां डेणु हती ?

भगवाने ड्यु.—हे गौतम ! ते क्षण ते समये राजगृह नामनु नगर हतुं

ते नगरमा गुणशिलक नामनु चैत्य हतुं ते नगरमा राजानु नाम जितशत्रु हतुं, ते राजगृह नाममा सुदर्शन नामने गाथापति भेटेता हतेता ने धनधान्य आदिथी सम्पन्न हतेता, ते गाथापतिनी पत्नीनु नाम प्रिया हतुं, ने अत्यन्त सुकुमार हती ते सुदर्शन गाथापतिनी पुत्री तथा प्रिया गाथापत्नीनी आत्मजा (लडकी)नु नाम भूता हतुं डे ने वृद्धा अने वृद्धकुमारी (वधारे वयवाणी कन्या) तथा शिथिल अने शिथिलकुमारी हती अथेडे डे शिथिल नितम्ब अने स्तनवाणी तथा अविवाहित हती ते क्षण ते समये त्या पुरुषादानीय (पुरुषोंमा श्रेष्ठ) नवहाथनी अवगाहनावाणी

वर्जिता चापि अभवत् । तस्मिन् काले तस्मिन् समये पार्श्वोर्वहनं पुरुषा-
दानीयो यावद् नवरत्निको वर्णकः स एव, समवसरणं, परिषद् निर्गता ।
ततः खलु सा भूता दारिका अस्याः कथाया लब्धार्था सती हृष्टतुष्टा०
यत्रैव अम्बापितरौ तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य एवमवादीत्-एवं खलु
अम्बतातौ ! पार्श्वोर्वहनं पुरुषादानीयः पूर्वानुपूर्वी चरन् यावद् देवगणपरि-
वृतो विहरति, तद् इच्छामि खलु अम्बातातौ ! युवाभ्यामभ्यनुज्ञाता सती
पार्श्वस्याऽर्हतः पुरुषादानीयस्य पादवन्दनाय गन्तुम्, यथासुखं देवानुप्रिये !
मा प्रतिबन्धम् । ततः खलु सा भूता दारिका स्नाता यावत् सर्वालङ्कार-
विभूषितशरीरा चेटीचक्रवालपरिकीर्णा स्वस्माद् गृहात् प्रतिनिष्क्रामति,

अर्हत पार्श्व प्रभु उस नगरीमें पधारे । भगवानके दर्शनके लिये परिषद्
अपने २ घरसे निकली । उसके बाद वह भूता दारिका भगवान पार्श्व
प्रभुके आनेका वृत्तान्त सुनकर हृष्ट तुष्ट हृदयसे माता पिताके समीप
आयी, और उनसे इस प्रकार कहा है माता पिता ! पुरुषादानीय भगवान
पार्श्व प्रभु तीर्थकरपरम्परासे विचरते हुए देवगणोंसे परिवृत हो इस
राजगृह नगरमें पधारे हैं, इस लिये मेरी इच्छा है कि पुरुषादानीय
उन पार्श्व प्रभुकी चरण वन्दनाके लिये जाऊँ । पुत्रीकी ऐसी इच्छा
जानकर उन्होंने कहा-जाओ बेटी ! जिस प्रकार तुम्हें सुख हो वैसा
करो । प्रमाद मत करो ।

उसके बाद वह भूता दारिका स्नान कर सभी प्रकारोंके अलङ्कारोंसे
अपने को अलङ्कृतकर दासियोंसे परिवेष्टित हो अपने घरसे निकलकर

अर्हत पार्श्व प्रभु ते नगरीमा पधायी लगवानना दर्शन करवा माटे परिषद्
पोतपोताना घरमाथी नीकणी त्पार पछी ते भूता दारिका लगवन पार्श्व प्रभुना
आवधानु वृत्तान्त सांभणीने हृष्ट तुष्ट हृदयथी मातापितानी पसे आवी अने
तेमने आ प्रकारे कहु. —इ मातापिता ! पुरुषादानीय भगवान पार्श्व प्रभु तीर्थ कर
परंपराथी विचरता देवगाणेशी परिवृत आ राजगृह नगरमा पधायी छे आ माटे
भारी छिच्छा छे के पुरुषादानीय ते प्रभुनी अरणु वन्दनाने माटे जउ पुत्रीनी अथी
छिच्छा जलणीने तेओओ कहु — जओ हीकरी ! ते प्रकारे तेमने सुभ थाय तेम करे
केछ प्रकारने प्रमाद न करे

त्पार पछी ते भूता दारिका स्नान करी अथा प्रकारे अवकाशे (धरेणु) थी
विभूषित थछ दासीओथी परिवेष्टित (धरायेली) थछने पोताना धरथी नीकणी आहारं

प्रतिनिष्क्रम्य यत्रैव बाह्योपस्थानगत्या तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य धार्मिकं यानप्रवरं दृष्ट्वा । ततः खलु सा भूता दारिका निजपरिवारपरिवृता राजगृहं नगरं मध्यमध्येन निर्गच्छति, निर्गत्य यत्रैव गुणशिलं चैत्य तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य लज्जादीन् तीर्थकरातिशयान् पश्यति । धार्मिकात् यानप्रवरात् प्रत्यवरुद्य चेटीचक्रावालपरिकीर्णा यत्रैव पार्श्वोऽर्हन् पुरुपादानीय-स्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य त्रिकृतवो यावत् पर्युपास्ते । ततः खलु पार्श्वोऽर्हन् पुरुपादानीयो भूताय दारिकायै तस्यां महातिमहत्यां० धर्मकथा । धर्मं श्रुत्वा निगम्य हृष्टतृष्टा० वन्दते, वन्दित्वा एयमवादीत्—श्रद्धधामि खलु भदन्त ! निर्ग्रन्थं प्रवचनं यावद् अभ्युत्तिष्ठामि खलु भदन्त ! निर्ग्रन्थं

बाह्य उपवेशन शालामें आयी । वहाँ अपने धार्मिक रथपर चढ़ी । उसके बाद वह भूता दारिका अपनी दासियोंसे परिवेष्टित हो राजगृह नगरके मध्यसे होती हुई गुणशिलक चैत्यमें पहुँची । वहाँ उसने तीर्थकरोंसे परिवेष्टित हो पुरुपादानीय भगवान् पार्श्व प्रभुके पास गयी और तीन बार प्रदक्षिणापूर्वक वन्दन नमस्कार करके उपासना करने लगी । उसके बाद पुरुपादानीय अर्हत् भगवान् पार्श्व प्रभुने उस महती सभामें भूता दारिकाको धर्मोपदेश किया । अनन्तर भूता दारिका धर्म सुनकर उसे हृदयमें अवधारण का हृष्टतृष्ट हृदय हो भगवान्को वन्दन और नमस्कार किया । पश्चात् उसने इस प्रकार कहा—हे भगवन् ! आपने जिस निर्ग्रन्थ प्रवचनका निरूपण किया है उस निर्ग्रन्थ प्रवचन पर मैं श्रद्धा रखती हूँ और उसके आराधनके लिये मैं उद्यत हूँ । हे भदन्त !

भेदवानी शास्त्रमा अवी त्या पोताना धार्मिक न्थ उपर थडी त्थार पछी ते भूता दारिका पोतानी दासीओथी परिवेष्टित थड रत्नथड नग-नी वच्चे थडने गुणशिलक चैत्यमा पंडोच्यी त्या तेणे तीर्थ कराना अतिशयक छत्र आदि जेथे त्या पोताना धार्मिक रथमाथी नीचे उतरी. पछा पोतानी दासीओथी घेरथने पुरुपादानीय भगवान् पार्श्व प्रभुनी पसे गथ अने त्रयुवार प्रदक्षिणापूर्वक वन्दन नमस्कार करी उपासना करवा लागी त्थार पछी पुरुपादानीय अर्हत् भगवान् पार्श्व प्रभुओ ते मोठी सभामा भूता दारिकाने धर्मोपदेश कर्यो पछी भूता दारिकाने धर्मनु श्रवण-करी तेने हृदयमा अवधारण करी हृष्ट तृष्ट हृदयथी भगवान्ने वन्दन तथा नमस्कार कर्या पछी आ प्रशरे कथुः—हे भगवन् ! जे प्रशरे आपे निर्ग्रन्थ प्रवचननु निरूपण कर्यु छ ते निर्ग्रन्थ प्रवचनमा तु श्रद्धा राखु छु अने तेना आराधन माटे तु यत्नशील छु.

प्रवचनम्, तद् यथैतद् यूयं वदथ; यद् त्वरं देवानुप्रिय ! अम्वापितरौ
 आपृच्छामि । ततः खलु अहम् यावत् प्रव्रजितुम् । यथासुखं देवानुप्रिये ।
 ततः खलु सा भूता दारिका तदेव धार्मिकं यानप्रवरं यावद् दूरोहति,
 दूरुह्य यत्रैव राजगृहं नगरं तत्रैवोपागता, राजगृहं नगरं मध्यमध्येन यत्रैव
 स्वं गृहं तत्रैवोपागता, रथात् प्रत्यवरुह्य यत्रैव अम्वापितरौ तत्रैवोपागता,
 करतल० यथा जामालिः आपृच्छति । यथासुखं देवानुप्रिये ! ततः स
 सुदर्शनेो गार्थापतिः त्रिपुलमशनम् ४ उपस्कारयति, मित्रज्ञाति० आमन्त्रयति,
 आमन्त्र्य यावत् जमितभुत्तयुत्तरकाले शुचिभूतो निष्क्रमणमाज्ञाप्य कौटुम्बिकः
 पुरुषान् शब्दयति, शब्दयित्वा एवमवादीत्—क्षिप्रमेव भो देवानुप्रियाः !

मैं अपने माता पिताको पूछकर आपके समीप प्रव्रज्या लेना चाहती हूँ ।
 भगवानने कहा—हे देवानुप्रिये ! जिस प्रकार तुझे सुख हो
 वैसा करो ।

उसके बाद वह भूता दारिका उसी धार्मिक रथपर चढ़ी और
 वहाँसे राजगृहकी ओर आयी । राजगृह नगरमें जहाँ उसका घर था
 वहाँ गयी । अपने घर जाकर रथसे उतरी, अनन्तर अपने माता
 पिताके समीप पहुँची । जमालीके तरह हाथ जोड़कर अपने माता
 पितासे प्रव्रज्याके लिये आज्ञा माँगी । उन लोगोंने आज्ञा दी हे पुत्री !
 जैसी तुम्हारी इच्छा हो ।

उसके बाद उस सुदर्शन गाथापतिने त्रिपुल अशन पान खाद्य
 इन चारो प्रकारके आहारको तैयार करवाया, तथा मित्र ज्ञाति स्वजन
 बन्धुओंको निमन्त्रित किया और आदर स्तकार पूर्वक भोजन कराया ।
 खाने पीनेके बाद पवित्र हो कौटुम्बिक (आज्ञाकारी) पुरुषोंको

हे लहन्त । हे भारा मातापिताने पूछीने आनी पासे प्रव्रज्या लेवा याहु छु.

भगवाने कहु —हे देवानुप्रिये । जे प्रकारे तने शुभ थाय तेम कर त्पार पछी
 ते लूनादारिका तेज धार्मिक रथ उपर चडी अने त्यारथी राजगृह तरङ्ग आवी राजगृह
 नगरमा न्या तेनु घर इतु त्या गर्भ पोताने घेर न्छ रथमाथी उतरी पछी पोतानां
 मातापितानी पासे पंढोथी न मादीनी पेठे डाय लेडीने पोताना मातापिता पासे प्रव्रज्या
 लेवा माटे आज्ञा मागी तेओओ आज्ञा आपी —' हे पुत्री ! जेवी तरी छिछा '

त्यार पछी ते सुदर्शन गाथापतिओ विपुल (भूग) अशनपान—भाद्यस्वाद्य ओवा
 यारै प्रकारेना आडार तैयार कराओया तथा मित्र, ज्ञाति स्वजन बन्धुओने निमन्त्रण
 आप्यु अने आदर स्तकारपूर्वके भोजन कराओयु. भावापीवानु थछ रह्या पछी पवित्र
 थछ कौटुम्बिक (आज्ञाकारी) पुरुषोने ओलावी दीक्षानी तैयारी करवानी आज्ञा देता तेओने

भूतादारिकायै पुरुषमगस्रवाहिनीं शिविकामुस्थापयत, उपस्थाप्य० प्रत्यर्पयत !
ततः खलु ते यावत् प्रत्यर्पयन्ति ॥ १ ॥

टीका—'जडण भंने' इत्यादि व्याख्या मृगमा ॥ १ ॥

मूत्रम्—तएणं से सुदंसणे गाहावई भूयं दारियं ण्हायं
जाव विभूसियसरीरं पुरिससहस्सवाहिणिं सीयं दुरुहइ, दुरुहिता
मित्तनाइ० जाव रवेणं रायगिहं नयरं मज्झं मज्झेण जेणेव
गुणसिलए चेइए तेणेव उवागए, छत्ताईए तित्थयराइसए
पासइ, पासित्ता सीयं ठावेइ, ठावित्ता भूयं दारियं सीयाओ
पच्चोरुहेइ । तएणं नं भूयं दारियं अम्मापियरो पुरओ काउं
जेणेव पासे अरहा पुरिसादाणीए-तेणेव उवगया, तिखुत्तो
वंदंति नमंसंति, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी-एवं खलु
देवाणुप्पिया ! भूया दारिया अम्हं एगा धूया इट्ठा०, एस णं
देवाणुप्पिया ! संसारभउव्विग्गा भीया जाव देवाणुप्पियाणं
अंतिए मुंडा जाव पव्वयइ । तं एयं णं देवाणुप्पिया ! सिस्सि-
णिभिव्वखं दलयामो, पडिच्छंतु णं देवाणुप्पिया ! सिस्सिणी-
भिव्वखं । अहासुहं देवाणुप्पिए० । तएणं सा भूया दारिया
पासेणं अरहया० एवं वुत्ता समणी हट्टुत्ता० उत्तरपुरत्थिमं

बुलवाकर दीक्षाकी तैयारी की आज्ञा देते हुए इस प्रकार कहा—हे
देवानुप्रियो ! तुम लोग हजार पुरुषोंसे उठायी जानेवाली शिविकाको
भूता दारिकाके लिये तैयार करो और ले आओ । उसके बाद वे
लोग शिविकाको सजाकर ले आये ॥ १ ॥

०। प्रक्षरे श्लुः—हे देवानुप्रियो । तमे लोक्रे हन्तर पुरुषोथी उपाशय मेवी शिविका
(पावणी) ने भूता दारिका माटे तैयार करे अने लक्ष आवे त्पार पछी ते लोके ते
पावणीने सनवीने लाव्या, (१),

सयमेव आभरणमल्लालंकारं ओमुयइ, जहा देवाणंदा पुष्फ-
चूलाणं अंतिए जाव गुत्तवंभयारिणी तएणं सा भूया अज्जा
अण्णया कयाइं सरीरवाओसिया जाया यावि होत्था हत्थे
धोवइ, पाये धोवइ, एवं सीसं धोवइ, मुहं धोवइ, थणगंतराइं
धोवइ, कक्खतराइं धोवइ, गुज्झंतराइं धोवइ, जत्थ जत्थ वि
य णं ठाणं वा सिज्जं वा निसीहियं वा चेएइ, तत्थ तत्थ
वि य णं पुवामेव पाणएणं अब्भुक्खेइ । ताओ पच्छा ठाणं
वा सिज्जं वा निसीहियं वा चेएइ । तएणं ताओ पुष्फचूलाओ
अज्जाओ भूयं अज्जं एवं वयासी अम्हे णं देवाणुप्पिए !
समणीओ निग्गंथीओ इरियासमियाओ जाव गुत्तवंभयारिणीओ,
नो खलु कप्पइ अम्हं सरीरवाओसियाणं होत्तए, तुमं च णं
देवाणुप्पिए ! सरीरवाओसिया अभिक्खणं २ हत्थे धोवसि जाव
निसीहियं चेएसि, तं णं तुमं देवाणुप्पिए ! एयस्स ठाणस्स
आलोएहि त्ति, सेसं जहा सुभद्दाए जाव पाडियकं उवस्सयं
उवसंपज्जिता णं विहरइ । तएणं सा भूया अज्जा अणोहट्टिया
अणिवारिया सच्छंदमई अभिक्खणं २ हत्थे धोवइ जाव चेएइ ।
तएणं सा भूया अज्जा बहूहिं चउत्थल्लट्टुं बहूइं वासाइं
सामण्णपरियागं पाउणित्ता तस्स ठाणस्स अणालोइयपडिकंता
कालमासे कालं किच्चा सोहम्मे कप्पे सिरिवडिसए विमाणे
उववायसभाए देवसगणिज्जंसि जावतोगाहणाए सिरिदेवित्ताए
उववण्णा पंचविहाए पज्जत्तीए भासामणपज्जत्तीए पज्जत्ता । एवं

खलु गोयमा ! सिरीए देवीए एसा दिव्वा देविड्डी लद्धा पत्ता ।
ठिई एगं पलिओवसं । सिरी णं भंते ! देवी जाव कहिं
गच्छिहिइ ? महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ । एवं खलु जंबू !
निक्खेवओ । एवं सेसाणं वि नवण्हं भाणियव्वं, सरिसनामा
विमाणा, सोहम्म्ये कप्पे, पुव्वभवे नयरचेइयपियमाईणं अप्पणो
य नासादी जहा संगहणीए; सद्वा पासस्स अंतिए निक्खंता ।
ताओ पुप्फचूलाणं सिस्सिणियाओ सरीरवाओसियाओ सद्वाओ
अगंतरं चइं चइत्ता महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ ॥ २ ॥

॥ पुष्पचुलिया णामं चतुत्थवग्गो सम्मत्तो ॥ ४ ॥

छाया-ततः खलु स सुदर्शनो गाथापतिः भूतां दारिकां स्नातां यावद्
विभूषितनगरीं पुरुषसहस्रवाहिनीं शिविकां दूराद्दृश्यति, दृग्गोच्य मित्रज्ञातिं
यावद् रवेण राजगृहनगरं मध्यमध्येन तत्रैव गुणशिलकं चैत्यं तत्रैवोपागतः,
छत्रादीन् तीर्थकरातिगयान् पश्यति, दृष्ट्वा शिविकां स्थापयति, स्थापयित्वा
भूतां दारिकां शिविकातः प्रत्यवरोहयति । ततः खलु तां भूतां दारिका-

‘ तएणं से ’ इत्यादि—

उसके बाद उस सुदर्शन गाथापतिने स्नान की हुई तथा सभी
अलङ्कारोंसे अलङ्कृत उस भूता दारिकाको शिविकामें बैठाया । अनन्तर
वह अपने सभी मित्र ज्ञाति स्वजन वन्धुओंके साथ भेरी आदि
वाजोंकी ध्वनिसं दिशाको सुगन्धित करना हुआ राजगृह नगरीके
बीचोबीचसे होता हुआ गुणशिलक चैत्यके पास पहुँचा । वहाँ उसने
तीर्थकरोंके अतिशयको देखा और शिविकाको ठहराया । तथा भूता

‘ तएणं से ’ इत्यादि.

त्यत्र पछी ते सुदर्शन गाथापतिने भूता दारिका के से स्नान करीने तथा तन्नाम
अलङ्कारोंसे विभूषित हुनी तेने ते शिविकामें बैठाया । पछी ते पोताना सवे मित्र,
ज्ञाति, स्वजन वन्धुओंकी साथे भेरी, शरणाष्ट आदी वाजोंकी ध्वनिसे दिशामें
सुगन्धित करता राजगृह नगरीनी वन्धुवन्धु धरने आवता गुणशिलक चैत्यनी पास
पहुँचा । त्यां ते पदपीने थोकादी तथा भूता दारिका शिविकामें बैठी तारी त्यां

मन्त्रापितरौ पुरतः कृत्वा यत्रैव पार्श्वोऽर्हन् पुरुषादानीयस्तत्रैवोपागतौ,
त्रिःकृत्वो वन्देते नमस्यतः, वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादिष्टाम्—एवं खलु
देवानुप्रियाः ! भूता दारिका अस्माकमेका दुहिता इष्टा०, एषा खलु देवानु-
प्रियाः । संसारभयोद्विगा भीता यावद् देवानुप्रियाणामन्तिके मुण्डा यावत्
प्रव्रजति, तद् एतां खलु देवानुप्रियाः ! शिष्याभिक्षां दत्त्वा, प्रतिच्छन्तु
खलु देवानुप्रियाः ! शिष्याभिक्षाम् । यथासुखं देवानुप्रियाः ! ततः खलु
सा भूता दारिका पार्श्वनाहता० एवमुक्ता सती हृष्टा उत्तरपौरस्त्यां स्वयमेव

दारिका शिविकासे उतरी । उसके बाद माता पिता भूता दारिकाको
आगे कर जहाँ पर पुरुषादानीय अर्हत् पार्श्व प्रभु थे वहाँ आये, और
तीन बार आदक्षिण—प्रदक्षिण करके वन्दन और नमस्कार किया
अनन्तर उन्होंने कहा—हे देवानुप्रिय ! यह भूता दारिका हमारी एका-
एक (इकलौती) पुत्री है, यह हमलोगोंकी अत्यन्त प्यारी है । यह
दारिका संसारके भयसे अत्यन्त उद्विग्न है, तथा इसको जन्म और
मरणका भय लगा हुआ है, इसलिये यह आपके समीप मुण्डित
होकर प्रव्रजित होना चाहती है । हे भदन्त ! इसलिये हम आपको
यह शिष्यारूप भिक्षा देते हैं । हे देवानुप्रिय ! इस शिष्यारूप
भिक्षाको आप स्वीकार करे ।

भगवानने कहा—हे देवानुप्रिये ! जैसी तुम्हारी इच्छा हो ।

उसके पश्चात् अर्हत् पार्श्व प्रभुके इस प्रकार कहने पर वह
भूता दारिका हृष्टतुष्टहृदयसे ईशान कोणमें जाकर अपने ही हाथोंसे

पछी मातापिता भूता दारिकासे आगत करीने यात्रा न्याः पुरुष दानीय अर्हत् पार्श्व
प्रभु उतरी त्या आग्या अने त्रयुवार आदक्षिणु प्रदक्षिणु करीन वन्दन तथा नमस्कार
कर्या पछी तेगोअ कहु — हे देवानुप्रिय ! आ भूता दारिका अमारी अेकनी अेक पुत्री छे
ते अमनं गहुज वडाडी छे आ दारिका संसारना लयथी धलीज उद्विग्न छे अने
तेने जन्म तथा मरणुने लय लाग्या करे छे ते भाटे ते आपनी पासे मुडित थधने
प्रव्रजित थवा आडे छे हे भदन्त ! ते भाटे अमे आपने आ शिष्यारूप भिक्षा दथअ
छीअे हे देवानुप्रिय ! आ शिष्यारूप भिक्षाने आप स्वीकार करे

भगवाने कहुः—हे देवानुप्रिये ! जैसी तमारी इच्छा

त्यार पछी अर्हत् पार्श्व प्रभुना अे प्रकारे कहेवाथी ते भूता दारिका हृष्ट तुष्ट
हृदयथी-ईशान कोणमा जधने पोताना ज डथेथी आलूषथु आधने पोताना शरीर

आभरणमाल्यालङ्कारमवमुञ्चति, यथा देवानन्दा पुष्पचूलानामन्तिके यावद्
गुप्तब्रह्मचारिणी । ततः खलु सा भूता आर्या अन्यदा कदाचित् शरीरवा-
कुशिका जाता चापि अमवत् । अभीक्षणमभीक्षणं हस्तौ धावति, पादौ धावति,
एवं शीर्षं धावति, मुखं धावति, स्तनान्तराणि कक्षान्तराणि धावति,
गुह्यान्तराणि धावति, यत्र यत्रापि च खलु स्थानं वा शय्यां वा नैपेथिकीं
(स्वाध्यायभूमिं) चेतयते (करोति) तत्र तत्रापि च खलु पूर्वमेव पानीयेन
अभ्युक्षति । ततः पश्चात् स्थानं वा शय्यां वा नैपेथिकीं वा चेतयते ।
ततः खलु ताः पुष्पचूला आर्या भूतामार्यामेवमवादिषुः-वयं खलु
देवानुप्रिये ! श्रमण्यो निर्ग्रन्थः, ईर्यासमिता यावद् गुप्तब्रह्मचारिण्यः, नो

आभूषण आदिको अपने शरीरसे उतारती है । बादमें वह देवान्दाके
समान पुष्पचूला आर्याके समीप प्रव्रजित हो यावत् गुप्त ब्रह्मचारिणी
होती है । उसके बाद वह भूता आर्या किसी समय शरीर वाकु-
शिका हो गयी, जिससे वह अपने हाथोंको, पैरोंको, गिरको, मुँहको
तथा स्तनके अन्तर भागोंको, एवं कक्षके अन्तरको और गुह्यके
अन्तरको बार बार धोने लगी । जहाँ कहीं भी सोनेके लिये, बैठनेके
लिये, स्वाध्याय करनेके लिये उपयुक्त स्थान निश्चित करती थी उसे
पहलेसे ही पानीसे छिडकती थी, बाद वहाँ बैठती थी, सोती थी,
स्वाध्याय करती थी । अनन्तर उस भूता आर्या के इस प्रकारके
व्यवहारको देखकर पुष्पचूला आर्याने उससे इस प्रकार कहा-हे
देवानुप्रिये ! हमलोग ईर्यासमिति आदि समितियोंसे युक्त यावत्
गुप्तब्रह्मचारिणी श्रमणी निर्ग्रन्थी हैं । हमें शरीर वाकुशिका होना

उपरथी उतारे छे पछी ते देवानन्दानी पेठे पुष्पचूला आर्यानी पासे प्रव्रजित थछ
गुप्तब्रह्मचारिणी जने छे त्यार पछी ते भूता आर्या काछ ओक वणते शरीर वाकुशिका
थछ गछ न्थी ते पोताना हाथ, पग, माथु, मो तथा स्तनना अदरना लागोने अने
काभना अदरना लागो तथा गुह्यनी अदरना भागो बारवार धोवा लागी न्यां त्या
पछे गुवा माटे, भेसवा माटे स्वाध्याय करवा माटे उपयुक्त स्थानने निश्चय करती
हुती ते पडेला न त्या पाणी छोटती हुती, पछी त्या भेसती हुती, सूती हुती,
स्वाध्याय करती हुती पछी ते भूता आर्याने आ प्रकारने व्यवहार भेधने पुष्पचूला
आर्याणे तेने आ प्रकारे कछुः—हे देवानुप्रिये ! आपणे ईर्यासमिति आदि समिति-
ओथी युक्त अने गुप्तब्रह्मचारिणी श्रमणी निर्ग्रन्थी छीओ आपणुने शरीरे वाकुशिका

खलु कल्पते अस्माकं शरीरवाकुशिकाः खलु भवितुम्, त्वं च खलु देवानुप्रिये ! शरीरवाकुशिकाः अभीक्षणमभीक्षणं हस्तौ धावसि यावद् नैषेविकीं चेतयसि, तत् खलु त्वं देवानुप्रिये ! एतस्य स्थानस्य आलोचयेति, शेषं यथा सुभद्रायाः यावत् प्रत्येकमुपाश्रयमुपसंपद्य खलु विहरति । ततः खलु सा भूता आर्या अनपघट्टिका अनिवारिता स्वच्छन्दमतिः अभीक्षणमभीक्षणं हस्तौ धावति यावत् चेतयते । ततः खलु सा भूता आर्या बहुभिः चतुर्थं पष्ठाष्टमं वहूनि वर्षाणि श्रामण्यपर्यायं पालयित्वा तस्य स्थानस्य अनालोचितप्रतिक्रान्ता कालमासे कालं कृत्वा सौधर्मे कल्पे श्यवतंसके विमाने उपपातसभायां देवशयनीये यावत् तद्गाहनया श्रीदेवी-तयोपपन्ना पञ्चविधया पर्याप्त्या भापामनःपर्याप्त्या पर्याप्ता । एवं खलु

उचित नहीं है । हे देवानुप्रिये ! तुम शरीर वाकुशिका हो गयी हो, उससे सर्वदा-बार २ हाथ पैर आदि अंगोको धोतो हो, बैठने सोने तथा स्वाध्याय करनेकी जगहको पानीसे छिडका करती हो । इसलिये हे देवानुप्रिये ! तुम इस पाप स्थानकी आलोचना करो । उसके बाद पुष्पचूलाकी बात न मानकर वह भूता आर्या सुभद्रा आर्याके समान अकेली ही अलग उपाश्रयमें उतरी और पूर्ववत् क्रिया करती हुई स्वतन्त्र होकर रहने लगी । उसके बाद वह भूता आर्या बहुतसे चतुर्थ षष्ठ अष्टम आदि तपसे आत्माको भावित करती हुई अपने पापस्थानोंकी आलोचना और प्रतिक्रमण क्रियें बिना काल अवसरमें कालकर सौधर्म कल्पके श्री-अवतंसक विमानमें उपपात सभाके अन्दर देव-शयनीय शय्यामें उस देव सम्बन्धी

थवु उचित नथी हे देवानुप्रिये । तु शरीरवाकुशिका थय गम छे तेथी डभेशा साथ, पग आदि अ गाने बार बार धुमे छे भेसवा, सूवा तथा स्वाध्याय करवानी जगा उपर पाणी छाटे छे भाटे हे देवानुप्रिये । तु आ पापस्थाननी आलोचना कर त्यार पछी ते पुष्पचूलानी वात न मानने ते भूता आर्या सुभद्रा आर्यानी पेठे अेकली ज बुदा उपाश्रयमा उतरी अने पूर्ववत् वर्तती स्वतन्त्र थयने रडेवा लागी त्यार पछी ते भूता आर्या धयां चतुर्थ, षष्ठ अष्टम आदि तपोथी आत्माने भावित करती अने धया वर्षा सुधी दीक्षा पर्यायनु पालन करती तेणे पोतानां पापस्थानोनी आलोचना अने प्रतिक्रमण क्रिया वगर पछी काण अवसरमा काण करीने सौधर्म कल्पना श्री अवतंसक विमानमा उपपात सभानी अंदर देवशयनीय शय्यामां ते देव सम्बन्धी अव-

गौतम ! श्रिया देव्या एषा दिव्या देवऋद्धिर्लब्धा प्राप्ताः स्थितिरेकं पल्यो-
पमम् । श्रीः खलु भदन्त ! देवी यावत् क्व गमिष्यति ? महाविदेहे वर्षे
सेत्स्यति । एवं खलु जम्बूः ! निक्षेपकः । एवं शेषाणामपि नवानां भणितव्यं
सदृशानामानि विमानानि, सौधर्मे कल्पे, पूर्वभवे नगरचैत्यपित्रादीनाम्

अवगाहनासे श्री देवी पने उत्पन्न हुई और भाषापर्यासि मनःपर्यासि
आदि पाँच पर्यासियोंसे युक्त हो गयी । देवगतिमें भाषा और मन-
पर्यासि एक साथ बाधनेके कारण पाँच पर्यासि कही गयी है ।

हे गौतम ! श्री-देवीने इस प्रकार इस दिव्य देवऋद्धिको
पाया है । देवलोकमें इसकी स्थिति एक पल्योपमकी है ।

गौतम स्वामीने पूछा—

हे भदन्त । यह श्री-देवी यहाँसे च्यवकर कहाँ जायगा ।

भगवान कहेते हैं—

हे गौतम ! वह महाविदेह क्षेत्रमें जन्म लेकर सिद्ध होगी
और सब दुःखोका अन्त करेगी ।

सुधर्मा स्वामी कहते हैं—

हे जम्बू ! श्रमण भगवान महावीरने पुष्पचूलिकाके प्रथम
अध्ययनका भाव उक्त प्रकार निरूपित किया है ।

गौतम ! श्री-देवी पण्डिता जन्म लीये अने भाषापर्याप्त, मनःपर्याप्त आदि
पाँच पर्याप्तियोंकी युक्त यह गौतम देवगतिमा भाषा अने मनः पर्याप्त अर्थ साथे
भाववाना करले पाँच पर्याप्त कही छे

हे गौतम ! श्री-देवीके आ प्रकारे आ दिव्य देवऋद्धिने भेगवी छे, देवलोकां
तेनी स्थिति अर्थ पल्योपमना छे,

गौतम स्वामी पूछे छे:-

हे भदन्त ! आ श्री-देवी अर्द्धीथी च्यवीने क्या जशे

भगवान कहे छे:-

हे गौतम ! ते महाविदेह क्षेत्रमा जन्म लई सिद्ध थशे अने अथां दुःखने
अत लावशे

सुधर्मा स्वामी कहे छे:-

हे जम्बू ! श्रमण भगवान महावीरे पुष्पचूलिकाना प्रथम अध्ययनने लाव
उपर प्रमाणे निरूपित किये छे,

आत्मनश्च नामादिर्यथा संग्रहण्याम्, सर्वाः पार्श्वस्यान्तिके निष्क्रान्ताः । ताः पुष्पचूलानां शिष्याः शरीरवाकुशिकाः सर्वा अनन्तरं चयं च्युत्वा महाविदेहे वर्षे सेत्स्यन्ति ॥ २ ॥

टीका—‘तएणं से सुदंसणे’ इत्यादि । ‘अभुक्खइ’=अभ्युक्षति=अभिपिञ्चति । ‘चेएइ’ चेतयति=उपविशति । शेषं स्पष्टम् ॥

पुष्पचूलिकाख्यश्चतुर्थो वर्गः समाप्तः ॥ ४ ॥

इसी प्रकार शेष नौ अध्ययनोंका भी भाव जानना चाहिये । इन नवोंके विमानोंका नाम इनके समान है । सौधर्म कल्पमें ये सब देवीपनमें उत्पन्न हुई । इनके पूर्वभवमें नगर उद्यान पिता आदि तथा इनका अपना नाम आदि संग्रहणीगाथामें आये हुए नामके समान जानना चाहिये । ये सभी पार्श्व प्रभुके समीपमें प्रव्रजित होकर पुष्पचूलाकी शिष्या हुई तथा सभी शरीरवाकुशिका हो गयीं । और ये सभी देवलोकसे च्यवकर महाविदेह क्षेत्रमें जन्म लेकर सिद्ध होगी । और सब दुःखोंका अन्त करेंगी ॥ २ ॥

पुष्पचूलिका नामका चतुर्थ वर्ग समाप्त हुआ

आ प्रकारे शेष (भाकीना) नव अध्ययनोनो पणु वाव ज्ञाणी देवे जेष्ठमे आ नवमा विमानना नाम तेना नामना जेवा ज छे सौधर्म कल्पमां जे अधीनो देवी-पणुमां जन्म थये तेमना पूर्वभवमा नगर, उद्यान, पिता आदि तथा तेनां पितानां नाम आदि संग्रहणी गाथामा आवेला नामना जेवा ज्ञायवा आ अधी पार्श्व प्रभुनी पासो प्रव्रजित थछ अने ते अधी पुष्पचूलानी शिष्याज्यो थछ हुती तथा अधी शरीर-वाकुशिका थछ गछ हुती ते पछी अधी देवदोकभाथी व्यवीने महाविदेह क्षेत्रमां जन्म लछ सिद्ध थये अने सर्वे दुःखनो अत लावथे. (२)

पुष्पचूलिका नामनो ज्योथो वर्ग समाप्त.

वृष्णिदशा ५

मूलम्—जङ्गणं भंते ! उक्खेवओ० उवंग्गाणं चउत्थस्स पुप्फचुलाणं अयमट्ठे पण्णत्ते, पंचमस्स णं भंते ! वग्गस्स उवंग्गाणं वह्निदसाणं भगवया जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते ? एवं खल्लु जंबू ! समणेणं भगवया मंहावीरेणं जाव दुवालस अज्झयणा पण्णत्ता, तं जहा—

“ निसडे १ मायनि २ वह ३ वहे ४, पगता ५ जुत्ती ६ दसरहे ७ दढरहे ८ य । महाधणू ९ सत्तधणू १०, दसधणू ११ नामे सयधणु १२ य ॥ १ ॥

जङ्गणं भंते ! समणेणं जाव दुवालस्स अज्झयणा पण्णत्ता, पढमस्स णं भंते ! उक्खेवओ । एवं खल्लु जंबू ! तेणं कालेणं २ वारवई नामं नयरी होत्था दुवालसजोयणायामा जाव पच्चक्खं देवलोयभूया पासादीया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा । तीसे णं वारवईए नयरीए वहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए, एत्थ णं रेवए नामं पवए होत्था, तुंगे गगण-तलमणुविहंतसिहरे नाणाविहरूक्खगुच्छगुल्मलतावल्लीपरिगताभिरामे हंस-मिय-मयूर-कोंच-सारस-चक्रवाग-मयणसाला-कोइलकु-लोववेए अणेग-तडकडगवियरओज्झरपवायपुब्भारसिहरपउरे अ-च्छरगणदेवसंगचारणविज्जाहरसिहुणसंनिविद्धे निच्चच्छणए दसा-खवीएपुरिसतेलोकवल्लयगणं सोमे सुभए पियदंसणे सुरूवे पासाईए जाव पडिरूवे । तत्थ णं रेवयगस्स पवयस्स अदूर-सामंते एत्थ णं नंदणवणे नामं उज्जाणे होत्था, सबोउयपुप्फ

जाव दरिसणिजे । तत्थणं नंदणवणे उज्जाणे सुरप्पियस्स
जक्खस्स जक्खाययणे होत्था चिराइए जाव बहुजणो आगम्म
अच्चेइ सुरप्पियं जक्खाययणं । से णं सुरप्पिए जक्खाययणे
एगेणं महया वणसंडेणं सुव्वओ समंत्ता संपरिक्खित्ते जहा
पुण्णभदे जाव सिलावट्टए । तत्थणं वारवईए नयरीए कण्हे
नामं वासुदेवे राया होत्था जाव पसासेमाणे विहरइ । से णं
तत्थ समुद्धिजयपामोक्खाणं दसण्हं दसाराणं, बलदेवपामो-
क्खाणं पंचण्हं महावीराणं, उग्गसेणपामोक्खाणं सोलसण्हं
रायसहस्साणं पज्जुण्णपामोक्खाणं अद्धुट्ठाणं कुमारकोडीणं,
संबपामोक्खाणं सट्टीए दुइंदसाहस्सीणं, वीरसेणपामोक्खाणं
एक्कवीसीए वीरसाहस्सीणं, महासेणपामोक्खाणं छप्पन्नाए बल-
वगसाहस्सीणं रुप्पिणिपामोक्खाणं सोलसण्हं देवीसाहस्सीणं,
अणंगसेणापामोक्खाणं अणेगाणं गणियासाहस्सीणं, अण्णेसिं
च बहूणं राईसर जाव सत्थवाहप्पभिईणं वेयड्ढीगिरिसागरमेरा-
गस्स दाहिणड्ढभरहस्स आहेवच्चं जाव विहरइ । तत्थणं वार-
वईए नयरीए बलदेवे नामं राया होत्था, महया जाव रज्जं
पसासेमाणे विहरइ । तस्स णं बलदेवस्स रण्णो रेवई नामं
देवी होत्था, सोमाला जाव विहरइ । तएणं सा रेवई देवी
अण्णया कयाइ तंसि तारिसगंसि सयणिज्जंसि जाव सीहं
सुमिणे पासित्ता णं पडिबद्धा०, एवं सुमिण दंसणपरिकहणं,
निसडे नामं कुमारं जाए जाव कलाओ जहा महावले, पना-
सओ दाओ, पण्णासरायकण्णगाणं एगदिवसेणं पाणिं गिण्हा-
वेई, नवरं निसडे नामं जाव उप्पिप्रासाए विहरइ ॥ १ ॥

छाया—यदि खलु भदन्त ! उत्क्षेपकः, उपाङ्गानां चतुर्थस्य पुष्पचूळाना-
स्यमर्थः प्रज्ञप्तः, पञ्चमस्य खलु भदन्त ! वर्गस्य उपाङ्गानां वृष्णिदशानां श्रम-
णेन भगवता यावत्संप्राप्तेन कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ? एवं खलु जम्बूः ! श्रमणेन भग-
वता महावीरेण यावद् द्वादशाध्ययनानि प्रज्ञप्तानि, तद् यथा—

निषधः १, मायनी २ वहः ३ वहः ४ पगता, ५ ज्योतिः ६
दशरथः ७ दृढरथश्च ८ महाधन्वा, ९ सप्तधन्वा, १० दशधन्वा, ११ नाम
शतधन्वाच १२ ॥ १ ॥

यदि खलु भदन्त ! श्रमणेन यावद् द्वादशाध्ययनानि प्रज्ञप्तानि, प्रथ-
मस्य खलु भदन्त ! श्रमणेन यावद् द्वादशाध्ययनानि प्रज्ञप्तानि, प्रथमस्य खलु

। वृष्णिदशा वर्ग ।

‘जडणं भंते’ इत्यादि—

जम्बू स्वामी पूछते हैं—हे भदन्त ! पुष्पचूला नामके चतुर्थ
उपाङ्गमें भगवानने पूर्वोक्त प्रकारसे दस अध्ययनोंका निरूपण किया
तो हे भदन्त ! उसके बाद वृष्णिदशा नामक पाँचवें उपाङ्गमें मोक्ष
प्राप्त श्रमण भगवान महावीरने किन अर्थोंका निरूपण किया है ?

सुधर्मा स्वामी कहते हैं—

हे जम्बू ! श्रमण भगवान महावीरने वृष्णिदशा नामक
पाँचवें वर्गमें बारह अध्ययनोंका निरूपण किया है ।

उनके नाम (१) निषध, (२) मायनी, (३) वह, (४) वह,
(५) पमता, (६) ज्योति, (७) दशरथ, (८) दृढरथ, (९) महाधन्वा,
(१०) सप्तधन्वा, (११) दशधन्वा और (१२) शतधन्वा हैं ।

वृष्णिदशा वर्ग (५)पांचमो

‘जडणं भंते’ इत्यादि

जम्बू स्वामी पूछे छे—हे भदन्त ! पुष्पचूला नामना येथा उपागमा लगवाने
पूर्वोक्त प्रकारथी दश अध्ययनानुं निरूपण कर्तुं छे तो हे भदन्त ! त्थार पछी
वृष्णिदशा नामना पांचमा उपागमा मोक्षप्राप्त श्रमणु लगवान महावीरे क्या अर्थोनुं
निरूपण कर्तुं छे

सुधर्मा स्वामी कहे छे.—हे जम्बू ! श्रमणु लगवान महावीरे वृष्णिदशा
नामना पांचमा वर्गमा णार अध्ययनोनुं निरूपण कर्तुं छे.

तेमना नाम—(१) निषध, (२) मायनी, (३) वह, (४) वह, (५) पगता
(६) ज्योति, (७) दशरथ, (८) दृढरथ (९) महाधन्वा, (१०) सप्तधन्वा-
(११) दशधन्वा अने (१२) शतधन्वा छे.

भदन्त ! उत्क्षेपकः । एवं खलु जम्बूः । तस्मिन् काले तस्मिन् समये द्वारावती नाम नगरी अभवत् द्वादशयोजनायामा यावत् प्रत्यक्षं देवलोकभृता प्रासादीया दर्शनीया अभिरूपा प्रतिरूपा । तस्याः खलु द्वारावत्याः नगर्यां वह्निरुत्तरपौरस्त्ये दिग्भागे; अत्र खलु रैवतो नाम पर्वतोऽभवत्, तुङ्गो गगनतलमनुलिहच्छिवरः नानाविधवृक्षगुच्छगुल्मलतावल्लीपरिगताभिरामः हंसमृगमयूरक्रौञ्चसारसचक्रवाकमदनशालाकोकिलकुलोपपेतः, अनेकतटकटकविवरावज्ञरप्रपातप्रा-

जम्बू स्वामी पूछते हैं-

हे भदन्त ! यदि श्रमण भगवान् महावीरने वृष्णिदशामें बारह अध्ययनोंका निरूपण किया है तो उन अध्ययनोंमें प्रथम अध्ययनका क्या भाव कहा है ?

सुधर्मा स्वामी कहते हैं-

हे जम्बू ! उस काल उस समयमें द्वारावती नामकी नगरी थी । जो बारह योजन लम्बी यावत् प्रत्यक्ष देवलोक सदृश 'प्रसादीया' =मनको प्रसन्न करने वाली तथा 'दर्शनीया' =देखने योग्य एवं 'अभिरूपा' =सुन्दर छटावाली और 'प्रतिरूपा' =अनुपम शिल्पकलासे सुशोभित थी । उस द्वारावती नगरीके बाहर ईशानकोणमें ऊँचा तथा आकाशको छूनेवाले शिखरोंसे युक्त रैवतक नामक पर्वत था । वह पर्वत अनेक प्रकारके वृक्ष गुच्छ गुल्म और लता बल्लियोंसे मनोहर था । वह हंस, मृग, मयूर, क्रौञ्च (पक्षी विशेष) सारस, चक्रवाक, मदनशाला (मैना) और कोकिल आदि पक्षिवृन्दसे सुशोभित था ।

जम्बू स्वामी पूछे छे -

हे भदन्त ! जे श्रमणु भगवान् महावीरे वृष्णिदशामा बार अध्ययनानु निरूपणु कर्युं छे तो ते अध्ययनानामा प्रथम अध्ययनना शुं भाव कसो छे ?

सुधर्मा स्वामी कहे छे:-

हे जम्बू ! ते काल ते समये द्वारावती नामनी नगरी छती, जे बार योजन लम्बी यावत् प्रत्यक्ष देवलोकना जेवी, प्रसादीया =मनने प्रसन्न करवावाणी तथा दर्शनीया =देखवा योग्य, अभिरूपा =सुन्दर छटावाणी अने प्रतिरूपा =अनुपम शिल्पकलाथी सुशोभित छती ते द्वारावती नगरीनी अहार ईशान कोणमा उंचो तथा गगनचुपी शिखरवाणी रैवतक नामना पर्वत छतो। ते पर्वत अनेक जातना वृक्ष, गुच्छ, गुल्म अने लतावलीयेथी मनोहर छतो। वणी ते हंस, मृग, मयूर, क्रौञ्च (पक्षी), सारस, चक्रवाक, मदनशाला (मैना) अने कोकिला आदि पक्षिवृन्दथी

ग्मारगिग्वरप्रचुरः अप्मरोगणदेवमंघ-चारण विद्याधरमिथुनसन्निचीर्णः, नित्य-
क्षणकः, दगार्हवरीरपुरूपत्रैलोक्यवल्वतां सोमः शुभः प्रियदर्शनः सुरूपः
प्रासादीयो यावत् प्रतिरूपः । तस्य खलु रैवतकस्य पर्वतस्य अदूरमामन्ते,
अत्र खलु नन्दनवनं नाम उद्यानम् अभवत्, सर्वऋतु पुष्प० यावद् दर्शनीयम् ।

तथा जिस्में अनेक तट=किनारे और कटक=पर्वतका रमणीय भाग,
तथा विवर=सुन्दर गुफाएँ और अवझर=सुन्दर झरने एवं प्रपात=जहाँ
झरना गिरता है वह स्थान, तथा प्राग्मार=पर्वतका झुका हुआ रम्य
प्रदेश और अनेक सुन्दर गिग्वर विद्यमान थे । वहाँ अप्सरागण
देवगण और विद्याधरोंके युगल आकर क्रीडा करते थे । और जहाँ
जङ्घाचरण विद्याचरण मुनि भी ध्यान सौनादिके लिये निवास करते
थे । तथा वह पर्वत उत्सवका एक रमणीय स्थल था । और नेमि-
नाथ भगवानसे युक्त होनेके कारण तीनों लोकमें श्रेष्ठ बलवीर
दशाहोंका वह पर्वत सोम=आहाट उत्पन्न करनेवाला था, शुभ=मंगल-
कारी था प्रियदर्शन=नेत्रोंको सुख देनेवाला था, सुरूप=सुहावना था,
प्रासादीय=मनको प्रसन्न करनेवाला था, दर्शनीय=देखने योग्य था,
अभिरूप=अपनी सुन्दरताके कारण चमकता था, प्रतिरूप=दर्शक जगोंके
हृदयमें प्रतिबिम्बित हो जाना था । उस रैवतक पर्वतके समीपमें
नन्दनवन नामक उद्यान था, जो सभी ऋतुओंके फूलोंसे सम्पन्न

सुशोभित होता तथा जेमा अनेक तट=किनारा अने कटक=पर्वतना रमणीय भाग
तथा विवर=सुन्दर गुफाओं अने अवझर=सुन्दर झरना, प्रपात=जहाँ उतरता पाडे
छे ते स्थान, तथा प्राग्मार=पर्वतना नभेला रमणीय भाग अने सुन्दर शिखर
विद्यमान होता तथा अप्सरागण, देवगण, अने विद्याधराना जेउला आवीने क्रीडा
करता होता अने जथा जघाचरण, विद्याचरण मुनि पण ध्यान, सौना आदि भाटे
निवास करता होता तथा आ पर्वत हमेशा उत्सवनुं अेक रमणीय स्थान हुतु अने
नेमीनाथ भगवानथी युक्त होवाथी अेले लोकमा श्रेष्ठ बलवीर दशाहोंने ते पर्वत
सोम= आहाट उत्पन्न करवावाणे हुते, शुभ=मंगलकारी हुते प्रियदर्शन=नेत्राने
सुख आपवावाणे हुते, सुरूप=रूपाणे शोभादार हुते, प्रासादीय=मनने प्रसन्न
करवावाणे हुते, दर्शनीय=जेवा योग्य हुते, अभिरूप=पोतानी सुन्दरताने लीधे
अभरते हुते, प्रतिरूप=जेनारनां हृदयमा छाप पाडे तेवा हुते, (प्रतिबिम्बित थछ
जते हुते.) ते रैवत पर्वतनी पासै नन्दनवन नामे अेक बगीचा हुते. जे बधी
ऋतुओमा कूलेथी संपन्न होवाथी दर्शनीय हुते. ते नन्दनवन बगीचाभां सुरमिय=

तत खलु नन्दनवनै उद्याने सुरप्रियस्य यक्षस्य यक्षायतनमभवत्, चिरातीतं, यावद् बहुजन आगम्य अर्चयति सुरप्रियं यक्षायतनम् । तत् खलु सुरप्रियं यक्षायतनम् एकेन महता वनषण्डेन सर्वतः समन्तात् संपरिक्षिप्तम् यथा पूर्ण-भद्रो यावत् शिलापट्टकः । तत्रः खलु द्वारावत्यां नगर्यां कृष्णो नाम वासुदेवो राजाऽभवत् यावत् प्रशासद् विहरति । स खलु तत्र समुद्रविजयप्रमुखानां दशानां दशार्हाणां, बलदेवप्रमुखानां पञ्चानां महावीराणाम्, उग्रसेनप्रमुखानां षोडशानां राजसहस्राणां, प्रद्युम्नप्रमुखानाम् अशुष्टानां (सार्द्धतृतीयानां) कुमारकोटीनां, शाम्बप्रमुखानां षष्ट्याः दुर्दान्तसहस्राणं, वीरसेनप्रमुखानामेकविंशत्याः वीरसह-स्राणां, महासेनप्रमुखानां षट्पञ्चाशतो बलवत्सहस्राणां, रुक्मिणीप्रमुखानां षोड-शानां देवीसाहस्रीणाम्, अनङ्गसेनाप्रमुखानामनेकासां गणिकासाहस्रीणाम्,

यावत् दर्शनीय था । उस नन्दनवन उद्यानमें सुरप्रिय=यक्षका यक्षा-यतन बहुत प्राचीन था और लोक उसे मानते थे । वह सुरप्रिय यक्षायतन चारों तरफसे एक बड़ा वनषण्डसे घिरा हुआ था । जैसा पूर्णभद्र उद्यान था । उसमें अशोक वृक्षके नीचे एक शिला पट्टक था । उस द्वारावती नगरीमें कृष्ण वासुदेव राजा थे, जो उस नगरोका यावत् शासन करते हुए विचरते थे । वह कृष्ण वासुदेव समुद्र-विजय प्रमुख दश दशार्होंके बलदेव प्रमुख पाँच महावीरोंके, उग्र-सेन प्रमुख सोलह हजार राजाओंके, प्रद्युम्न प्रमुख साठे तीन करोड़ कुमारोंके, शाम्ब प्रमुख साठ हजार दुर्दान्त शूरोंके, वीरसेन प्रमुख एकीस हजार वीरोंके, महासेन प्रमुख छप्पन हजार बलवानोंके, रुक्मिणी प्रमुख सोहल हजार देवियोंके तथा अनङ्गसेना प्रमुख

यक्षनु यक्षायतन अहु प्राचीन इतु अने लोडो तेने मानता इता ते सुरप्रिय यक्षायतन आरे तन्कृथी ओक मोटा वनषण्डथी घेरायेलु इतुं डे नेवुं पूर्णभद्र उद्यान इतु . तेमां अशोकवृक्षनी नीचे ओक शिलापट्टक इतु

ते द्वारावती नगरीमा कृष्ण वासुदेव नामे राजा इता ने ते नगरीमा राज्य करता विचारता इता ते कृष्ण वासुदेव समुद्रविजय प्रमुख दश दशार्होना, बलदेव प्रमुख पाच महावीरोना, उग्रसेन प्रमुख सोण इन्तर राजाओना प्रद्युम्न प्रमुख साठ त्रणु करोड कुमारोना, शाम्ब प्रमुख साठ इन्तर दुर्दान्त शूरवीरोना, वीरसेन प्रमुख ओकवीश इन्तर वीरोना, महासेन प्रमुख छप्पन इन्तर बलवानोना, रुक्मिणी प्रमुख सोण इन्तर देवीओना तथा अनङ्ग सेना प्रमुख अनेक इन्तर

अन्येषां च बहूनां राजेश्वर० यावत् सार्थवाहप्रभृतीनां वैताढ्यगिरिसागरमर्या-
दस्य दक्षिणाद्धर्मरतस्याधिपत्यं यावद् विहरति । तत्र खलु द्वाशवत्यां नगर्यां
बलदेवो नाम राजाऽभवत्, महता यावद् राज्यं प्रशासद् विहरति । तस्य
खलु बलदेवस्य राज्ञो रेवती नाम देव्यभवत् सुकुमारपाणिपादा यावद् विह-
रति । ततः खलु सा रेवती देवी अन्यदा कदाचित् तादृशे गयनीये यावत्
मिहं स्वप्ने दृष्ट्वा खलु प्रतिबुद्धा एवं स्वप्नदर्शनपरिकथनं, निपथो नाम कुमारो
जातः, यावत् कला यथा महाबलस्य, पञ्चागद् द्वायाः, पञ्चागद्राजकन्यकाना-
मेकद्विवसेन पाणिं ग्राहयति, नवरं निपथो नाम यावद् उपरिप्रासादे विहरति ॥१॥

टीका—‘यदि खलु’ इत्यादि—नानाविधगुच्छगुल्मलतावल्लीपरिगताभिरामः—
नानाविधाः = अनेकप्रकाराः वृक्षाश्च गुच्छाः = स्तवकाश्च गुल्माः = मत्सवाश्च
(स्फुन्धरहितास्तरवः) लताः = व्रततयश्च बलयः = लताविशेषाश्च, तामिः परिगतः =

अनेक हजार गणिकाओंके और बहूतसे गजा ईश्वर तलवर माड-
स्त्रिक कौटुम्बिक श्रेष्ठी सेनापति सार्थवाह प्रभृतिओंके तथा वैता-
ढ्यगिरि और सागरसे मर्यादित दक्षिण अर्धभरतके, ऊपर आधि-
पत्य करते हुए विचर रहे थे ।

उम हारावती नगरीमें बलदेव नामक राजा थे, जो महाबली
थे और यावत् अपने राज्यका शासन करते हुए विचर रहे थे ।
उम बलदेव राजाकी पत्नी का नाम रेवती देवी था, जो सुकुमार
हाथ पैरवली और सर्वाङ्ग सुन्दर थी । तथा पँचो इन्द्रियोंके अनुभव
करती हुई विचरती थी । अनन्तर किसी समय वह रेवती देवी
पुण्यवानके सोने लायक अपनी सुकोमल शय्यामें सोयी हुई स्वप्नमें
सिंहको देखा और जाग गयी । स्वप्नका वृत्तान्त उमने राजा बल

गणिकाओंका, वशी धया राजा ईश्वर तलवार माडस्त्रिक कौटुम्बिक श्रेष्ठी सेनापती
सार्थवाह आदिना तथा वैताढ्यगिरि अने सागरसे मर्यादित दक्षिण अर्धभरतना
ऊपर आधिपत्य करता यका उदता हुता

ते हारावती नगरीमा बलदेव नामे राजा हुता ने महाबलवान हुता अने
पोताना राज्यनु शासन कन्ता विचरता हुता ते बलदेव राजनी पत्नीनु नाम
रेवती देवी हुता, ने सुकुमार हाथपगवाणी हुती अने सर्वाङ्ग सुन्दर हुती अने
पञ्चे इन्द्रियेना सुभ अनुभव कन्ती विचरती हुती पछी काल समये ते रेवती देवी
पुण्यवान मोकेने पाठया योग्य गैवी पोतानी सुकोमल शय्यामा सूती हुती त्यां
स्वप्नमां सिंह नेथे अने बगीचा स्वप्ननु वृत्तान्त तेषे राज बलदेवने कडी

सम्प्राप्तः अभिरामः=शोभा यत्र स तथा अनेकप्रकारकतरुस्तवकस्तम्बलतावल्ली-
सम्प्राप्तच्छत्रिः, हंस-मृग-मयूर-क्रौञ्च-सारस-चक्रवाकमदनशाला कोकिलकुलो-
पपेतः हंसाः=प्रसिद्धाः, मृगाः=हरिणाः, मयूराः, क्रौञ्चाः, सारसाः, चक्रवाकाः,
मदनशालाः=सारिकाविशेषाः, कोकिलाश्च, तेषां यत् कुलं=समूहस्तेन उपपेतः=
युक्तः । अनेकनटकटकविवरावज्ञरप्रपातप्राग्भारशिखरप्रचुरः-अनेकानि तटानि=
तीराणि कटकाः=गण्डशैलाः पर्वतात्संत्रुट्य-पतिता महापापाणाः, विवराणि=
छिद्राणि, अवज्ञराः=निर्झरविशेषाः, प्रपाताः=भृगवः=गर्त्तरूपाणि निर्झरणजल-
पतनस्थानानि, प्राग्भाराः=ईषदवनताः पर्वतप्रदेशाः, शिखराणि=शृङ्गाणि, एतानि
प्रचुराणि यत्र स तथा, अप्सरोगणदेवसंघचारणविद्याधरमिथुनसंनिचीर्णः-अप्स-
रसां गणः=समूहः, देवसङ्घः=देवसमूहः चारणाः=जङ्घाचारणादयः साधुविशेषाः,
विद्याधरमिथुनानि, तैः, संनिचीर्णः अधिष्ठितः, नित्यक्षणकः-नित्यम्=अनवरतं
क्षण एव क्षणकः=उत्सवो यत्र सः, केपामयं गिरिः ? इत्याह-दशार्हवरवीर-
पुरुषत्रैलोक्यवलवतां-दशार्हाः=समुद्रविजयादयो दश दशार्हाः, तेषु वराः=श्रेष्ठाः,
वीरपुरुषाश्च ते, त्रैलोक्ये=लोकत्रये बलवन्तश्च अतुलबलशालिनेमिनाथयुक्तत्वात्,
ये ते तथा तेषाम् । शेषं सुगमम् ॥ १ ॥

मूलम्-तेषां कालेणं २ अरहा अरिट्टनेमी आदिकरे दस-
धण्डू वण्णओ जाव समोसरिण, परिसा निग्गया । तएणं से

देवका सुनाया । अनन्तर समय बीतने पर रेवतीके गर्भसे एक
कुमार पैदा हुआ, जिसका नाम निषध रखा गया । वह कुमार बड़ा
होकर महाबलके समान बहत्तर कलाश्रौमें प्रवीण हो गया । पचास
राजकन्याओंके साथ एक दिनमें उसका विवाह हुआ तथा उसको
पचास-पचास दहेज मिला । अनन्तर पूर्वजन्म उपार्जित पुण्यसे मिले
हुए पाँचो इन्द्रियोंके सुखोंका अनुभव करता हुआ अपने महलमें
उत्सव आदिके साथ रहने लगा ॥ १ ॥

स भणन्त्यु पथी समय वीतता रेवतीना गर्भथी अक कुमारना जन्म थयो, जेतु नाम
निषध राणवामा आन्त्यु ते कुमार मोटो थता मडाणलना जेयो ज्योतेर कणाओमा
प्रवीण थध गयो पचास राजकन्याओनी साथे अक दिवसमा तेना लग्न थया अने
पचास पचास दहेज रथ्या पथी पूर्वजन्म उपार्जित पुण्यथी भणोला पाये इन्द्रियोना
सुभोने अनुभव करतो ते पोताना मडेदमा आनंद उत्सवमां रहेवा लाग्यो (१)

कण्हे वासुदेवे इमीसे कहाए लद्धट्टे समाणे हट्टुट्टे० कोडुं-
 वियपुरिसे सदावेइ, सदावित्ता एवं वयासी खिप्पामेव देवाणु-
 प्पिया ! सभाए सुहम्माए सामुदाणियं भेरिं तालेह । तएणं
 से कोडुंवियपुरिसे जाव पडिसुणित्ता जेणेव सभाए सुहम्माए
 जेणेव सामुदाणिया भेरी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता तं
 सामुदाणियं भेरीं महया २ सद्देणं तालेइ, तएणं तीसे सामु-
 दाणियाए भेरीए महया २ सद्देण तालियाए समाणीए समु-
 द्दविजयपामोक्खा दस दसारा देवीओ उण भाणियवाओ जाव
 अणंगसेणापामोक्खा अणेगा गणियासहस्सा, अन्ने च वहवे
 राईसर जाव सत्थवाहप्पभिईओ ण्हाया जाव पायच्छित्ता
 सबालंकारविभूसिया जहा विभवइड्डिसक्कारसमुदएणं, अप्पेगइया
 हयगया जाव पुरिसवग्गुरापरिक्खित्ता० जेणेव कण्हे वासुदेवे
 तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता करतल० कण्हं वासुदेवं
 जएणं विजएणं वद्धावेति । तएणं से कण्हे वासुदेवे कोडुं-
 वियपुरिसे एवं वयासी खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! आभि-
 सेकं हत्थिरयणं कप्पेह हयगयरहपवरजाव पच्चप्पिणंति । तएणं
 से कण्हे वासुदेवे मज्जणघरे जाव दुरूढे, अट्टुमंगलगा, जहा
 कूणिए, सेयवरचामरेहिं उच्चयमाणेहिं २ समुद्दविजयपामोक्खेहिं
 दसारेहिं जाव सत्थवाहप्पभिईहिं सद्धिं संपरिवुडे सविड्डीए
 जाव रवेणं वारवईनयरीमज्झं मज्झेण सेसं जहा कूणिओ जाव
 पज्जुवासइ । तएणं तस्स निसढस्स कुमारस्स उप्पिं पासाय-
 वरगयस्स तं महया जणसइ च जहा जमाली जाव धम्मं

सोच्चा निसम्म वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी
सदहामि णं भंते ! निग्गंथं पावयणं जहा चित्तो जाव सावग-
धम्मं पडिवज्जइ, पडिवज्जित्ता पडिगए । तेणं कालेणं २ अरहओ
अरिट्टुनेमिस्स अंतेवासी वरदत्ते नामं अणगारे उराले
जाव विहरइ । तएणं से वरदत्ते अणगारे निसढं कुमारं
पासइ, पासित्ता जायसडे जाव पज्जुवासमाणे एवं वयासी अहो
णं भंते ! निसढे कुमारे इट्ठे इट्ठुरूवे कंते कंतुरूवे एवं पिए०
मणुन्नए० मणामे मणामरूवे सोमे सोमरूवे पियदंसणे सुरूवे ।
निसढेणं भंते ! कुमारेणं अयमेयारूवे माणुवइड्डी किण्णा लद्धा
किण्णा पत्ता ? पुच्छा जहा सूरियाभस्स, एवं खल्लु वरदत्ता !
तेणं कालेणं २ इहेव जंबूदीवे दीवे भारहे वासे रोहीडए नामं
नयरे होत्था, रिद्धित्थिमियसमिद्धे०, मेहवन्ने उज्जाणे, मणिदत्त-
स्स जक्खस्स जक्खाययणे । तत्थ णं रोहीडए नयरे महब्बले
नामं राया. पउमावई नामं देवी, अन्नया कयाइ तंसि तारि-
सगंसि सयणिज्जंसि सीहं सुमिणे, एवं जम्मणं भाणियव्वं
जहा महब्बलस्स, नवरं वीरंगओ नामं, बत्तीसओ दाओ,
बत्तीसाए रायवरकन्नगाणं पाणिं जाव उवगिज्जमाणे २ पाउ-
सवरिसारत्तसरयहेमंतवसन्तगिम्हपज्जंते छप्पि उऊ जहाविभवेणं
भुंजमाणे २ कालं गालेमाणे इट्ठ सदे जाव विहरइ । तेणं
कालेणं २ सिद्धत्था नाम आयरिया जाइसंपन्ना जहा केसी
नवरं बहुस्सुया बहुपरिवारा जेणेव रोहीडए नयरे जेणेव मेहन्ने
उज्जाणे जेणेव मणिदत्तस्स जक्खस्स जक्खाययणे तेणेव उवा-
गया, अहापडिरूवं जाव विहरंति, परिसा निग्गया । तएणं

तस्स वीरंगणस्स कुमारस्स उप्पि पासायवरगतस्स तं महया
 जणसदं च जहा जमाली निग्गओ धम्मं सोच्चा जं नवरं
 देवाणुप्पिया ! अम्मापियरो आपुच्छामि जहा जमाली तहेव
 निक्खंतो जाव अणगारे जाए जाव शुत्तवंभयारी । तए णं
 से वीरंगए अणगारे सिद्धत्थाणं आयरियाणं अंतिए सामाइ-
 यमाइयाइं एक्कारसअंगाइं अहिज्जइ, अहिज्जित्ता वहुइं जाव
 चउत्थ जाव अप्पाणं भावेमाणे वहुपडिपुण्णाइं पणयालीस-
 वासाइं सामन्नपरियायं पाउणित्ता, दोमासियाए संलेहणाए
 अत्ताण झूसित्ता, सवीसं भत्तसयं अणसणाए छेदित्ता आलो-
 इयपडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा वंभलोए कप्पे
 मणोरसे विमाणे देवत्ताए उववन्ने । तत्थणं अत्थेगइयाणं
 देवाणं दससागरोवमा ठिई पण्णत्ता । तत्थणं वीरंगयस्स देव-
 स्स वि दस सागरोवमा ठिई पण्णत्ता, से णं वीरंगए देवे
 ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं जाव अणंतरं चयं चइत्ता
 डहेव वारवईए नयरीए बलदेवस्स रत्तो रेवईए देवीए कुच्छिसि
 पुत्तत्ताए उववन्ने । तएणं सा रेवई देवी तंसि तारिसगंसि
 सयणिज्जंसि सुमिणदंसणं जाव उप्पि पासायवरगए विहरइ ।
 तं एवं जल्लु वरदत्ता ! निसढेणं कुमारेणं अयमेयारूवा ओराला
 मणुयइड्डी लद्धा ३ । पभू णं भंते ! निसढे कुमारे देवाणु-
 प्पियाणं अंतिए जाव पवइत्तए ? हंता पभू । से एवं भंते !
 २ इय वरदत्ते अणगारे जाव अप्पाणं भावेमाणे विहरइ ॥ २ ॥

छाया—तस्मिन् काले तस्मिन् समये अर्हन् अरिष्टनेमिः आदिकरो दशधनुष्कः वर्णकः यावत् समवसृतः, परिपत् निर्गता । ततः खलु स कृष्णो वासुदेवोऽस्याः कथाया लब्धार्थः मन् हृष्टतुष्टः० कौटुम्बिकपुरुषान् शब्दयति, शब्दयित्वा एवमवादीत्—क्षिप्रमेव देवानुप्रियाः ! सभायां सुधर्मायां सामुदानिकीं भेरीं ताडयत । ततः खलु ते कौटुम्बिकपुरुषा यावत् प्रतिश्रुत्य यत्रैव सभायां सुधर्मायां सामुदानिकी भेरी तत्रैवोपाच्छिन्ति, उपागत्य तां सामुदानिकी भेरीं महता २ शब्देन ताडयन्ति । ततः खलु तस्यां सामुदानिक्यां भेर्या महता २ शब्देन ताडितायां सत्यां समुद्रविजयप्रमुख्वा दश दशार्हाः,

‘तेणं कालेण’ इत्यादि—

उस काल उस समयमें दस धनुष प्रमाण शरीरवाले धर्मके आदिकर अर्हत् अरिष्टनेमि उस द्वारका नगरीमें पधारे । परिषद् उनके दर्शन निमित्त अपने २ घरसे निकली । भगवानके आनेका समाचार सुनकर कृष्ण वासुदेवने हृष्टतुष्ट हृदयसे कौटुम्बिकपुरुषोंको बुलवाया और इस प्रकारकी आज्ञा दी—

हे देवानुप्रिय ! शीघ्र ही जाकर सुधर्मा सभाकी सामुदानिक भेरीको बजाओ । जिस भेरीके बजाये जानेपर जन समुदाय एकत्रित हो जाय, उसे सामुदानिक भेरी कहते हैं । वासुदेव कृष्णके द्वारा इस प्रकार आज्ञापित वे कौटुम्बिक पुरुष उनकी आज्ञाको स्वीकार कर जहाँ सामुदानिक भेरी थी उधर गये, और वहाँ जाकर सामुदानिक भेरीको खूब जोरसे बजाया । उसको अत्यधिक जोरसे बजाये जानेपर समुद्रविजय प्रमुख दस दशार्हसे लेकर यावत् रुक्मिणी

‘तेणं कालेण’ इत्यादि

ते काल ते समये दश धनुषना जेटका प्रमाण (२५) ना शरीरवाला धर्मना आदिकर अर्हत् अरिष्टनेमी ते द्वारका नगरीमा पधार्या परिषद् तेमना दर्शन निमित्ते पोतपोताने घेरथी नीकणी भगवानना आव्याना ममाचार सालणी कृष्णवासुदेवे हुष्ट तुष्ट हुष्टयथी कौटुम्बिक पुरुषाने भोवाव्या अने आ प्रकारे आज्ञा आपी

हे देवानुप्रिय ! जल्दी जर्धने सुधर्मा सभानी सामुदानिक भेरी (वाणु) वगाडी जे भेरीने वगाडवाथी जनसमुदाय एकत्रित थछ जय तेने सामुदानिक भेरी कडे छे कृष्णवासुदेव तरकथी आ प्रकारे आज्ञा भगता ते कौटुम्बिक पुरुष तेमनी आज्ञाने स्वीकार करी जया सामुदानिक भेरी हुती त्या गया अने त्या जर्धने सामुदानिक भेरी भूण भेरथी वगाडी ते अहु भेरथी वग डवाथी समुद्रविजय प्रमुख दश दशार्हथी भाडीने

देव्यः पुनर्मणितव्याः, यावद् अनङ्गसेनाप्रमुवानि अनेकानि गणिकासहस्राणि,
अन्ये च बहवो राजेश्वर० यावत् सार्थवाहप्रभृतयः स्नाताः यावत् कृतप्रायश्चित्ताः
सर्वालंकारविभूषिता यथाविभवक्रद्धिमत्कारसमुदयेन अप्येकके हयगताः यावत्
पुरुषवागुरापरिक्षिप्ता यत्रैव कृष्णो वासुदेवस्तत्रैवोपागच्छन्ति, उपागत्य करतल०
कृष्णं वासुदेवं जयेन विजयेन वर्द्धयन्ति । ततः खलु कृष्णो वासुदेव०
कौटुम्बिकपुरुषानेवमवादीत्-क्षिप्रमेव भो देवानुप्रियाः ! आभिषेक्यं हस्तिरत्नं
कल्पयध्वम्, हय-गज-रथ प्रवरान् यावत् प्रत्यर्पयन्ति । ततः खलु स कृष्णो
वासुदेवो मज्जनगृहे यावद् दूरूढः अष्टाष्टमङ्गलकानि, यथा कृष्णिकः, श्वेतवर-

आदि देवियां तथा अनङ्गसेना प्रभृति अनेक सहस्र गणिकायै और
दूसरे बहुतसे राजा ईश्वर तलवर माडम्बिक कौटुम्बिक यावत् सार्थ-
वाह आदि स्नान ओर दुःस्वप्न आदिके निवारणके लिये मपी तिलक
आदि करके सभी अलङ्कारोंसे अलङ्कृत हो अपने २ विभवके अनु-
सार सत्कार सामग्रियोंके साथ घोड़े आदि सवारियों पर बैठकर
अपने २ अनुचर पुरुषोंके साथ जहाँ कृष्ण वासुदेव थे वहाँ आये ।
वहाँ आकर हाथ जोड़कर कृष्ण वासुदेवको जय विजय शब्दसे
बधाया । उसके बाद कृष्ण वासुदेवने अपने कौटुम्बिक पुरुषोंको
बुलाकर इस प्रकार कहा-हे देवानुप्रिय ! आभिषेक्य (पट्ट) हस्ति-
रत्नको और अन्य हाथी घोड़े रथ आदिको सजाकर ले आओ ।
कृष्ण वासुदेवकी ऐसी आज्ञा सुनकर वे कौटुम्बिक पुरुष शीघ्र ही
हाथी घोड़े रथ आदिको सजाकर ले आये । उसके बाद कृष्ण वासु-
देव मज्जनगृहमें स्नान करनेके लिये गये, स्नान कर सभी अलङ्का-

इकिमणी आदि देवियो तथा अनङ्गसेना आदि अनेक सहस्र गणिकायो तथा भीम
राज्य भूषण, तलवर, माडम्बिक कौटुम्बिक अने सार्थवाह आदि स्नान तथा
दुस्वप्नना निवारणने भाटे मसी तिलक करीने जथा धरेणार्थी विभूषित यधने पोत-
पोताना वैभव प्रभाण्डे सत्कार सामग्रियो लधने घोडा वगेरे उपर सवारी करीने
पोताना नोकर-याकर साथे न्या कृष्णवासुदेव इता त्या आवीने हाथ लेडी कृष्ण-
वासुदेवने जयविजय शब्दर्थी बधव्या. त्यार पछी कृष्णवासुदेवे पोताना कौटुम्बिक
पुरुषोने जोलावी आ प्रकारे कथु —हे देवानुप्रिय ! आभिषेक्य (पट्ट) हाथीरत्नने
तथा भीम हाथी घोडा रथ आदि तैयार करी लध आवे। कृष्णवासुदेवनी ज्येवी
आज्ञा सांभणीने हे कौटुम्बिक पुरुष जलही हाथी रथ आदिने तैयार करी लध आव्या.
त्यार पछी कृष्णवासुदेव स्नानधरमा न्हावा गया स्नान करी जथा धरेण्योर्थी विभूषित

चामरैरुद्भयमानैः २ समुद्रविजयप्रमुखैः दग्भिर्दगोर्हैर्यावत् सार्थवाहप्रभृतिभिः
सार्द्धं संपरिहृतः सर्वऋद्ध्या यावत् रवेण यावत् द्वारावतीनगरीमध्यमध्येन शेषं
यथा कूणिको यावत् पर्युपास्ते । ततः खलु तस्य निषधस्य कुमारस्योपरि-
प्रासादवरगतस्य तं महाजनशब्दं च यथा जमालिर्यावद् धर्मं श्रुत्वा निशम्य

रौंसे अलङ्कृत हो अपने आभिषेक्य हाथी पर चढे । और उन्हें शुभ
शकुनके लिये आठ-आठ माङ्गलिक वस्तुएँ दिखायी गईं । इसके बाद
वह कृष्ण वासुदेव कूणिकके समान डुलाए जाते हुए श्वेतचामरोंसे
सुशोभित तथा समुद्रविजय प्रमुख दस दशार्होंसे लेकर यावत्
सार्थवाह प्रभृतियोंसे घिरे हुए तथा सभी प्रकारके विभवके साथ
भेरी आदि बाजोंके शब्दोंसे दिशाको मुखरित करते हुए द्वारावती
नगरीके बीचोबीच चलते हुए भगवान अर्हत अरिष्टनेमिके पास
पहुँचे । और कूणिकके समान तीनबार आदक्षिण प्रदक्षिण करके
वन्दन नमस्कार किया और सेवा करने लगे ।

उसके बाद वह निषध कुमारने अपने उपरी सहलमें शब्दा-
विषयोंका सुखानुभव करता हुआ मनुष्योंके महान कोलाहलको
सुना । उसे जिज्ञासा हुई कि क्या बात है ? पूछने पर उसे ज्ञात
हुआ कि भगवान् अर्हत अरिष्टनेमि यहाँ पधारे हैं । जनता उनकी
वन्दनोंके लिये जा रही है इसीलिये यह कोलाहल हो रहा है । यह
जानकर जमालिके समान वह भी भगवानके दर्शनके लिये आये,

थर्ष पेताना आभिषेक्य षट् ङाथी उपर यड्या अने तेमने शुभ शुकनने माटे आठ
आठ मागलिक वस्तुयो देणाडवामा आवी त्यार पछी कृष्णवासुदेव कूणिकनी पेठे
ढाणाध रहेता श्वेत चामरेथी सुशोभित तथा समुद्रविजय प्रमुष दशदशार्धथी माडीने
यावत् सार्थवाड आस्थी वेगयेल तथा सर्वे प्रकारना वैभव साथे, भेरी वगेरे
वाजना शब्दोथी दिशाओने प्रपदित करता द्वारावती नगरीनी वरयो-वरयथी आलता
लगवान अर्हत अरिष्टनेमीनी पोसे पडोअ्या अने त्रशुवार आदक्षिण प्रदक्षिण
करीने वदन नमस्कार कर्या अने सेवा करवा लाग्या

त्यार पछी ते निषध कुमारे पणु पेताना अंथ्या गडेलमा शण्दादि विषयोने
सुखानुभव करता थम मनुष्योने मोटो डेलाडल सामज्यो तेमने अज्ञासा थर्ष डे
शु वात छे ? पूछवाथी पणर पडी डे लगवान अर्हत अरिष्टनेमि अर्हा पधार्या
छे अने जनता तेमनां वदन-दर्शन माटे नय छे. तेथी डेलाडल थाय छे आ
नाष्णीने नमाडीनी पेठे ते पणु लगवानना, दर्शन माटे आग्या अने आदक्षिण

वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत्—श्रद्धामि खलु भदन्त !
निर्ग्रन्थं प्रवचनं यथा चित्तो० यावत् श्रावकधर्मं प्रतिपद्यते, प्रतिपद्य प्रतिगतः ।

तस्मिन् काले तस्मिन् समयेऽर्हतोऽरिष्टनेमेरन्तेवासी वरदत्तो नाम
अनगारः उदारो यावद् विहरति । ततः स वरदत्तोऽनगारो निपथं कुमारं
पश्यति, दृष्ट्वा जातश्रद्धो यावत् पर्युपासीन एवमवादीत्—अहो ! खलु भदन्त !
निपथः कुमार इष्ट इष्टरूपः कान्तः कान्तरूपः, एवं प्रियो० मनोज्ञो० मनोऽमो
मनोऽमरूपः सोमः सोमरूपः प्रियदर्शनः सुरूपः । निपथेन भदन्त ! कुमारेण
अयमेतद्रूपा मानुष्यऋद्धिः कथं लब्धा ? कथं प्राप्ता ? पृच्छा यथा सूर्याभस्य ।

और आदक्षिण प्रदक्षिण करके वन्दन नमस्कार क्रियां । अनन्तर धर्म
सुनकर उसे हृदयसे अवधारण कर वन्दन नमस्कार कर इस प्रकार
कहने लगा—हे भदन्न ! मैं निर्ग्रन्थ प्रवचन पर श्रद्धा करता हूँ ।
इसके बाद वह चित्त प्रधानके समान यावत् श्रावक धर्मको स्वीकार
कर अपने घर लौट आया ।

उम काल उस समयमें अर्हत् अरिष्टनेमिके अन्तेवासी उदार
प्रधान ओजस्वी वरदत्त नामके अनगार धर्मध्यान करते हुए एका-
न्तमें बैठे थे । भगवान्के समीप आये हुए निपथ कुमारको देखकर
उन्हें श्रद्धा जिज्ञासा और कौतूहल उत्पन्न हुआ और उन्होंने भग-
वानसे इस प्रकार पूछा—

हे भदन्त ! वह निपथ कुमार इष्ट है, इष्टरूप है, कान्त है,
कान्तरूप है । इसी तरह प्रिय है मनोज्ञ है मनोऽम (मनको अच्छा
लगनेवाला) है, सोम है, सोमरूप है, प्रियदर्शन है, सुरूप है ।

प्रदक्षिणा करीने वदन नमस्कार कर्या पछी धर्मनु श्रवण करी तेने हृदयमां अवधारण
करीने वदन नमस्कार करी आ प्रकारे कथु :-

हे भदन्त ! हुं निर्ग्रन्थ प्रवचन उपर श्रद्धा राखु छु त्पार पछी ते चित्त
प्रधाननी पेठे श्रावक धर्मने स्वीकार करीने पेताने घेर पाछे आव्ये ।

ते क्षण ते समये अर्हत् अरिष्टनेमिना अन्तेवासी उदार प्रधान ओजस्वी
वरदत्त नामे अनगार धर्मध्यान करता अकान्तमा ठेठा डता. भगवाननी पासे आवेला
निपथकुमार ने लेधने तेने एज्ञासा अने कौतुहल उत्पन्न थयु अने भगवानने
आ प्रभाण्ठे पृष्ठथु .--हे भदन्त ! निपथकुमार इष्ट छे, इष्टरूप छे, कान्त छे,
मनोज्ञ छे, मनोऽम छे, सोम छे, सोमरूप छे, प्रियदर्शन छे, सुरूप छे.

एवं खलु वरदत्त ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये इहैव जम्बूद्वीपे द्वीपे भारते वर्षे रोहितकं नाम नगरमासीत्, ऋद्धिस्तमितसमृद्धम्० मेघवर्णमुद्यानं, मणिदत्तस्य यक्षस्य यक्षायतनम् । तत्र खलु रोहितके नगरे महाबलो नाम राजा, पद्मावती नाम देवी, अन्यदा कदाचित् तस्मिन् तादृशे शयनीये सिंहं स्वप्ने०, एवं जन्म भणितव्यं यथा महाबलस्य, नवरं वीरंगतो नाम, द्वात्रिंशद्

हे भदन्त ! इस निषध कुमारको इस प्रकारकी मनुष्य सम्बन्धी ऋद्धि कैसे मिली, कैसे प्राप्त हुई, और कैसे यह ऋद्धि इसके भोगमें आई ? इत्यादि— गौतमने सूर्याभकी देव ऋद्धिके बारेमें जिस प्रकार भगवानसे पूछा था उसी प्रकार—वरदत्तने पूछा ।

भगवान कहते हैं—

हे वरदत्त । उस काल उस समयमें इसी जम्बूद्वीप नामक द्वीपके अन्दर भरत क्षेत्रमें रोहितक नामक नगर था, जो कि धन धान्यादि ऋद्धिसे समृद्ध था । उस नगरमें मेघवर्ण नामक उद्यान था । उस उद्यानमें मणिदत्त नामक यक्षका एक यक्षायतन था । उस रोहितक नगरका राजा महाबल था । उसकी रानीका नाम पद्मावती था ।

एक समय सुकोमल शय्यापर सोयी हुई उस पद्मावती रानीने स्वप्नमें सिंहको देखा । अनन्तर उसके गर्भसे एक बालक उत्पन्न हुआ । उसका जन्म आदिका वर्णन महाबलके समान जानना चाहिये । उस बालकका नाम वीरङ्गत रखा गया । जब वह कुमार

हे भदन्त ! आ निषधकुमार ने आ प्रकारनी मनुष्य सम्बन्धी ऋद्धि केवी रीते भणी, केम प्रप्त थछ, अने केवी रीते ते ऋद्धि तेमना भोगमा आवी ?

गौतमे सूर्याभनी देवऋद्धि विषे जेवी रीते भगवानने पूछथु छु, तेवी रीते वरदत्ते पूछथु ?

भगवाने कहुः—हे वरदत्त ! ते काल ते समये आ जम्बूद्वीप नामे द्वीपनी अदर भरतक्षेत्रमा रोहितक नामे नगर छु ते जे धनधान्य ऋद्धिथी समृद्ध छुं. ते नगरमा मेघवर्ण नामे उद्यान छु ते उद्यानमा मणिदत्त नामे यक्षनु यक्षायतन छुं. ते रोहितकने राजा महाबल छुते तेनी राणीनु नाम पद्मावती छु

जेके समय सुकोमल शय्या उपर सोखी ते पद्मावती राणीजे स्वप्नमा सिंहने जेथे. पछी तेना गर्भथी महाबल ना जेथे जेके जालके उत्पन्न थथे. तेना जन्म आदिकु वर्णन महाबल जेथुं समजथु. तेनु नाम वीरंगत राज्य छुं. न्यारे

दायाः, द्वित्रिगतो राजकन्यकानां पाणिं यावद् उपगीयमानः २ प्राट्वर्षा-
रात्रशरद्वेसन्तग्रीष्मवसन्तान् पडपि ऋतून यथाविभवेन भुञ्जानः इष्टान्
शब्दान् यावद् विहरति । तस्मिन् काले तस्मिन् समये सिद्धार्थं नाम
आचार्यं जानिसम्पन्ना यथा केशी, नवरं बहुश्रुता बहुपरिवारा यत्रैव
रोहितकं नगरं यत्रैव मेघवर्णमुद्यानं यत्रैव मणिदत्तस्य यक्षस्य यक्षायतनं
तत्रैवोपागतः, यथाप्रतिरूपं यावद् विहरति, परिपद् निर्गता । ततः खलु
तस्य वीरंगतस्य कुमारस्य उपरिप्रामादवरगतस्य तं महाजनगढं च, यथा
जमान्निर्निर्गतो धर्म श्रुत्वा यद् नवरं देवानुप्रियाः ? अम्वापितरी आपृच्छामि

बडा हुआ तो उसका विवाह वतीस राजकन्याओंके साथ किया गया ।
और उसे बत्तीस-बत्तीस प्रकारका दहेज मिला ।

उसके महलके उपरी भागमें सर्वदा मृदङ्ग आदि बाजे बजते
रहते थे । तथा गायक उसके गुणोंको गाते रहते थे । वह वीरङ्गत
वर्षा आदि छ ऋतु सम्बन्धी इष्टशब्दादि विषयोंको अपने विभवा-
नुसार भोगता हुआ विचरता था ।

उस काल उस समयमें केशी श्रमणके समान जातिमन्त
तथा बहुश्रुत और बहुत शिष्यपरिवारसे युक्त सिद्धार्थ नामक
आचार्य रोहितक नगरके मेघवर्ण उद्यानके अन्दर मणिभद्र यक्षा-
यतनमें पधारे । और उद्यानपालसे आज्ञा लेकर वहाँ विचरने लगे ।
परिपद् उन आचार्यवरके दर्शनके लिये अपने-अपने घरसे निकली,
उसके बाद वह वीरङ्गत कुमारने सिद्धार्थ आचार्यके दर्शन करनेके
लिये जाते हुए मनुष्योंके महान कोलाहलको सुना । अनन्तर उसने

ते कुमार भेटे थये त्यारे तेना लग्न गत्रीस राजकन्याओंनी साथे क्वामा आव्या
अने तेने गत्रीस-गत्रीस दहेज मज्या

तेना भडेवना उपका माणमां हभेशां भृगुग आदि वाज्ज वागता रहेता हता
तथा गायक तेना गुणोना गान कर्या करता हता. ते वीरंगत वर्षा आदि छ ऋतु
संबन्धी इष्ट शब्दादि विषयोंने पोताना पैलव प्रमाणे लोगवने विचरतेो हते।

ते काम ते समये देशी श्रमणना जेवा बलवान तथा बहुश्रुत अने बहु शिष्य
परिवारवाणा सिद्धार्थ नाम आचार्य रोहितक नगरना मेघवर्ण उद्याननी अंदर मणिभद्र
यक्षायतनमा पधर्या अने उद्यानपालनी आज्ञा लेधने त्यां विचारवा लाग्या परिषद
ते आचार्यवरना दर्शन भाटे पोतपोताना वैथी नीकणी त्यार पछी ते वीरंगत कुमारे
पहु सिद्धार्थ आचार्यना दर्शन करवा भाटे जता मनुष्योंना महान डोलाहल साभज्ये।

यथा जमालिस्तथैव निष्क्रान्तो यावद् अनगारो जातो यावद् गुप्तब्रह्मचारी ।
ततः खलु स वीरंगतोऽनगारः सिद्धार्थनामाचार्याणामन्तिके सामायिकादीनि
एकादशाङ्गानि अधीते, अधीत्य बहूनि यावत् चतुर्थ० यावत् आत्मानं भावयन्
बहुप्रतिपूर्णानि पञ्चचत्वारिंशद् वर्षाणि श्रामण्यपर्यायं पालयित्वा द्वेमासिक्या
संलेखनया आत्मानं जोषित्वा सविंशतिं भक्तशतमनशनेन छित्त्वा आलोचित-

कोलाहलके कारणका अन्वेषण किया उसे ज्ञात हुआ कि सिद्धार्थ
आचार्य यहाँ पधारे हुए हैं, जनता उनके दर्शनके लिये जा रही है,
उसीका यह कोलाहल है। यह जानकर वीरङ्गत कुमार जमालिके
समान उन आचार्यके दर्शन करनेके लिये गया। धर्म सुनकर उसने
उन सिद्धार्थ आचार्यको वन्दन नमस्कार कर इस प्रकार कहा-

हे देवानुप्रिय ! मैं माता पितासे पूछकर आपके समीप प्रव्रज्या
लेना चाहता हूँ। उसके बाद वह वीरङ्गत कुमार जमालिके समान
प्रव्रजित होकर अनगार हो गया, और ईर्यासमिति आदिसे युक्त
हो यावत् गुप्तब्रह्मचारी हो गया। उसके बाद वह वीरङ्गत अनगारने
उन सिद्धार्थ आचार्यके समीप सामायिक आदि ग्यारह अंगोका
अध्ययन किया अनन्तर बहुतसे चतुर्थ षष्ठ अष्टम आदि तपसे
आत्माको भावित करते हुए पूरे पैंतालीस वर्षों तक श्रामण्यपर्यायका
पालन किया। बाद दो मासकी संलेखनासे आत्माको सेवित करते
हुए एक सौ बीस भक्तोंको अनशनसे छेदित कर अपने पाप स्था-

पछी तेणे ते केलाहलनु कारण समजवा तपास करावी तो तेने जणायु के
सिद्धार्थ आचार्य अर्ही पधार्या छे जनता तेना दर्शन भाटे न्छ रहा छे तेने आ
केलाहल छे आ जणाने वीरंगत कुमार जमालीनी पेठे आचार्यांनां दर्शन करपा गया
धर्मनु श्रवणु करीने तेणे ते सिद्धार्थ आचार्यने वदन नमस्कार करी आ प्रकारे कथुः—

हे देवानुप्रिय ! हु मारा मातपिताने पूछीने आपनी पासे प्रव्रज्या लेवा आहु
छु. त्यार पछी ते वीरंगत कुमार जमालीनी पेठे प्रव्रजित थछ अनगार थछ गया
अने ईर्यासमिता आदिथी युक्त थछ यावत् गुप्तब्रह्मचारी भनी गया, त्यार पछी ते
अनगारे ते सिद्धार्थ आचार्यनी पासे सामायिक आदि अग्यार अंगोनु अध्ययन
कथुं पछी घण्टा चतुर्थ, षष्ठ, अष्टम आदि तपेथी आत्माने भावित करता पूरा
पिस्तादीस वर्ष सुधी दीक्षा पर्यायनु पालन कथुं. पछी जे मासनी संलेखनाथी
आत्माने सेवित करता अेकसे बीस लकतेनु अनशनथी छेदन करी पेताना पापस्थानेनी

प्रतिक्रान्तः समाधिप्राप्तः कालमासे कालं कृत्वा ब्रह्मलोके कल्पे मनोरमे विमाने
 देवतया उपपन्नः । तत्र खलु अमृत्येकेषां देवानां दशसागरोपमा स्थितिः
 प्रज्ञप्ता । तत्र खलु वीरंगतस्य देवम्यापि दशसागरोपमा स्थितिः प्रज्ञप्ता । स
 खलु वीरंगतो देवस्तस्माद् देवलोकात् आयुःक्षयेण यावद् अनन्तरं चयं च्युत्वा
 इदं द्वारावत्यां नगर्यां बलदेवस्य राज्ञो रेवत्या देव्याः कुक्षौ पुत्रतयोपपन्नः ।
 ततः खलु सा रेवती देवी तस्मिन् तादृशे शयनीये स्वप्नदर्शनं यावद् उपरि
 प्रासादवरगतो विहरति । तदेवं खलु वरदत्त ! निषधेन कुमारेण इयमेतद्रूपा
 उदाग मनुष्य-ऋद्धिर्लब्धा ३ । प्रभुः खलु भदन्त ! निषधः कुमारो देवानु-
 पियाणामन्तिके यावत् प्रव्रजितुम् ? हन्त प्रभुः । स एवं भदन्त ! २ इति
 वरदत्तोऽनगारो यावदात्मानं भावयन् विहरति ॥ २ ॥

टीका—'तेषां कालेण' इत्यादि । व्याख्या स्पष्टा ॥ २ ॥

नोंकी आलोचना और प्रतिक्रमण कर समाधि प्राप्त हो काल अव-
 सरमें काल कर ब्रह्म नामक पांचवें देवलोकके मनोरम विमानमें
 देवता होकर उत्पन्न हुए । वहाँ कई एक देवोंकी स्थिति दस साग-
 रोपम है, वहाँ इस वीरङ्गत देवकी भी स्थिति दश सागरोपम थी ।
 वह वीरङ्गत देव देवसम्बन्धी आयु भव और स्थितिके क्षय होनेपर
 उस ब्रह्मलोकसे च्यवकर इस द्वारावती नगरीमें राजा बलदेवकी
 पत्नी रेवतीके उदरमें पुत्र होकर जन्मे । उस रेवती देवीने स्वप्नमें
 सिंह देखा । और उसके बाद यह निषध कुमार उत्पन्न हुए यावत्
 शब्दादि विषयोंका अनुभव करते हुए अपने ऊपरी महलमें विचर
 रहे हैं । हे वरदत्त ! इस प्रकार इस निषध कुमारने इस प्रकारकी
 उदार मनुष्यऋद्धि पायी है ।

आलोचना तथा प्रतिक्रमण कर समाधि प्राप्त तथा काल अवसरमा काल करने
 ब्रह्मनामक पांचवा देवलोकना मनोरम विमानमा देवता यद्यने उत्पन्न तथा त्या डेट-13
 देवानी स्थिति दश सागरोपमनी छे त्यां वीरंगतदेव नी यद्य स्थिति दश सागरोपमनी
 हुती ते वीरंगतदेव देव सणधी आयुष्य क्षय अने स्थिति क्षय तथाथी ते ब्रह्म-
 लोकमाथी च्यवीने आ द्वारावती नगरीमा राजा बलदेवनी पत्नी रेवतीना उदरमा पुत्र
 यद्यने जन्म्या ते रेवती देवीये स्वप्नमा सिंहने हीडे अने त्यार पछी आ निषधकुमार
 उत्पन्न तथा, अने यावत् शब्दादि विषयानो अनुभव करता ते पोताना भडेलना उपदे
 माणे उडेया लाग्या हे वरदत्त ! आ प्रकारे आ निषधकुमार ने आवा प्रकारनी उदार
 मनुष्य ऋद्धि भणेथी छे.

मूलम्—तएणं अरहा अरिट्टुनेमी अण्णया कयाइं वारवईओ नयरीओ जाव बहिया जणवयविहारं विहरइ । निसढे कुमारे समणोवासए जाए अभिगयजीवाजीवे जाव विहरइ । तएणं से निसढे कुमारे अण्णया कयाइं जेणेव पोसहसाला तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता जाव दब्भसंथारोवगए विहरइ । तएणं निसढस्स कुमारस्य पुवरत्तावरत्तं धम्मजागरियं जागरमाणस्स इमेयारूचे अज्झत्थिएं धन्ना णं ते गाभागर जाव संनिवेसा जत्थणं अरहा अरिट्टुनेमी विहरइ । धन्ना णं ते राईसर जाव सत्थवाहप्पभईओ जे णं अरिट्टुनेमिं वंदंति नमंसंति जाव पज्जुवासंति, जइ णं अरहा अरिट्टुनेमी पुवाणुपुविं नंदणवणे विहरेज्जा तोणं अहं अरहं अरिट्टुनेमिं वंदिज्जा जाव पज्जुवा-

वरदत्त पूछते है—

हे भदन्त ! क्या यह निषधकुमार आपके समीप प्रव्रजित होगा?

भगवान कहते हैं—

हाँ; वरदत्त ! यह निषधकुमार अनगर बन सकेगा ।

वरदत्त कहते हैं—

हे भदन्त ! आप जो कहते हैं वह सत्य ही है; ऐसा कह-कर वरदत्त अनगर आत्माको तप संयमसे भावित करते हुए विचरने लगे ॥ २ ॥

वरदत्त पूछे छे—

डे भदन्त ! आ निषधकुमार आपनी पासे प्रव्रजित थवामां समर्थ छे ?

भगवान कडे छे—

डे वरदत्त ! हा, आ निषधकुमार अनगर बनवामां समर्थ छे

वरदत्त कडे छे—

डे भदन्त ! आप कडे छे। तेमज छे अेम कहीने वरदत्त अनगर आत्माने तप-संयम वडे भावित करतां विचरवा लाग्या.-(२)

सिजा । तएणं अरहा अरिट्टुनेमी निसढस्स कुमारस्स अयमे-
 यारूवं अज्झत्थियं जाव वियाणित्ता अट्टारसहिं समणसहस्सेहिं
 जाव नंदणवणे उज्जाणे समोसढे । परिसा निग्गया । तएणं
 निसढे कुमारे इमीसे कहाए लच्छेट्टे समाणे हट्टु० चाउग्घंटेणं
 आसुरहेणं निग्गाए, जहा जमाली, जाव अम्मापियरो आपु-
 च्छित्ता पव्वइए, अणगारे जाते जाए शुत्तवंभयारी । तएणं से
 निसढे अणगारे अरहतो अरिट्टुनेमिस्स तहारूवाणं थेराणं
 अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ अहिज्जित्ता
 वहुइं चउत्थच्छट्टु जाव विचिन्तेहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावे-
 माणे वहुपडिपुण्णाइं नव वासाइं सामण्णपरियागं पाउणइ,
 वायालीसं भत्ताइं अणसणाए छेदेइ, आलोइयपडिक्कंते सामा-
 हिपत्ते अणुपुट्ठीए कालगए । तएणं से वरदत्ते अणगारे निसढं
 अणगारं कालगतं जाणित्ता जेणेव अरहा अरिट्टुनेमी तेणेव
 उवागच्छइ, उवागच्छित्ता जाव एवं वयासी एवं खल्लु देवाणु-
 प्पियाणं अंतैवासी निसढे नामं अणगारे पगइभइए जाव
 विणीए, से णं भंते ! निसढे अणगारे कालमासे कालं किच्चा
 कहिं गए ? कहिं उववन्ने ? वरदत्ताइ ! अरहा अरिट्टुनेमी वर-
 दत्तं अणगारं एवं वयासी—एवं खल्लु वरदत्ता । ममं अंतैवासी
 निसढे नामं अणगारे पगइभइे जाव विणीए ममं तहारूवाणं
 थेराणं अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जित्ता
 वहुपडिपुण्णाइं नववासाइं सामण्णपरियागं पाउणित्ता वाया-
 लीसं भत्ताइं अणसणाए छेदेत्ता आलोइयपडिक्कंते सामाहिपत्ते

कालमासे कालं किञ्चा उडुं चंदिमसूरियगहनक्खत्ततारारूवाणं
सोहम्मीसाणं जाव अच्चुते तिण्णि य अट्टारसुत्तरे गेविज्जवि-
माणावाससए वीहवयित्ता सब्बट्टुसिद्धविमाणे देवत्ताए उववण्णे ।
तत्थ णं देवाणं तेत्तीसं सागरोवमा टिई पण्णत्ता । तत्थ णं
निसढस्स वि देवस्स तेत्तीस सागरोवमाइ टिइ पन्नत्ता । से
णं भंते ! निसढे देवे ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं भव-
क्खएणं टिइक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता कहिं गच्छिहिइ ?
कहिं उववज्जिहिइ ? वरदत्ता ! इहेव जंबूदीवे दीवे महाविदेहे
वासे उन्नाए नयरे विमुद्धपिइवंसे रायकुले पुत्तत्ताए पच्चायाहिइ
तएणं से उम्मुक्खवालभावे विण्णयपरिणयमित्ते जोवणगमणुप्पत्ते
तहारूवाणं थेराणं अंतिए केवलवोहिं बुज्झिहिइ, बुज्झित्ता
अगाराओ अणगारियं पव्वज्जिहिइ । से णं तत्थ अणगारे भवि-
स्सइ इरियासमिए जाव गुत्तवंभयारी । से णं तत्थ बहूइं
चउत्थछट्टुमदसमदुवालसेहिं मासद्धमासखमणेहिं विचित्तेहिं
तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे बहूइं वासाइं सामण्णपरियाणं
पाउणिस्सइ, पाउणित्ता मासियाए संलेहणाए अत्ताणं झूसि-
हिइ, झूसित्ता सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदिहिइ । जस्सट्टाए
कीरइ णग्गभावे मुंडभावे अप्पहाणए जाव अदंतवणए अच्छ-
त्तए अणोवाहंणए फलहसेज्जा कट्टुसेज्जा केसलोए वंभचेरवासे
परघरपवेसे पिंडवाओ लद्धावलद्धे उच्चावया य गामकंटया
अहियासिज्जइ, तमट्टुं आराहिइ, आराहित्ता, चरिमेहिं उस्सासनि-
स्सासेहिं सिज्झिहिइ बुज्झिहिइ जाव सब्बदुक्खाणं अंतं काहिइ ।
एवं खलु जंबू ! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव सपत्तेणं
जाव निक्खेवओ ॥ ३ ॥

पढमं अज्झयणं समत्तं ॥ १ ॥

छाया—ततः खलु अर्हन् अरिष्टनेमिरन्यदा कदाचित् द्वारावत्या नगर्यां यावत् वहिर्जनपदविहारं विहरति । निपथः कुमारः श्रमणोपासको जातः अभिगतजीवाजीवो यावद् विहरति । ततः खलु स निपथः कुमारः अन्यदा कदाचित् यत्रैव पोषधशाला तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य यावद् दर्भसंस्तारोपगतो विरहति । ततः खलु तस्य निपथस्य कुमारस्य पूर्वरात्रापररात्रकाले धर्मजागरिकां जाग्रतोऽयमेतद्रूपः आध्यात्मिकः०—धन्याः खलु ते ग्रामागर यावत् सन्निवेशाः, यत्र खलु अर्हन् अरिष्टनेमिर्विहरति, धन्याः खलु ते राजेश्वर यावत् सार्थवाहप्रभृतिकाः, ये खलु अरिष्टनेमिं वन्दन्ते नमस्यन्ति यावत्० पर्युपासते,

‘तण्णं अग्हा’ इत्यादि—

उसके बाद अर्हत् अरिष्टनेमि एक समय द्वारावती नगरीसे निकलकर जनपद=देशमें विहार करने लगे । ‘निपथकुमार’ श्रमणोपासक हो गये और वह जीव अजीव आदि तत्त्वोंको जानकर विचरने लगे । उसके बाद वह निपथकुमार एक समय जहाँ पोषधशाला थी वहाँ गये और वहाँ दाभका आसनपर बैठकर धर्मध्यान करते हुए विचरने लगे । उसके बाद रात्रिके अन्तिम प्रहरमें धर्म जागरणा करते हुए उस ‘निपथकुमार’ के हृदयमें इस प्रकारका विचार उत्पन्न हुआ कि वह ग्राम यावत् सन्निवेश धन्य है जहाँ अर्हत् अरिष्टनेमि भगवान् विचरते हैं ! वे राजा ईश्वर तलवर माडम्बिक यावत् सार्थवाह प्रभृति धन्य हैं जो भगवानको वन्दन नमस्कार करते हैं और सेवा करते हैं ।

‘तण्णं अग्हा’ इत्यादि

त्यार पछी अर्हत् अरिष्टनेमि एक समय द्वारावती नगरीथी नीकणीने देशमां विचरवा लाग्या निपथकुमार श्रमणोपासक थछ गया अने ते एव अएव आदि तरवोने नएणीने विचरवा लाग्या त्यार पछी ते निपथकुमार एक वपत न्या पोषधशाला छती त्या गया अने त्यां हालनेा संस्तारक (आसन) णिछावी तेना पर भेसी धर्मध्यान इत्ता विचरवा लाग्या त्यार पछी पाछली रात्रिमे धर्म-नगरण्णु इत्तां ते निपथकुमार ना मनमा ज्येवो विचार पेदा थयो छे ते ग्राम सन्निवेश आदि धन्य छे छे न्या अर्हत् अरिष्टनेमि भगवान् विचरे छे. ते राजा ईश्वर, तलवर, माडम्बिक, ईष्टुणिक यावत् सार्थवाह आदि धन्य छे जे भगवानने वदन नमस्कार इत्ते छे

यदि खलु अर्हन् अरिष्टनेमिः पूर्वानुपूर्वीं० नन्दनवने विहरेत् तर्हि खलु अह-
मर्हन्तमरिष्टनेमिं वन्देय नमस्येयं यावत् पर्युपासीय । ततः खलु अर्हन् अरिष्ट-
नेमिः निषधस्य कुमारस्य इममेतद्रूपमाध्यात्मिकं यावद् विज्ञाय अष्टादशभिः
श्रमणसहस्रैः यावद् नन्दनवने उद्याने समवसृतः, परिषद् निर्गता । ततः
खलु निषधः कुमारः अस्याः कथाया लब्धार्थः सन् हृष्ट० चातुर्घण्टेन अश्वरथेन
यावद् निर्गतः, यथा जमालि, यावद् अम्बापितरौ आमुच्छ्रय प्रव्रजितः,
अनगारो जातो यावद् गुप्तब्रह्मचारी । ततः खलु स निषधोऽनगारः अर्हतो-
रिष्टनेमेस्तथारूपाणां स्थविराणामन्तिके सामायिकादीनि एकादशाङ्गानि अधीते,

यदि अर्हत् अरिष्टनेमि भगवान् पूर्वानुपूर्वीं विचरते हुए नन्दन
वनमें पधारें तो मैं भी भगवानको वन्दन नमस्कार करूँ और उनकी
सेवा करूँ । उसके बाद भगवान् अर्हत् अरिष्टनेमि उस 'निषधकुमार'
के इस प्रकारका आध्यात्मिक=अन्तः-करणका विचार जानकर, अठारह
हजार श्रमणोंके साथ उस नन्दनवन उद्यानमें पधारे । भगवानके
दर्शनके लिए परिषद् अपने २ घरसे निकली । उसके बाद 'निषधकुमार'
भी इस वृत्तान्तको जानकर हृष्ट तुष्ट हृदयसे चार घंटावाला अश्वर-
थपर चढकर भगवानका दर्शनके लिये निकले, और जमालिके समान
यावत् माता पिताकी आज्ञासे प्रव्रजित होकर अनगार हो गये । तथा
ईर्यासमिति आदिसे युक्त हो यावत् गुप्त ब्रह्मचारी हो गये । उसके
बाद वह निषध अनगार अर्हत् अरिष्टनेमि भगवानके तथारूप स्था-
विरोंके समीप सामायिक आदि ग्यारह अङ्गोंका अध्ययन किया तथा

जे अर्हत् अरिष्टनेमि भगवान् पूर्वानुपूर्वीं विचरता नन्दनवनमा पधारे
तो हुं पणु भगवानने वदन नमस्कार करुं अने तेमनी सेवा करुं, त्यार पछी
भगवान् अर्हत् अरिष्टनेमि ते निषधकुमार ना आ प्रकारना आध्यात्मिक=अन्तः-
करणना विचार आदि ज्ञानीने अठार डण्डर श्रमणोनी साथे ते नन्दनवन उद्यानमा
पधार्या. भगवानना दर्शन करवा भाटे परिषद् पोतपोताने घेरथी नीकणी त्यार पछी
निषधकुमार पणु आ वृत्तान्तने ज्ञानीने हृष्ट तुष्ट हृदयथी चार घंटावाणा अश्व-
रथ उपर चडीने भगवानना दर्शन करवा नीकण्या अने जमादीनी पेठे मातापितानी
आज्ञाथी प्रव्रजित थधने अनगार थर्छ गया तथा ईर्यासमिति आदिथी युक्त थर्छ
गुप्तब्रह्मचारी जनी गया. त्यार पछी ते निषध अनगारे अर्हत् अरिष्टनेमि भग-
वानना तथाइय स्थविरानी पासै सामायिक आदि अगीयार अगोनु अध्ययन करुं

अधीत्य वह्नि चतुर्थ षष्ठ यावद् विचित्रैः तपःकर्मभिरात्मानं भावयन् बहु-
प्रतिपूर्णानि नव वर्षाणि श्रामण्यपर्यायं पालयति, चत्वारिंशद् भक्तानि अनगनेन
छिनत्ति, आलोचितप्रतिक्रान्तः समाधिप्राप्तः आनुपूर्व्यां कालगतः । ततः खलु
स वरदत्तोऽनगारो निषधमनगारं कालगतं ज्ञात्वा यत्रैव अर्हन् अरिष्टनेमिस्तत्रै-
वोपागच्छति, उपागत्य यावद् एवमवादीत्—एवं खलु देवानुप्रियाणामन्तेवासी
निषधो नाम अनगारः प्रकृतिभद्रको यावद् विनीतः । स खलु भदन्त !
निषधोऽनगारः कालमासे कालं कृत्वा क्व गतः ? क्व उपपन्नः ? वरदत्त !
इति अर्हन् अरिष्टनेमिः वरदत्तमनगारमेववादीत्—एवं खलु वरदत्त ! ममान्ते-
वासी निषधो नाम अनगारः प्रकृतिभद्रो यावद् विनीतो मम तथारूपाणां
स्थविराणामन्तिके सामायिकादीनि एकादशाहानि अधीत्य बहुप्रतिपूर्णानि नव

वहतसे चतुर्थ षष्ठ अष्टम आदि विचित्र तपसे आत्माको भावित
करते हुए पूरे नौ वर्षों तक श्रामण्यपर्यायका पालन किया । बयालीस
भक्तोंको अनशनसे छेदनकर पापस्थानोंकी आलोचना और प्रतिक्रमण
कर समाधि प्राप्त हो, क्रमसे काल प्राप्त हुए । उसके बाद निषध
अनगारको कालगत जानकर वरदत्त अनगार जहाँ अर्हत् अरिष्टनेमि
थे वहाँ आये और वन्दन नमस्कार कर इस प्रकार पूछे—हे भदन्त !
आपके अन्तेवासी निषध अनगार प्रकृतिभद्रक और यावत् विनीत थे,
सो हे भदन्त ! वह निषध अनगार काल अवसरमें कालकर कहाँ
गये और कहाँ उत्पन्न हुए ? वरदत्त अनगारका इस प्रकार वचन
सुनकर भगवानने उनसे कहा—

हे वरदत्त ! मेरा अन्तेवासी प्रकृतिभद्रक यावत् विनीत निषध

तथा ध्यात्वा चतुर्थ, षष्ठ, अष्टम आदि विचित्र तपसे आत्माने भावित करता पूरा
नव वर्ष सुधी दीक्षा पर्यायनु पालन कर्युं . भेतालीस भक्तोनु अनशनशी छेदन करी
पापस्थानोनी आलोचना तथा प्रतिक्रमण करी समाधि प्राप्त तथा आनुपूर्वींशी काल-
गत तथा त्याग षष्ठी निषध अनगारने कालगत थयेला ज्ञानीने वरदत्त अनगार
ज्या अर्हत् अरिष्टनेमि हुता त्याग्या अने वंदन नमस्कार करी आ प्रकारे
पूछथुः—हे भदन्त ! आपना अन्तेवासी निषध अनगार प्रकृतिभद्रक अने गहु विनीत
हुता माटे हे भदन्त ! ते निषध अनगार काण अवसरमा काण करीने क्या गया
अने क्या जन्मसे ? वरदत्त अनगारना आ प्रकारना वचन सावणीने लगवाने तेने कह्युः—

हे वरदत्त ! माग प्रकृतिभद्रक अन्तेवासी अने विनीत जेवा निषध अनगार

वर्षाणि श्रामण्यपर्यायं पालयित्वा द्विचत्वारिंशद् भक्तानि अनशनेन छित्वा आलोचितप्रतिक्रान्तः समाधिप्राप्त कालमासे कालं कृत्वा ऊर्ध्वं चन्द्र-सूर्य-ग्रह-नक्षत्र-तारारूपाणां सौधर्मेशान० यावद् अच्युतं त्रीणि च अष्टादशोचराणि त्रैवेयकविमानावासशतानि व्यतिवर्त्य सर्वार्थसिद्धविमाने देवत्वेनोपपन्नः । तत्र खलु देवानां त्रयस्त्रिंशत् सागरोपमा स्थितिः प्रज्ञप्ता । तत्र खलु निषधस्यापि देवस्य त्रयस्त्रिंशत् सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । स खलु भदन्त ! निषधो देवस्तस्माद् देवलोकाद् आयुःक्षये भवक्षयेण स्थितिक्षयेण अनन्तरं चयं च्युत्वा क्व गमिष्यति ? क्व उपपत्स्यते ? वरदत्त ! इहैव जम्बूद्वीपे द्वीपे महाविदेहे

अनगर मेरे तथारूप स्थविरोके समीप सामयिक आदि ग्यारह अंगोका अध्ययनकर पूरे नौ वर्षों तक श्रामण्यपर्यायका पालनकर बघालीस भक्तोका अनशनसे छेदनकर पापस्थानोंकी आलोचना और प्रतिक्रमणकर समाधि प्राप्त हो काल अवसरमें कालकर चन्द्र सूर्य ग्रह नक्षत्र तारा आदिसे ऊपर सौधर्म ईशान आदि यावत् अच्युत देवलोकको उल्लङ्घन कर तीनसौ अठारह त्रैवेयक विमानावासको भी उल्लङ्घन करता हुआ सर्वार्थसिद्ध विमानमें देवता होकर उत्पन्न हुआ । वहाँ देवताओंकी स्थिति तेतीस सागरोपम है । उसी प्रकार निषध देवकी भी तेतीस सागरोपम स्थिति है ।

वरदत्त पूछते है—हे भदन्त ! वह निषध देव उस देवलोकसे देव सम्बन्धी आयु भव और स्थिति क्षयके बाद च्यवकर कहाँ जायँगे और कहाँ उत्पन्न होंगे ?

भारा तथाइय स्वविदेनी पासे सामायिक आदि अगीयार अगोनु अध्ययन करी पूरा नव वरस सुधी दीक्षा पर्यायनु पालन करीने अनशन वडे जेतालीस लकतानु छेदन करी पोतानां पापस्थाननी आलोचना तथा प्रतिक्रमण करीने समाधि प्राप्त थतां काण अवसरमा काण करीने चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र, तारा, आदिनी उपर सौधर्म ईशान आदि यावत् अच्युत देवलोकनु उल्लङ्घन करी त्रयुसे अठार त्रैवेयक विमाना-वासनु पणु उल्लङ्घन करता सर्वार्थसिद्ध विमानमा देवतापणुमा उत्पन्न थया त्या देवताओंनी स्थिति तेतीस सागरोपम छे अवी न रीते निषध देवनी पणु तेतीस सागरोपम स्थिति छे

वरदत्त पूछे छे—हे भदन्त ! ते निषधदेव ते लोकमाथी देव सणधी आयुभव अने स्थिति क्षय पछी अवीने क्या नशे अने क्या उत्पन्न थशे ?

वर्षे उन्नाते नगरे विशुद्धपितृवंशे राजकुले पुत्रतया प्रत्यायास्यति । ततः खलु स उन्मुक्तवालभावः विज्ञातपरिणतमात्रः यौवनकमनुप्राप्तः तथारूपाणां स्थविराणामन्तिके केवलवोधि बुद्ध्या अगाराद् अनगारतां प्रव्रजिष्यति । स खलु तत्राऽनगारो भविष्यति, ईर्यासमितो यावद् गुप्तब्रह्मचारी । स खलु तत्र वह्नि चतुर्थपष्ठाष्टमदशमद्वादशे मासार्द्धमाभक्षणैः विचित्रैः तपःकर्मभिरात्मानं भावयन् वह्नि वर्षाणि श्रामण्यपर्यायं पालयिष्यति, पालयित्वा मासिक्या संलेखनया आत्मानं जोषयिष्यति, जोषयित्वा षष्टि भक्तानि अनशनेन छेत्स्यति । यस्यार्थं क्रियते नग्नभावो, मुण्डभावः, अस्नानको, यावद् अदन्तवर्षकः,

भगवान् कहते हैं—

हे वरदत्त ! यह निषध देव इसी जम्बूद्वीप नामक द्वीपके अन्दर महाविदेह क्षेत्रके उन्नात नगरमें विशुद्ध पितृवंशवाले राजकुलमें पुत्ररूपसे उत्पन्न होगा । उसके बाद बाल्यकाल बीतनेपर, सुप्त दसो अंगोके जागनेपर वह युवाऽवस्था को प्राप्त होगा, और तथारूप स्थविरोंके समीप शुद्ध सम्यक्त्वको प्राप्तकर अगारसे अनगार होगा । वह अनगार वहाँ ईर्यासमिति आदिसे युक्त हो यावत् गुप्तब्रह्मचारी होगा । वह वहाँ बहुतसे चतुर्थ पष्ठ अष्टम दशम द्वादश मासार्द्ध मास क्षणरूप विचित्रतपसे आत्माको भावित करता हुआ बहुत वर्षों तक श्रामण्यपर्यायका पालन करेगा । बादमें मासिकी संलेखनासे आत्माको सेवित कर साठ भक्तोको अनशनसे छेदित करेगा । जिम् मोक्ष प्राप्तिके लिये अनगार, नग्नत्व=परिमितवस्त्रधारित्व मुण्डभाव=द्रव्य भावसे

लगवान् उहे छे.—

हे वरदत्त ! आ निषधदेव आज जम्बूद्वीप नामे द्वीपनी अन्दर महाविदेह क्षेत्रना उन्नात नगरमा विशुद्ध पितृवंशवाणा राजकुलमा पुत्ररूपे जन्मसे, त्पार पछी पाठ्यकाण वीती गया पछी सुतेला दशेय अजोनी जगृति थता ते युवावस्थाने प्राप्त थसे अने तथारूप स्थविरा पासे शुद्ध सम्यक्त्वने प्राप्ति करी अगारमाथी अनगार थसे ते अनगार त्या ईर्यासमिति आदिथी युक्त थथ यावत् गुप्तब्रह्मचारी थसे ते त्यां धरुण चतुर्थ, पष्ठ, अष्टम, दशम, द्वादश, मासार्द्ध, मास, क्षणरूप विचित्र तपथी—आत्माने भावित करता धरुणं वर्ष सुधी दीक्षापर्यायनु पालन करसे. पछी मासिकी संलेखनाथी आत्माने सेवित करी अनशनथी साठ भक्तोनु छेदन करसे जे मोक्षप्राप्ति भाटे अनगार नग्नत्व=परिमित वस्त्रधारित्व; मुण्डभाव=द्रव्य भावथी

अच्छत्रकः, अनुपानत्कः, फलकशय्या, काष्ठशय्या, केशलोचो, ब्रह्मचर्यवासः, परगृहप्रवेशः, पिण्डपातः, लब्धापलब्धः, उच्चावचाश्च ग्रामकण्टका अध्यास्यन्ते, तमर्थमाराधयिष्यति, आराध्य चरमैरुच्छ्रवास-निःश्वासैः सेत्स्यति, भोत्स्यते, यावत् सर्वदुःखानामन्तं करिष्यति । एवं खलु जम्बूः ! श्रमणेन भगवता महावीरेण यावत्संप्राप्तेन यावत् निक्षेपकः ॥ ३ ॥

॥ प्रथममध्ययनं समाप्तम् ॥ १ ॥

टीका—‘ तणं अरहा ’ इत्यादि । यस्यार्थं=यन्मोक्षप्राप्त्यर्थं क्रियते नयभावः=अचेल्त्वं परिमितवस्त्रधारित्वमित्यर्थः, मुण्डभावः=दीक्षितत्वम् । अस्नातकः=देशसर्वस्नानवर्जितः स्वात्मेति शेषः, अदन्तवर्णकः=दन्तवर्णो-दन्तानामुज्ज्वलीकरणं स एव दन्तवर्णकः, अर्जुलिदन्तशाणकाष्ठादिभिर्दन्तघर्षणं, न दन्तवर्णकोऽदन्तवर्णकः=दन्तोज्ज्वलीकरणव्यापारराहित्यम् । अच्छत्रकः=छत्ररहितः । अनुपानत्कः=पादत्राणरहितः, उपलक्षणमेतत्-शकटशिविकातुरगादि वाहनानामपि फलकशय्यां=फलकं=प्रतिलमायतकाष्टं तद्रूपा शय्या (पाटा) इति भाषायाम् ।

मुण्डत्व, अस्नातक=देशतः और सर्वतः स्नान वर्जन, अदन्तवर्णक=अर्जुलि दातन आदिसे दांतोंको स्वच्छ न करना और मिसी आदिसे दांतको न रंगना, अच्छत्र=रजोहरण आदिका भी छत्र धारण नहीं करना, अनुपानत्क=पगरखी तथा मौजे आदिको नहीं पहिनना, एवं गाडो शिविका और घोडा आदिकी सवारी नहीं करना, फलकशय्या=काष्ठ आदिके पाटपर सोना, काष्ठशय्या=काष्ठपर सोना, केशलोच=अपने या दूसरे साधुओंके हाथसे केशोंका लुंचन करना-कराना । ब्रह्मचर्यवास=विषय सुख परित्याग रूप ब्रह्मचर्यमें स्थिर होना, परगृहप्रवेश=भिक्षाके लिए गृहस्थोंके घरमें जाना, पिण्डपात=भिक्षाग्रहण, लब्धापलब्ध=लाभ

मुण्डत्व, अस्नातक=देशतः अने सर्वतः स्नान वर्जन (न नडापुं), अदन्तवर्णक=आगणी दन्तशाण=डाष्ट (लाडडु) आदिथी दाताने स्वच्छ न करवा तथा मीशी आदिथी दातने न रंगवा अच्छत्र=रजोशु आदिनु पथु छत्र धारथु न करपुं, अनुपानत्क=पगरभा अने मोल आदि पगमा न पहरेवा, वणी गाडी पावणी अने घोडा आदिनी सवारी न करवी, फलकशय्या=लाडडानी(डाष्टनी जनावेली)पाट उपर सूपुं काष्ठशय्या=लाडडा पर सूपुं केशलोच=पोताना डे थील साधुओंना हाथथी केशोनु लुचन करपु-करावपु, ब्रह्मचर्यवास=विषयसुख परित्यागथी ब्रह्मचर्यमां स्थिर रहेपु, परगृहप्रवेश भिक्षा भाटे गृहस्थोना घरमा जपुं, पिण्डपात=भिक्षाग्रहण, लब्धापलब्ध=लाभ तेमज

काष्ठगण्या=काष्ठं स्थूलमायतमेव तद्रूपा शय्या, केशलोचः=स्वपरहस्तेन केशो-
त्पाटनम् । ब्रह्मचर्यवासः-ब्रह्मचर्ये=विषयसुखत्यागे वसनं ब्रह्मचर्यवासः । पर-
गृहप्रवेशः=भिक्षाद्यर्थमन्यगृहप्रवेशः । पिण्डपातः=भिक्षाग्रहणम् । लब्धापलब्धः=
लाभालाभः । उच्चावचाः-उच्चाश्च अवचाश्च उच्चावचाः=अनुकूलप्रतिकूलाः ग्राम-
कण्टकाः-ग्रामः=इन्द्रियसमूहस्तस्य कण्टका इव कण्टकाः इन्द्रियवर्गानुकूलप्रति-
कूलशब्दादिषु सुखदुःखोत्पादकत्वेन मुक्तिमार्गं प्रति विघ्नहेतुत्वादेपां कण्टकत्वं
व्यक्तम् । उच्चावचा ग्रामकण्टका अध्यास्यन्ते तम् अर्थ=मोक्षप्राप्तिरूपम् आरा-
धयिष्यति । सेत्स्यति=सकलकार्यकारितया सिद्धो भविष्यति । भोत्स्यते=वि-
मलकेवललोकेन सकललोकालोकं ज्ञास्यति । यावच्छब्देन-‘मुच्चिहिइ परिणि-
व्वाहिइ’ इत्यनयोः सङ्ग्रहः, तथाहि-मोक्षयते=सर्वकर्मभ्यो मुक्तो भविष्यति ।
परिनिर्वास्यति=समस्तकर्मकृतविकाररहितत्वेन स्वस्थो भविष्यति । सर्वदुःखानां=
समस्तक्लेशानाम् अन्तं=नागं करिष्यति अव्यावाधिसुखभाग् भविष्यतीत्यर्थः ।
हे जम्बू ! एवम्=उक्तप्रकारेण श्रमणेन भगवता महावीरेण यावत्सिद्धिगति-
नामधेयं स्थानं संप्राप्तेन यावद् निक्षेपकः=समाप्तिमूचको वाक्यप्रबन्धः ॥३॥

इति प्रथममध्ययनं समाप्तम् ॥ १ ॥

और अलाभ, और उच्चवचग्रामकण्टक=इन्द्रियोंके अनुकूल प्रतिकूल शब्द
आदिको सहन करना, आदि मर्घादामें चलते हैं; उस मोक्षरूप अर्थकी
आराधना करेगा । और सकल कार्योंको सिद्ध करके अन्तिम उच्छ्वास
निःश्वासेंसे सिद्ध होगा । निर्मल केवलज्ञानसे सकल लोकालोकको
जानेगा और सर्वकर्मोंसे मुक्त होगा, और सकल-कर्मविकाररहित होकर
शीतलीभूत होगा और सम्पूर्ण दुःखोंका अन्त करके अव्यावाधिसुखको
प्राप्त करेगा ।

श्री सुधर्मा स्वामी कहते हैं—

हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीरने वृष्णिदशाके प्रथम अध्य-
यनका भाव इस प्रकार कहा है ॥ ३ ॥

वृष्णिदशाका प्रथम अध्ययन समाप्त हुआ.

गेरलास, अने उच्चावचग्रामकण्टक=इन्द्रियोंके अनुकूल शब्दों आदि सहन करना आदि
मर्घादामें यद्ये छे, ते मोक्षरूप अर्थकी आराधना करेगे. अने सकल कार्य सिद्ध करी
छेदना उच्छ्वास निःश्वासे पछी सिद्ध थये निर्मल केवलज्ञानथी तमाम लोक अलोकने
जानेथे अने सर्व कर्मथी मुक्त थये अने सकल कर्म विकार रहित थये शीतलीभूत
(शान्त) थये अने स पृथु दुःखोंने अत लापीने अव्यावाधिसुखने प्राप्त करेगे.

एवं सेसा वि एकारस अज्झयणा नेयवा संगहणीअणु-
सारेण, अहीणमइरित्त एकारससु वि । तिबेमि ॥ ३ ॥

॥ बारस अज्झयणा समत्ता ॥ १२ ॥

॥ वह्निदसा नामं पंचमो वर्गो समत्तो ॥ ५ ॥

॥ निरयावलिथा सुयकखंधो समत्तो ॥

॥ समत्ताणि उवंगाणि ॥

छाया—एवं शेषाण्यपि एकादशाध्ययनानि ज्ञेयानि संग्रह्यनुसारेण, अही-
नाऽतिरिक्तम् एकादशस्वपि । इति ब्रवीमि ॥ ३ ॥

॥ द्वादशाध्ययनानि समाप्तानि ॥ १२ ॥

॥ वृष्णिदशानामा पञ्चमोवर्गः समाप्तः ५ ॥

॥ निरयावलिर्कश्चुतस्कन्धः समाप्तः ॥

॥ समाप्तानि उपाङ्गानि ॥

टीका—एवं शेषाण्यपि=अवशिष्टान्यपि एकादशाध्ययनानि संग्रह्यनु-
सारेण=अस्यैवाध्ययनस्यादौ “निसढे मायनी” इत्यादिसंग्रहणीगाथानुसारेण
ज्ञातव्यानि । एकादशस्वपि=सर्वेष्वप्यध्ययनेषु अहीनातिरिक्तं=न्यूनाधिकभाव-
रहितं वर्णनं विज्ञेयमिति भावः । शेषं निगदिसिद्धम् । इति=यथा भगवत्समीपे
मया श्रुतं तथैव ब्रवीमि=कथयामि ॥ ३ ॥

॥ इति द्वादशमध्ययनं समाप्तम् ॥ १२ ॥

इसी प्रकार शेष ग्यारह अध्ययनोंको भी संग्रहणी गाथाके
अनुसार जानना चाहिये । ग्यारहों अध्ययनोंमें न्यूनाधिकभावसे रहित
वर्णन जानना चाहिये ।

सुधर्मा स्वामी कहे छे :—

हे नम्यु ! श्रमणु भगवान महावीरे वृष्णिदशाना प्रथम अध्ययनना लाव
आ प्रकारे कइया छे. (३)

वृष्णिदशानुं प्रथम अध्ययन समाप्त.

आवी रीते भाकीना अगीयार अध्ययनने पणु संग्रहणी गाथाने अनुसरीने
लाणुवा जेधजे. अगीयारे अध्ययनोमां न्यूनाधिक (वधता ओछा) लावथी रहित
वर्णन लाणुवुं जेधजे.

मूलम्—निर्यावलियाउवंगे णं एगो सुयक्खंधो, पंच वग्गा,
पंचसु दिवसेसु उद्दिस्सति, तत्थ चउसु वग्गेसु दस दस
उद्देसगा, पंचमवग्गे वारस उद्देसगा ॥

॥ निर्यावलियासुत्तं समत्तं ॥

छाया—निर्यावलिकोपाङ्गे खलु एकः श्रुतस्कन्धः, पञ्चवर्गाः, पञ्चसु दिव-
सेसु उद्दिश्यन्ते, तत्र चतुर्षु वर्गेषु दश दश उद्देशकाः, पञ्चमवर्गे द्वादशोद्देशकाः ॥

॥ इति निर्यावलिकासूत्रं समाप्तम् ॥

सुधर्मा स्वामी कहते हैं—

हे जम्बू ! भगवानके समीप मैंने जैसा सुना वैसा
तुम्हें कहा ॥ ३॥

। वारहवाँ अध्ययन समाप्त हुआ ।

। वृष्णि दशा नामक पाँचवाँ वर्ग समाप्त हुआ ।

निर्यावलिका नामक श्रुतस्कन्ध समाप्त.

(उपाङ्ग समाप्त हुए)

निर्यावलिका उपाङ्गमें एक श्रुतस्कन्ध है, पाँच वर्ग हैं, पाँच
दिनोंमें इसका उपदेश दिया गया है । इसके चार वर्गोंमें दस-दस
उद्देश हैं, पाँचवें वर्गमें वारह उद्देश हैं ।

इति निर्यावलिका सूत्र समाप्त.

सुधर्मा स्वामी कहे छेः—

हे जम्बू ! भगवाननी पासे में जेवुं सांलण्णु-अेवुं तने कहुं-धुं. (३).

पारसुं अध्ययन समाप्त.

वृष्णिदशा नामनी पांचवो वर्ग समाप्त.

निर्यावलिका नामनी श्रुतस्कन्ध समाप्त.

(उपांग समाप्त).

निर्यावलिका उपांगमा अेक श्रुतस्कन्ध छे, पांच वर्ग छे. पांच दिवसमा
आमो-उपदेश अपायो छे. आना चार वर्गमा दश-दश उद्देशो छे, पांचमा वर्गमा
चार उद्देशो छे

इति निर्यावलिका सूत्र समाप्त.

॥ शास्त्रप्रशस्तिः ॥

काठियावाड देशेऽस्मिन्, वांकानेरपुरं महत् ।
 अत्रेत्य मुनिभिः सार्द्धं, ग्रामाद्ग्रामान्तरं ब्रजन ॥ १ ॥
 टीकामकार्षमेतर्हि, मृद्धीं सुन्दरबोधिनीम् ।
 त्रिपरद्विसहस्राब्दे, विक्रमीये सुखावहे ॥ २ ॥
 आषाढे बहुले पक्षे, पञ्चम्यां बुधवासरे ।
 सेयं सम्पूर्णतां याता, भव्यानामुपकारिणी ॥ ३ ॥
 टीकासमाप्तिकाले च साधवः सत्य उत्तमाः ।
 सन्त्यत्र तेषां नामानि, कथ्यन्ते गुणवृद्धये ॥ ४ ॥
 सम्प्रदाया लसन्त्यत्र, निरपायाः सदाहताः ।
 लिम्बडीसम्प्रदायोऽन्न, दीप्यते दिवि चन्द्रवत् ॥ ५ ॥

प्रशस्ति.

काठियावाड प्रान्तमें वांकानेर नामका एक नगर है । तीर्थंकर परम्परासे ग्रामानुग्राम विहार करते हुए इस नगरमें आकर विक्रम सम्वत् २००३ को मैंने इस सुन्दरवांधिनी नामक टीकाकी रचना की ॥ १ ॥ २ ॥

भव्योंकी उपकारिणी यह टीका अषाढ कृष्ण पञ्चमी बुधवारको समाप्त हुई ॥ ३ ॥

इस टीकाकी समाप्तिके समय जो महासतियां तथा मुनिराज विराजते थे उनके नाम गुणवृद्धिके लिये कहे जाते हैं ॥ ४ ॥

इस संसारमें पवित्र और निर्मल बहुत्सी आर्हत संप्रदायें

प्रशस्ति.

काठियावाड प्रान्तमां वांकानेर नामे अेक नगर छे तीर्थंकर परंपरार्थी आभेशाम विहार करता करता आ नजरमा आवीने विक्रम सम्वत् २००३ मा में आ सुंदरबोधिनी नामनी टीका ररनी (१-२)

लव्येानी उपकार करवावाणी आ टीका अषाढ (गु० नेठ) वहि पाचम बुधवारै समाप्त थछ (३)

आ टीकानी समाप्ति वभते ने उत्तम साधु अने उत्तम साध्वीआ हती तेमना नाम गुणवृद्धि माटे कहु छु (४)

आ संसारमां धणा निर्मल अने उत्तम जैन संप्रदाये छे ते संप्रदायेमां लींबडी संप्रदाय आकाशमां अन्द्र नी पेठे देदीप्यमान छे (५)

तत्रास्ति शान्तो मनसाऽथ दान्तः, कृतो मुनिः केशवलालनामा ।
 गुणैर्गुरोरुच्चपदाऽधिकारी, स्वतत्त्वधारी विलसत्प्रभावः ॥ ६ ॥
 गुणाभिरामो गुणसम्प्रचारे, सदाऽविरामो निहतस्वकामः ।
 सुत्यक्तरामोऽपि विभाति नाम्ना, रामो मुनिः केवल इत्ययं च ॥७॥
 प्रवर्तिनी झाकलवाइनाम्नी श्रीजीकुमारेति सतीतरा च ।
 सन्तोक्त्वाइति परा सती च, तिस्रोऽप्यजस्रं दधते व्रतित्वम् ॥८॥

हैं। इन संप्रदायोंमें लिम्बडी सम्प्रदाय आकाशमें चन्द्रमाके समान देदीप्यमान है ॥ ५ ॥

इस लिम्बडी सम्प्रदायमें शान्त तथा मन और इन्द्रियोंको दमन करने वाले कृती अर्थात् पण्डितराज मुनिश्री केशवलालजी महाराज हैं, जो गुणोंसे गुरुके उच्च पदके उत्तराधिकारी हैं। तथा ये मुनिवर स्व=आत्मा अथवा जैनागमके तत्त्वोंके निरूपण करनेमें प्रवीण हैं, एवं अपने तेजसे देदीप्यमान हैं ॥ ६ ॥

और दूसरे मुनि जो कि गुणोंसे अभिराम (सुन्दर) हैं तथा गुणोंके प्रचारमें सर्वदा लगे रहते हैं और जिन्होंने सभी सांसारिक कामनाओंका त्याग कर दिया है इस प्रकारके यह मुनिराज सुत्यक्तराम=(रामा=स्त्रीके त्यागी) होनेपर भी 'राम' इस नामसे प्रसिद्ध हैं। और तीसरे विद्यार्थी केवल मुनि हैं ॥ ७ ॥

अब महासतियोंके नाम कहते हैं-

यहाँ पर ये महासतियाँ सर्वदा पञ्चमहाव्रतको धारण करती

आ लीणडी संप्रदायमा शान्त तथा मन अने इन्द्रियोने सयमथी दमन करवावाणा कृती अर्थात् पण्डित प्रवर मुनिश्री केशवलालजी महाराज छे जे गुणो वडे गुणो उच्चपदना उत्तराधिकारी छे, तथा आ मुनिवर स्व=आत्मा अथवा जैन आगमना तत्वोना निरूपण करवाभा प्रवीण छे. जे प्रभाणे तेजो पोताना तेन वडे देदीप्यमान छे (६)

वर्षी लीणत मुनि छे जे गुणो वडे अभिराम (सुन्दर) छे तथा गुणोना प्रचारमा सर्वदा लगे रहे छे तथा जेभणे सांसारिक पधी कामनाओना त्याग छे छे जेवा मुनिराज सुत्यक्तराम=रामा (स्त्री) ने छोडीने पण 'राम' आवा नामथी शोषी न्हा छे अर्थात् लीणत गम मुनि छे तीण केवलमुनि छे. (७)

इवे महासतीओना नाम कहे छे -

अहाँ साध्वीओ, उमेशा पात्र महाव्रत धारण करती विचरे छे. तेमां प्रथम

साध्वी श्रीपार्वतीबाई, श्री हेमकुमरा ऽभिधा ।
 वैयावृत्त्यैकशीला श्री, सम्झुबाई महासती ॥ ९ ॥
 वांकानेरपुरस्थ एष परमोदारो महाधार्मिकः,
 शुद्धस्थानकवासिधर्मनिरतः सम्यक्त्वभावान्वितः ।
 तत्त्वातत्त्वपयोविवेचनविधौ हंसायमानः सदा,
 सर्वेषामुपकारको विजयते श्री जैनसंघो महान् ॥ १० ॥

हुई विचर रही हैं, इनमें प्रथम महासतीका नाम प्रवर्तिनी श्री झाकलबाई स्वामी है, दूसरी महासतीका नाम श्री श्रीजी कुंवरबाई स्वामी है, तथा तीसरी महासतीका नाम श्री सन्तोकबाई स्वामी है । ये तीन ठाणों से स्थिरवास विराजती हैं ॥ ८ ॥

तथा महासती श्री पार्वतीबाई स्वामी और महासती श्री हेमकुंवरबाई स्वामी एवं सेवाभावी महासती श्री सम्झुबाई स्वामी यहाँ तीन ठाणों से विराजती हैं ॥ ९ ॥

वांकानेरका यह परम उदार महाधार्मिक श्री जैनसंघ सदा विजयशाली है । यह जैनसंघ शुद्ध स्थानकवासी धर्ममें निरत है तथा सम्यक्त्वभावसे युक्त है, एवं तत्व और अतत्व रूपो दुग्ध और जलके विवेचनमें हंसके समान है, और यह संघ सभी प्राणियोंका हितकारक है ॥ १० ॥

મહાસતીનું નામ પ્રવર્તિની ઝાકલબાઈ સ્વામી છે. બીજી સતીનું નામ શ્રીશ્રીજીકુંવર-
 બાઈ સ્વામી તથા ત્રીજી સતીનું નામ શ્રીસંતોકબાઈ સ્વામી છે. આ ત્રણ યાણા
 સ્થિરવાસ બિરાજે છે (૮).

મહાસતી શ્રી પાર્વતીબાઈ સ્વામી તથા શ્રી હેમકુંવરબાઈ સ્વામી અને
 સેવાપરાયણ શ્રી સમજુબાઈ સ્વામી અહીં બિરાજે છે (૯)

વાકાનેરનો આ પરમ ઉદાર મહાધાર્મિક શ્રી જૈનસંઘ સદા વિજયશાળી છે.
 આ જૈનસંઘ શુદ્ધ સ્થાનકવાસી ધર્મમાં નિરત છે તથા સમ્યક્ત્વ ભાવથી યુક્ત છે
 અર્થાત્ તત્ત્વ અને અતત્ત્વરૂપી દૂધ અને પાણીના વિવેચનમાં હંસ સમાન છે. અને
 આ સંઘ સર્વ પ્રાણીઓનો હિતકારક છે (૧૦)

देवे गुरौ धर्मपथे च भक्तिर्येषां सदाचाररुचिर्हि नित्यम् ।

ते श्रावका धर्मपरायणाश्च सुश्राविकाः सन्तिगृहे गृहेऽत्र ॥११॥

इति श्री विश्वविख्यात-जगद्बल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषाकलितललित-
कलापालापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मायक-वादिमानमर्दक-श्री शाहूछत्र-
पति कोल्हापुर राजप्रदत्त-'जैनशास्त्राचार्य'भपठ भूषित-कोल्हापुरराज
गुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य जैनधर्म दिवाकर-पूज्यश्री-घासीलाल
व्रतिविरचिता श्री निरयावलिकादि पञ्चमूत्राणां सुन्दरबोधिनी
टीका समाप्ता ।



इस नगरके घर घरमें देव, गुरु और धर्ममें सर्वदा श्रद्धा
रुचि रखनेवाले तथा सदाचारसे युक्त एवं धर्मपरायण श्रावक और
श्राविकाएं विद्यमान हैं । ॥ ११ ॥

इति श्री निरयावलिका आदि पांच सूत्रोंकी सुन्दरबोधिनी
टीकाका हिन्दी अनुवाद समाप्त ।



जेमनी देव, गुरु तथा धर्ममा ह्मेशा भक्ति छे तथा सदाचारमा रूची छे
येवा श्रावक अने श्राविकायेमा आ नगरमा घेरधे विद्यमान छे. (११)

इति निरयावलिका आदि पांच सूत्रोनी सुन्दरबोधिनी टीकोने

शुभराती अनुवाद समाप्त

मद्गलं भगवान वीरो मद्गलं गौतमः प्रभुः ।

मुधर्मा मद्गलं जम्बूजैनधर्मश्च मद्गलम् ॥



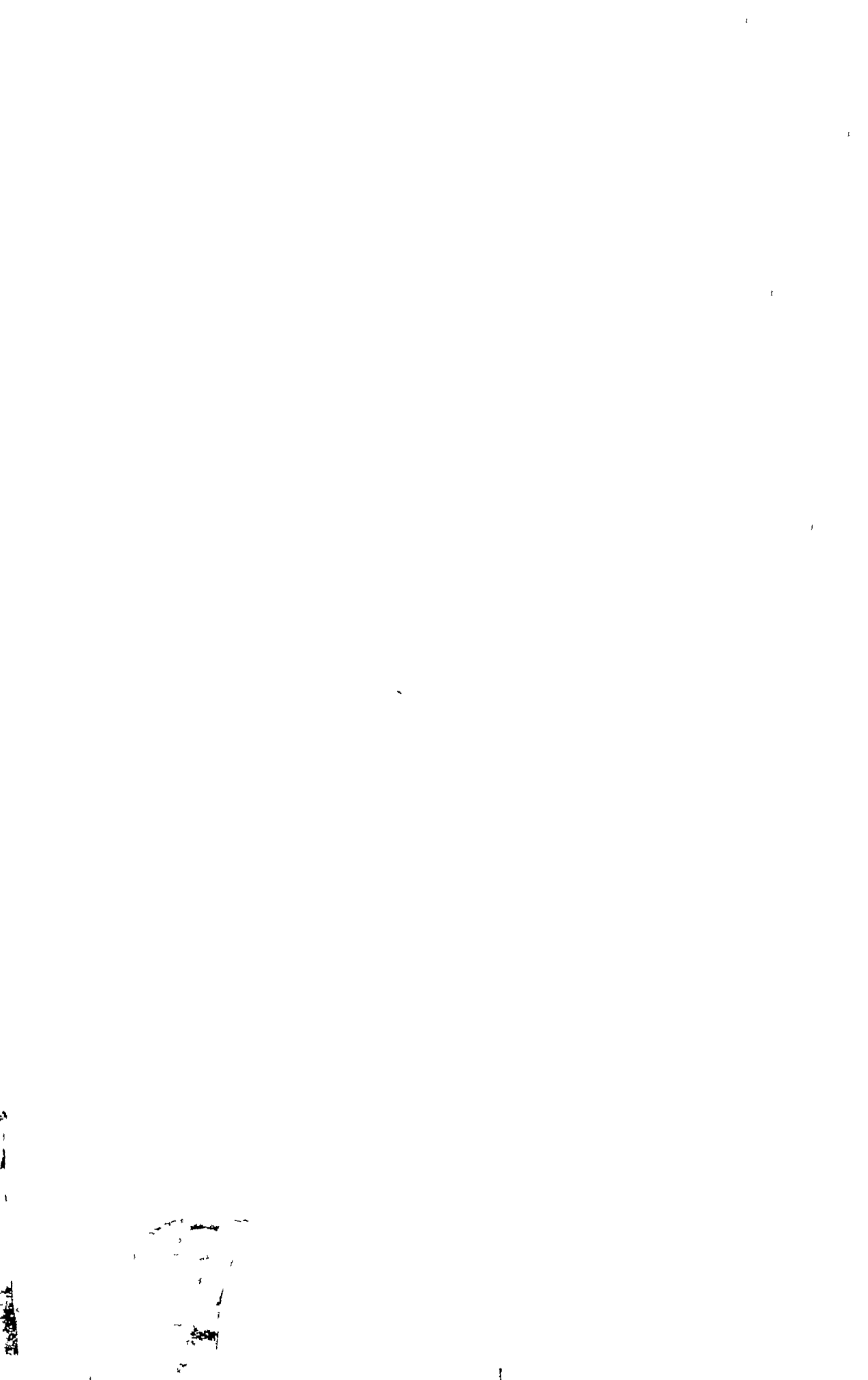
.

.

.

9

.



किञ्च—

(इन्द्रवज्राच्छन्दः)

“सम्यक्त्वरत्नान्न परं हि रत्नं, सम्यक्त्वबन्धोर्न परोऽस्ति बन्धुः ।

सम्यक्त्वमित्रान्न परं हि मित्रं, सम्यक्त्वलाभान्न परोऽस्ति लाभः ॥२॥”

हृदयभूमिकायां सञ्जातः सम्यक्त्वाचारदृढमूलो भावनाजलधारासिञ्च्य-
मानः श्रुतचारित्रलक्षणधर्मस्कन्धः प्रमाणशाखो नयप्रतिशाखो दयादानक्षमाधृति-

अर्थात्—निर्मल सम्यक्त्व अतुल सुखका निधान है, वैराग्यका धाम (घर) है, संसारके क्षणभंगुर और नाशवान सुखोंकी अस्मरता समझनेके लिए सच्चा विवेकस्वरूप है, भव्य जीवोंके मनुष्य तिर्यश्च सम्बन्धी और नरक निगोद आदि दुःखोंका उच्छेद करनेवाला है और मोक्ष सुखरूपी वृक्षका बीजस्वरूप है ॥ १ ॥

और भी कहा है:—

“सम्यक्त्वरत्नान्न परं हि रत्नं, सम्यक्त्वबन्धोर्न परोऽस्ति बन्धुः ।

सम्यक्त्वमित्रान्न परं हि मित्रं, सम्यक्त्वलाभान्न परोऽस्ति लाभः ॥२॥”

अर्थात्—संसारमें सम्यक्त्व रत्नके समान अन्य रत्न नहीं, सम्यक्त्व बन्धु के समान अन्य बन्धु नहीं । सम्यक्त्व मित्रके समान अन्य मित्र नहीं । सम्यक्त्व लाभके समान अन्य लाभ नहीं ॥ २ ॥

सम्यक्त्व रूपी महावृक्ष हृदय भूमिमें उत्पन्न होता है सम्यक्त्व का आचार जिसका मूल है, भावना जलसे सींचा जाता है,

अर्थात्—निर्मल सम्यक्त्व अतुल सुखनु निधान छे वैराग्यनु धाम (घर) छे. संसारना क्षणभंगुर तथा नाशवान सुखोनी अस्मरता समझना भाटे परेणर विवेक स्वरूप छे भव्य जीवोनां मनुष्य तिर्यश्च सम्बन्धी तथा नरक निगोद आदि दुःखोना उच्छेद करवावाणु छे तथा मोक्षसुख रूपी वृक्षनां बीज स्वरूप छे. (१)

इरी पणु कहु छे के:—

“सम्यक्त्वरत्नान्न परं हि रत्नं, सम्यक्त्वबन्धोर्न परोऽस्ति बन्धुः

सम्यक्त्वमित्रान्न परं हि मित्रं, सम्यक्त्वलाभान्न परोऽस्ति लाभः ॥ २ ॥”

अर्थात्—संसारमा सम्यक्त्व रत्नना जेवुं पीणुं रत्न नथी सम्यक्त्व बन्धुना जेवो पीणो बन्धु नथी सम्यक्त्व मित्रना जेवो पीणो केछ मित्र नथी अने सम्यक्त्व लाभना जेवो पीणो केछ लाभ नथी (२)

सम्यक्त्वरूपी महावृक्ष हृदयरूप भूमिमा उत्पन्न थाय छे सम्यक्त्वना आचार जेनु मूल छे भावनाजलधारा जेनु सिञ्चन थाय छे. जेनु श्रुत तथा चारित्र धर्म रूपी

दलोशीलभविजनमनोमिलिन्द्रवृन्दगञ्जितजिनवचनप्रेमप्रमृनः शास्त्रवृत्तिकः (वृत्ति-
 'वाड' इति भाषायाम्) मन्वर्गापवर्गमुत्तफलो निजात्मकल्याणरमः सम्यक्त्वमहामही-
 रूहो मिथ्यात्वगजेन्द्रादिकृतोपसर्गकुशास्त्रकृतकर्महावातगतमहमरप्युन्मल्यित्तुमगक्यः।

इति विस्तरेणास्य वर्णनमाचाराङ्गसूत्रस्या (चतुर्थाध्ययनेऽऽचारचिन्ता-
 मणिटीकानोऽत्रसेयम् ।

एवं सम्यक्त्वप्रशंसां कुर्वाणः सुरपतिस्वविज्ञानेन जम्बूद्वीपभरतक्षेत्रे
 श्रेणिकभूपं ददर्श । सम्यक्त्वगुणशालिनं राजनयपालिनं तं त्रिलोक्य प्रफुल्लयदन-

जिसके श्रुत और चारित्र धर्मरूपी स्कंध है, प्रत्यक्ष आदि प्रमाणरूप
 जिसकी शास्त्राण हैं, नयरूप प्रतिशास्त्राण हैं, दया, दान, क्षमा, धृति
 और शीलरूप पत्र-पत्त हैं, जिनवचनका प्रेमरूप सुन्दर पुष्प है, जिस-
 पर अव्य जीवोंके मनरूपी भ्रमरवृन्द गूँज रहे हैं, शास्त्ररूपी वाडसे
 सुरक्षित है, स्वर्ग और मोक्षके सुखरूप फल है, निज आत्माके
 कल्याणरूप रस है, ऐसे सुदृढ सम्यक्त्वरूपी महावृक्षको मिथ्यात्वरूपी
 महागजकृत उपसर्ग और कुशास्त्र कृतकर्करूपी हजारों महावायु नहीं
 उखाड सकता ।

सम्यक्त्वका विस्तृत वर्णन आचाराङ्ग सूत्रके चौथे अध्ययनकी
 आचारचिन्तामणि टीकामें किया गया है ।

इस प्रकार सम्यक्त्व प्रशंसा करते हुए सुरपति सुधर्मा इन्द्रने
 अंधविज्ञान द्वारा जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्रमें श्रेणिक राजाको देखा । सम्य-
 क्त्वगुणशाली राजनीति को पालनवाले राजाको देखकर प्रसन्नमुख होकर

इति (थ३) छ प्रत्यक्ष आदि प्रमाण उप लेनी शास्त्राणो छ नयर्षी प्रति-शास्त्राणो
 छ दया, दान क्षमा, धृति तथा शीलरूप पाण्डा छ जिन वचनना प्रेमर्षी सुंदर
 पुष्प छ लेना उपर लव्य एवोना मनर्षी लभरानां वृढ शुजन करी रक्षा छे.
 शास्त्रर्षी वाडथी सुरक्षित छे स्वर्ग तथा मोक्षनां सुभर्षी इल छे पोताना आत्माना
 कल्याणर्षी रस छे ज्योवा सुदृढ सम्यक्त्वरर्षी महावृक्षने मिथ्यात्वरर्षी महागजकृत
 उपसर्गो तथा कुशास्त्र कृतकर् इर्षी हन्तरो महावात उभेडी नहि थके

सम्यक्त्वानु विस्तारथी वर्णन आचाराङ्ग सूत्रना ज्योथा अध्ययननी आचार-
 चिन्तामणि टीकामा करेले छे

आ प्रकारे सम्यक्त्वनी प्रशंसा कृता थका सुरपति सुधर्मा इन्द्रे अंधविज्ञान
 द्वारा जम्बू द्वीपना भरत क्षेत्रमां श्रेणिक गजने ज्योया सम्यक्त्वगुणशाली राजनीतिनु
 पालन करवावाणा राजने जेधने प्रसन्नमुख थछ पोते सम्यक्त्वगुणथी निभण इन्द्र,

कमलः सम्यक्त्वगुणविमलः सादरं भूयो भूयोऽवाप्तसम्यक्त्वादिगुणश्रेणिकं श्रेणिकं सुधर्मख्यायां स्वदेवसभायां प्रशंसाम् । इत्थं पुरन्दरास्यशैलनिस्सृता श्रेणिक-सम्यक्त्वप्रशंसासरित् सकलसुरसदस्य श्रवणसिन्धुमवागाहत ।

देवाश्च तदीयसम्यक्त्वादिगुणगणमहिमानं श्रावं श्रावममन्दानन्दतुन्दिला जातकौतूहलाः श्रेणिकं धन्यममन्यन्त । तदा द्वौ मिथ्यात्वदेवौ शक्रवचनं न श्रद्दधतुः । श्रेणिकं परीक्षितुं मनुष्यलोके तदन्तिकं समागतौ । उक्तञ्च—

“मुहेंदुदिव्वं मुहवत्थिगो हि सग्गा सुरो सेणियरायमागा ।

परिक्खिउ साहुसुवेसधारी अज्जासमेओ य सरोतढे सो ॥ १ ॥”

छाया—‘मुखेन्दुदीव्यन्मुहवत्त्रिको हि, स्वर्गात्सुरः श्रेणिकराजमागात् ।

परीक्षितुं साधुसुवेषधारी, आर्यासमेतश्च सरस्तटेऽसौ ॥ १ ॥’

स्वयं सम्यक्त्व गुणसे निर्मल इन्द्र, आदरके साथ बार बार सम्यक्त्व-गुणधारी श्रेणिक राजाकी प्रशंसा अपनी सुधर्मसभामें करने लगे । इस प्रकार राजा श्रेणिककी प्रशंसारूपी नदी इन्द्रके मुखरूपी पर्वतसे निकल कर सभामें बैठे हुए सब देवोंके कर्णरूपी सागरमें पहुंची ।

देवता लोग उनके सम्यक्त्व आदि गुणोंकी महिमा सुन-सुन कर अपूर्व आनन्दसे भर गए और आश्चर्यचकित होकर श्रेणिक राजाको धन्यवाद देने लगे उस समय दो मिथ्यात्वी देवोंने इन्द्रके वचनपर श्रद्धा नहीं की और राजा श्रेणिककी परीक्षा लेनेके लिये मनुष्य लोकमें उनके पास आये । जैसे कहा है:—

मुहेंदुदिव्वं मुहवत्थिगो हि, सग्गा सुरो सेणियरायमागा ।

परिक्खिउ साहुसुवेसधारी, अज्जासमेओ य सरोतढे सो ॥ १ ॥

आदर सहित बार बार पोटानी सुधर्मा सलामा सम्यक्त्वगुणधारी श्रेणिक राजानी प्रशंसा करवा लाग्या. जे प्रकारे राजा श्रेणिकनी प्रशंसारूपी नदी इन्द्रना मुखरूपी पर्वतथी निकणी सलामा ठेठेला सर्व देवोना कर्णरूपी सागरमा पहुँची

देवता लोकें तेना सम्यक्त्व आदि गुणोंने महिमा सालणी सालणीने अपूर्व आनन्दथी भरपूर थई गया तथा आश्चर्य चकित थईने श्रेणिक राजने धन्यवाद देवा लाग्या

ते समये जे मिथ्यात्वी देवोंने इन्द्रना वचन उपर श्रद्धा न करी अने राजा श्रेणिकनी परीक्षा देवा भाटे मनुष्य लोकमा तेनी पासे आव्या. जेभ कहुं छे के.—

मुहेंदुदिव्वं मुहवत्थिगो हि सग्गा सुरो सेणियरायमागा ।

परिक्खिउ साहुसुवेसधारी, अज्जासमेओ य सरोतढे सो ॥ १ ॥

ततः साधुरूपधारी सुरो जलाशये जालं वितत्य स्थितः, आर्यिकारूपधारी तत्र सरस्तीरे तिष्ठति स्म । अत्रान्तरे श्रेणिको राजा पवनसेवनार्थं समागतः । तत्र मत्स्यं हन्तुमुद्यतं साधु विलोक्यावोचत्-किमिति साधुर्भूत्वा दुराचरमि ? ।

स सरोपं तमुवाच-इयमार्यिका दोहदवतीत्यतो मीनमांसं बुभुक्षाणाऽ-स्तीत्येतदर्थं जाल विस्तारयामि, त्वमितो गच्छ राजन् ! किं ते प्रयोजन-मेताह्वगप्रश्नेन ?, इति तद्वचनं राजा श्रुत्वा क्रोधारुणनयनोऽवदत् निर्लज्ज ! कृत्य-मिदं त्यज, अन्यथा देहदण्डं ते दास्यामि । इति श्रुत्वाऽसौ साधुरवोचत्-गौतमादयश्चतुर्दशसहस्रमुनयश्चन्दनवालादयः षट्त्रिंशत्सहस्रार्यिकाश्च सर्वे अन्त-र्दुराचारिणो बहिः साधुवेषधारिणः सन्ति तर्हि किं मामधिकिपसि ? ।

उन दोनों देवोंने वैक्रिय शक्तिसे साधु और साध्वीका रूप धारण किया सुखपर सदोरकसुखवस्त्रिका बांधी और कक्ष प्रदेश (कांग्र) में रजोहरण लिया, इस प्रकार वेष बनाकर सरोवरके किनारे जा ग्वडे हुए । उनमेंसे एक देव साधुरूप धारण किया हुआ जाल फैलाकर सरोवरके तटपर खड़ा होगया और दूसरा साध्वी रूप धारण किया हुआ वही उसके समीपमें खड़ा हो गया । उसी अवसरपर महाराज श्रेणिक क्रीडाके निमित्त घूमते हुए वहाँ आ पहुँचे उन्होंने मछली मारनेके लिए उद्यत साधुको देखकर कहा ओह ! तुम साधु होकर यह दुष्ट आचरण क्यों करते हो ? तब वह साधुवेषधारी क्रोधित होकर बोला-यह आर्या गर्भवती होनेसे इसको मछली खानेका दोहद उत्पन्न हुआ है इस लिए मछलियां मारनेको जाल फैलाये खड़ा हूँ, जाइये-राजन् ! इससे आपका क्या प्रयोजन है ?

ते अन्ने हेयोऽप्ये वैक्रिय शक्तिरथी साधु तथा साध्वीनु इय धारण्य कथुं सुभ उपर होरासडित सुभवस्त्रिका गांधी तथा काण्मां रनेडरण्य दीधुं अ्ये प्रकारनेो वेध लध तणावने कठि नध विभा रक्षा. अ्येमाथी अ्येक देव साधुनु इय धारण्य करीने नण इलावी सदोवरना तट उपर विसेो रक्षी तथा भीने साध्वीनु इय धारण्य करी त्याज तेनी पांसे विसेो रक्षी ते वभते महाराज श्रेणिक क्रीडा निमित्ते इरता इरता त्या आवी पडोऽन्या तेमछे माछली मारवा माटे उद्यत थयेला साधुने नेधने कधुं आड ! तमे साधु थधने आ दुष्ट आचरण्य शा माटे करे छे ? त्यारे ते साधुवेषधारी क्रोध करीने गोल्ये-आ आर्या गर्भवती होवार्थी तेने माछली भावाने उडोणो थये छे. अ्येडला माटे माछली मारवाने नण इलावीने विसेो छु नअ्यो राजन् ! अ्येनु आपने शु प्रयोजन छे ?

ततः श्रेणिकोऽवदत्—त्वाहसानां दम्भं दुराचारं च वीक्ष्य मम धर्मानु-
रागो नापगच्छति, पृथिवी पातालं गच्छेत्, सूर्यः पश्चिमदिश्युदियात्, चन्द्रो
वह्निं वर्षेत्, वह्निः शीतलो भवेत्, अमृतं विषं भवेत् तदपि मम सम्यक्त्वं
न प्रचलेत् । ततो देवद्वयमवधिज्ञानेन राजानं सम्यक्त्वधर्मे निश्चलं विज्ञाय
पुनः पुनः स्तौति । तथाहि—

(इन्द्रवज्रा)

“ सम्यक्त्वधारी च परोपकारी,
धन्योऽसि राजन् ! कृतपुण्यराशिः ।
तुल्यस्त्वया कोऽपि न भूतलेऽस्मिन्,
सर्वं समक्षं त्वयि दृष्टमैतत् ॥ १ ॥

ऐसे साधुके वचन सुनकर राजा क्रोधित हो बोले—

निर्लज्ज ! छोड इस दुष्कृत्यको, नहीं तो दण्ड दूंगा । यह
सुनकर वह साधुवेषधारी बोला ? किसको दण्ड देते हैं ? गौतमादि
चौदह हजार मुनि और चन्दनवाला आदि छत्तीस हजार साधुवर्षी
सभी अन्तर दुराचारी और बाहर साधुपनका आडम्बर रखते हैं तो
मुझ अकेलेपर ही क्यों आक्षेप करते हो ? ।

यह सुनकर राजा श्रेणिक बोले—तुम्हारे जैसे दम्भी और दुरा-
चारीको देख कर मेरा धर्मका अलुराग नहीं हट सकता है, अर्थात्
जिनवचनपर स्थित मेरी दृढ श्रद्धा नहीं हट सकती है, पृथ्वी पाता-
लमें चली जाय, सूर्य पश्चिममें उदय हो जाय, चन्द्र अग्नि वरसावे,
अग्नि शीतल बन जाय, अमृत विष बने तो भी मेरा सम्यक्त्व विच-
लित नहीं हो सकता ।

येवा साधुना वचन सांभणी राज्ञ क्रोध करीने भोल्याः—

निर्लज्ज ! छोडी दे आ दुष्कृत्यने, नहि तो दण्ड करीश. आ सांभणीने ते
साधुवेषधारी भोल्या—दण्ड कोने आपशे ? गौतम आदि चौदह हजार मुनि तथा चन्दन-
वाला आदि छत्तीस हजार साधुवर्षीओ तमाभ अन्तर दुराचारी तथा बाहर साधुपणुने
आडम्बर राखे छे तो मारा अकेलाना उपरन्ठे म आक्षेप करे छे ?

आ सांभणीने राज्ञ श्रेणिक भोल्या—तमारा जेवा दंभी तथा दुराचारीने
जेधने मारे धर्म उपरने अलुराग उगी शंकरे नहि, अर्थात् जिनवचन उपर मारी
दृढ श्रद्धा विचलित न थछे शके. पृथ्वी पाताणमा च्याली जाय, सूर्य पश्चिममा गिजे,
चंद्र अग्नि वरसावे, अग्नि ठंडो भनी जाय, अमृत जेर भनी जाय तो पणु मार
सम्यक्त्व चलायमान थछे शके नहि.

अन्यच्च—

शार्दूलविक्रीडितम् ।

“सम्यक्त्वं विमलं परं दृढतरं यद्वर्णितं तावकं,
देवेन्द्रेण ततोऽधिकं त्वयि सदा तद् भूपते ! राजते ।

दानं दीनदयालुता जिनवचोमर्मज्ञता साधुता,
धर्मैकप्रियता गुरौ विनयिता देवेऽनुरागस्तथा ॥ २ ॥

उसके पश्चात् उन दोनों देवोंने अवधिज्ञान द्वारा राजाको सम्यक्त्व धर्मके अन्दर निश्चल जानकर चारम्बार इस प्रकार स्तुति करने लगे—

“सम्यक्त्वधारी च परोपकारी, धन्योऽसि राजन् ! कृतपुण्यराशिः ।

तुल्यस्त्वया कोऽपि न भूतलेऽस्मिन्, सर्वं समक्षं त्वयि दृष्टमेतत् ॥ १ ॥

अर्थात्—हे सम्यक्त्वधारी, परोपकारी राजन्, तुम धन्य हो । तुम्हारे जैसा पुण्यवान् अटलसमकितधारी इस भूतल पर अन्य नहीं । जो सम्यक्त्वधारीके गुण होते हैं वे सब तुममें प्रत्यक्ष पाये जाते हैं ॥१॥

फिर भी—

सम्यक्त्वं विमलं परं दृढतरं यद्वर्णितं तावकं,

देवेन्द्रेण ततोऽधिकं त्वयि सदा तद् भूपते ! राजते !

दानं दीनदयालुता जिनवचोमर्मज्ञता साधुता,

धर्मैकप्रियता गुरौ विनयिता देवेऽनुरागस्तथा ॥ २ ॥

त्यार पछी ते गन्ने देवे अवधिज्ञान द्वारा राजने सम्यक्त्व धर्मनी अंदर निश्चल नदृष्टीने वारवार तेनी आ प्रभाषे प्रशंसा करवा लाग्या—

सम्यक्त्वधारी च परोपकारी, धन्योऽसि राजन् ! कृतपुण्यराशिः ।

तुल्यस्त्वया कोऽपि न भूतलेऽस्मिन् सर्वं समक्षं त्वयि दृष्टमेतत् ॥ १ ॥

अर्थात्—हे सम्यक्त्वधारी परोपकारी राजन् तमो धन्य छे, तमारा जेवा पुण्यवान् अटल समकितधारी आ पृथ्वी उपर भीन नथी जे सम्यक्त्वधारीना शुष्ण होय छे ते गधा तमाराभा प्रत्यक्ष जेवाभा आवे छे. (१)

इरी पछ—

सम्यक्त्वं विमलं परं दृढतरं यद्वर्णितं तावकं,

देवेन्द्रेण ततोऽधिकं त्वयि सदा तद् भूपते ! राजते ।

दानं दीनदयालुता जिनवचोमर्मज्ञता साधुता,

धर्मैकप्रियता गुरौ विनयिता देवेऽनुरागस्तथा ॥ २ ॥

एवं स्तुवन् देवदर्शनममोघं भवतीति प्रसन्न एको देवो हारमपरश्च
द्वौ मृद्वोलकौ श्रेणिकाय दत्त्वा स्वस्थानं गतौ । ततः श्रेणिकेन देवदत्तहारश्चे-
लनायै दत्तः, द्वौ मृद्वोलकौ च नन्दायै । नन्दा च 'पतिदत्त किमपि वस्तु
सादरं ग्राह्य'मिति मनसि कृत्वा पातिव्रत्यरक्षायै मृद्वोलकौ जानानाऽपि सपत्नी-
द्वेषं विहाय सादरमाहृतौ । सहर्षोत्कर्षं मञ्जूषायां स्थापनसमये भूषणकरुण्डा-

हे राजन् ! दान देना, दीन पर दया रखना, जिनवचनके
रहस्यको जानना, सज्जनता रखना, धर्मका अद्वितीय प्रेम, गुरुजनके
साथ विनय और वीतराग देवके प्रति अनुराग इत्यादि जो तुम्हारे
दृढतर सम्यक्त्वके निर्मल गुण इन्द्रने वर्णन किये हैं उससे भी अधिक
तुम्हारेमें साक्षात् मौजूद है ॥ २ ॥

इस प्रकार राजाकी प्रशंसा करते हुए देवोंने देवदर्शन अमोघ
होता है, इस भावसे प्रसन्न होकर उनमेंसे एक देव राजाको हार
और दूसरा देव दो मिट्टीके गोले भेंट करता है । बाद वे दोनों
अपने स्थानपर गये और राजा अपने स्थानपर आया । पश्चात् राजा
श्रेणिकने देवसम्पत्ति हार चेल्लना महारानीको दिया, और दोनों मिट्टीके
गोले नन्दा महारानीको दिये । नन्दाने भी 'पतिको दी हुई कोई भी
वस्तु आदरसे लेना चाहिए, यह पतिव्रताका धर्म है' ऐसा विचार-
कर अपनी सौतके साथ ईर्ष्याको छोडकर आदरसे उन गोलोंको लेलिये ।
और अत्यन्त हर्ष के साथ उन मिट्टीके गोलोंको सुरक्षितपनेसे अपनी

हे राजन् ! दान देवु, गरीय उपर दया राखवी, जिनवचनना रहस्यने
जाणुनुं, सज्जनता राखवी, धर्ममा अद्वितीय प्रेम, गुरुजननी साथे विनय तथा
वीतराग देवमां अनुराग, इत्यादि ने तमारा दृढतर सम्यक्त्वना निर्मल गुणु धरे
वर्णन कर्था छे तेनाथी पणु प्रधारे तमाराभा साक्षात् मौणुद छे (२)

आ प्रकारे राजनी प्रशंसा करता थका देवाये देवदर्शन अमोघ होय छे, ये
भावथी प्रसन्न थछ तेमनाभाथी येक देव राजने हार अने पीले देव जे माटीना
गोणा लेट आपे छे. पछी ते जेठ पोताना स्थाने गया तथा राज पोताने स्थाने
आव्या पछी राज श्रेणिके देवे आपेदो हार चेल्लना महाराणीने आप्ये तथा
जेठ माटीना गोणा नदा महाराणीने आप्या नदाये पणु 'पतिये आपेदी केछ
पणु वस्तु आदरथी देवी जेठये ये पतिव्रताने धर्म छे' येम विचार करी पोतानी
शोकथनी साथे धर्षने छोडी आदरथी ते गोणा लछ लीधा अने अत्यंत हर्षथी ते

घातेन तौ भग्नी । तत्रैकस्मिन् कुण्डलयुगलमपरस्मिन् वस्त्रयुग्मं च वीक्ष्य परं प्रमृदिता जाता ।

अन्यदाऽभयो भगवन्तं महावीरप्रभुं पृष्टवान्-अपश्चिमः को राजऋषिर्भविष्यति ? । भगवता प्रोक्तम्-अतः परं वद्वसुकुटो वृषो न प्रव्रजिष्यतीति श्रुत्वा श्रेणिकभूपेन तातेन दीयमानं राज्यं न स्वीकृतवान् ।

नन्दया दीक्षाभिलाषिणमभयकुमारं ज्ञात्वा कुण्डलयुगलं वैदल्याय दत्तम्, वस्त्रयुग्मञ्च वैहायसाय । तदनु महतोत्सवेन महाराज्ञी नन्दाऽभयकुमारश्रीं प्रव्रजितौ ।

पेटीमें रखने लगी उस समय भूपणकरडंककी टक्करसे दोनों फूट गए, तब वहां वह देखती है कि एक गोलेमें कुण्डलकी जोड़ी और दूसरेमें दो दिव्य वस्त्र हैं, ऐसा देखकर रानी बहुत प्रसन्न हुई ।

एक समय अभयकुमारने भगवान महावीर स्वामीसे पूछा कि-हे भगवन् ! अंतिम राजऋषि कौन होगा ?

भगवानने कहा-हे अभयकुमार ! आज पीछे सुकुटवद्ध राजा प्रव्रजित नहीं होगा । यह सुनकर अभयकुमारने मनमें विचार किया कि-अगर पिताद्वारा मिलने वाले राज्यको स्वीकार करू तो मैं भी सुकुटवद्ध राजा बनूँ, परन्तु भगवानका वचन है कि-सुकुटवद्ध राजा राजऋषि नहीं बनेगा एतदर्थ मैं राज्य नहीं लूँगा । इस लिए पितासे प्राप्त होते राज्यको उनने स्वीकार नहीं किया ।

भाटीना गोळाने सुरक्षित रीते पोतानी पेटीमा राखवा लागी परंतु ते राखती वधते आभूषणना राखलाना अथडावाथी भेड झूटी गया त्याचे तेना नेवामा आण्युं हे अेक गोळामा कुंडलनी नेडी छे तथा पीतमा ये दिव्य वस्त्र छे आ नेधने राणी अहु प्रसन्न थड

अेक समय अभयकुमारने भगवान महावीर स्वामीने पूछ्युं हे-हे भगवान् ! अंतिम राजऋषि कोण थसे ?

भगवाने कहु-हे अभयकुमार आज पछी सुगटधारी राजा प्रव्रजित थसे नहिं आ सालणीने अभयकुमारने मनमां विचार क्यो हे ने पिता तरुथी भणनार राज्याने स्वीकार कडं तो हु पछु सुगटवद्ध राजा गनु परंतु भगवाननुं वचन छे हे सुगटवद्ध राजा राजऋषि नहिं थने ते माटे पिता तरुथी भणनार राज्याने स्वीकार नहिं कडं, आम निश्चय करीने तेणे राज्याने स्वीकार न क्यो

श्रेणिकभूपस्य काली-महाकाली-प्रमुखान्यराज्ञीनामन्ये कालकुमारादयः पुत्रा आसन् । अभये प्रव्रजिते वक्ष्यमाणचरित्रः कृणिकः कदाचित् रहसि कालादिदशकुमारेः सह मन्त्रयति स्म-स्वेष्टसुखविधातकं जनकं वद्ध्वा राज्य-स्यैकादश भागान् करोमीति सर्वैः स्वीकृतम् ।

छलेन कृणिकेन रत्नपूर्वभवत्रैरित्वेन श्रेणिको बद्धो लौहपञ्जरे निक्षिप्तश्च । पूर्वाह्नेऽपराह्णे च कशाशतं भृत्यादिना दाप्यते । भूपस्य भोजनादिकं निरुद्धम् ।

अभयकुमारको दीक्षाभिलाषी जानकर नन्दा महारानीने कुंडल युगल वैहल्य कुमारको दिया और वस्त्रयुगल वैहायस कुमारको दिया और फिर बड़े उत्सवसे नन्दा महारानी और अभयकुमार दोनों प्रव्रजित हुए ।

श्रेणिक राजाके काली महाकाली आदि अन्य रानियोंके काल महाकाल आदि और भी अनेक पुत्र थे । अभयकुमारके दीक्षा लेने पर कृणिक राजा जिनका चरित्र आगे वर्णन करेंगे उन्होंने एक समय एकान्तमें कालकुमार आदि दस कुमारोंके साथ इस प्रकार मंत्रणा (सलाह) की-अपने पितां महाराज श्रेणिक अपने इष्ट सुखके विधातक हैं इस लिए इनको बन्धनमें डालकर राज्यका ग्यारह भाग करके सुखपूर्वक राज्यसुखका अनुभव करें । यह बात सब भाइयोंको पसन्द आगई और उन्होंने स्वीकार कर ली ।

अपने पूर्वभवके वैरसे कृणिकराजाने अपने पिता श्रेणिकको किसी छलसे पकडकर लोहेके पींजरेमें डालकर सुबह शाम अपने

अभयकुमारने दीक्षाभिलाषी जानकीने नन्दा महाराणीय कुंडलनी नेड वैहल्य कुमारने आपी अने वस्त्रनी नेड वैहायस कुमारने दीधी, ते पछी मोटा उत्सवशी नन्दा महाराणी अने अभयकुमार अने अने प्रव्रजित थया ।

श्रेणिक राजाने काली महाकाली आदि भीष्म राणीयो ना काल महाकाल आदि भीष्म अनेक पुत्रो पण्डु छता अभयकुमारने दीक्षा लीया पछी कृणिक राजा डे नेनु चरित्र आगण वर्यववामा आवशे तेहे अक वंशत अकतमा काल कुमार आदि दश कुमारानी साथे आ प्रमाणे मंत्रणा करी डे-आपणा पिता महाराज श्रेणिक आपणा इष्ट सुखने नाश करनार छे तेथी तेने अधनमा नाभी राजन्या अगीयाग लाग करी सुभ पूर्वक राज्य सुखने अनुभव करवे आ बात अधा साधयोने पसह पडी अने तेओअे तेना स्वीकार कर्यो ।

पोताना पूर्व लवना वेरथी कृणिक राजाअे पोताना पिता श्रेणिकने डे छ/ कपटथी पकडी लोढ ना पावरामा नाप्यो अने सवार साज पोताना नेडरे द्वारा

तदा चेल्लना च प्रच्छन्नरीत्या स्वाद्यं वस्तु तथा च स्वपरिधानवस्त्रमार्द्रीकृत्य भूपसमीपे गच्छति । गुप्तरीत्या भोज्यं वस्त्रनिष्पीडनजलं च भूपाय समर्पयति । कशाघातप्रबलवेदनाशमनाय भेषजमिश्रितवस्त्रजलेन गात्रं प्रक्षालयति, तत्प्रभावेन भूपो वेदनां न वेदयति ।

अथ चेल्लनावृत्तान्तं वर्णयते—चेल्लना त्रिकालं धर्मक्रियां समाराधयति मनसि विचारयति च—‘अहो ! कर्मणां विचित्रागतिरीदृशशक्तिशालिनोऽपि

भृत्योंके द्वारा सौ-सौ चाबुककी मार महाराज श्रेणिकको दिलवाता था और खान-पान भी रोक दिया था, जब मनमें आता तब खानेको देता था । इस प्रकार राजाको भूख और प्यासकी यातनासे पीड़ित देखकर चेल्लना महारानी अत्यंत दुःखित हुई और वह खानेकी वस्तु गुप्त रीतिसे बांध लेती और पानीसे भीगे वस्त्र पहनकर राजाकी पास जाती थी. खाद्य वस्तु गुप्त रीतिसे राजाको खिलानी और अपने कपड़े निचोड़ कर उसका पानी पीलाती और चाबुककी प्रबल चोटसे उत्पन्न हुई वेदनाको शान्त करनेके लिए औषधसे मिले हुए वस्त्र जलसे राजाके शरीरको धोती थी, जिससे वेदना कुछ कम पड़जाती थी ।

अथ चेल्लनाके विषयमें कहते हैं—चेल्लना महारानी धर्मात्मा और धर्मपरायणा थी । त्रिकाल (प्रातःकाल, मध्याह्न और सायंकाल) धर्मध्यान करती थी और अपने पति महाराज श्रेणिकके विषयमें बोलती थी कि—अहो ! कर्मोंकी कैसी विचित्र गति है, कि जिससे

सो सो आयुक्तेन मार महाराज श्रेणिकने देवरावतो इतो तथा भावा पीवानु पशु अटकाव्यु इतु. पोताना मनमां आवे त्वादे भावाने आपतो इतो आ प्रकारे रावने लूभ अने तरसनी पीडाथी हु णी नेधने चेल्लना महाराणी णहु दुःणी थध अने ते भावाना वस्तु छानी रीते णाधी तथा पाणीथी बीजवेला वस्त्र पड़ेरी रावनी पासे नती भावानी वस्तु छानी रीते काडी रावने णवरावती तथा पोताना कपडा निचोवीने तेनु पाणी पीवरावती तथा आयुक्तेना सभत धाथी उत्पन्न थती वेदनाने शात करवा भाटे औषध लगाडेला वस्त्रना पाणीथी रावनां शरीरने धोती इती नेथी वेदना कधक ओधी पडी नती इती.

इवे चेल्लनावु वृत्तात कडे छे—चेल्लना महाराणी धर्मात्मा तथा धर्मपरायणा इती त्रिकाल धर्म ध्यान करती इती तथा पोताना पति महाराज श्रेणिकनी णावतमां कडेती इती हे—अहो ! कर्मोंकी कैसी विचित्र गति छे नेथी आवा शकतशाणी महा-

भूपस्यैतादृशी दशा जाता ?, केन कर्मणा—एतादृगवस्था जातेति सर्वज्ञो जानाति, सर्वज्ञमन्तरेण को नाम कर्मगतिं ज्ञातुं शक्नोति । हे आत्मन् ! यदि धर्मो नाराध्यते तदा तवापि तादृशी दुर्दशा भविष्यति ।

इत्यादि स्वमनसि विचार्य चेल्लना निरन्तरं प्रवर्धमानपरिणामेन धर्म-क्रियां करोति । नमस्कारपौरुषीप्रभृतिदशविधप्रत्याख्यानसमाचरणं श्रावकव्रत-परिपालनं, मार्यमाणजीवरक्षणं, स्वधर्मिपरिपोषणं, दीनाऽनाथाऽन्धपङ्गवादिकरुणा-करणं साधु-साध्वी—श्रावक—श्राविकारूपचतुर्विधतीर्थसेवाकरणमशरणाशरण्यतां

ऐसे शक्तिशाली महाप्रभाववाले भूपकी भी यह दुर्दशा हो रही है, किस कर्मसे इनकी ऐसी दशा हुई है इसे तो सर्वज्ञके सिवाय कोई नहीं जान सकता है । हे आत्मन् ! अगर तू धर्मका आराधन नहीं करेगा तो तेरी भी ऐसी ही दुर्दशा होनेवाली है ।

इत्यादि कर्मकी गहन गतिको और अपने पतिकी दुर्दशाको विचारती हुई निरन्तर प्रवर्धमान परिणामसे धर्मक्रिया करती थी । नमस्कार (नवकारसी) पौरुषी आदि दस प्रकारके प्रत्याख्यान (पचखाण) नित्यप्रति करती थी । श्रावकके व्रतोंका पालन करता थी, मारेजाते हुए जीवोंको बचाती थी, साधर्मियोंका प्रोषण करती थी, और दीन, अनाथ, पङ्गुजनोंके ऊपर परम करुणा करके अन्न, वस्त्र, औषधि आदिके द्वारा उनके दुःखोंका निवारण करती थी । साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका रूप चार तीर्थ की सेवा करती थी । निराधारकी

प्रलाववाणा राज्ञानी पक्षु आवी दुर्दशा यथ रूढी छे क्या कर्मथी तेमनी आवी दशा यथ छे ते तो सर्वज्ञ सिवाय केछे नखी शकतुं नथी

हे आत्मन् ! अगर जे तू धर्मनुं आराधन नछि करे तो तारी पक्षु आवीज दुर्दशा थवानी छे.

आ प्रभाषे कर्मनी गहन गतिने अने पोताना पतिकी दुर्दशाने, विचार करती थकी दुर्दशां प्रवर्धमान परिणामथी धर्मक्रिया करती छती. नमस्कार (नवकारसी) पौरुषी आदि दश प्रकारना प्रत्याख्यान (पचखाण) नित्य प्रति करती छती. श्रावकनां व्रतानुं पालन करती छती. मार्या जता लुवाने भयावती छती. साधर्मिआनुं पोषण करती छती तथा दीन, अनाथ, दुर्दायांगणा माणसेना उपर परम करुणा करीने अन्न वस्त्र औषध वगैरथी तेमनां दुःखानुं निवारण करती छती. साधु, साध्वी, श्रावक श्राविका रूप चार तीर्थनी सेवा करती छती. निराधारनी आधार छती. क्या सुधी

सकलजीवदितमुखपथ्यकारितां च दद्याना, एवं विचित्रधर्मक्रियां कुर्वाणा विहरति, त्रिकालसामायिकं च कुरुते । तथाहि—

“सा चेल्लणा भूमिथल पमज्ज, वत्थाइं सव्वं पडिलेक्ख भावा ।

वद्धा सदोरं मुहवत्तिमासे, सामाइयं तं कुणए तिकालं ॥ १ ॥”

छाया—“सा चेल्लना भूमिस्थल प्रमार्ज्य, वद्धादि सर्वं प्रतिलेख्य भावात् ।
वद्ध्वा सदोरां मुखवस्त्रीमास्ये, सामायिकं तत् कुरुते त्रिकालम् ॥ १ ॥”

अन्यदा कृणिकः सर्वालङ्कारविभूषितः स्वमातुश्चेल्लनादेव्यधरणी वन्दितुं समागतस्तत्र तामार्तध्यानयुक्तां दृष्ट्वा वन्दमानः कृणिकराजः स्वजननीं पृच्छति—

आधार थी, कहाँ तक कहे महारानी चेल्लना सब प्रकारसे सब जीवोंके लिए हितकारी, पथ्यकारी, और मुखकारी थी, और अनेक प्रकारसे धर्मक्रिया करती हुई शीलव्रत आदि आराधन करती हुई तीनों काल सामायिक करती थी । कहा है:—

“ सा चेल्लणा भूमिथलं पमज्ज, वत्थाइं सव्वं पडिलेक्ख भावा ।

वद्धा सदोरं मुहवत्तिमासे, सामाइयं तं कुणए तिकालं ” ॥ १ ॥

वह चेल्लना महारानी विधिपूर्वक पहले प्रमार्जिका (पूँजनी) से भूमिको पूँज लेती थी, बाद वस्त्रोंकी प्रतिलेखना (पडिलेहणा) करके मुँहपर सदोरकमुखवस्त्रिका बांधकर तीनों कालमें सामायिक करती थी ।

एक समय कृणिक महाराज सब अलंकार पहिने हुए अपनी माता चेल्लना महारानीके पास चरण-वन्दनके लिए आये । अपने पतिके दुःखसे दुःखित आर्तध्यानयुक्त अपनी माताको देखकर कहने

कहीये महाराणी चेल्लना सर्व प्रकारे गधा लुवेने माटे हितकारी, पथ्यकारी अने सुभकारी હતી तथा अनेक प्रकारे धर्मक्रिया કરતી थी शीलव्रत आदि आराधन કરતી थी ત્રણે કાળ સામાયિક કરતી હતી કહ્યું છે કે:—

“ સા ચેલ્લણા ભૂમિથલં પમજ્જ, વત્થાઈ સવ્વં પડિલેક્કવ ભાવા ।

વદ્ધા સદોરં મુહવત્તિમાસે સામાઈયં તં કુણએ તિકાલં ॥ ૧ ॥ ”

તે ચેલ્લણા મહારાણી વિધિપૂર્વક પહેલાં ગુન્ઠાથી ભૂમિને પુંજ પછી વસ્ત્રોની પ્રતિલેખના (પડિલેહણા) કરી એ ઉપર દોરા સહિત મુખવસ્ત્રિકા બાંધીને ત્રણે કાલ (સવાર બપોર સાજ) સામાયિક કરતી હતી.

એક સમય કૃણિક મહારાજ ગધા અલંકાર પહેરીને પોતાની માતા ચેલ્લણા મહારાણીની પાસે ચરણ-વંદન માટે આવ્યા. પોતાના પતિના દુઃખથી દુઃખિત આર્ત-ધ્યાન કરતી પોતાની માતાને જોઈને કહેવા લાગ્યા.—હે જનની ! હું પોતે માટે

हे मातः ! यदहं खलु स्वयमेव महाराज्याभिषेकेण विशालराज्यश्रियमनुभवामि तेन किं तव मनसि सन्तोष उल्लासः प्रमोदो न वर्तते ? तुभ्यं मम भाग्योदयो न रोचते किम् ? । ततश्चेल्लणा देवी कूणिकराजमेवमवादीत्-हे पुत्र ! यच्च- देवगुरुसदृशपरमस्नेहानुरागरक्तं- निज तातं निगडवन्धने विधाय स्वयं राज्यश्रियमनुभवसि तत्कथं तादृशेन दुष्कृतेन मम मनसि तुष्टिर्हर्षावकाशश्च । ततः कूणिकः पृच्छति-हे मातः ! कथं मयि तातः स्नेहानुरागरक्तः ? , तदा सा जगाद-हे पुत्र ! यश्चोपकुरुते तमेव त्वं द्वेक्षि, पश्य-जन्मानन्तरं मदाज्ञप्तया दास्या वने त्वं विसृष्टस्तदानीं तवेयमङ्गलिः कुक्कुटेन तुण्डेन खण्डिता, अक-

लगे-हे जननी मैं स्वयं बड़े राज्यके अभिषेकसे अभिषिक्त होकर विशाल राज्यश्रीका अनुभव कर रहा हूँ, इससे तुम्हारे मनमें क्या संतोष, उल्लास, प्रमोद नहीं है ? क्या मेरा भाग्योदय तुझे इष्ट मालूम नहीं देता ? । पुत्रके ऐसे वचन सुनकर महारानी चेल्लना देवी बोली-पुत्र ! तू देव और गुरुके समान परम स्नेहवाले अपने पिताको बन्धनमें डालकर स्वयं राजश्रीका अनुभव करता है ऐसे दुष्कृत्यसे किस तरह मेरा मन सन्तुष्ट और प्रसुद्धित हो सकता है ? !

तव कूणिक महाराज बोले-हे जननी ! मेरे पिताका मुझपर किस तरहका अनुराग है ? ।

माता बोली-वत्स ! जो तेरे उपकारी हैं, तू उन्हीका द्वेष करता है, देख-तेरे जन्म होनेके बाद तुझे मेरी आज्ञासे दासीने अशोक-वाटिकामें छोड़ दिया था, उस समय तेरी यह अंगुली कुक्कुट-(मुर्गे) ने अपनी तीक्ष्ण चोंचसे खंडित करदी थी और तू

राज्यना अभिषेकथी अभिषेक करायेलो डोछ विशाल राज्यश्रीना अनुभव करी रह्यो छुं तेथी तमारा मनमा शुं सतोष, उल्लास आनंद नथी थतो ? शु भाइ भाग्योदय तमने नथी गमतुं ? . पुत्रना आवां वचन सालणी भडाराणी चेल्लना देवी बोली-पुत्र ! तुं देव तथा गुरु समान परम स्नेहवाणा पोताना पिताने बंधनमां नाणी पोते राज्यश्रीना अनुभव करी रह्यो छे जेवा दुष्कृत्यथी डेवी रीते भाइं मन सन्तुष्ट तथा आनंदित रही शकें ?

त्यारे कुणिक महाराज बोल्या-हे जननी ! मारा पितानो मारा उपर डेवी जतनो अनुराग छे ?

माता कहे-वत्स ! जे तारे उपकारी छे तेनोज तु द्वेष करे छे. जे-तारे जन्म थया पछी मारी आज्ञाथी दासीमे तने अशोकवाटिकांमां भूडी दीधो डतो ते वथते तारी आ आंगणी कुक्कुटमे पोतानी तीणी आंचथी अडित करी दीधी डती

स्मात्त्वामुपगतस्त्वदीयतातो गृहमानैपीत् । अङ्गुलित्रणव्यथान्याकुलस्त्वमुच्चैश्चीत्कु-
र्वाणो मनागपि शान्तिं नावलम्बमान आसीः, करुणया त्वत्पिता बहुविधोप-
चारेणाङ्गुलिवेदनामपहत्य त्वां शान्तिमुपनीतवान्, एवं प्रकृत्या परमोपकारिणि
पितरि कथमथान्यथाभावमाविष्कुर्वन् न लज्जसे ? इति चेल्लनावचनं निशम्य
दीर्घं निःश्वस्य सपदि पीठादुत्थाय गृहीतपरशुः श्रेणिकबन्धनपञ्जरान्तिकं तदीय-

अनाथ (निराश्रित) होकर पडा-पडा चितला रहा था। अकम्मात्
तेरे पिता वर्हा आ पहुँचे और तुझे उठा लाये। तेरी अंगुलीका
घाव बढ गया था और तू बडे जोर-जोरसे रुदन करता था। जय
तेरी अंगुलीमें पीप भरजाता था तब तुझे अत्यधिक पीडा होती
और तनिक भी आराम नहीं मिलता था तब तेरे पिता तेरी तडफन
और वेदनाको देख दुःखित हृदय हो करुणासे औपधि-उपचार
करते थे और परम स्नेहसे तेरी अंगुलीको मुंहमें लें पीपका चूसकर
थूक देते थे और तुझे सब तरहसे आराम पहुँचाते थे। इस तरह
स्वभावसे परमोपकारी हितैषी पिताके प्रति तू अब कृतघ्न भावको
धारण कर दुष्ट व्यवहार करता हुआ क्यों नहीं शरमाता है। इस
प्रकार माताके मार्मिक और स्नेहभरे शब्दोंको सुनकर कूणिकने एक
लम्बी सांस ली और उसी समय आसनसे उठ पिताके बन्धन
काटनेके लिये हाथमें कुल्हाडी ली और जिस पींजरेमें श्रेणिक थे

अने तु अनाथ (निराश्रित) थछ पड्यो-पड्यो शेतो इता अथानक तारि पिता त्यां
आवी उडोअ्या अने तने उपाडी लाव्या. तारी आंगणी उपरने धा वधी गये।
इतो अने तु गहु जेरथी इदन करतो इतो. न्यादे तारी आंगणीमां पीप (पइ)
सराध नतुं इतुं त्यादे तने घण्णी पीडा यती इती, अने तने बरा पथु आराम
भणतो नडोतो. त्यादे तारा पिता तारे तड्कडाट अने वेदनाने जेधने दुःभीत इदय
थछ दवाधी औपधि उपचार करता इता अने परम स्नेहधी तारी आंगणीने मोठाभां
सध पइने सुसीने थुडी हेता इता तथा तने सर्व रीते आराम पडोआडता इता.
आवी रीते स्वभावधीन परम उपकारी हितैषु पिताना तरक तुं डवे कृतघ्न लावने
धानषु करी दुष्ट व्यवहार करतां केम शरमातो नथी ?

आ प्रकडे माताना मार्मिक स्नेह बर्या शण्टो सांजणी इच्छिके अेक लांणे।
निःभासे नाभ्ये तथा तेज वपते आसन उपरथी उठीने पितानुं गधन काफी
नाभवा हाथमां कुडाडो लीथे अने जे पींजराभां श्रेणिक इता ते तरक जवा भांडथुं ।

बन्धनं सकरुणं छेत्तुमपक्रामनि । श्रेणिकश्च परशुपाणिं कृतान्तमिवायान्तं कूणिकं विलोक्य जातवेपथुः क्रदुपचारेण परशुमहारेण मम प्राणानद्य हरिष्यतीति शङ्कमानो यावदसौ तदन्तिकमुपैति तावद् मुद्रिकानिहिततालपुटविषमवल्लिह्य प्राणानत्यजेत् । ततः कूणिको मृतकृत्यं विधाय निजदुराचारं चिन्तयन्नात्मनि परं ग्लायन् गृहमागतः, राज्यभारं वहन् कियता कालेन विशोको जातः । परञ्च यदा यदा पितुः शयनासनादीनि वस्तूनि विलोकयति तदा तदा तस्यु परमखेदो जायते, तेन राजगृहान्निर्गत्य चम्पायां राजधानीं चकार । तत्र निजभ्रातृगणसहितः कूणिको राज्यं बुभोज ॥ इति कूणिकविवरणम् ॥

उस तरफ जाने लगा, जब श्रेणिकने कूणिकको कुठार हाथमें लेकर आते हुए देखा तब भयसे धूजते हुए श्रेणिकको शंका हुई कि यह कुठार लिये हुए यह यमके समान मेरे पास आ रहा है मुझे न जाने किस कुमौतसे मारेगा ?, ऐसा विचार कर जब तक वह समीप आता है उतने ही समयमें उन्होंने अपनी मुद्रिकामें लगा हुआ तालपुट विषको चूसकर अपने प्राणोंको छोड़ दिया ।

बाद यह देखकर कूणिक बहुत दुःखित हुआ और पिताका दाह संस्कार आदि मृतककार्य करके अपने दुराचारोंकी मन ही मन निन्दा करता हुआ विषादयुक्त हो अपने घर आया । राज्यभारको वहन करते हुए उसे कुछ दिनोंके बाद पिताका शोक विस्मृत होने लगा किन्तु जब-जब पिताके शयन, आसन आदि वस्तुओंको देखता तब-तब कूणिक राजाके मनमें बड़ा दुःख उत्पन्न होता, इस कारण

न्यारे श्रेणिके कूणिकने यमराज समान कुडाडी हाथमां लधने आवतो जेयो । त्यारे लयथी धूजता श्रेणिकना मनमा शंका थध डे-रणे आ कुडाडी लधने यमना जेयो भारी पासे आवी रह्यो छे अने मने न जल्ले डेवा कुमौतथी मारथे. जेम विचारी न्यां सुधी ते पासे आवी पडोन्थे तेतलाज वधतमां तेमल्ले पोतानी वीटीमां लगाडेल तालपुट विषने चूसीने पोताना प्राणुने त्याग कर्यो.

बाद आ जेधं कूणिक अहु दुःखित थयो तथा पिताना देहने अजिनसंस्कार आदि मृतक कर्म करीने पोताना दुराचारेनी मनमा ने मनमा निंदा करतो थके जेदयुक्त थतो पोताने घेर आव्यो. राजन्या लारने वहन करतां थोडा दिवसे पछी पितानो शोक लूलावा लाग्यो. पछु न्यारे-न्यारे पितानुं भिछानुं आसन वगेरे वस्तुज्येने जेतो त्यारे-त्यारे कूणिक राजाना मनमां अहु दुःख थतुं डतु. आं कारणथी राजगृह

कूणिकस्य युद्ध साहाय्यविधायकानां कालादिदशकुमाराणां रथमुशल-
नामकसङ्ग्रामे प्रचुरजनविनाशकरणेन नरकप्रायोग्यकर्मसम्पादनहेतोर्निरयागामित्वेन
कालादिदशकुमारविवरणग्रथितस्य प्रथमाध्ययनस्य 'निरयायुः' इति नाम ।

अथ रथमुशलाभिधानसङ्ग्रामाविर्भावे कारणमुच्यते, तथाहि—चम्पायां
नगर्यां कूणिको राजा राज्यशासनं करोति । तदीयात्रनुजो वैहल्य-वैहायसौ
पितृदूतसेचनकहस्तिनमारूढौ दिव्यकुण्डलवसनहारालङ्कृतौ विलसन्तौ कूणिक-

राजगृह नगरको छोडकर राजाने अपनी राजधानी चम्पानगरीमें की
और वहां अपने भाइयों व कुटुम्बियोंके सहित रहकर राज्य करने लगे ।

इसप्रकार महाराज कूणिकका वर्णन यहां पर समाप्त होता है ।

रथमुशल संग्रामका संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है:—

कूणिक राजाके युद्धमें सहायता करनेवाले कालकुमार आदि
दस कुमारोंने रथमुशल संग्राममें बहुत जनोंके विनाश करनेके कारण
नरकप्राप्तिरूप कर्मोंका उपार्जन किया और नरकगामी बने; उन्हीं
दस कुमारोंका वर्णन इस प्रथम अध्ययनमें है, इस कारण इसका
'निरयायु' नाम है ।

अब रथमुशल संग्रामकी उत्पत्तिका कारण कहते हैं—

चम्पानगरीमें कूणिक राजा राज्य करते थे । उनके वैहल्य
और वैहायस, ये दो छोटे भाई थे । वे पिताके दिचे हुए सेचनक
हाथीपर चढकर दिव्य कुण्डल वस्त्र और हारको पहनकर विलास

नगरने छोडीने राज्ञे पोतानी राजधानी चम्पानगरीमा करी अने त्या पोताना
लाधेओ तथा कुटुम्बियों साथे रहीने राज्य करवा लाग्ये ।

आ प्रभाण्डे महाराज कूणिकनु वर्णन अर्ही समाप्त थाय छे

रथमुशल संग्रामनु संक्षिप्त वर्णन आ प्रकारे छे.—

कूणिक राजने युद्धमां सहायता करवावाणा दशकुमार आदि दश कुमारोंने
रथमुशल संग्राममा घणा भाण्डेओना विनाश करवाना कारण्थी नरकप्राप्तिरूप
कर्मोंनु उपार्जन कर्यु तथा नरकगामी बन्या तेज दश कुमारोंनु वर्णन आ प्रथम
अध्ययनमां छे, आ कारण्थी आनु 'निरयायु' नाम छे

इवे रथमुशल संग्रामनी उत्पत्तिनु कारण्थी कहे छे —

चम्पानगरीमा कूणिक राजा राज्य करता हुता- तेमने वैहल्य तथा वैहायस ओ
ओ नानाभाध हुता, तेओ पिताओ आपेला सेचनक हाथी उपर पोसीने दिव्य कुण्डल,

राजमहिषी पद्मावती निरीक्ष्य सेचनकगजमपहर्तुं कूणिकं प्रेरितवति । कूणिकेन नैकधा विज्ञाप्यमानाऽपि हस्तिहरणनिषक्तमानसा ततो न निवृत्ता । ततः पद्मावतीप्रेरितः कूणिको हस्तिनं तौ याचते । हस्तियाचने कृते वैहल्यवैहायसौ सपरिवारौ सान्तःपुरी कूणिकमयाद् विशाल्यां नगर्यां चेटकनामधेयं स्वमातामहं राजानं प्रपन्नौ ।

कूणिकेन दूतप्रेषणेन स्वकीयानुजौ चेटको याचितः, परञ्च चेटकेन तौ न प्रेषितौ, किन्तु दूतद्वारा कूणिकनिकटे संवादः प्रहितः—राज्यभागमाभ्यां यदि दास्यसि तदाऽमू हारहस्तिनौ च प्रेषयिष्यामीति । ततः कूणिकः कोपारुणनयनयुगलो वार्तां प्रेषयामास—यदि तौ वैहल्यवैहायसौ न प्रेषयसि तदा युद्धाय संनद्धो भव । चेटकेनोक्तम्—अहमपि संनद्धोऽस्मि ।

करते थे । उन्हें देखकर पद्मावती रानीने सेचनक हाथीको अपने अधीन करनेके लिये कूणिकको प्रेरित किया । भ्रातृप्रेमके कारण कूणिकके बहुत समझाने पर भी रानीका मन हाथीसे नहीं हटा । अन्तमें पद्मावतीकी बात मानकर कूणिकने दोनों भाइयोंसे हाथीकी याचना की । हाथीकी याचना करनेपर दोनों भाई भयभीत हो अपनेपरिवार सहित विशाला नगरीमें अपने नाना चेटक महाराजके पास चले गये ।

कूणिकने दूतद्वारा राजा चेटकसे हार और हाथी सहित भाइयोंको मांगा । तब चेटकने दूतद्वारा कूणिकको यह समाचार भेजा—यदि तुम राज्यका भाग इन दोनोंको देते हो तो इनको तथा हार एवं हाथीको भेज सकते हैं । यह सुनकर महाराज कूणिककी आँखें लाल हो गयीं और उन्होंने सन्देश भेजा—यदि हार हाथीके साथ

वञ्चो तथा डार पडेरीने विलास करता हुता तेमने जेधने पद्मावती राणीये सेचनक हाथीने पोताना कण्ठमा देवा भाटे कूणिकने प्रेरणा करी भ्रातृप्रेमने दीधे कूणिके, अहुं समनवी छता पथु राणीनु मन हाथीथी डठ्यु नहि आभरे पद्मावतीनी वात भानीने कूणिके गन्ने लाधयो, पासेथी हाथी भाग्ये, हाथी भागवाथी गन्ने लाधने थीक लागी अने पोताना परिवार साथे विशालानगरीभां पोताना नाना चेटक महाराजनी पासे यादया गया

कूणिके दूत द्वारा राजा चेटक पासे डार तथा हाथी सहित लाधयो मांग्या तयारे चेटके दूत द्वारा कूणिकने आ समाचार भेकल्या “ जे तमे राज्यने लाग आ गन्नेने देता छे ते तेज्याने तथा डार तेमज हाथीने भेकली शकुं ” आ साबणी महाराज कूणिकनी आणो लाद थध गध तथा तेमणे सदेश भेकल्यो जे डार

सैन्यदले गरुडव्यूहः, चेटकसैन्ये च सागरव्यूहो निर्मित आसीत् । ततश्च प्रथमेऽह्नि कूणिकराजस्य कालकुमारोऽनुजो निजसैन्ययुतः सेनापतिः स्वयं युध्यमानश्चेटकेन निक्षिप्तेनामोघेनैकेन शरेण निहतः । कूणिकसैन्यं च भग्नम् । ततो द्वयोरपि राज्ञोर्वलं निजं निजं स्थानं प्राप्तम् ।

द्वितीयेऽह्नि सुकालो निजसैन्यसमन्वितो रणस्युपगतो युध्यमानश्चेटकेनैकेन शरेण निपातितः । एवं तृतीयेऽह्नि महाकालः, चतुर्थे दिने कृष्णकुमारः, पञ्चमे दिवसे सुकृष्णकुमारः, षष्ठे महाकृष्णः, सप्तमे वीरकृष्णः, अष्टमे रामकृष्णः, नवमे पितृसेनकृष्णः, दशमे दिने पितृमहासेनकृष्णश्च चेटकेनैकेकेन बाणेन प्रत्यहमेकैकशः कालादयो दश कुमारा निहताः । दशसु निहतेषु कूणिक-

एकही अमोघ बाण छोडते थे । वहाँ कूणिकके सैन्यमें गरुडव्यूह था और चेटक (चेडा) के सैन्यमें सागरव्यूह । उसके बाद पहिले दिनमें कूणिक राजाके छोटे भाई कालकुमार अपनी सेना सहित सेनापति बनकर स्वयं चेटक-(चेडा) महाराजके साथ लडता हुआ उनके अमोघ बाणसे मारा गया । और कूणिककी सेना नष्ट होगयी ।

दूसरे दिन सेनासहित सुकालकुमार युद्धमें चेटकके बाणसे मारे गये । इसी तरह तीसरे दिन महाकाल कुमार, चौथे दिन कृष्ण कुमार, पंचवें दिन सुकृष्णकुमार, छठे दिन महाकृष्ण कुमार, सातवें दिन वीरकृष्ण कुमार, आठवें दिन रामकृष्ण कुमार, नवमें दिन पितृसेनकृष्ण कुमार और दसवें दिन पितृमहासेनकृष्ण कुमार चेटकके एक-एक बाणसे मारे गये । दसों कुमारोंके मारे जाने पर

दिवसमा अेकञ्च अमोघ बाणु छोडता डता आ तरङ्ग कृष्णिकना सैन्यमा गरुड-व्यूह डतो तथा चेटक (चेडा)ना सैन्यमा सागर-व्यूह डतो त्पार पछी पडेले दिवसे कृष्णिक राजाने नानोबाध डालकुमार पोतानी सेना सहित सेनापति गनीने पोते चेटक (चेडा) महाराजनी साथे लडता लडता तेना अमोघ बाणुथी मार्यो गये, अने कृष्णिकनी सेनाने नाश थड गये।

भीजे दिवसे सेना साथे सुकालकुमार युद्धमा चेटकना बाणुथी मार्या गया. आवी रीते त्रीजे दिवसे महाकाल कुमार, चौथे दिवसे कृष्णकुमार, पांचमे दिवसे सुकृष्ण कुमार, छठे दिवसे महाकृष्ण कुमार, सातमे दिवसे वीरकृष्ण कुमार, आठमे दिवसे रामकृष्णकुमार; नवमे दिवसे पितृसेनकृष्णकुमार, तथा दशमे दिवसे पितृमहासेनकृष्णकुमार, चेटकना अेक-अेक बाणुथी मार्या गया दशेय कुमारेना मार्या गयाथी,

श्वेटकं जेतुं देवाराधनायाष्टमभक्तं कृतवान् । ततः शक्रचमरो द्वौ देवेन्द्रौ प्रसन्नौ समागतौ । तत्र शक्र उवाच-चेटको व्रतधारी श्रावकोऽस्तीत्यतस्तं न हनिष्यामि, परं त्वां रक्षितुं शक्नोमि, कूणिकेनोक्तं-तथाऽस्तु, ततः शक्रस्तद्रक्षणाय वज्रकल्पमभेद्यकवचं विकुर्वितवान् । चमरश्च-‘महाशिलाकण्टक’ ‘रथमुगल’ चेति द्वौ सङ्ग्रामौ विकुर्वितवान्, तत्र महाशिलेव प्राणापहारकत्वात् कण्टको ‘महाशिलाकण्टक’ इत्युच्यते । अथवा-तृणाग्रेणापि हतस्य गजाश्वार्दंमहाशिलाकण्टकेन हतस्येव वेदना यत्र भवति स सद्ग्रामो ‘महाशिलाकण्टक’ इत्युच्यते ।

‘चेटकको जीते’ इस भावसे कूणिक राजाने देवताको आराधन करनेके लिए अष्टमभक्त क्रिया । उसके बाद शक्रेन्द्र और चमरेन्द्र प्रसन्न हुए और कूणिकके पास आये । उनमेंसे शक्रेन्द्र बोले-हे कूणिक ! चेटक (चेडा) राजा व्रतधारी श्रावक है इस लिए हम उसे नहीं मार सकते, पर तेरी रक्षा कर सकते हैं । शक्रेन्द्रके मुखसे निकले इन वचनोंको श्रवणकर कूणिकने ‘तथास्तु’ कहा । कूणिकके ‘तथास्तु’ कहने याने स्वीकार करलेनेके बाद शक्रेन्द्र कूणिककी रक्षा के लिए-वज्रसदृश अभेद्य कवच वैक्रियक्रियासे बनाया । चमरेन्द्रने महाशिलाकण्टक और रथमुशल नामक संग्राम विकुर्वित किया ।

‘महाशिलाकण्टक’-जो महाशिलाके समान प्राणोंका कण्टक अर्थात् घातक है वह महाशिलाकण्टक कहलाता है, अथवा तिनकेकी नाँकसे मारनेपर भी हाथी घोड़े आदिको महाशिलाकण्टकसे मारने जैसी तीव्र

‘श्वेटकने श्रुतु’ अथवा लावथी दृष्टिक रान्तये देवतानुं आराधन करवा भाटे अठम (३ उपवास) कथां तेथी शक्रेन्द्र तथा चमरेन्द्र प्रसन्न तथा तथा दृष्टिकनी पासे आल्या. तेभांथी शक्रेन्द्र बोल्या-हे दृष्टिक ! श्वेटक (चेडा) राजा व्रतधारी श्रावक छे तेथी अमे तेने नहि मारी शक्रीअे, पणु तारी रक्षा करी शक्रीअे. शक्रेन्द्रना सुभथी निक्षेणलां आ वचनेना साभाणीने दृष्टिके ‘ तथास्तु ’ कछु. दृष्टिकना ‘ तथास्तु ’ कडेवाथी अेटले स्वीकार करी लीधा पछी शक्रेन्द्रे दैष्टिकनी रक्षाने भाटे वज्रना जेपु अलेद्य कवच वैक्रिय क्रियाथी जनाल्यु.

चमरेन्द्रे महाशिलाकण्टक तथा रथमुशल नामे संग्राम विकुर्वित कथो.

‘महाशिलाकण्टक’-जे महाशिलाना जेवो प्राणोना कण्टक अर्थात् घातक छे. ते महाशिलाकण्टक कडेवाय छे, अथवा तेषुअलानी आणीथी मारवाथी पणु हाथी घोडा आदिने महाशिलाकण्टकथी मारवा जेवी तीव्र वेदना थाय छे, जे संग्रामने ‘ महाशिलाकण्टक ’ कडे छे.

‘रथमुशलं चे’ति=मुशलेन सहितो रथस्तस्मात् निस्सरन्मुशलो धावमानो जनसमुदाय यत्र विनाशयति स संग्रामो ‘रथमुशल’ इति निगद्यते ॥ १२ ॥

तत्र कूणिकेन सह कालः स्ववलसमन्वितः रथमुशलसङ्ग्राममुपयातः, इत्याशयकं सूत्रमाह—‘तएणं से काले’ इत्यादि ।

मूलम्—तएणं से काले कुमारे अन्नया कयाइ तिहिं दंति-सहस्सेहिं, तिहिं रहसहस्सेहिं, तिहिं आससहस्सेहिं, तिहिं मणुयकोडीहिं गरुडवूहे एक्कारसमेणं खंडेणं कूणिएणं रत्ता सद्धिं रहमुसलं संगामं ओयाए ॥ १३ ॥

छाया—ततः खलु स कालः कुमारः अन्यदा कदाचित् त्रिभिर्दन्तिसहस्रैः त्रिभी रथसहस्रैः, त्रिभिरश्वसहस्रैः त्रिभिर्मनुजकोटिभिः गरुडव्यूहे एकादशेन खण्डेन कूणिकेन राज्ञा सार्द्धं रथमुशलं सङ्ग्रामम् उपयातः ॥ १३ ॥

टीका—‘तएणं से’ इत्यादि—ततः सङ्ग्रामनिर्णयानन्तरं सः=असौ प्रथमः कालः=कालकुमारः अन्यदा=अन्यस्मिन् कदाचित्=कस्मिंश्चित् समये त्रिभिः=त्रिसंख्यकैः, दन्तिनां=इस्तिनां सहस्राणि=दन्तिसहस्राणि तैस्तथा, त्रिभी रथ-सहस्रैः, त्रिभिरश्वसहस्रैः, त्रिभिर्मनुजकोटिभिः सह गरुडव्यूहे एकादशेन खण्डेन

वेदना होती है उस संग्रामको ‘महाशिलाकंटक’ कहते हैं ।

‘रथमुशल’—मुशलयुक्त रथको ‘रथमुशल’ कहते हैं, अर्थात्—रथसे—निकलकर मुशल बहुत वेगसे दौडकर शत्रुपक्षका विनाश—(संहार) करता है उस संग्रामको ‘रथमुशल’ कहते हैं । ॥ १२ ॥

वहाँ कूणिकके साथ कालकुमार अपनी सेना लेकर रथमुशल संग्राममें उपस्थित हुए, इस आशयका सूत्र कहते हैं—‘तएणं से काले’ इत्यादि ।

संग्रामके निश्चित होजानेके पश्चात् वह कालकुमार नियत

रथमुशल—मुशलयुक्त रथने ‘रथमुशल’ कहे छे. अर्थात् रथभांथी नीकणी मुशल भहु वेगथी होडीने शत्रुपक्षने विनाश (संहार) करे छे. जे संग्रामने “रथमुशल” कहे छे (१२)

त्यां कूणिकनी साथे कालकुमार पोतानी सेना लधने रथमुशल संग्रामभां उपस्थित थया आ आशयनु सूत्र कहे छे—‘तएणं से काले’ इत्यादि.

संग्रामने निश्चित थछ गया पछी ते कालकुमार निश्चित वभते त्रणु त्रणु हुनर

=अंशेन सहितेन एकादशभागिना कूणिकेन राज्ञा सादं रथमुशलं=तदार्ष्यं
सङ्ग्रामम् उपयातः=उपगतः प्राप्त इत्यर्थः ॥ १३ ॥

मूल्म्-तएणं तीसे कालीए देवीए अन्नया कयाइ कुटुंब-
जागरियं जागरमाणीए अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्प-
ज्जित्था-एवं खल्लु मम पुत्ते कालकुमारे तिहिं दंतिसहस्सेहिं
जाव ओयाए, से मन्ने किं जइस्सइ ? नो जइस्सइ ? जीवि-
स्सइ नो जीविस्सइ ? पराजिणिस्सइ ? णो पराजिणिस्सइ ?
काले णं कुमारे णं अहं जीवमाणं पासिज्जा ? ओहयमणं
जाव झियाइ ॥ १४ ॥

छाया-ततः खलु तस्याः काल्या देव्या अन्यदा कदाचित् कुटुम्ब-
जागरिकां जाग्रत्या अयमेतद्रूपः आध्यात्मिकः यावत् समुदपद्यत-एवं खलु
मम पुत्रः कालकुमारः त्रिभिर्दन्तिमहस्रैः यावत् उपयातः तन्मन्ये किं जेष्यति ?
न जेष्यति ? जीविष्यति ? न जीविष्यति ? पराजेष्यते ? न पराजेष्यते ? कालं
खलु कुमारम् अहं जीवन्तं द्रक्ष्यामि ? अपहतमनःसंकल्पा यावत् ध्यायति ॥ १४ ॥

टीका-‘तएणं तीसे’ इत्यादि । ततः=युद्धप्रवर्तनानन्तरम् अन्यदा कदा-
चित् एकरिमन् दिने कुटुम्बजागरिकांः-कुटुम्बः=स्वजनवर्गः पोष्यवर्गादिस्तदर्थं
जागरिकां=जागरणमिन्द्रियैर्विषयज्ञानयोग्यावस्थां जाग्रत्याः=प्राप्नुवत्याः, तस्याः
काल्या देव्याः अयम्=एषः एतद्रूपः=वक्ष्यमाणलक्षणः आध्यात्मिकः=आत्म-

समयपर तीन २ हजार हाथी-घोडे-रथ आदि, एवं तीन करोड पैदल
सेनाको लेकर गरुडव्यूहमें, ग्यारहवें अंशके भागी राजा कूणिकके साथ
‘रथमुशल’ संग्राम में उपस्थित हुआ ॥ १३ ॥

‘तएणं तीसे’ इत्यादि.

संग्राम आरम्भ होनेपर इधर एक समय कुटुम्बजागरणा करती
हई काली महारानीके हृदयमें वृक्षके अङ्कुरसमान ‘आध्यात्मिक’

हाथी घोडा रथ आदि अनं प्रखु इशेड पायदण सेनाने लधने गरुड व्यूहमां अगीयारभा
भागना बागीतान् गन्त वृषिकनी साथे ‘रथमुशल’ संग्राममां उपस्थित थया. (१३)

‘तएणं तीसे’ इत्यादि

संग्रामना आरंभ थता ओक वधत कुटुम्ब-जागरणा करती काली महारानीना
हृदयमां वृक्षना अङ्कुरनी पेठे ‘आध्यात्मिक’ अर्थात् आत्मविषयक विचार उत्पन्न

विषयो विचारः वृक्षस्याङ्कुर इव, यावत्करणात्—“चितिए, कप्पिए, पत्थिए, मणोगए संकप्पे ” इति संगृह्यन्ते, तदनु चिन्तितः=पुनः पुनः स्मरणरूपो विचारः द्विपत्रित इव, ततः कल्पितः=स एव व्यवस्थायुक्तः पुत्रविषयको विचारः पल्लवित इव, प्रार्थितः स एव इष्टरूपेण स्वीकृतः पुष्पित इव, मनोगतः संकल्पः=मनसि इष्टरूपेण निश्चयः फलित इव समुदपद्यत=जातः ।

अर्थात् आत्मविषयक विचार उत्पन्न हुआ । वह - ' चिन्तित ' अर्थात् बारबार स्मरणसे 'द्विपत्रित' के समान, 'कल्पित' वही पुत्रविषयक विचार व्यवस्थायुक्त होनेसे 'पल्लवित' के समान, 'प्रार्थित' मनमें विचार स्वीकृत हो जानेके कारण 'पुष्पित' के समान, 'मनोगत संकल्प' वही इष्ट रूपसे मनमें निश्चित हो जानेके कारण 'फलित' के समान अवस्थाको प्राप्त हुआ ।

भावाथ—संग्रामके प्रारम्भ हो जाने पर महारानी कालीके हृदयमें पुत्र स्नेहके कारण एक समय वृक्षके अंकुरके सदृश आत्मिक भाव अंकुरित हुए, पश्चात् वेही विचार बारबारके चिन्तन-स्मरणसे द्विपत्रित अर्थात् जैसे बीजसे अंकुर और अंकुरके कुछ बढ़नेपर दो कोमल किशलय - दो नये पत्ते निकलते हैं, उसी प्रकार विचारोंका स्वरूप बढा, बाद वेही वात्सल्यमय विचार 'कल्पित' याने पल्लवित-अधिक पत्रोंके रूपमें अग्रसर हुए, पश्चात् मनमें बढते-पनपते हुए उन विचारोंके 'प्रार्थित' हो जानेपर याने अपने विश्वाससे स्वीकृत हो जाने पर 'पुष्पित' फूले हुएके समान होगये और अन्तमें जब

थये। ते ' चिन्तित ' = अर्थात् बारबार स्मरणथी द्विपत्रित समान, ' कल्पित ' = ते पुत्र विषयेनो विचार व्यवस्थायुक्त थवाथी पल्लवितना समान, ' प्रार्थित ' = मनमां विचारनो स्वीकार थथं नवाथी पुष्पितना समान मनोगत संकल्प=ते इष्टरूपथी मनमा निश्चय थथं नवाथी इतितना समान अवस्थाने प्राप्त थये।

भावाथ—संग्राम शरु थथं नता मडाराणी कालीना हृदयमा पुत्र-स्नेहना कारणे अेक वृक्षना अणुगा नेवे आत्मिक भाव अंकुरित थये। पछी तेन विचार बारबारना चिन्तन स्मरणथी द्विपत्र अर्थात् नेम भीनमांथी अंकुर अने अंकुर नरा वधवाथी ने कोमल किशलय-ने नवां पादडा निकणे छे तेवीन रीते विचारानु स्वरूप वधवा गाह तेन वात्सल्यमय विचार 'कल्पित' अर्थात् 'पल्लवित' वधारे पादडांना रूपमां आगण आवे-पछी मनमा वधता-विस्तार यामता ते विचारो 'प्रार्थित' थथं नतां याने पोतानान विश्वासथी स्वीकाराथं नवाथी पुष्पित इतनी पेठे थथं गया तथा

संकल्पस्वरूपमाह—‘एवं खल्वि’—त्यादिना । मम पुत्रः=आत्मजः काल-
कुमारः त्रिभिर्दन्तिसहस्रैः=त्रिसहस्रसंख्यकगजैः, यावत्करणात्—रथानामश्वानाञ्च
त्रिभिः सहस्रैर्मुण्याणां च त्रिसृभिः कोटिभिः सह उपयातः=सङ्ग्रामाय गतः,
तन्मन्ये=तत् संदिहे—किं जेष्यति ? सङ्ग्रामे शत्रून्भिभूय प्रतापं प्राप्स्यस्यति ?,
अथवा—न जेष्यति ?, जीविष्यति ?=प्राणधारणं करिष्यति ? अथवा—न जीवि-
ष्यति ? पराजेष्यते ?=शत्रुतः परास्तो भविष्यति ? वा न पराजेष्यते ? अहं
काल कुमारं=स्वपुत्रं खल्वु=निश्चयेन जीवन्तं = प्राणयुक्तं द्रक्ष्यामि=प्रेक्षिष्ये,
इत्येवम्, ‘अपहतमनःसंकल्पा’—अपहतो=मलिनीभूतो मनःसंकल्पो=योग्याऽयोग्य
विचारो यस्याः सा तथा, यावत्करणात्—करयत्पल्लहत्थियमुही, अट्टञ्जाणोवगया,
ओमंथियणयणवयणकमला, दीणविवघ्नवयणा, मणोमाणसिएणं दुक्खेणं अभिभूया’
एतेषां सङ्ग्रहः । करतलपर्यस्तितमुखी, आर्तध्यानोपगता, अवमथितनयनवदन-
कमला, दीनविवर्णवदना, मनोमानसिकेन दुःखेन अभिभूता, इतिच्छायाः, ‘कर-

उनपर दृढ संकल्प होगया तव वे फलितसमान अवस्थाको प्राप्त हुए
याने वृक्षके फलके समान फलरूप बन गये ।

अब महारानी कालीके विचारका स्वरूप कहते हैं—‘एवं खल्वु’
इत्यादि ।

मेरा पुत्र कालकुमार तीन हजार हाथी घोड़े रथ और तीन
कोटि सेनाके साथ संग्राममें गया है । मेरे मनमें इस बातका संशय
आ रहा है कि—वह युद्धमें शत्रुओं पर विजय पावेगा अथवा नहीं ?
वह जीवित रहेगा या नहीं ? । शत्रु उससे पराजित होंगे या नहीं ? ।
मैं अपने लाल कालकुमारको जीवितावस्थामें देखूंगी या नहीं ? । इस
प्रकारके अनेक संशयात्मक विचार करने लगी । ऐसे कर्तव्याकर्तव्यके

अतमा न्यारे तेना उपर दृढ संकल्प थछ गये। त्यारे ते ‘इलित’ नेवी अवस्थाने
प्राप्त थाय छे अर्थात् वृक्षना इणनी नेम इलइय थछ गया

डवे महाराणी कालीना विचार (संकल्प)नु स्वरूप छडे छे—‘एवं खल्वु’ इत्यादि.

भारे पुत्र काल कुमार त्रणु त्रणु डण्ठर डायी घोडा रथ तथा त्रणु डरोड सेनानी
साथे संग्राममा गये छे भारे मनमा आ वातने साशय आवे छे डे ते युद्धमा
शत्रुओ उपर विजय भेणवथे डे नडि ? ते जिवित रहेथे डे नडि ? तेनाथी शत्रु
पराजय पावथे डे नडि ? हुं भारे लाल कालकुमारने जिवित अवस्थामा नेछिथे डे
नडि ? आ प्रकारना अनेक संशयात्मक विचार करवा लागी ओवा कर्तव्य अकर्तव्यना

तले'ति-करतले=हस्ततले पर्यस्तितं=स्थापितं मुखं यथा सा तथा, 'आर्ते'ति-
-ऋतं=दुःखं पुत्रविरहजन्यं तत्र भवमार्तं, तच्च ध्यानं, तत्रोपगता=पुत्रविरहजन्य-
दुःखान्वितध्यानयुक्तेत्यर्थः, 'अवमथिते'ति-अवमथितानि=अधःकृतानि नयन-
वदनरूपाणि कमलानि यथा सा तथा, प्रबलदुःखेन निम्नम्लाननेत्रमुखकमले-
त्यर्थः, 'दीने'ति-दीनस्य=अकिञ्चनस्येव विवर्णं=कान्तिरहितं मुखं यस्याः सा
तथा=शोकम्लानवदनेत्यर्थः, 'मनोमानसिकेने'ति-मनसि भवं मानसिकं दुःखं
मनस्येव, न बहिः, वचनादिभिरप्रकाशितत्वात्-यत् तन्मनोमानसिकं, तेन दुःखेन
अभिभूता=व्याप्ता, शोकसागरप्रविष्टा ध्यायति=आर्तध्यानं करोति, इति ॥१४॥

मूलम्-तेणं कालेणं तेणं समएणं समणै भगवं महावीरे
समोसरिण् । परिसा निग्गया । तए णं तीसे कालीए देवीए,
इमीसे कहाए लद्धट्टाए समाणीए अयमेयारूवे अज्झत्थिए
जाव समुप्पज्जित्था ॥ १५ ॥

छाया-तस्मिन् काले तस्मिन् समये श्रवणो भगवान् महावीरः सम-
वसृतः । परिषत् निर्गता । ततः खलु तस्याः काल्याः देव्याः एतस्याः
कथायाः लब्धार्थायाः सत्याः अयमेतद्रूपः आध्यात्मिकः यावत् समुदपद्यत ॥१५॥

विचार और उनका निर्णय जब शिथिल अवस्थाको धारण करने लगे
तब सहस्रा रानीका मन मलिन होगया और हथेलीपर अपना मुँह
रखकर पुत्र विरहके दुःखसे क्षुब्ध रानी आर्तध्यान करने लगी ।
अत्यन्त दुःखके कारण कुम्हलाये हुए कमलके समान नेत्र और
मुखको नीचा किये हुए बैठ गई, उसका मुख दीनजनके समान शोका-
च्छादित-उदासीन हो गया । वह मानसिक दुःखोंसे धिरी हुई शोक
सागरमें डूबी हुई आर्तध्यानपरायणा थी । ॥ १४ ॥

विचार तथा तेना निष्पद्य न्यारे शिथिल अवस्थाने धारण करवा लाग्या त्यारे अेकदम
राष्ठीनु मन मलिन थछ गथु तथा हथेली उपर पोतानु भो राष्ठीने पुत्र विरहना
दुःभथी पीडाती राष्ठी आर्तध्यान करवा लागी अत्यत दुःभने क्षीधे करमाछ गयेलां
कमणता नेवां नेत्र तथा मुभने नीचु करीने जेसी गछ तेनु मुभ गरीण माण्यसना
नेतुं शोकाच्छादित (दीलगीरार्थी छवाछ गयेछुं) उदासीन थछ गथुं ते मानसिक
दुःभेथी धेशयेदी शोकना सागरमां डूणी जवाथी आर्तध्यानपरायणा हुती (१४)

टीका—‘तेणं कालेणं’ इत्यादि । तस्मिन् काले तस्मिन् समये श्रमणो भगवान् महावीरः समवसतः=सदेवमनुष्यपरिपदि भव्यानुपदेष्टुं समुपस्थितः, परिपत्=जनसमुदायः निर्गता=गृहान्निस्सृता । ततः परिपन्निर्गमनानन्तरं खलु=निश्चयेन तस्याः=पूर्वोक्तायाः प्रसिद्धाया वा, काल्या देव्याः एतस्याः=समीपतरवर्तिन्याः कथायाः लब्धार्थायाः—लब्धोऽर्थो यया सा तस्याः प्राप्तार्थाया इत्यर्थः, अयम् एतद्रूपः=वक्ष्यमाणस्वरूपः ‘आध्यात्मिकः’ आत्मनि विचारः यावत्पद्गृहीतानां ‘चित्तिण्, कप्पिण्, पत्थिण्, मणोगण् संकप्पे’ एतेषां च व्याख्याऽऽव्ववदितपूर्वमुत्रोक्तरीत्या विज्ञेया, समुदपद्यत ॥ १५ ॥

तदेव दर्शयति—‘एवं खलु’ इत्यादि ।

मूलम्—एवं खलु समणे भगवं महावीरे पुव्वाणुपुव्वि० इह-
मागए जाव विहरइ, तं महाफलं खलु तहारूवाणं जाव
विउलस्स अट्टस्स गहणयाए, तं गच्छामि णं समणं जाव
पञ्जुवासामि, इमं च णं एयारूवं वागरणं पुच्छिस्सामित्तिकट्टु
एवं संपेहेइ, संपेहिता कोडुंबियपुरिसे सदावेइ सदावित्ता एवं
वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! धम्मियं जाणप्पवरं
जुत्तमेव उवट्टवेह, उवट्टवित्ता जाव पच्चप्पिणंति ॥ १६ ॥

‘तेणं कालेणं’ इत्यादि ।

उम काल उस समय श्रमण भगवान महावीर स्वामी उस नगरीमें पधारें । देवता और मनुष्योंकी सभामें भव्योंको धर्म-देशना देने लगे । धर्मकथा श्रवण करनेके लिए परिपद निकली । भगवान यहाँ पधारें हैं; ऐसा वृत्तान्त सुनकर काली रानीके मनमें वक्ष्यमाण आगे कहे जानेवाले विचार उत्पन्न हुए । ॥ १५ ॥

‘तेणं कालेणं’ इत्यादि

ते क्षणे ते समये श्रमणु भगवान महावीर स्वामी ते नगरीमां पधार्याः देवता तथा मनुष्यानी सभायां गच्छेने धर्मदेशना देवा लाग्याः धर्मकथा श्रावणवा भाटे परिपद नीकणी भगवान अर्ही पधार्या छे जेवे वृत्तान्त सांलणी शक्ती राणीना मनमा वक्ष्यमाण-आ प्रभाणु विचार उत्पन्न थया. (१५)

छाया—एवं खलु श्रमणो भगवान् महावीरः पूर्वानुपूर्व्यां० इहागतः यावद् विहरति, तन्महाफलं खलु तथारूपाणां यावत् विपुलस्यार्थस्य ग्रहणतया तद्गच्छामि खलु श्रमणं यावत् पर्युपासे, इदं च खलु एतद्रूपं व्याकरणं प्रक्षयामि, इति कृत्वा एवं संप्रेक्षते संप्रेक्ष्य कौटुम्बिकपुरुषान् शब्दयति, शब्दयित्वा एवमवादीत्—क्षिप्रमेव भो देवानुप्रियाः ! धार्मिकं यानप्रवरं युक्तमेव उपस्थापयत, उपस्थाप्य यावत् प्रत्यर्पयन्ति ॥ १६ ॥

टीका—एवं खलु यत्-श्रमणो भगवान् महावीरः पूर्वानुपूर्वी=यथाक्रमं, यद्वा-पूर्वेषां तीर्थंकराणां या आनुपूर्वी=परिपाटी मर्यादेत्यर्थः, तां चरन्=आचरन् परिपालयन्नित्यर्थः, “गामाणुगामं दूइज्जमाणे”=ग्रामानुग्रामं द्रवन् ‘ग्रामानुग्रामम्’-एकस्माद् ग्रामाद् अनु=पश्चाद् यो ग्रामस्तम्, अर्थादनुक्रमेण ग्रामाद्ग्रामान्तरं द्रवन्=विहरन्, इह=अस्यां चरूपानगर्या विद्यमानं पूर्णभद्रमुद्यानम् आगतः=समन्ताद् विहृत्योपस्थितः, यावत्करणात् ‘अहापडिरुयं ओग्गहं ओगिगिहत्ता संजमेणं तज्जसा अप्पाणं भावेमाणे’ एतेषां संग्रहः । छाया—‘यथाप्रतिरूपम् अवग्रहम् अवगृह्य संयमेन तपसा आत्मानं भावयन्’ इति । ‘यथे’-ति-यथाप्रतिरूपं=यथा संयमिकल्पम् अवग्रहम्=निवासार्थमुद्यानपालस्याज्ञाम् अवगृह्य=आदाय संयमेन=सप्तदशविधेन तपसा=द्वादशविधेन आत्मानं भावयन्=वासयन् संयोजयन्निति यावत्, विहरति = विराजते, तत्=तस्मात् महाफलं-महत्=विशालं फलं=शुभपरिणामलक्षणम्, अत्र ‘अत एवे’तिशेषः खलु=निश्चयेन तथारूपाणां शुभपरिणामरूपमहाफलजननस्वभावानां, यावच्छब्देन—“अरिहंताणं, भगवंताणं, णामगोयस्सवि सवणयाए किमंगपुण अभिगमण-वंदण-गामंसण-पडिपुच्छण-पज्जुवासणाए, एकस्सवि आरियस्स, धम्मियस्स, सुवयणस्स सवणयाए किमंग पुण” एतेषां संग्रहः । छाया—‘अर्हतां भगवतां

वे विचार ये हैं—‘ एवं खलु ’ इत्यादि—

—श्रमण भगवान् महावीर प्रभु यहाँ पधारे हैं, और संयमी लोगोके कल्पके अनुसार निवासके लिए उद्यानपालकी आज्ञा लेकर संयम और तपसे अपनी आत्माको भावित करते हुए विराजते हैं, तथारूप अरि-

ते विचार आ छे.—‘ एवं खलु ’

श्रमणु भगवान् महावीर प्रभु अहाँ पधारे छे तथा संयमी लोकाना कल्पने अनुसार निवासने माटे उद्यानपालनी (वाडीना पालक के भाणीनी) आज्ञा लधने संयम तथा तपसी पोताना आत्माने भावित करता थका गिगले छे तथा रूप अरिह त अर्थात् सर्वज्ञताना करणे नेनाथी केअ वात अन्वणी नथी अने स पूछु अर्थयना

नामगोत्रस्यापि श्रवणतया किमद्ग ! पुनरभिगमन-वन्दन-नमस्यन-प्रतिप्रच्छन-पर्युपासनेन, एकस्यापि आर्यस्य धार्मिकस्य सुवचनस्य श्रवणतया किमद्ग ! पुनः' इति । 'अर्हतां'-नास्ति रहः=प्रच्छन्नं किञ्चिदपि येषां सर्वज्ञत्वात्तेऽर्हन्त-स्तेषाम्, 'भगवतां'-भगः=समग्रैश्वर्यादिगुणः, स विद्यते येषां ते भगवन्त-स्तेषाम् । नाम च=वर्धमानादि, गुणनिष्पन्नमभिधानं गोत्रं च=कश्यपादि, तयोः समाहारे नामगोत्रं, तस्य श्रवणेनापि महाफलं भवति । किमद्ग ! पुनः अभि-गमनं=सम्मुखं गमनम्, वन्दनं=गुणकीर्तनम् । नमस्यनं=पञ्चाङ्गसयत्ननमनपूर्वक-नमस्करणम्, प्रतिप्रच्छनं=शरीरादिवार्ताप्रश्नः, पर्युपासना=सावद्ययोगपरिहारपूर्वक-निरवद्यभावेन सेवाकरणम्-एतेषां समाहारस्तथा, अयं भावः-भगवन्नामगोत्र-श्रवणमात्रेणापि शुभपरिणामरूपं फलं भवति, तर्हि अभिगमनादिना जातं फलं किं पुनः कथनीयम् ? अर्थात् तत्फलमानन्त्याद्वक्तुमशक्यमिति । एकस्यापि आर्यस्य=आर्यप्रणीतस्य धार्मिकस्य=श्रुतचारित्रलक्षणधर्मप्रतिबद्धस्य सुवचनस्य=सर्वप्राणिहितकारकवचसः श्रवणतया=श्रवणेन यत् फलं तत् किं पुनर्वाच्यम् ?

हन्त अर्थात् सर्वज्ञताके कारण जिनसे कोई बात छिपी हुई नहीं है और सम्पूर्ण ऐश्वर्यके कारण जो भगवान हैं, उनके वर्धमान आदि नाम और कश्यप आदि गोत्रके सुननेसे भी शुभ परिणाम स्वरूप महाफल होता है तो सम्मुख जाना, गुण-कीर्तन करना और पाँचों अंगोंको यतना पूर्वक नमाकर नमस्कार करना, शरीर आदिकी सुख-ज्ञाता पूछना, और भगवानके त्यागी होनेके कारण सावद्यका परि-हार-पूर्वक उनकी निरवद्य सेवा करना, इन सबका क्या फल होगा, इसका तो कहना ही क्या ?

और उनका एक भी श्रेष्ठ श्रुत चारित्र धर्म युक्त और समस्त प्राणियोंके हितकारी सुवचनके श्रवणसे जो महाफल मिलता है तो

कारण भगवान् थे. तेमना वर्धमान आदि नाम तथा कश्यप आदि वगेरे गोत्रने सावद्यवाथी शुभ परिणाम स्वरूप महाफल थाय छे-तो सम्मुख जनुं, शुभनुं कीर्तन करुं, तथा पाये अगोने यतनापूर्वक नमायीने नमस्कार करवा, शरीर आदि वगेरेनी सुभ-शाता पूछी तथा भगवान त्यागी होवाथी सावद्यना परिहार पूर्वक तेमनी निरवद्य सेवा करवी अ यधानु शु क्षण होय तेनु तां कहेवुज्ज शु ?

तेमना वचनना आचार अनं तेमना अक यषु श्रेष्ठ श्रुत चारित्र धर्म युक्त तथा समस्त प्राणियानु हितकारी सुवचन सावद्यवाथी जे महाक्षण भजे

अर्थात् वक्तुमशक्यम् । विपुलस्य=प्रभूततरस्य अर्थस्य=भगवद्वचनप्रतिपाद्यविषय-
स्य श्रुतचारित्रलक्षणस्य ग्रहगतया=ग्रहणेन यत्फलं भवति तत् किं पुनर्वाच्यम् ?
अर्थात्कथमपि वक्तुं न शक्यम् । तत्=तस्मात् कारणात् अहं गच्छामि श्रमणं-
श्राम्यति=तपस्यतीति श्रमणो=द्वादशवर्षाणि घोरतपश्चरणात् 'श्रमण' इति प्रसिद्धिं
लब्धवान्, तम् । जावशब्देन-‘भगवं महावीरं, वंदामि, नमंशामि, सत्कारेमि,
सम्मानेमि, कल्याणं, मंगलं, देवयं, चेइयं, विणएणं’ इत्येषां सङ्ग्रहः । एत-
च्छाया—‘भगवन्तं, महावीरं, वन्दे, नमस्यामि, सत्कारयामि, सम्मानयामि,
कल्याणं, मङ्गलं, दैवतं, चैत्यं, विनयेन ’ इति ।

‘भगवन्त’मिति-भगः = ज्ञानं, माहात्म्यं, यशः, वैराग्यं, मुक्तिः,

उनका विपुल श्रुत चारित्र रूप जो अर्थ है उसको ग्रहण करनेके
फलका तो कहना ही क्या है ?-वह फल तो अकथनीय=है । इस-
लिये मैं श्रमण भगवान् महावीर प्रभुके पास जाऊँ और उनको
वन्दन-नमस्कार करूँ; सत्कार सम्मान करूँ जो कल्याण स्वरूप हैं,
मंगल स्वरूप हैं, दैवत-इष्ट देव हैं और चैत्य - ज्ञानस्वरूप हैं उन
प्रभुकी विनयपूर्वक उपासना करूँ ।

अब यहाँ श्रमण भगवान् आदि पदोंका विशेष अर्थ करते हैं:-

(१) श्रमण=साढे चारह वरस तक घोर तपस्या की, इसलिए
‘श्रमण’ नामसे प्रसिद्ध हैं । (२) भगवान्-भग शब्दके ज्ञानादि
दस अर्थ जिनमें हो उन्हें भगवान् कहते हैं । ‘भग’ शब्दके दस अर्थ-

(१) सम्पूर्ण पदार्थोंको विषय करनेवाला ज्ञान.

(२) महात्म्य अर्थात् अनुपम और महान् महिमा.

छे तो तेमना विपुल श्रुत चारित्र इपी जे अर्थ छे तेना अहणु करवानां इणनु तो
कहेवुंशु ? ते इण तो अकथनीय छे आथी हु श्रमणु लगवानं महावीर प्रभुनी
पासे जाऊ तथा तेमने वदन नमस्कार करे सत्कार सम्मान करे जे कल्याण स्वरूप
छे मंगल स्वरूप छे दैवत अर्थात् इष्ट देव छे तथा चैत्य-ज्ञानस्वरूप छे ते प्रभुनी
विनयपूर्वक उपासना करे

इवे अर्ही श्रमणु लगवान आदि शब्दोना विशेष अर्थ करीये छीये

(१) श्रमणु=साढे चार वरस सुधी उग्र तपश्चर्या करीतेथी ‘श्रमणु’ नामथी
प्रसिद्ध छे (२) भगवान्-भग शब्दना ज्ञान आदि दस अर्थ जेमां होय तेने लगवान
कहेवा ‘भग’ शब्दोना दस अर्थ—

(१) सम्पूर्ण पदार्थोनि विषय करवावाणुं ज्ञान.

(२) महात्म्य अर्थात् अनुपम तथा महान् महिमा.

मौन्द्यम्, वीर्यः, श्रीः, धर्मः, ऐश्वर्यं, सोऽस्याऽस्तीति भगवान्, तम्, 'महावीर'
 मिति-वीर्यमिति=पराक्रमने मोक्षानुष्ठाने इति वीरः, महाश्यामौ वीरो महावीरो=
 वर्धमानस्वामी चरमतीर्थकरस्तम् वन्दे=मनःप्रणिधानपूर्वकं वाचा स्तौभि, नम-

(३) विविध प्रकारके अनुकूल और प्रतिकूल परीपहोंको सहन करनेसे उमन्न होनेवाली या संसारकी रक्षा करनेवाले अलौकिक भावोंसे उमन्न होनेवाली कीर्ति ।

(४) क्रोध आदि कषायोंका सर्वथा निग्रहरूप वैराग्य ।

(५) समस्त कर्मोंका क्षयस्वरूप मोक्ष ।

(६) मुर - अमुर और मानवके अन्तःकरणको हरलेने वाला मौन्द्य ।

(७) अन्तर्गत कर्मके नाशसे उमन्न होनेवाला अनन्त बल ।

(८) वानिया-कर्मरूपी-पदलके हट जानेसे प्रादुर्भूत होनेवाली भक्त चतुष्टय- ज्ञान, दर्शन, चाग्नि, तीर्थ-रूप) लक्ष्मी ।

(९) मोक्षके द्वारको खोलनेका साधन अत चाग्नि यथा-ख्यात चाग्नि रूप धर्म ।

(१०) तीन लोकका आविषण्य रूप ऐश्वर्य ।

(३) महावीर-मोक्षके अनुष्ठानमें पराक्रम करनेवाले होनेसे महावीर सहे जाते हैं, ऐसे महावीर वर्धमान स्वामी चरम तीर्थकरकी

(३) विना प्रमाण न गृह्यत तथा प्रतिदृश परीपहिनं सहन कर्यथी उत्पन्न
 १०) ३) यथा भगवन्नी तथा इन्द्रवर्षी अलौकिक वाचनार्थी उत्पन्न
 १०) ३) इति

१०) ३) आदि उपर्युक्त शब्दोंका निराकरण यथा

१०) ३) नमो भगवते वासुदेवाय

स्यामि=सयत्नपञ्चाङ्गनमनपूर्वकं नमस्करोमि, सत्कारयामि=अभ्युत्थानादिनिरवद्य-
क्रियासम्पादनेनाऽऽराधयामि, सम्मानयामि=मनोयोगपूर्वकमर्हदुचितवाक्यप्रयोगा-
दिना समाराधयामि, कल्याणं=कर्मबद्धसकलोपाधिव्याधिबाधाविधुरत्वात् कल्यो
मोक्षस्तम्, आ=समन्तात् नयति=प्रापयतीति ज्ञानादिरत्नत्रयलक्षणमोक्षमार्गोपदेश-
दानद्वारा (भविजनान्) कल्याणं जन्मजरादिरोगमुक्तान् आणयति=धातूनामने-
कार्थत्वात् सम्पादयतीति वा कल्याणस्तम्, 'मङ्गलं=सकलहितप्रापकत्वाच्छुभमयं,
यद्वा-मां गालयति भवाब्धेस्तारयतीति मङ्गलः, अथवा-मङ्गते=अजरामरत्वगुणेन
भविजनान् भूषयतीति मङ्गो=मोक्षस्तं लाति=आदत्त इति मङ्गलस्तम्, दैवतम्=
आराध्यदेवस्वरूपम् अत्र 'देवतैव दैवतमिति स्वार्थेऽण्' चैत्य=चित्ते भवं तदस्या-

निर्मल मनके साथ वचनसे स्तुति करूँ। यतना-पूर्वक पांच अंग
नमाकर, नमस्कार करूँ। यतना-पूर्वक अभ्युत्थान आदि निरवद्य
क्रियासे भगवानका सत्कार करूँ। मनोयोग-पूर्वक अर्हन्तो का
उचित वाक्य द्वारा सम्मान करूँ। कर्मबन्धसे उत्पन्न होनेवाली
उपाधि-व्याधिके नाशक होनेसे 'कल्य' को मोक्ष कहते हैं, उसको
प्राप्त करानेके कारण भगवान् कल्याण-स्वरूप हैं। अथवा ज्ञानादि
रत्नत्रयरूप मोक्ष मार्गके उपदेश द्वारा भव्य जीवोंको जन्म, जरा
मृत्युरूप रोगसे मुक्त करते हैं, इस कारण भी कल्याणस्वरूप है।
सम्पूर्णहितको प्राप्त करानेवाले तथा भवसागरसे तारनेवाले हैं इसलिये
भगवान् मङ्गल स्वरूप हैं। अथवा अजर अमर गुणोंसे भव्यजनोको
भूषित करनेके कारण 'मङ्ग' को मोक्ष करते हैं, उसे जो प्राप्त करावे
वह मङ्गल कहलाता है, इसलिये भगवान् भी मङ्गल हैं। इष्टदेव स्वरूप

कइ यतना-पूर्वक पांच अंग नमावीने नमस्कार कइं यतना-पूर्वक अभ्युत्थान आदि
निरवद्य क्रियाथी लगवानेना सत्कार कइं. मनोयोग-पूर्वक अर्हन्तोउ उचित वाक्येथी
सम्मान कइ. कर्मबन्धथी उत्पन्न थनारी उपाधि अने व्याधिना नाशक होवाथी 'कल्य'
ते मोक्ष कइवाय छे तेने प्राप्त करावनार होवाथी लगवान कल्याण-स्वरूप छे
अथवा-ज्ञानादि रत्नत्रयइय मोक्ष मार्गना उपदेश द्वारा भव्य जीवोने जन्म जरा
मृत्यु इय रोगथी मुक्त करे छे. आ कारणथी पण्य कल्याण-स्वरूप- छे स पूर्ण हितने
प्राप्त कराववावाणा तथा भवसागरथी तारवावाणा छे तेथी लगवान भगल-स्वरूप
छे अथवा अजर अमर गुणोथी भव्य जनोने भूषित करवाना कारणे भगने मोक्ष
कइल छे. तेने जे प्राप्त करावे ते भगण कइवाय छे. आथी लगवान् पण्य
भगण छे. अथवा इष्टदेव-स्वरूप होवाथी दैवत छे अने विशिष्ट ज्ञानवाणा होवाथी

स्तीति, यद्वा चित्तिर्विशिष्टज्ञानं तथा युक्तमिति, सर्वथा विशिष्टज्ञानवन्तमित्यर्थः, विनयेन=प्रतिपत्तिविशेषेण पर्युपासे=सेवे, तथा 'इमं' ति-इदं=मम हृदयस्थम् एतद्रूपं पुत्रविषयकं व्याकरणं=प्रश्नं खलु=निश्चयेन=प्रक्षयामि=निर्णेष्यामि, इति कृत्वा=इति मनसि निश्चित्य एवम्=अनेन प्रकारेण संप्रेक्षते=विचारयति, संप्रेक्ष्य=विचार्य, कौटुम्बिकपुरुषान्=प्रधानकर्मकारिपुरुषान्=शब्दयति=आह्वयति शब्दयित्वा=आह्वय, एवं=वक्ष्यमाणम् अवदत्=आज्ञापयदिति ।

किमाज्ञापयत् ? इत्याह- 'क्षिप्रमेव'त्यादिना-भो देवानुप्रियाः ! =हे कार्य करणप्रवीणाः ! यूयं धार्मिकं=धर्माय नियुक्तं धार्मिकं, यात्यनेनेति यानं रथा-दिकं, तत्र प्रवरं श्रेष्ठं शीघ्रगामित्वादिगुणोपेतम्, इत्युपलक्षणं तेन 'चाउघंटं, आसरहं' इत्यनयोरपि ग्रहणम् । एतच्छाया-चतुर्घण्टम्, अश्वरथम् इति । चतुर्घण्टमिति-चतस्रः=पृष्ठतोऽग्रतः पार्श्वतश्च लम्बमाना घण्टा यस्य यस्मिन् वा स चतुर्घण्टस्तम् 'अश्वरथ' मिति-अश्वयुक्तो रथोऽश्वरथः, शाकपार्थिवादित्वात्मध्यमपदलोपः, तम्-युक्तमेव=अश्वसारथ्यादिसहितमेव न तु तद्रहितं, क्षिप्रं=शीघ्रमेव न तु विलम्बेन, उपस्थापयत्=प्रगुणीकुरुत्, उपस्थाप्य=प्रगुणीकृत्य यावच्छब्देन कौटुम्बिकपुरुषाः कालीदेव्याज्ञानुसारेण सर्वं कृत्वा तदाज्ञां प्रत्यर्पयन्ति ॥१६॥

होनेसे दैवत हैं । विशिष्ट ज्ञान युक्त होनेसे चैत्य हैं । ऐसे भगवानकी विनयके साथ निरवद्य सेवा करू, ओर मेरे हृदयमें स्थित पुत्रसम्बन्धी प्रश्नका निश्चय करू । इस प्रकार अपने मनमें विचार कर काली महारानीने अपने कौटुम्बिक (आज्ञाकारी) जनोंको बुलाया और आज्ञा दी ।

क्या आज्ञा दी ? वह कहते हैं-हे चतुर कार्यकर्ताओ ! तुम लोग रथोंमें श्रेष्ठ-शीघ्र गतिवाला रथ जिसके आगे पीछे और दोनो बाजुओंमें चाल घण्टिकायें लगी हुई हैं ऐसा धार्मिक अश्वरथ, सारथी आदिके सहित लाओ । कौटुम्बिक पुरुष काली महारानीकी आज्ञा अनुसार रथ तैयार कर उनसे बोले-हे महारानी ! आपकी आज्ञानुसार रथ तैयार है ॥ १६ ॥

चैत्य छे ओवा भगवाननी विनय-पूर्वक निरवद्य सेवा करू तथा मारा हृदयमां रडेल पुत्रसगंधी प्रश्नने निश्चय-बुलासे-करू आ प्रकारे पोताना मनमा विचार करी काली महारानीके पोताना कौटुम्बिक (आज्ञाकारी) जनोने बोलाओ तथा आज्ञा करी ।

हे चतुर कार्यकर्ताओ ! तमे लोकें उत्तम रथ-शीघ्र गतिवाला रथ लेनी आगण याछण तथा गन्ने गालुओके आर घट्टीके लगाउकी ओवा धार्मिक अश्वरथ, सारथी आदि सहित लछ आवे । कौटुम्बिक पुरुषके काली महारानीनी आज्ञा प्रभाके रथ तैयार करीने तेने कहु.-हे महारानी ! आपनी आज्ञा प्रभाके रथ तैयार छे (१६)

मूलम्—तए णं सा काली देवी णहाया कयवलिकम्मा
जाव अप्पमहग्घाभरणालंकियसरीरा बहूहिं खुज्जाहिं जाव मह-
त्तरगविंदपरिक्खत्ता अंतेउराओ निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता जेणेव
बाहिरिया उवट्टाणसाला जेणेव धम्मिए जाणप्पवरे तेणेव
उवागच्छइ, उवाग्गच्छित्ता धम्मियं जाणप्पवरं दूरुहइ, दूरुहित्ता
नियगपरियालसंपरिवुडा चंपं नयरिं मज्झं—मज्झेणं निग्गच्छइ,
निग्गच्छित्ता जेणेव पुन्नभद्दे चेइए तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता
छत्ताईए जाव धम्मियं जाणप्पवरं ठवेइ, ठवित्ता धम्मियाओ
जाणप्पवराओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता बहूहिं खुज्जाहिं जाव महत्तरग-
विंदपरिक्खत्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ,
उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो वंदइ, वंदित्ता
ठिया चैव सपरिवारा सुस्सूसमाणा नमंसमाणा अभिमुहा
विणएणं पंजलिउडा पज्जुवासइ ॥ १७ ॥

छाया—ततः खलु सा काली देवी स्नाता कृतवलिकर्मा यावत् अल्प-
महार्घाभरणालङ्कृतशरीरा बह्वीभिः कुब्जाभिः यावन्महत्तरकवृन्दपरिक्षिप्ताः अन्तः
पुरान्निर्गच्छति, निर्गत्य यत्रैव बाह्या उपस्थानशाला, यत्रैव धार्मिको यानप्रवर-
स्तत्रोपागच्छति, उपागत्य धार्मिकं यानप्रवरं दूरोहति, दूरुह्य निजकपरिवार-
संपरिवृता चम्पां नगरीं मध्य-मध्येन निर्गच्छति, निर्गत्य यत्रैव पूर्णभद्रश्चैत्य-
स्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य छत्रादिक यावद् धार्मिकं यानप्रवरं स्थापयति
स्थापयित्वा धार्मिकाद् यानप्रवरात् प्रत्यवरोहति, प्रत्यवरुह्य बह्वीभिः कुब्जाभिः
यावत्—महत्तरकवृन्दपरिक्षिप्ता यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरस्तत्रैवोपागच्छति,
उपागत्य श्रमणं भगवन्तं महावीरं त्रिःकृत्वो वन्दते, वन्दित्वा स्थिता चैव
सपरिवारा शुश्रूषमाणा नमस्यन्ती अभिमुखी विनयेन प्राञ्जलिपुटा पर्युपासते । १७ ।

टीका—‘तएणं सा’ इत्यादि—ततः=तदनन्तरं सा पूर्वोक्ता काली देवी
स्नाता=कृतस्नाना कृतवलिकर्मा=स्नाने कृते पशुपक्ष्याद्यथ कृताश्रभागा, जाव-

शब्देन—‘कयकोउयमंगलपायच्छिता शुद्धप्पावेस्साहं वरथाहं पवरपरिहिया’ इत्येषां सङ्ग्रहः । एतच्छाया च—कृतकौतुकमङ्गलप्रायश्चित्ता, शुद्धप्रवेश्यानि वस्त्राणि प्रवरपरिधृता’ ‘कृतकौतुके’ति—कृतानि कौतुकानि मषीपुण्ड्रादीनि, मङ्गलानि=सर्षपदध्यक्षतचन्दनदूर्वादीनि च प्रायश्चित्तानीव दुःस्वप्नादिविनाशायावश्यकर्तव्यत्वात्प्रायश्चित्तानि यथा सा तथा, यथा पापविनाशार्थं प्रायश्चित्तमवश्यं क्रियते तथैव दुःस्वप्नदोषशान्त्यर्थं दध्यक्षतादीनि मङ्गलान्यवश्यं ध्रियन्त इति तात्पर्यम् । ‘अल्पमहर्षे’—ति—अल्पानि=स्तोकभारवन्ति महार्घाणि=बहुमूल्यानि यानि आभरणानि=भूषणानि तैरलङ्कृतं=भूषितं शरीरं यस्याः सा अल्पमहार्घाभरणालङ्कृतशरीरा, बहीभिः=पञ्चुराभिः, कुब्जाभिः=कुब्जशरीराभिः सेवापरायणदासीभिः ‘नाव’ शब्देन—“चिलाईहिं वामणाहिं १, वट्टहाहिं २, बन्वरीहिं ३, वउसि-

‘तएणं सा’ इत्यादि—घाद रानीने स्नान किया और पशु पक्षी आदिके लिये अन्नका भाग निकालनेरूप बलिकर्म किया और दृष्टिदोष (नजर) निवारणके लिये मषी (काजल) का चिह्न किया और पाप नाश करनेके लिए जैसे प्रायश्चित्त किया जाता है वैसे ही दुःस्वप्न आदि दोषोंके निवारणके लिए मङ्गलरूप सरसो, दूर्वा, चावल चन्दन ओर दूष आदिको धारण किया, तथा अल्प भार किन्तु बहुमूल्य भूषणोंसे शरीरको भूषित किया और सेवापरायण कुबड़ी आदि १८ अठारह प्रकारकी दासियोंको साथ चलनेका हुक्म दिया । उन दासियोंके नाम इस प्रकार हैं—(१) ‘चिलाती’ चिलात नामके अनार्य देशमें उत्पन्न होनेवाली ‘कुब्जा’-कुबड़ी तथा ‘वामना’-ठिंगनी दासियाँ, (२) ‘वटभा’—जिस देशमें छोटे-छोटे पेटवाले जन्मते हैं उस देशकी, (३) ‘वर्वरी’-वर्वर

‘तएणं सा’ इत्यादि. पशु पक्षीमें स्नान कर्तुं तथा पशु पक्षी आदिने भाटे अन्नको भाग काटना इपी अलिकर्म कर्तुं तथा दृष्टिदोष (नजर) ना निवारणने भाटे मषी (काजल)नु चिह्न कर्तुं तथा पापनाश करवा भाटे नेम प्रायश्चित्त कराय छे तेवीजरीते दुःस्वप्न आदि दोषोना निवारणने भाटे मंगलरूप सरसव, दूर्वा, चावल, चन्दन तथा दूर्वा पगेरेने धारण कर्था; तथा वज्जनामा अल्प पशु किर्मतमां लारे जेवा धरेणुथी शरीरने शष्पगार्थुं सेवापरायण कुबड़ी दासीआ आदि १८ प्रकारनी दासीज्जेने साथे आलवाने हुक्म कर्थे तना नाम आ प्रकारे छे:—(१) चिलात नामना अनार्य देशमां उत्पन्न धनारी कुबड़ी अने ठिंगणी दासीज्जे। (२) जे देशमां नाना नाना पेटवाणा जन्म वे छे ते देशनी (३) अर्वर देशनी. (४) अकुश देशनी. (५) योन देशनी. (६) पट्ट

योहिं ४, जोनयोहिं ५, पल्हवियाहिं ६, ईसिणियाहिं ७, वासिणियाहिं ८, लासियाहिं ९, लउसियाहिं १०, दविडीहिं ११, सिंहलीहिं १२, आरवीहिं १३, पक्णीहिं १४, बहुलीहिं १५, मुसुंडीहिं १६, शवरीहिं १७, पारसीहिं १८, णाणादेसाहिं इंगियचिंतियपत्थियवियाणियाहिं," इत्येषां सग्रहः ।

चिलातीभिः=अनार्यदेशोत्पन्नाभिः-वामनाभिः=ह्रस्वशरीराभिः १, वृट्-
भाभिः=मडहकोष्ठाभिः २, बर्बरीभिः=बर्बरदेशसंभवाभिः ३, वकुशिकाभिः ४,
यौनकाभिः ५, पल्हविकाभिः ६, इसिनिकाभिः ७, वासिनिकाभिः ८, लासि-
काभिः ९, लकुशिकाभिः १०, द्राविडीभिः ११, सिंहलीभिः १२, आरवीभिः
१३, पक्णीभिः १४, बहुलीभिः १५, मुसण्डीभिः १६, शवरीभिः १७, पार-
सीभिः १८, नानादेशाभिः=बहुविधदेशोत्पन्नाभिरित्यर्थः, इङ्कितचिन्तितप्रार्थित-
विज्ञायिकाभिः, इङ्कितेन=नेत्रवक्त्रहस्ताङ्गुल्यादिचेष्टाविशेषेण चिन्तितं=हृदि भावितं,

देशकी, (४) 'वकुशिका'-वकुश देशकी, (५) 'यौनका'-यौन देशकी, (६)
'पल्हविका'-पल्ह देशकी, (७) इसिनिका'-इसिनिकदेशकी, (८) 'वासिनिका'
वासिनिक देशकी, (९) 'लासिका'-लासिक देशकी, (१०) 'लकुशिका'-
लकुश देशकी, (११) 'द्राविडी'-द्रविड देशकी, (१२) 'सिंहली'-सिंहल
देशकी, (१३) 'आरवी'-अरब देशकी, (१४) 'पक्णी'-पक्कण देशकी, (१५)
'बहुली'-बहुल देशकी, (१६) 'मुसण्डी'-मुसण्ड देशकी, (१७) 'शवरी'-
शबर देशकी, और (१८) 'पारसी'-पारस देशकी दासियाँ ।

इस प्रकारकी अनेक देशमें उत्पन्न होनेवाली दासियाँ, जो इङ्कित,
चिन्तित, प्रार्थितको जाननेवाली थी ।

' इङ्कित '—का अर्थ—नेत्र, मुख, हाथ तथा अंगुली आदिके इशारेसे
अभिप्रायको जानना ।

देशनी. (७) इसनिक देशनी (८) वासिनिक देशनी (९) लासिक देशनी (१०) लकुश
देशनी (११) द्रविड देशनी. (१२) सिंहल द्वीप देशनी. (१३) अरब देशनी (१४)
पक्कण देशनी. (१५) बहुल देशनी. (१६) मुसण्ड देशनी. (१७) शबर देशनी. तथा
(१८) पारस देशनी दासीयों.

आवी रीते अनेक देशमां उत्पन्न यनारी दासीयों धंगित, चिन्तित, प्रार्थितने
जखुवा वाणी हुती.

' धंगित ' नो अर्थ नेत्र, मुख, हाथ तथा अंगुली आदिना धशाशथी अभि-
प्रायने जखुवा.

धार्मिक म=धर्मस्थितं च विज्ञाननि यास्तया, तामिःबुध्यमानामिः, युक्तेति
 हेतुः । तथा 'साक्षरं'नि-अतिनयेन मदान=साक्षरः स एव महत्तरकः=अन्तः
 पुण्यरक्तः, तेषां वृन्दम्=तानादेशोत्पन्ननेटकममृदस्तेन 'परिश्रमा' =परि=मर्वतः
 श्रिता=मन्त्रे स्थापिता, तथा मती अन्तःपुगात् निर्गच्छति=वर्तिनिःसगति निर्गत्य
 यत्रैव=वर्तिमन्त्रे स्थाने साक्षा=वर्तिभया उपस्थानशाल्या=उपवेदनमण्डपः यत्रैव=
 वर्तिमन्त्रे स्थाने धार्मिकयानप्रवरः=स्थापितानोत्तमः, तत्रैव=वर्तिमन्त्रे स्थाने
 उपागन्त्रि=महर्षीति, उपागन्त्रि=धार्मिकयानप्रवरमपीपमागत्य धार्मिकं=धर्माय
 निष्कृतं यानप्रवरं द्शोदति=आगच्छति, द्शुक्क=उक्तयानप्रवरमारुह्य 'निजके' ति-
 निजा एव निजताः=स्वरीयाः परिजाताः=दास्यादयः, तैः संपादित्वा=पगिवेष्टिता,
 यत्रां नगरीं साध्यमायेन=वस्थानगयां मध्यमागेन निर्गच्छति, निर्गत्य यत्रैव
 पूर्णमद्रोद्याने नक्षत्रा उपागन्त्रि=नमायाति, उपागत्य 'छत्रार्द्र' छत्रादिकान
 'यावन्'-वृन्देन तीर्थकरादिनेषान् पश्यति, ह्यु धार्मिकं यानप्रवरं स्थापयति,
 स्थापयित्वा धार्मिकाद् यानप्रवरम्=धार्मिकस्यान् मन्त्रवरोदति=अवस्नादन्तरति,
 मन्त्रवरो-धार्मीयं वर्तमानः वृन्दामि=पूर्वोक्तदासीभिर्युक्ता यावन् महत्तरकवृन्द-
 परिश्रित्या पञ्चानिगमपुग्मत् यत्रैव=वर्तिमन्त्रे पूर्णमद्रोद्याने भगवान् महावीर-

' धिनिज ' - हृदयके भायको अनुमानसे समझना ।

' धार्मिक ' - अभिलषितको अनुमानसे जानना ।

ऐसी धार्मिकों के साथ अन्तःपुण्यरक्त पुण्यवृन्दसे तथा अनेक
 देवतासे सम्बन्ध होनेवाले दामममृदसे घिरी हुई अन्तःपुण्यसे वास्तु निकलकर
 यानप्रवर के साथ-साथमें जिस स्थलपर धार्मिक रूप था वही आई और
 वही भई । वास्तु अपने मध्य परिष्कार के साथ जग्या नगरीके शीप-
 नगरीसे जाकर जहाँ पूर्णमद्रोद्याने था वहाँ पहुँची । और तीर्थकरके
 साथ जाति धार्मिकोंके देवकर अपने रूपको स्थापित किया और

स्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य श्रमणं भगवन्तं महावीरं त्रिःकृत्वो वन्दते, च= पुनः स्थितैव सपरिवारा शुश्रूषमाणा=सेवमाना नमस्यन्ती अभिमुखी=सम्मुखं स्थिता विनयेन = नम्रभावेन प्राञ्जलिपुटा = ललाटतटसविनयविन्यस्तकरकमला पर्युपास्ते=सेवते ॥ १७ ॥

मूलम्—तए णं समणे भगवं जाव कालीए देवीए तीसे य महातिमहालयाए धम्मकहा भाणियव्वा जाव समणोवासए वा समणोवासिया वा विहरमाणे आणाए आराहए भवइ ॥ १८ ॥

छाया—ततः खलु श्रमणो भगवान् यावत् काल्यै देव्यै तस्यां च महात्मिहालयायां परिषदि धर्मकथा भणितव्या यावत् श्रमणोपासको वा श्रमणोपासिका वा विहरन् आज्ञाया आराधको भवति ॥ १८ ॥

टीका—‘तएणं समणे’ इत्यादि—ततः=तदनन्तरं श्रमणो भगवान् महावीरः यावत्—सिद्धिगतिनामधेयं स्थानं सम्प्राप्तुकामः, काल्यै देव्यै तस्यां=पूर्वोक्तायां महाति—महालयायां=अतिविशालायां परिषदि धर्मकथा भणितव्या=कथयितव्या, धर्मकथास्वरूपं विस्तरत उपासकदशाङ्गसूत्रस्यागारधर्मसंजीविन्याख्यायां व्याख्यायां विलोकनीयं विशेषजिज्ञासुभिरिति ।

रथसे नीचे उतरी । फिर अपने सब परिवारके साथ पांच अभिगम पूर्वक जहाँ भगवान् बिराजते हैं वहाँ पहुँचकर विधिपूर्वक वन्दना-नमस्कार किया, और सपरिवार भगवान्के सम्मुख नतमस्तक हो विनयके साथ अञ्जलिपुटको ललाटपर रखती हुई खड़ी होकर सेवा करने लगी ॥ १७ ॥

‘तएणं समणे’ इत्यादि । बाद मोक्षगामी श्रमण भगवान् महावीर स्वामीने काली महारानीको लक्ष्य करके विशाल परिषदमें धर्मकथा कही । धर्मकथाका विशेष वर्णन जाननेके जिज्ञासुओंको हमारी बनाई

सधणा परिवार-साथे पांच अभिगम—पूर्वक न्या भगवान् बिराजता हुता त्या पछोत्तीने विधिपूर्वक वंदना—नमस्कार कर्या तथा सपरिवार भगवान्की सम्मुख भाथु नमांवीने विनयपूर्वक अञ्जलि पुटने (नेडेला हाथने) ललाट पर राणी लक्षी रहीने सेवा करवा लागी. (१७)

‘तएणं समणे’ इत्यादि, बाद मोक्षगामी श्रमण भगवान् महावीर स्वामीने काली महाराणीने लक्ष्य करी विशाल परिषदमा धर्मकथा कही धर्मकथानु विशेष वर्णन

यथाप्रतिरूपं साधुकल्पमवग्रहम् वसति अवग्रह=गृहीत्वा संयमेन तपसा चाऽऽ-
त्मानं भावयन् विहरति स्म ।

परिपन्निर्गता=श्रीसुधर्मस्वामिनं वन्दितुं धर्मकथाश्रवणार्थं च परिषद्-
वृन्दरूपेण जनसंहतिर्नगरान्निर्गता=निस्सृता, पञ्चविधाभिगमपुरस्सरं तत्र समागता ।

पञ्चविधाभिगमो यथा-

(१) सच्चित्तानं दब्बाणं विउसरणयाए, (२) अच्चित्तानं दब्बाणं अवि-
उसरणयाए, (३) एगसाडिणं उत्तरासंगकरणेणं, (४) चक्खुप्फासे अजळिप्प-
ग्गहेणं, (५) मणसो एगत्तीकरणेणं.

‘धम्मो कद्दिओ’ इति-श्रुतचारित्रलक्षणो धर्मः कथितः=उपदिष्टः,
‘परिसा पडिगथा’ इति-परिपत्=जनसंहतिः तत्समीपे सविधिवृन्दनपुरस्सरं
धर्मकथां श्रुत्वा यस्या दिशः सकाशात् प्रादुर्भूता = आगता तामेव दिशं
प्रतिगता इति ॥ ३ ॥

नगर है, जहाँ गुणशिलक नामका चैत्य (व्यन्तरायतन) है वहाँ पधारे
और मुनियोंके फल्पके अनुसार अवग्रह लेकर संयम और तपसे,
आत्माको भावित करते हुए रहने लगे ।

श्री सुधर्मा स्वामी यहाँ पधारे हैं, इस बातको सुनकर राज-
गृहसे परिषद् निकली वन्दन करनेके लिए और धर्मकथा सुननेके लिए
जनसमूह पाँच अभिगमपूर्वक आए । पाँच अभिगम इस प्रकार हैं:-

(१) धर्मस्थान पर नहीं लेजाने योग्य पुष्पमाला आदि सच्चित्त
द्रव्योंका त्याग करना । (२) वस्त्र भूषण आदि अच्चित्त द्रव्योंका त्याग
करना । (३) सिलाई किया हुआ कपडा न हो ऐसे, अर्थात् अखण्ड
वस्त्र-द्वारा मुख पर उत्तरासंग करना । (४) धर्मगुरुके दृष्टि - पथमें
आने पर दोनों हाथ जोड़ना । (५) मनको एकाग्र करना ।

नामै चैत्य (व्यन्तरायतन) छे त्या पधार्या, तथा मुनिओना आचार प्रमाणे अवग्रह
लधने संयम तथा तपशी आत्माने भावित करता रहेवा लाव्या

श्री सुधर्मा स्वामी अहाँ पधार्या छे, ओ बात सासणी परिषद् निकणी पटना
करवाने तथा धर्म कथातु श्रवणु करवा सारे जन समूह पांच अभिगमपूर्वक आव्या
पांच अभिगम आ प्रकारना छे -

(१) धर्म स्थानपर न लधे जवा न्वा पुष्पमाला आदि सच्चित्त द्रव्योने
त्याग करवे. (२) पस्त्रभूषण आदि अच्चित्त द्रव्योने त्याग न करवे. (३) सीवहु
कपडु न होय जवा अर्थात् अखण्ड वस्त्रधी मुख उपर उत्तरासंग करहु (४) धर्म-
गुरु नगरे पडताज छे हाथ जोडवा (५) मनने ओकाग्र करवु

मूलम्—तेणं कालेणं तेणं समएणं अज्जसुहम्मस्स अण-
गारस्स अंतेवासी जंबू णामं अणगारे समचउरंससंठाणसंठिण
जाव संखित्तविउलतेयलेस्से अज्जसुहम्मस्स अणगारस्स अदूर-
सामंते उडंजाणू जाव विहरइ ॥ ४ ॥

छाया—तस्मिन् काले तस्मिन् समये आयसुधर्मणोऽनगारस्य अन्तेवासी
'जम्बू' नामाऽनगारः, समचतुरस्रसंस्थानसंस्थितः यावत् संक्षिप्तविपुलतेजोलेश्यः,
आर्यसुधर्मणोऽनगारस्य अदूरसामन्ते ऊर्ध्वजानुर्यावद् विहरति ॥ ४ ॥

टीका—'तेणं कालेणं' इत्यादि—तस्मिन् काले तस्मिन् समये धर्मकथां
श्रुत्वा जनसंहतिप्रतिगमनानन्तरकाले आर्यसुधर्मणः स्वामिनोऽनगारस्यान्तेवासी
आर्यजम्बूनामाऽनगारः काश्यपगोत्रोत्पन्नः,

अत्र प्रसङ्गात् जम्बूस्वामिनः परिचयश्चायम्—'राजगृह'—नगर्याम्
'ऋषभदत्त'—नामा इभ्य—श्रेष्ठी निवसति स्म, तस्य 'भद्रा'—नाम्नी भार्या, तत्पुत्रः
पञ्चमस्वर्गाच्च्युतो 'जम्बू'—नामा सञ्जातः, मात्रा स्वप्ने जम्बूवृक्षो दृष्टस्तेन

इस मर्यादा से समवसरणमें सुधर्मास्वामी आदि मुनियोंको
सविधि वन्दन करके स्व-स्व स्थान पर परिषद्के स्थित हो जाने पर श्री
सुधर्मास्वामीने श्रुतचारित्रलक्षण धर्म सुनाया। धर्मकथा श्रवण करनेके
पश्चात् परिषद् जिस दिशासे आई, पुनः उसी दिशाको चली गई॥३॥

'तेणं कालेणं' इत्यादि। उस काल उस समय श्री आर्य-
सुधर्मा स्वामी के अंतेवासी काश्यपगोत्रीय श्री आर्य जम्बूस्वामी
जिनका परिचय इस प्रकार है—

राजगृह नगरमें ऋषभदत्त नामके इभ्य (उत्कृष्ट धनिक) सेठ
रहते थे। उनकी पत्नीका नाम भद्रा था। पंचम देवलोकसे चवकर

आयी मर्यादाथा समवसरणमा सुधर्मास्वामी वगेरे मुनियोने विधिपूर्वक
वदना करीने पोटपोताने स्थाने परिषद् (मण्डला लोको) ना स्थिर थया पछी श्रीसुधर्मा
स्वामीओ श्रुत आरिच लक्षण धर्म संभाषाओये। धर्मकथा सालणी रह्या पछी लोको
जे जे णालुकेथी आव्या उता त्या त्या पाछा गया (३)

'तेणं कालेणं' इत्यादि. ते काले ते समय श्री आर्य सुधर्मा स्वामीना अन्ते-
वासी (शिष्य) काश्यपगोत्री श्री आर्य जम्बूस्वामी उता जेमनेो परिचय नीचे प्रमाणे छे.—

राजगृह नगरमां ऋषभदत्त नामना इभ्य—सेठ (गहू धनवान) रहैता उता,
तेमनी पत्नीनु नाम भद्रा उतु. पायमा देवलोकथी रयवीने ओक ऋद्धिशाणी देवे

हित्वा विनश्वरधनं प्रभवोऽपि धन्य-

श्रौराद्यगोचरमनर्घ्यमवाप्तवान यः ।

रत्नत्रयं स्थिरतरं निजवन्ध्वभाज्यं

पाथेयमद्भुतमनन्तसुखावहं च ॥ २ ॥” इति

अथ सूत्रकारो जम्बूम्वामिनं विगिनष्टि-‘समचतुरे’ त्यादिना, समाः= वृत्त्याः भ्रन्वृत्ताधिकाः चतस्रोऽस्रयो हस्तपादोपर्यधोरुपाश्रत्वारोऽपि विभागाः (शुभलक्षणोपेताः) यस्य (संस्थानस्य) तत्र समचतुरस्रं=तुल्यारोहपरिणाहं, तच्च संस्थानम्=आकारविशेषः इति समचतुरस्रसंस्थानं, तेन संस्थितः=समचतुरस्रसंस्थानसंस्थितः । जात्र-(यात्र)-शब्देन ‘सत्तुस्सेहे वज्जरिसहनारायसंघयणे, कणम-पुलक-निघमपद्मगौरं’ तथा-‘उग्रतवे, तत्तवे, दित्ततवे, उराले, घोरे, घोरव्वये, संविच्चिउलतेउलेस्से’ एतेषां सङ्ग्रहः । एतच्छाया-‘सप्तोत्सेधः, वज्रकृपम-नाराचसंहननः, कनकपुलकनिकपपद्मगौरः, तथा-उग्रतपाः, नप्ततपाः, र्गप्ततपाः, उदारः, घोरः, घोरव्रतः, संक्षिप्तविपुलतेजोलेड्यः ।

“ जम्बू स्वामी के समान इस संसार में न हुआ न होगा, जिस वीर प्रशंसनीय महापुरुष ने चोरोंको भी संयम मार्गमें आरूढ़ कर, और वैसे ही अपनी आठों भार्याओं, तथा उनके मातापिता और अपने मातापिताको भी संयममार्गपर आरूढ़कर मोक्षगामी बनाये ॥ १ ॥ धनद्वय धन आदिका त्याग कर, न जिसको चोर चुरा-मकते हैं और न जिसकी कीमत हो सकती है, जो अविनाशी है, निजवन्धु भी जिसका भाग नहीं ले सकते, तथा मोक्ष स्थानको पहुँच-नेके लिए सबल (भाला) के समान है, ऐसे अनन्त सुखके देने वाले रत्नत्रयको प्रभवने भी प्राप्ति किया हम लिये वह धन्य है ॥२॥

“ जम्बू स्वामीना जम्बू आ सप्तारम्भा तथा नशी अने यशे पापु नडि डे नै धीः तथा प्रशंसनीय महापुरुषे चोरेनं पञ्च संयमं मार्गे अशब्धा तथा मोक्ष गामी अनाश्या अविनाशी अने पोतानी आठ श्रीश्री तथा तेमना मातापिताने तथा पोतानी (नरेश्वरता) माता पिताने पञ्च संयम मार्गे अशब्दी मोक्षगामी अनाश्या ॥ १ ॥ नर्घ्य-धन परेदेने त्याग करीने, जेने चोर चोरी न शकै, जेनु भूड्य न शकै शकै नै अविनाशी छै, पोताना लाड पञ्च जेमाथी भाग पशवी न शकै, तथा जे मु स्थाने परे अना गटे नै आना समान छै, जेवुं अनन्त सुख देवावणां रत्न-त्रयनं प्राप्ति अन्तरे प्रभवने पञ्च धन्य छै ॥ २ ॥ ”

तत्र 'सप्तोत्सेध' इति-सप्तहस्तोच्छ्रायः=सप्तहस्तप्रमितोच्छ्रितदेहः । 'वज्रे' त्यादि-वज्रं=कीलिकाकारमस्थि, ऋषभः=तदुपरिपरिवेष्टनपट्टाकृतिकोऽस्थिविशेषः, नाराचम्=उभयतो मर्कटबन्धः, तथा च-द्वयोरस्थोरुभयतो मर्कटबन्धनेन वद्धयो पट्टाकृतिना तृतीयेनाऽऽश्ना परिवेष्टितयोरुपरि तदस्थित्रयं पुनरपि दृढीकर्तुं तत्र निखातं कीलिकाकारं वज्रनामकमस्थि यत्र भवति तद् वज्रऋषभनाराचम्, तत् संहननं-संहन्यन्ते=दृढीक्रियन्ते शरीरपुद्गला येन तत् संहननम्=अस्थिनिचयो यस्य स वज्रऋषभनाराचसंहननः ।

'कनके' त्यादि-कनकस्य=सुवर्णस्य पुलकः=खण्डम्, तस्य निकषः=शाणनिघृष्टरेखा, 'पद्म'-शब्देन पद्मकिञ्चलकं गृह्यते, पद्मं = पद्मकिञ्चलकं च, तद्वद् गौरः, इति । यद्वा-कनकस्य=सुवर्णस्य पुलकः=सारो वर्णातिशयस्तत्प्रधानो यो निकषः=शाणनिघृष्टसुवर्णरेखा तस्य यत् पक्ष्म = बहुलत्वं तद्वद् गौरः=शाणनिघृष्टानेकसुवर्णरेखावच्चाकचिक्ययुक्तगौरशरीरः, 'उग्रतपा'इति-उग्रं=उत्कृष्टं प्रवृद्धपरिणामत्वात्पारणादौ विचित्राभिग्रहत्वाच्च अप्रघृष्यमनशनादि द्वादशविधं तपो यस्य स तथा, तीव्रतपोधारीत्यर्थः । 'तप्ततपा'इति-येन तपसा ज्ञाना-वरणीयाद्यष्टकर्म भस्मीभवति तादृशं तपस्तप्तं येन स तथा, कर्म निर्जरणार्थ-तपस्यावान् । 'दीप्ततपाः' इति-दीप्तं=जाज्वल्यमानं तपो यस्य स तथा वह्निरिव कर्मवनदाहकत्वेन, ज्वलतेजस्वीत्यर्थः, उदारः = सकलजीवैः सह मैत्रीभावात्, 'घोर' इति-परीपहोपसर्गकषायशत्रुप्रणाशविधौ भयानकः, 'घोरव्रत' इति-घोरं=कातरैर्दुश्चरं व्रतं=सम्यक्त्वशीलादिकं यस्य स तथा, 'संक्षिप्तविपुले' त्यादि-

सूत्रकार फिर जम्बू स्वामीका वर्णन करते हैं-जो समचतुरस्र संस्थानवाले थे, जिनके शरीरकी अवगाहना सात (७) हाथकी थी, वज्रऋषभनाराच संहननके धारी थे,

कसौटी पर घिसी हुई स्वर्ण रेखाके समान, तथा कमल-केशरके समान गौर वर्ण थे । उग्र तपस्वी थे । तीव्र तपके करने-वाले देदीप्यमान तपोधारी थे । षट्कायोंके रक्षक होनेसे उदार थे,

सूत्रकार वर्णा जम्बूस्वामीनु वर्णन करे छे-जे समचतुरस्र संस्थानवाणा हुता, जेना शरीरनी अवगाहना सात(७)हाथनी हुती, वज्र ऋषभनाराच संघयणुवाणा हुता, कसौटी उपर धसेली सुवर्ण रेखा समान तथा कमल-केशर समान जेना गौर वर्ण हुतो। उग्र तपस्वी हुता तीव्र तप करवावाणा देदीप्यमान तपोधारी हुता छे अथाना रक्षक होवाथी उदार हुता, परिषड् उपसर्ग कषायशत्रुनो विजय करवावा

संक्षिप्ता=शरीरान्तर्गतत्वेन सङ्कुचिता विपुला=विशाला अनेकयोजनपरिमितक्षेत्र-
गतवस्तुभस्मीकरणसमर्थाऽपि, तेजोलेश्या=विशिष्टतपोजनितलब्धिविशेषसमुत्पन्न-
तेजोज्वाला यस्य स संक्षिप्तविपुलतेजोलेश्यः=शरीरान्तर्गीनतेजोलेश्यावान् ।
एवं गुणगणसमेतौ ' जम्बूस्वामी ' आर्यसुधर्मणोऽनगरस्य अदूरसामन्ते-
दूरं=विप्ररूपः, सामन्तं=समीपं तयोरभावोऽदूरसामन्तं तस्मिन् नातिदूरे नाति-
निकटे, उचिने देशे इत्यर्थः । ' उर्ध्वजाणू ' इति-ऊर्ध्वजानुः-ऊर्ध्वे जानुनी
यस्य स तथा, जात्र-(यावत्)-शब्देन 'अहोसिरे, कयंजलिपुटे, उक्कुडासणे,
आणकोट्टोवगण, संजमेण तवसा अप्पाणं भावेमाणे' इत्येषां महग्रहः । 'अहोसिरे'
इति-अत्रःशिराः=नतमस्तकः, इतस्ततश्चक्षुर्व्यापारं निवर्त्य नियमितभूमिभागनि-
हितदृष्टिरित्यर्थः । 'कयंजलिपुटे' इति कृताञ्जलिपुटः=मस्तकन्यस्तसम्पुटीकृत-
हस्तः, 'उक्कुडासणे' इति-उत्कुटासनः उत्कुटं=भूमावलग्नपुतम् आसनं यस्य
स तथोक्तः भूप्रदेशास्पृष्टपुततयोपविष्ट इत्यर्थः । ध्यानकोष्ठोपगतः-ध्यायते=
चिन्त्यतेऽनेनेति ध्यानम्, एकस्मिन् वस्तुनि तदेकाग्रतया चित्तस्थावरथापन-
मित्यर्थः, ध्यानं कोष्ठ इव ध्यानकोष्ठस्तमुपगतः, यथा कोष्ठगतं धान्यं विकीर्णं
न भवति तथैव ध्यानत इन्द्रियान्तःकरणवृत्तयो बहिर्न यान्तीति भावः, निय-

और परीषहोपसर्ग-रूपाय-रूप शत्रुके चिजय करनेमें भयानक अर्थात्
वीर थे । घोस्रतवाले थे अर्थात् कठिन व्रतके पालक थे ।

तपके प्रभादसे उत्पन्न होने वाली और अनेक योजन विस्तृत
(लम्बे-चौड़े) क्षेत्रमें रही हुई वस्तुको भस्म करने वाली अन्तर्ज्वाला-
रूप लब्धिको ' तेजोलेश्या ' कहते हैं, उसका संक्षिप्त करनेवाले, अर्थात्
गुप्तरूपसे रखनेवाले थे । इस तरह गुणके भण्डार श्री जम्बू अनगर
श्री आर्यसुधर्मा स्वामी के पास उर्ध्वजानु किये हुए, हथर उधर न
देखते हुए, दोनों हाथ जोडकर मस्तक मुकाये, उक्कुडासनसे बैठे

भयानक अर्थात् वीर (गडादुर) हुता उत्र व्रतधारी हुता अर्थात् कठिन व्रतनु
पालन करता हुता

तपना प्रभावशी उत्पन्न थावावाणी अने अनेक योजन विस्तारता क्षेत्रमा
रुद्धी वस्तुने भस्म करवावाणी अतन्ज्वाला रूप लब्धिने ' तेजोलेश्या ' कहे छे
तेने संक्षिप्त करवावाणा अर्थात् गुप्तरूपमा राखवावाणा हुता आवी रीते गुणुना
भंडार श्री जम्बू स्वामीके श्री आर्यसुधर्मा स्वामीनी पास उर्ध्वजानु रहीने आणु-
णाणुके नगर न नाभतां जे हाथ लेडीने माथु नमावी उक्कुडासने जेठेला मनने

न्वितचित्तवृत्तिमानित्यर्थः । 'संजमेण' इति-संयमेन सप्तदशविधेन, 'तत्रसे' ति-
तपसा=द्वादशविधेन आत्मानं भावयन् विहरति=तिष्ठति, इति ॥ ४ ॥

मूलम्—तएणं से भगवं जम्बू जायसडे जाव पज्जुवासमाणे
एवं वयासी—उवंगाणं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं के अडे
पणत्त ? एवं खलु जंबू ! समणेणं भगवया जाव संपत्तेणं
एवं उवंगाणं पंच वग्गा पणत्ता, तं जहा—निरयावलियाओ
१, कप्पवडिसियाओ २, पुप्फियाओ ३, पुप्फचूलियाओ ४,
वणिहदसाओ ५ ॥ ५ ॥

छाया—ततः खलु भदन्त ! स भगवान् जम्बूः जातश्रद्धः यावत्
पर्युपासीनः एवमवादीत्—उपाङ्गानां भदन्त ! श्रमणेन यावत्संप्राप्तेन कोऽर्थः
प्रज्ञप्तः ? । एवं खलु जम्बूः ! श्रमणेन भगवता यावत्संप्राप्तेन एवम् उपाङ्गानां
पञ्च वर्गाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—निरयावलिकाः (१) कल्पावतंसिकाः (२) पुष्पिताः
(३) पुष्पचूलिकाः (४) वह्निदशाः (५) ॥ ५ ॥

टीका—'तएणंसे' इत्यादि—ततः खलु=निश्चयेन सः=असौ भगवान्=
अपूर्वसम्यक्त्वशीलसमाराधनयशोवान् जम्बूः—जातश्रद्धः=उत्पन्नप्रश्नेच्छः, याव-
च्छब्देन—जातसंशयः=उद्भूतसंदेहः, जातकुतूहलः=उत्पन्नौत्सुक्यः, इति सङ्ग्रहो
बोध्यः, श्रीसुधर्मस्वामिनमुपागत्य सविधिवन्दनं विधायामिमुखं प्राञ्जलिः पर्यु-
पासीनः=सेवमानः एवम्=वक्ष्यमाणप्रकारेण अवादीत्=अवोचत् अप्राक्षीदित्यर्थः—

हुए ध्यानरूपी कोठेमें स्थित, अर्थात् चित्तवृत्तिको एकाग्र करके तप
और संयमसे आत्माको भावित करते हुए बैठे थे ॥ ४ ॥

'तएणंसे' इत्यादि । उसके बाद श्री आर्य जम्बू अनगार जो
जिज्ञासु थे, जिनमें श्रद्धा थी और जिन्हें जिज्ञासाके कारण कौतूहल
(उत्सुकता) हुआ था । श्रद्धा उत्पन्न हुई, संशय उत्पन्न हुआ और कौतूहल
हुआ । जिन्हें भला भाति श्रद्धा थी, भली भाति संशय था और भली

ध्यानरूपी कोठामें स्थित राभीने अर्थात् चित्तवृत्तिने एकाग्र करीने तप तथा संयमशी
आत्माने भावित करता था कोठे में ॥ ४ ॥

'तएणं से' इत्यादि त्पार पछी श्री आर्य जम्बूस्वामी के ने जिज्ञासु हुता,
नेने सारी रीते श्रद्धा हुती, संशय पणु सारी रीते हुते, अने कुतूहल पणु सारी रीते

हे भदन्त ! = हे भगवन् ! इदं गुरोः सम्बोधनम्, उपाद्धानां श्रमणेन भगवता महावीरेण यावत् आदिकरेण, तीर्थकरेण, स्वयं संवृद्धेन पुरुषोत्तमेन, पुरुषसिंहेन, पुरुषवरपुण्डरीकेन, पुरुषवरगन्धहस्तिना, लोकोत्तमेन, लोकनाथेन,

आति कौतूहल था, खड़े होकर जहाँ श्री आर्यसुधर्मा स्वामी थे, वहाँ गये । वहाँ जाकर श्री आर्यसुधर्माको अपने दक्षिण तरफसे अंजलि-पुट (दोनों हाथ) को घुमानेरूप तीनवार प्रदक्षिणा पूर्वक वन्दना की, तत्पश्चात् श्री आर्य सुधर्मास्वामी से न अधिक दूर और न अधिक पास-निकट सेवामें उपस्थित हो युगलकर जोड़ विधिपूर्वक शुभ्रूपा करते हुए, इस प्रकार बोले-

हे भगवन् ! - श्रमण भगवान् महावीर स्वामीने जो स्वशासनकी अपेक्षासे धर्मकी आदि करनेवाले, जिससे संसार-सागर तैरा जाय उसे तीर्थ कहते हैं, वे तीर्थ चार प्रकार के हैं—साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका, ऐसे चतुर्विध संघ रूप तीर्थकी स्थापना करने वाले, स्वयं बोधको पाने वाले, ज्ञानादि अनन्त गुणोंके धारक होनेसे पुरुषोत्तम । राग द्वेषादि शत्रुओंके पराजय करनेमें अलौकिक पराक्रमशाली होनेसे पुरुषोंमें केशरीसिंहके समान । समस्त अशुभ-रूप मलसे रहित होनेके कारण विशुद्ध श्वेत कमल के समान निर्मल । अधवा-जैसे कीचडसे उमन्न और जलके योगसे बड़ा हुआ होकर

धनु तु ते उवाच यद्यने न्या श्री आर्य सुधर्मा स्वामी इति त्वा गया त्वा यद्यने श्री आर्य सुधर्मानि, पोतानी नमस्सी जालुमेथी अजलिपुट (मे हाथ) इरववा शरु करी त्रथ वार प्रदक्षिणा पूर्वक वन्दना करी त्वा पछी श्री आर्य सुधर्मा स्वामीथी गहु दूर नहि तेम गहु पासै पथु नहि मेम निकट सेवामा उपस्थित थथ मे हाथ नेडी विधिपूर्वक सेवा करता आम बोदयाः-

हे भगवन् ! श्रमण भगवान् महावीरस्वामीमे ने स्वशासननी अपेक्षा धर्मनी आदि इरवावाणा, नेथी संसारसागर तरी नवाय तेने तीर्थ इहे छे, ते तीर्थ चार प्रकारना छे-साधु, साध्वी, श्रावक अने श्राविका मेवा चतुर्विधसंघ रूप तीर्थनी स्थापना इरवावाणा, पोते बोध पायेला, ज्ञान वगेरे अनन्त गुण सपन्न होवाथी पुरुषोत्तम, रागद्वेषादि शत्रुमेनो पराजय इरवामा अलौकिक पराक्रमवाणा होवाथी पुरुषोत्तम केशरीसिंह समान, समस्त अशुभरूपी भणथी रहित होवाथी विशुद्ध, श्वेतकमल समान निर्मल, अटवे हे-मेम इरववाथी उत्पन्न थयेछुं कमल पाछीना योगथी वधतुं होवा छता

लोकहितेन, लोकप्रदीपेन, लोकप्रद्योतकरेण, अभयदेन, चक्षुर्देन, मार्गदेन,

भी कमल उन दोनों (जल-कीच) के संसर्ग को छोड़कर सदा निर्लेप रहता है, और अपने अलौकिक सुगंध आदि गुणोंसे देव मनुष्यादिकोंका शिरोभूषण बनता है, वैसे ही भगवान् कर्मरूपी कीचड से उत्पन्न और भोगरूपी जलसे बढे हुए होकर भी उन दोनोंके संसर्गको त्याग कर निर्लेप रहते हैं और केवलज्ञानादि गुणोंसे परिपूर्ण होनेके कारण भव्य जीवों के शीरोधार्य हैं, जिसका गन्ध सूंघते ही सब हाथी डर के मारे भाग जाते हैं। उस हाथीको 'गन्धहस्ती' कहते हैं। उस गन्धहस्तीके आश्रयसे जैसे राजा सदा विजयी होता है, उसी प्रकार भगवान्के अतिशय से देशके १ अतिवृष्टि, २ अनावृष्टि, ३ शलभ(तीड), ४ चूहे, ५ पक्षी, ६ स्वचक्र-परचक्र-भय, यह छह प्रकारकी ईति, और महामारी आदि सभी उपद्रव तत्काल दूर हो जाते हैं। और आश्रित भव्य जीव सदा सब प्रकारसे विजयी होते हैं। चौतीस अतिशयों और वाणीके पैंतीस गुणोंसे युक्त होनेके कारण लोगोमें उत्तम। अलभ्य रत्नत्रय के लाभ रूप योग और लब्ध रत्नत्रयके पालन रूप क्षेमके कारण होने से भव्य जीवोंके नाथ। एकेन्द्रिय आदि सकल प्राणीगणके हितकारक। जिस प्रकार

એ એઉ (પાણી-કાદવ) ના સંસર્ગને છોડીને હમેશાં નિર્લેપ રહે છે, તથા પોતાની અલૌકિક સુગંધ આદિ ગુણોથી દેવ, મનુષ્ય આદિના મસ્તકનું ભૂષણ બને છે, તેવીજ રીતે ભગવાન કર્મરૂપી કાદવમાંથી ઉત્પન્ન અને ભોગરૂપી જલથી વૃદ્ધિ પામ્યા છતાં તે એઉના સંસર્ગને ત્યાગ કરીને નિર્લેપ રહે છે, તથા કેવળજ્ઞાન આદિ ગુણોથી પરિપૂર્ણ હોવાથી ભવ્યજીવોને શિરોધાર્ય છે જેનો ગંધ સુંઘતાજ બધા હાથી બીકથીજ ભાગી બચ છે તેવા હાથીને 'ગંધહસ્તી' કહે છે, તે ગંધહસ્તીના આશ્રયથી જેમ રાજા હમેશાં વિજય મેળવે છે, તેવીજ રીતે ભગવાનના અતિશયથી દેશના અતિવૃષ્ટ (૧), અનાવૃષ્ટિ (૨), શલભા (તીડ) (૩), ઉદર (૪), પક્ષી (૫), સ્વચક્ર પરચક્ર ભય (૬), એ છ પ્રકારની ઇતિ (ઉપદ્રવ) અને મહામારી આદિ સર્વે ઉપદ્રવ તત્કાલ દૂર થઈ બચ છે, તથા આશ્રિત ભવ્ય જીવ હમેશાં સર્વ પ્રકારે વિજયી થાય છે ચોત્રીશ અતિશય તથા વાણીના પાત્રીશ ગુણોથી યુક્ત હોવાથી લોકોમાં ઉત્તમ, અલભ્ય રત્નત્રયના લાભરૂપી યોગ, તથા લબ્ધ રત્નત્રયના પાલન રૂપી ક્ષેમનું કારણ હોવાથી ભવ્ય જીવોના નાથક, એકેન્દ્રિય આદિ સર્વ પ્રાણીગણના હિત કરનારા, જેમ દીપક

दीपक सबके लिये समान प्रकाशकारी है तो भी नेत्रवाले ही उससे लाभ उठा सकते हैं नेत्रहीन नहीं, उसी प्रकार भगवानका उपदेश सबके लिये समान हितकर होने पर भी भव्य जीव ही उससे लाभ उठाते हैं अभव्य नहीं, अतएव भव्योंके हृदयमें अनादि काल से रहे हुए मिथ्यात्व रूप अन्धकार को मिटाकर आत्माके यथार्थ स्वरूपको प्रकाशित करनेवाले । लोक शब्दसे यहां लोक और अलोक दोनोंका ग्रहण है अतएव केवलज्ञान रूपी आलोकसे समस्त लोकालोकके प्रकाश करनेवाले । मोक्षके साधक उत्कृष्ट धैर्य रूपी अभय को देनेवाले, अथवा-समस्त प्राणियोंके सकटको छुड़ाने वाली दया (अनुमत्पा) के धारक । ज्ञाननेत्रके दायक, अर्थात् जैसे किसी गहन वनमें लुटेरोंसे लूटे गये और आखों पर पट्टी बांध कर तथा हाथ पैर पकड़ कर गड्ढेमें गिराये गये पथिकके कोई दयालु सब बन्धनों को तोड़ कर नेत्र खोल देता है, इसी प्रकार भगवान भी संसार रूपी अपार कान्तारमें राग-द्वेष रूप लुटेरोंसे, ज्ञानादि गुणोंको लूट कर तथा कदाग्रह रूप पट्टेसे ज्ञान चक्षुको ढक कर मिथ्यात्व के गड्ढेमें गिराये गये भव्य जीवोंके उस कदाग्रह रूप पट्टेको दूर कर ज्ञाननेत्रको देने वाले हैं, अतएव सम्यक् रत्नत्रय स्वरूप मोक्षमार्ग,

जधाने भाटे सरणे प्रकाश करे छे तो पद्य आपवाणाञ्च मात्र तेनाथी लावा भेगवी शक्ये छे नेत्रहीन अटले आधणा भेगवी शकता नथी. तेम भगवानने उपदेश जधा भाटे समान हितकारक होवा छतां पद्य भव्य ज्येण तेना लावा भेगवी शकथे अव्य नहि भेगवी शके. अरीते भव्येना हृदयमा अनादि काणथी रडेलु मिथ्यात्वइपी अधाइ मटाडीने आत्माना यथार्थ स्वरूपने प्रकाशित करवावाणा. लोक शब्दथी अर्द्धी लोक अने अलोक जेठ समजवाना छे आ रीते देवजानइपी आलोकथी तमाम लोक अने अलोकने प्रकाश करवावाणा, मोक्षना साधक, उत्कृष्ट धैर्यइपी अवायने देवावाणा, अथवा समस्त प्राणियोंनां संकट मटाडनारी दया (अनुकंपा)ना धारक ज्ञानइपी नेत्र आपनारा अर्थात् जेम डोळ गहनवनमां लूटाराथी लूटाई गयेला अने आपे पाटा पाडीने तथा हाथपग पकडीने आडामा नाभी दीधेला सुसाइने डोळ द्याणु जधा बंधने तोडी आपे उघाडी हे छे तेवी रीते भगवान पद्य संसारइपी अटवीमां राग-द्वेष इपी लूटाराथी, ज्ञानादि गुणोंने लूटी तथा कदाग्रइपी पाटाथी ज्ञानचक्षुने ढाकी छथ मिथ्यात्वइपी आडामां पाडी नाथेला भव्यज्येने कदाग्रइपी पाटाथी सुकत करी ज्ञानइपी नेत्र देवावाणा. अटले सम्यक् रत्नत्रय स्वरूप मोक्षमार्ग अथवा विशिष्ट

शरणदेन, जीवदेन, बोधिदेन, धर्मदेन, धर्मदेशनादेन, धर्मनायकेन, धर्मसार-
थिकेन, धर्मवर-चातुरंतचक्रवर्तिकेन, द्वीपत्राण-शरण-गतिप्रतिष्ठेन, अप्रतिहत-

अथवा विशिष्ट गुणको प्राप्त होने वाले, क्षयोपशम भाव रूप मार्गको देने वाले । कर्म शत्रुओं से दुःखित प्राणियोंको शरण (आश्रय) देने वाले, पृथिव्यादि षड्जीव-निकाय में दया रखने वाले, अथवा मुनियोंके जीवनाधार स्वरूप संयमजीवितको देने वाले । शम संवेग आदि प्रकाश, अथवा जिनवचनमें रुचिको देने वाले । धर्मके उपदेशक । धर्मके नायक अर्थात् प्रवर्त्तक । धर्मके सारथी अर्थात् जिस प्रकार रथपर चढे हुए को सारथी रथके द्वारा सुखपूर्वक उसके अभीष्ट स्थान पर पहुँचाता है, उसी प्रकार भव्य प्राणियों को धर्म रूपी रथके द्वारा सुखपूर्वक मोक्ष स्थान पर पहुँचाने वाले । दान, शील, तप और भावसे नरक आदि चार गतियों का अथवा चार कषायोंका अन्त करनेवाले, अथवा चार-दान, शील, तप और भाव से अन्त=रमणीय, या दान आदि चार अन्त=अवयव वाले, अथवा दान आदि चार अन्त=स्वरूप वाले श्रेष्ठ धर्म को 'धर्मवरचातुरन्त' कहते हैं, यही जन्म जरा मरण के नाशक होने से चक्र के समान है । अतएव धर्मवरचातुरन्त रूप चक्र के धारक । यहाँ पर 'वर' पद देनेसे राजचक्रकी अपेक्षा धर्मचक्रकी उत्कृष्टता तथा सौगत (बौद्ध) आदि धर्मका निराकरण किया गया है, क्योंकि राजचक्र

शुभना प्राप्त कराववावाणा क्षयोपशमभाव इपी मार्ग देवावाणा, कर्मशत्रुथी पीडित प्राणियोंने आश्रय देवावाणा, पृथ्वी आदि छ लुवननिकायमा दया राभववावाणा, अथवा मुनीयोना लुवन आधार स्वइय संयम लुवन देवावाणा, शम संवेग आदि प्रकाश अथवा जिन वचनमां इयि देवावाणा, धर्मना उपदेशक, धर्मना नायक अर्थात् प्रव-
र्त्तक, धर्मना सारथी अर्थात् जेम रथ उपर भेठेदाने सारथी रथवडे सुभपूर्वक तेना अभीष्ट स्थाने पडोयाडे-छे तेवी रीते भव्य प्राणियोंने-धर्मइपी रथद्वारा सुभपूर्वक मोक्षस्थान पर पडोयाडेनार, दान, शील, तप तथा लावथी नरक आदि चार गति-
योना अथवा चार कषायोना अन्त करवावाणा, अथवा चार-दान, शील, तप तथा लावथी अन्त=रमणीय, अथवा दान आदि चार अन्त=अवयववाणा, अथवा दान आदि चार अन्त=स्वरूपवाणा, श्रेष्ठ धर्मने 'धर्मवरचातुरन्त' कहे छे, जेज जन्म जरा मरणना नाश करवावाणा होवाथी अक समान छे, जेटले धर्मवरचातुरन्त इपी अकना धारक, अही 'वर' पद अडलु करवाथी राजचक्रनी अपेक्षा धर्मचक्रनी उत्कृष्टता तथा सौगत (बौद्ध) आदि धर्मनु निराकरलु करेछु' छे, केभठे राजचक्र देवण आ लोकनुज

वरज्ञानदर्शनधरेण, व्यावृत्तच्छब्दकेन, जिनेन, जायकेन, तीर्णेन, तारकेण, बुद्धेन, बोधकेन, मुक्तेन, मोचकेन, सर्वज्ञेन सर्वदर्शिना, शिवमचलमरुज-मनन्तमक्षयमव्यावाधमपुनरावृत्तिकं सिद्धिगतिनामधेयं स्थानं संप्राप्तेन, कोऽर्थः=

केवल इस लोकका साधक है, परलोकका नहीं, तथा सौगत आदि धर्म यथार्थ तत्त्वोंका निरूपक न होनेसे श्रेष्ठ नहीं। 'चक्रवर्ती' पद देनेसे तीर्थङ्करोंको छह खण्डके अधिपतिकी उपमा दी गई है, क्योंकि वह चक्रवर्ती भी चार सीमावाले, अर्थात् उत्तर दिशामें हिमवान् और पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, दिशाओमें लवण समुद्र तक जिसकी सीमा है ऐसे भरतक्षेत्र पर एक शासन राज्य करता है। संसार-समुद्रमें डूबते हुए जीवोंके एक मात्र आश्रय होनेसे द्वीप समान। भव्य जीवोंके कल्याणकारी होनेसे त्राणस्वरूप अतएव उनके शरण-आधारस्थान। तीनों कालमें अविनाशी स्वरूप वाले। आवरणरहित केवलज्ञान, केवलदर्शन के धारक। ज्ञानावरणीय आदि कर्मोंका नाश करने वाले। राग-द्वेषरूप शत्रुको स्वयं जीतने वाले और दूसरोंको जीताने वाले। भवसमुद्रको स्वयं तैरने वाले और दूसरोंको तिराने वाले। स्वयं बोधको प्राप्त करने वाले और दूसरोंको प्राप्त कराने वाले। स्वयं मुक्त होने वाले और दूसरोंको मुक्त करनेवाले। सर्वज्ञ, सर्वदर्शी तथा निरुपद्रव, निश्चल, कर्मरोगरहित, अनन्त, अक्षय, आधाररहित पुनरागमनरहित, ऐसे सिद्ध स्थान अर्थात्

साधन छे परलोककु नही। तथा सौगत आदि धर्म यथार्थ तत्त्वोना निरूपण न करता होवाथी श्रेष्ठ नहीं 'चक्रवर्ती' पद आपवाथी तीर्थं करने छे छे अंडना अधिपतिनी उपमा दीथी छे, छेभके ते चक्रवर्ती पण चार सीमावाणा अर्थात् उत्तर दिशाभा हिमवान् अने पूर्व, दक्षिण, पश्चिम दिशाओभा लवणसमुद्र सुधी जेनी सीमा छे ओवा भरतक्षेत्र पर ओके शासन राज्य करे छे संसारसमुद्रमां डूगता एवोने ओके आश्रय होवाथी द्वीप समान, भव्यएवोना कल्याणकारी होवाथी त्राण स्वरूप तेथी तेओने शरण-आधारस्थान, त्राण कालमा आवरणरहित केवलज्ञान, केवलदर्शनना धारक, ज्ञानावरणीय आदि कर्मोना नाश करवावाणा, रागद्वेषभी शत्रुने बतने एतनारा तेभज भीजने एताववावाणा, भवसमुद्रने बतते तरनारा तेभ भीजने तारनारा, पोत ओध भेजवनारा तेभज भीजने ओध प्राप्त करवनारा, पोते मुक्त थवावाणा तथा भीजने मुक्त करवावाणा, सर्वज्ञ सर्वदर्शी तथा उपद्रव वगरना निश्चल कर्मरोग रहित, अनन्त, अक्षय, आधाररहित, पुनरागमनरहित, ओवा सिद्धस्थान ओटवे मोक्षने प्राप्त

शब्दसमुदायात्मकवाक्यतात्पर्यविषयीभूतः को भावः प्रज्ञप्तः=प्ररूपितः, कथित इत्यर्थः। जम्बूस्वामिपृच्छानन्तरं सुधर्मस्वामी जम्बूस्वामिनं प्रति प्राह—हे जम्बू ! एवम्=इत्थम् खलु=निश्चयेन यावत्=उक्तगुणवता सम्प्राप्तेन=मुक्तिं लब्धवता श्रमणेन भगवता महावीरेण एवं=वक्ष्यमाणरीत्या उपाङ्गानां 'पञ्च वर्गाः' इति, अध्ययनसमूहो वर्गस्ते प्रज्ञप्ताः=निरूपिताः, तद्यथा=तदेव दर्शयते—निरयावलिकाः (१), अस्योपाङ्गस्य 'कल्पिके'ति नामान्तरम्, कल्पावतंसिकाः (२), पुष्पिताः (३), पुष्पचूलिकाः (४), वृष्णिदशाः (५), अस्य 'वह्निदशे'ति नामान्तरम् । इह सर्वत्रावयवगतबहुत्वविवक्षायां बहुवचनम् ।

तत्र निरयावलिकाः—

यत्रावलिकाप्रविष्टाः=श्रेणिष्ववस्थिताः इतरे च नरकाऽऽवासाः प्रसङ्गतस्तद्गामिनश्च मनुष्यास्तिर्यश्चः प्रतिगद्यन्ते तास्तथा (१), कल्पावतंसिकाः—

मोक्षको प्राप्त करने वाले उन प्रभुने उपाङ्गोंका क्या भाव कहा ? । इस प्रकार जम्बूस्वामीके पूछने पर श्री सुधर्मा स्वामीने जम्बूस्वामीसे कहा—हे जम्बू ! इस प्रकार उक्त गुण विशिष्ट यावत् सिद्धि गतिको प्राप्त करने वाले भगवान्ने उपाङ्गोंके पांच वर्ग निरूपण किये हैं वे क्रमशः इस प्रकार हैं :-

(१) निरयावलिका, इसका दूसरा नाम 'कल्पिका, भी है । (२) कल्पावतंसिका, (३) पुष्पिता, (४) पुष्पचूलिका और (५) वृष्णिदशा, इसका भी 'वह्निदशा' दूसरा नाम है । यहाँ सब जगह—अवयवगत बहुत्व विवक्षा से बहु वचन है ।

इन पांचोंमेंसे प्रथम—(१) निरयावलिका सूत्रमें नरकावासोंका तथा उनमें उत्पन्न होने वाले मनुष्य और तिर्यञ्चोंका वर्णन है ।

हरवावाणा ते प्रभुञ्चे उपाङ्गेना भाव शुं कथ्यो छे. अे प्रकारे जंभू स्वामीञ्चे पूछ-वाथी श्री सुधर्मा स्वामीञ्चे जंभू स्वामीने कथुः—हे जंभू ! अे प्रकारे कहेला शुषुविशिष्ट यावत् सिद्धे गतिनी प्राप्ति करवावाणा भगवाने उपाङ्गेना पाच वर्ग निरूपण कर्था छे ते अनुक्रमे नीचे प्रभाषे छेः—

(१) निरयावलिका, आनुं षीणुं नाम 'कल्पिका' पशु छे (२) कल्पावतंसिका (३) पुष्पिता (४) पुष्पचूलिका तथा (५) वृष्णिदशा आनुं पशु 'वह्निदशा' अेपुं षीणुं नाम छे अर्द्धी अथे ठेकाञ्चे अवयवगत बहुत्व विवक्षाथी बहुवचन वपराशु छे. अे पायेमांथी प्रथम (१) निरयावलिका सूत्रमां नरकावासोनुं तथा तेमां उत्पन्न यनाश मनुष्य तथा तिर्यञ्चोनुं वर्णन छे.

नाम-कल्पावतंसकदेवप्रतिवद्धग्रन्थपद्धतिः, तास्तथा (२), पुष्पिताः-संयमभाव-
नया पुष्पिताः सुखिताः प्राणिनः संयमाऽऽराधनपरित्यागेन ग्लानावस्थां प्राप्ताः
सङ्कुचिताः सन्तो भूयस्तदाराधनेन पुष्पिता यत्र प्रतिपाद्यन्ते ताः पुष्पिताः
(३), 'पुष्पचूलिकाः' पूर्वोक्तार्थविशेषप्रतिपादिकाः पुष्पचूडाः, ता एव तथा
इ-लयोरैक्यात् (४), वृष्णिदशाः-अयं चाऽन्वर्थः-वृष्णिपदेन 'नामैकदेशेन नाम-
ग्रहणम्' इति न्यायवलात् अन्धकवृष्णिनराधियो ग्रह्यते, तत्कुले ये, जातास्तेऽपि
अन्धकवृष्णयो निगद्यन्ते, तेषां दशाः=अवस्थाश्चरितगतिसिद्धिगमनलक्षणा यासु
ग्रन्थपद्धतिषु वर्ण्यन्ते तास्तथा (५), तत्र 'अन्तकृद्दशाङ्गस्य कल्पिका (निरया-
त्रलिका) (१), अनुत्तरोपपातिकदशाङ्गस्य कल्पावतंसिकाः (२), प्रश्नव्याकरणस्य
पुष्पिकाः (ताः) (३), विपाकसूत्रस्य पुष्पचूलिकाः (४), दृष्टिवादस्य वृष्णिदशाः
(५) उपाङ्गानि विज्ञेयानि ॥ ५ ॥

(२) द्वितीय-कल्पावतंसिका सूत्रमें सौधर्म आदि चारह देव-
लोकोमें कल्पप्रधान इन्द्र सामानिक आदिकी मर्यादायुक्त-कल्पावतंसक-
विमानोंका और तप विशेषसे उनमें उत्पन्न होने वाले देवोंका तथा
उनकी ऋद्धिका वर्णन है ।

(३) तृतीय पुष्पिता सूत्रमें जिन्होंने संयम भावनासे विकसित
हृदय होकर संयम लिया, पीछे उसके आराधनाका परित्याग करनेमें
शिथिल होनेसे ग्लान अवस्थाको प्राप्त हुए और फिर संयमकी आ-
राधना करके पुष्पित और सुखी बने, उनका वर्णन है ।

(४) चौथे पुष्पचूलिकासूत्रमें-पूर्वोक्तार्थका ही विशेष वर्णन है ।

(५) पाँचवें-वृष्णिदशा सूत्रमें-अन्धकवृष्णि राजाके कुलमें उ-
त्पन्न होने वालोंकी अवस्था-चरित्र, गति और सिद्धिगमनका वर्णन है ।

(२) द्वितीय-कल्पावतंसिका सूत्रमा सौधर्म आदि चार देवलोकोमा कल्प प्रधान
इन्द्रसामानिक आदि मर्यादायुक्त कल्पावतंसक विमानोनुं तथा तप विशेषथी तेमां उत्पन्न
थनारा देवोनु तथा तेमनी ऋद्धिनुं वर्णन छे

(३) तृतीय-पुष्पिता सूत्रमा जेभे संयम भावनाथी विकसित हृदयपूर्वक संयम
लीधो, पछी तेनी आराधनानो परित्याग करवामां शिथिल थथ जतां ग्लान अवस्था प्राप्त
थथ अने करी संयमनी आराधना करी पुष्पित अने सुखी बन्या तेनुं वर्णन छे

(४) चौथे पुष्पचूलिका-सूत्रमा अगाउ कहेला अर्थनुं विशेष वर्णन छे

(५) पाँचवें वृष्णिदशा-सूत्रमा अन्धकवृष्णिराजाके कुलमा उत्पन्न थनारनी ;
अवस्था, चरित्र, गति तथा सिद्धिगमननुं वर्णन छे

मूलम्—जङ्घं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं उवंग्गाणंपंच
वग्गा पन्नत्ता तं जहा निरयावलियाओ जाव वण्हिदसाओ,
पढमस्स णं भंते ! वग्गस्स उवंग्गाणं निरयावलियाणं समणेणं
भगवया जाव संपत्तेणं कइ अज्झयणा पन्नत्ता ? ॥ ६ ॥

छाया—यदि खलु भदन्त ! श्रमणेन यावत् संप्राप्तेन उपाङ्गानां पञ्च
वर्गाः प्रज्ञप्ताः तद्यथा—निरयावलिका यावत् वृष्णिदशाः, प्रथमस्य खलु भदन्त !
वर्गस्य उपाङ्गानां निरयावलिकानां श्रमणेन भगवता यावत् संप्राप्तेन कति
अध्ययनानि प्रज्ञप्तानि ? ॥ ६ ॥

टीका—‘जङ्घं भंते’ इत्यादि । अथ सोत्साहं सविनयं जम्बूस्वामी
सुधर्मस्वामिनं पप्रच्छ—भदन्त=हे भगवन् ! यदि=यदा खलु=निश्चयेन यावत्=
उक्तगुणवता संप्राप्तेन=मुक्तिं लब्धवता, श्रमणेन=दुश्चरतपश्चर्याप्रसिद्धेन भगवता
महावीरेण उपाङ्गानां पञ्चवर्गाः प्रज्ञप्ताःनिरूपिताः तद्यथा=तदेव दर्शयते—
निरयावलिका इत्यारभ्य वृष्णिदशापर्यन्ताः, तेषु हे भदन्त ! =हे भगवन् निर-
यावलिकानामुपाङ्गानां प्रथमवर्गस्य श्रमणेन भगवता यावत्=उक्तगुणवता सम्प्रा-
प्तेन=मोक्षंगतेन कति=क्रियत्संख्यकानि अध्ययनानि प्रज्ञप्तानि ? ॥ ६ ॥

मूलम्—एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं उवंग्गाणं
पढमस्स वग्गस्स निरयावलियाणं दस अज्झयणा पन्नत्ता, तं

निरयावलिका—अन्तकृद्दशाङ्गका उपाङ्ग है । कल्पावतंसिका—अ-
नुत्तरोपपातिक दशाङ्गका । पुष्पिका—प्रश्नव्याकरणका । पुष्पचूलिका—
विपाकसूत्रका । और वृष्णिदशा—दृष्टिवादका उपाङ्ग है । ॥ ५ ॥

‘जङ्घं भंते’ इत्यादि । हे भदन्त ! भगवान महावीर प्रभुने नि-
रयावलिका से लेकर वृष्णिदशा पर्यन्त उपाङ्गोंके पांच वर्ग कहे उनमें
भगवानने निरयावलिका के कितने अध्ययन कहे हैं ? ॥ ६ ॥

निरयावलिका—अ तद्वृत्तदृशांगनुं उपांग छे, कल्पावतसिका. अे अनुत्तरोपपातिक
दशांगनुं, पुष्पिका प्रश्नव्याकरणनुं, पुष्पचूलिका, अे विपाक सूत्रनु तथा, वृष्णिदशा, अे
दृष्टिवादनं उपांग छे ॥ ५ ॥

‘जङ्घं भंते’ इत्यादि छे भदन्त ! भगवान महावीर प्रभुअे निरयावलिकाथी
भांडीने वृष्णिदशा सुधीनां उपांगोना पांच वर्ग कहे। तेमां भगवाने निरयावलिकानां
कैटलां अध्ययन कहे छे ? ॥ ६ ॥

जहा-काले १ सुकाले २ महाकाले ३ कण्हे ४ सुकण्हे ५
तहा महाकण्हे ६ वीरकण्हे ७ य वोद्धव्वे रामकण्हे ८ तहेव
य पित्तसेणकण्हे ९ नवमे दसमे महासेणकण्हे १० उ ॥ ७ ॥

छाया-एवं खलु जम्बू ! श्रमणेन यावत् सम्प्राप्तेन उपाद्धानां प्रथमस्य
वर्गस्य निरयावलिकानां दश अध्ययनानि प्रज्ञप्तानि तद्यथा-कालः (?) सुकालः
(२) महाकालः (३) कृष्णः (४) सुकृष्णः (५) तथा महाकृष्णः (६) वीर-
कृष्णश्च (७) वोद्धव्यः । रामकृष्णः (८) तथैव च पितृसेनकृष्णो नवमः (९)
दशमो महासेनकृष्णस्तु (१०) ॥ ७ ॥

टीका-सुधर्मास्वामी प्राह-‘एवं खलु’ इत्यादि-हे जम्बू ! एवं खलु
यावत्=उक्तगुणवता सम्प्राप्तेन सिद्धिगतिं गतेन, श्रमणेन=वीरपरीषदोपसर्ग-
सहनशीलेन भगवता महावीरेण निरयावलिकानामकोपाङ्गस्य प्रथमस्य वर्गस्य
दश अध्ययनानि प्रज्ञप्तानि तद्यथा-कालः (१), सुकालः (२), महाकालः (३),
कृष्णः (४), सुकृष्णः (५), तथा महाकृष्णः (६), वीरकृष्णः (७), रामकृष्णः
(८), तथैव च पितृसेनकृष्णः (९), नवमः । दशमस्तु महासेनकृष्णः (१०)।

वोद्धव्य इति सर्वत्रान्वेति, विज्ञेय इति तदर्थः । काल्यादिशब्देभ्य
इदमर्थेऽणप्रत्यये कृते काल्यादयः शब्दाः सिद्ध्यन्ति तथा काल्याःतन्नाम्न्या

श्री सुधर्मास्वामी श्री जम्बूस्वामीसे कहते हैं-‘एवं खलु’
इत्यादि ।

हे जम्बू ! श्रमण यावत् मोक्षप्राप्त भगवानने निरयावलिकाके
दस अध्ययन कहे हैं, उन दस अध्ययननोंके नाम इस प्रकार हैं ।-
(१) काल, (२) सुकाल, (३) महाकाल, (४) कृष्ण, (५) सुकृष्ण (६)
महाकृष्ण, (७) वीरकृष्ण, (८) रामकृष्ण (९) पितृसेन कृष्ण, और
(१०) महासेनकृष्ण ।

‘काली’ आदि शब्दोंसे-उसके सम्बन्धी अर्थमें ‘अण्’ प्रत्यय

श्री सुधर्मास्वामी श्री जम्बूस्वामीसे कहे छे:- ‘एवं खलु’ इत्यादि

हे जम्बू ! श्रमण यावत् मोक्षप्राप्त भगवानने निरयावलिकानां दश अध्ययन
कथां छे. ओ दश अध्ययनना नाम आ प्रकारना छे.-

(१) काल, (२) सुकाल, (३) महाकाल, (४) कृष्ण, (५) सुकृष्ण, (६) महाकृष्ण,
(७) वीरकृष्ण, (८) रामकृष्ण, (९) पितृसेनकृष्ण तथा (१०) महासेनकृष्ण

‘काली’ आदि शब्दोंसे तेना संबन्धी अर्थमां ‘अण्’ प्रत्यय कर्थां छे, जेथी

महाराज्ञ्या अयं पुत्र इति कालः । एवं सर्वत्र विज्ञेयम् । अत्र 'कुमारे'ति सर्वत्र योजनीयं यथा—'कालकुमार' इत्यादि, कालीकुमार इत्यर्थः ॥ ७ ॥

मूलम्—जड़णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं उवंगाणं पढमस्स निरयावलियाणं दस अज्झयणा पन्नत्ता, पढमस्स णं भंते ! अज्झयणस्स निरयावलियाणं समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पन्नत्ते ? ॥ ८ ॥

छाया—यदि खलु भदन्त ! श्रमणेन यावत् संप्राप्तेन उपाङ्गानां प्रथमस्य निरयावलिकानां दश अध्ययनानि प्रज्ञप्तानि, प्रथमस्य भदन्त ! अध्ययनस्य निरयावलिकानां श्रमणेन यावत् संप्राप्तेन कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ? ॥ ८ ॥

टीका—'जड़णं भंते' इत्यादि । यदि खलु भदन्त ! = हे भगवन् ! यावत्=पूर्वोक्तगुणवता संप्राप्तेन=मुक्तिं लब्धवता, श्रमणेन भगवता महावीरेण निरयावलिकानामक्रोपाङ्गस्य प्रथमस्य वर्गस्य दश अध्ययनानि प्रज्ञप्तानि=निगदितानि हे भदन्त ! = हे भगवन् ! निरयावलिकानां प्रथमस्य अध्ययनस्य यावत्=पूर्वोक्तगुणवता संप्राप्तेन=मुक्तिं लब्धवता श्रमणेन=भगवता महावीरेण कोऽर्थः प्रज्ञप्तः=प्रतिपादितः ?

अत्र सर्वत्र 'श्रमणेन' 'यावत्' 'संप्राप्तेन' इत्यादिपदानां पुनः पुनरुपादानं भगवद्भक्तिबाहुल्यसूचनाय ।

किया है, जिससे काली महारानीका पुत्र काल कुमार कहा जाता है, उसके चरित्रप्रतिबोधक अध्ययन भी काल-अध्ययन नामसे प्रसिद्ध है । इस प्रकार सब अध्ययनकी योजना समझना चाहिए ॥ ७ ॥

जम्बू स्वामीने सुधर्मा स्वामीसे फिर पूछा 'जड़णं भंते' इत्यादि ।

हे भदन्त ! इन दस अध्ययनोंमें प्रथम-कालकुमार अध्ययनका भगवानने क्या अर्थ कहा ?

यहां सर्वत्र श्रमण आदि पदोंका पुनः पुनः उपादान किया है वह भगवानकी अतिशय भक्ति सूचनार्थ है । अथवा वाक्यभेदसे

काली महाराणीना पुत्र कालकुमार कडेवाय छे तेनुं चरित्रप्रतिबोधक अध्ययन पण काल-अध्ययन नामथी प्रसिद्ध छे. आ प्रकारे जधा अध्ययननी योजना समजवी जेधजे ॥७॥

जम्बू स्वामीजे सुधर्मा स्वामीने वणी पूछथुं—'जड़णं भंते' इत्यादि

हे भदन्त, जे दश अध्ययनेभां प्रथम-कालकुमार अध्ययनने लखवाने थुं अर्थ कइयो?

अही सर्वत्र श्रमण आदि पदोंनुं बार बार उपादान कथुं छे, ते भगवाननी अतिशय भक्ति सूचनार्थ छे, अथवा वाक्य भेदथी पुनरुक्ति दोष न समजवी जेधजे

यद्वा—वाक्यभेदेन पुनरुक्तिर्न विज्ञेया । अन्यच्च भगवद्गुणानां सन्ततं स्मरणेन भव्यानामन्यविषयतो मनोनिवृत्तिपूर्वकोपादेयविषयावधानार्थं पुनः पुनः कथनं गुण एवेति ॥ ८ ॥

अथ प्रथमं कालकुमारं वर्णयति—‘एवं खलु’ इत्यादि ।

मूलम्—एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समणं इहेव जंबूद्वीवे दीवे भारहे वासे चंपा नामं नयरी होत्था, रिद्ध०, पुन्नभहे चेइए, तत्थणं चंपाए नयरीए सेणियस्स रत्तो पुत्ते चेह्णणाए देवी अत्तए कूणिए नामं राया होत्था, महया०, ॥९॥

छाया—एवं खलु जम्बूः ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये इहैव जम्बू-द्वीपे द्वीपे भारते वर्षे चंपा नाम नगरी अभूत् । ऋद्ध०, पूर्णमद्रं चैत्यम्, तत्र खलु चम्पायां नगर्यां श्रेणिकस्य राज्ञः चेह्णनाया देव्या आत्मजः कूणिकौ नाम राजाऽभवत्, महता० ॥ ९ ॥

टीका—हे जम्बूः ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये इहैव=अस्मिन्नेव देशतः प्रत्यक्षं दृश्यमाने जम्बूद्वीपे=तन्नामकमध्यद्वीपे न पुनर्जम्बूद्वीपानामनन्तत्वादन्व-त्रेति भावः । भारते वर्षे=भरतक्षेत्रे=भरतक्षेत्रस्य मध्यप्रदेशे चम्पा नाम नगरी

पुनरुक्तिदोष नहीं समझना चाहिए । अथवा भगवान के गुणोंको बार बार स्मरण करनेसे भव्यों का अन्य विषयसे मनोवृत्ति का निरोध होजाता है । उपादेय विषयमें सावधान होनेके लिये पुनः पुनः उन्हीं शब्दोंका उच्चारण किया है अर्थात् उन्हीं पदोंका बार बार श्रवण करनेसे उपादेय विषय पर चित्त श्रद्धालु होजाता है ॥८॥

यहाँ प्रथम काल कुमारका वर्णन करते हैं—

श्री सुधर्मास्वामी श्री जम्बूस्वामी से कहते हैं—‘ एवं खलु ’ इत्यादि ।

हे जम्बू ! उस काल उस समय इसी ही—मध्य जम्बू द्वीप

अथवा भगवानना शुष्णानुं वार वार स्मरण करवाथी अन्वोनी पीना विषयथी मनावृत्तिने निरोध थम् नय छे उपादेय विषयमा सावधान यवा माटे इरी इरी ते शब्दानुं उच्चारण कर्तुं छे अर्थात् तेना ते शब्दानुं वार वार श्रवण करवाथी उपादेय विषयमा चित्त श्रद्धालु थम् नय छे. ॥ ८ ॥

आर्डि पडेला डालकुमारनुं वर्णन करे छे:-

श्री सुधर्मा स्वामी श्री जम्बू स्वामीने कहे छे:- ‘ एवं खलु ’ इत्यादि.

हे जम्बू ! ते डाल ते समय आल मध्य जम्बूद्वीपमां भरतनाभे क्षेत्र छे नेना

अभूत् 'ऋद्धस्तिमितसमृद्धा' ऋद्धा=नभःस्पर्शिवहूलप्रासादयुक्ता बहुलजनसङ्कुला च, स्तिमिता=स्वपरचक्रभयरहिता, समृद्धा=धन-धान्यादिपरिपूर्णा, अत्र त्रि-पदकर्मधारयः ।

तत्रेशानकोणे पूर्णभद्रं नाम चैत्यम्=व्यन्तरायतनम् उद्यानमिति वा आसीदिति शेषः । तत्र खलु चम्पानगर्या श्रेणिकस्य=तन्नामकस्य, राज्ञः पुत्रः चेलनायाः=तन्नाम्न्या देव्याः=राज्ञ्याः आत्मजः=भङ्गजातः कूणिको नाम राजा अभवत् । 'महता' शब्देन—'महयाहिमवंतमहंतमलयमंदरमहिंदसारे' अच्चंतविसुद्ध-दीहरायकुलवंससुप्पसूए, निरंतरं रायलक्खणविराइयंगमंगे सीमंधरे मणुस्सिदे, पुरिससीहे, पसंतडिंबडंवररज्जं पसाहेमाणे विहरइ' इत्यादीनां सङ्ग्रहः । छाया-महाहिमवन्महामलयमन्दरमहेन्द्रसारः, अत्यन्तविशुद्धदीर्घराजकुलवंशसुप्रसूतः, निरन्तरं राजलक्षणविराजिताङ्गाङ्गः, सीमन्धरः, मनुष्येन्द्रः, पुरुषसिंहः, प्रशान्त-डिम्बडम्बरं राज्यं प्रसाधयन् विहरति ।

राजवर्णनमाह—'महाहिमव'दित्यादिना—महाश्वासौ हिमवान् सहा हिमवान् स इव महान् शेषराजपर्वतापेक्षया, मलयो=मलयाचलः, मन्दरो=मेरुगिरिः, महेन्द्रः=सुरपतिः पर्वतविशेषो वा, तद्वत्सारः=प्रधानो यस्तथा, अत्यन्तविशुद्धः=अतिनिर्मलः दीर्घः=चिरकालीनो राज्ञां कुलरूपो वंशस्तत्र प्रसूतः=जातः अति-

में भरत नामका क्षेत्र है, उसके मध्य भागमें चम्पा नामकी नगरी गगनचुम्बी प्रासादों से अलङ्कृत, स्वचक्र परचक्रका भय रहित और धनधान्य आदि से सम्पन्न थी । उसके ईशान कोणमें पूर्णभद्र नामका व्यन्तरायतन था । उस चम्पानगरीमें श्रेणिक राजाके पुत्र कोणिक राजा राज्य करते थे जो चेलना महारानीके गर्भसे जन्मे थे ।

कोणिक राजाका वर्णन इस प्रकार है—महा हिमवान पर्वतके समान थे अर्थात्—शेष अन्य राजा रूप पर्वतोंसे बड़े बड़े थे । मलय पर्वत और महेन्द्र पर्वत के समान श्रेष्ठ थे, अत्यन्त निर्मल प्राचीन

मध्य भागमां यथा नामनी नगरी आकाशस्पर्शी लवनेथी शोभित स्वपर यकं लय रहित अने धन धान्य आदिथी संपन्न हुती तेना प्रशान्त कौणिकमां पूर्णभद्र नामे व्यन्तरायतन हुतुं । ते यथा नगरीमां श्रेष्ठिक राजाना पुत्र कौणिक राजा राज्य करता हुता, जे चेलणा महाराणीना गर्भथी जन्म्या हुता

कौणिक राजानु वर्णन आ प्रकारे छे—

महा हिमवान पर्वत समान हुता अर्थात् शेष अन्य राजा रूपी पर्वतथी भौटा हुता । मलय पर्वत अने महेन्द्र पर्वतना समान श्रेष्ठ हुता । अत्यन्त निर्मल

निर्मलचिरन्तनराजकुलसमुत्पन्नः, निरन्तरं=सर्वदा, राज्ञां लक्षणानि=स्वस्तिकशङ्ख-
चक्रादीनि तैः विराजितं=शोभितमङ्गाङ्गं=प्रत्यङ्गं यस्य स तथा, सामुद्रिकशास्त्र-
प्रतिपादितराजलक्षणोपेतशरीर इत्यर्थः, 'सीमन्धरः' राजमर्यादापालकः 'मनु-
ष्येन्द्रः'=मनुष्येषु=नरेषु इन्द्र इव ऐश्वर्यवान्, 'पुरुषसिंहः'=पुरुषेषु सिंह इव
शूरः=शत्रून् प्रति अप्रतिहतवीर्यवान्, 'प्रशान्ते' ति-प्रशान्तानि डिम्बानि=अति-
वृष्टचनावृष्टिमृषकशलभशुकात्यासन्नराजरूपा विघ्नाः, डम्बराणि=परस्परराजप्रजा-
विरोधरूपक्लेशा यत्र, तथाभूतं राज्यं प्रसाधयन्=परिपालयन् विहरति=तिष्ठति ॥९॥

मूलम्—तस्स णं कूणियस्स रत्तो पउमावई नामं देवी
होत्था, सोमालपाणिपाया जाव विहरइ ॥ १० ॥

छाया-तस्य खलु कूणिकस्य राज्ञः पद्मावती नाम देवी अभवत्, सु-
कुमारपाणिपादा यावत् विहरति ॥ १० ॥

टीका—'तस्सणं' इत्यादि-तस्य कूणिकस्य राज्ञः पद्मावती नाम देवी
अभवत्, तस्या वर्णनमाह—'सुकुमारपाणिपादा' सुकुमारं=कोमलं पाणिपादं

राजवंशमें जन्मे थे। जिनके शरीर के प्रत्येक अवयवमें स्वस्तिक,
शंख, चक्र आदि राजचिह्न यथास्थान स्थित थे। राजमर्यादाके पालक
थे। ऐश्वर्यसम्पन्न होनेसे मनुष्योंके इन्द्र थे। और शत्रुओंको अप्रति-
हन शक्ति द्वारा जीतनेसे पुरुषमें सिंहके समान थे। जिनका राज्य
अतिवृष्टि, अनावृष्टि, मूषक चूहे, शलभ-टिड्डियाँ, शुक-तोते तथा
राजाओं का युद्धादिके कारण गाँव के समीप निवास करना, इन
छह प्रकार की ईतियों=उपद्रवोंसे मुक्त था। ऐसे राज्यका पालन
महाराज कोणिक करते थे। ॥ ९ ॥

'तस्सणं' इत्यादि। महाराज कोणिकके पद्मावती नामक महा-

प्राचीन राजवंशमा जन्म्या हुता जेना शरीरमा प्रत्येक अवयवमां स्वस्तिक, शंख,
चक्र आदि राजचिह्न योग्य ठेकाछे रहेलां हुतां। राजमर्यादाना पालक हुता। ऐश्वर्य-
सम्पन्न होवाथी मनुष्येना इन्द्र हुता तथा शत्रुज्येने अप्रतिहत शक्ति द्वारा एतवाथी
पुरुषमां सिंहसमान हुता। जेतु राज्य अतिवृष्टि, अनावृष्टि, मूषक (उदरे), शलभ
(तीड), शुक (पोपट) तथा राजज्येनां युद्ध आदिना कारणे गाभनी नशुक निवास करवे,
अथ छ प्रकारनी धृति अथदे उपद्रवथी मुक्त हुतुं जेवां राज्यनुं पालन महाराज
कोणिक करता हुता। ॥ ९ ॥

'तस्सणं' इत्यादि महाराज कोणिकसे पद्मावती नामनी महाराणी हुती

यस्या सा तथा, कोमलकरचरणयुक्ता, अत्र-‘यावत्’ शब्देन-‘अहीणपंचिन्दिय-सरीरा, लक्खणवञ्जणगुणोववेया, माणुम्माणप्पमाणपडिपुण्णसुजायसव्वंगसुंदरंगा, ससिसोमाकारा, कंता, पियदंसणा, सुरूवा’ इत्यन्तविशेषणानामन्यत्रोक्तानां समन्वयो बोद्धव्यः । एषां छाया-अहीनपञ्चेन्द्रियशरीरा, लक्षणव्यञ्जनगुणोपपेता, मानोन्मानप्रमाणपरिपूर्णसुजातसर्वाङ्गसुन्दराङ्गी, शशिसौम्याकारा, कान्ता, पियदर्शना, सुरूपा, इति ।

अथैतानि विशेषणानि प्रतिपदं व्याचक्ष्महे-अहीनानि=लक्षणस्वरूपाभ्यां परिपूर्णानि पञ्च इन्द्रियाणि यस्मिस्तादृशं शरीरं यस्याः सा अहीनपञ्चेन्द्रिय-शरीरा-स्वस्वविषयग्रहणसमर्थपूर्णाकारचक्षुरादीन्द्रियविशिष्टेत्यर्थः, ‘लक्षणे’ ति लक्ष्यन्ते=चिह्नयन्ते यैस्तानि लक्षणानि=स्त्रीचिह्नानि हस्तस्थविद्याधनजीवितरेखा-रूपाणि वा, व्यज्यन्ते यैस्तानि व्यञ्जनानि=मषतिलकादीनि, गुणाः=सौशील्य-पातिव्रत्यादयो, यद्वा - पूर्वोक्तप्रकारैर्लक्षणैर्व्यज्यन्ते इति लक्षणव्यञ्जनास्ते च

रानी थी । ‘सुकुमालपाणिपाया’ जिसके हाथ पैर अत्यन्त कोमल थे । ‘अहीणपंचिन्दियसरीरा’ लक्षण और स्वरूपसे परिपूर्ण (पूरी) पाँच इन्द्रियां सहित शरीर वाली थी, अर्थात् जिसकी चक्षु आदि पाँचों इन्द्रियां अपने-अपने विषय ग्रहण करनेमें पूर्ण सावधान, तथा-यथायोग्य आकार वाली थी ।

‘लक्खणवञ्जणगुणोववेया’ जिनके द्वारा पहचान होती है उनको लक्षण (चिह्न) कहते हैं । अथवा हाथ आदिमें बनी हुई विद्या धन जीवन आदिकी रेखाओंको लक्षण कहते हैं । जिनके द्वारा अभिव्यक्ति (प्रगटपन) होती है, उन तिल और मस आदि को व्यञ्जन कहते हैं, सुशीलता पतिव्रतता आदि गुण हैं, इन तीनों से जो स्त्री युक्त हो उसे लक्षणव्यञ्जनगुणोपपेता कहते हैं, अथवा लक्षणोंके द्वारा व्यक्त

‘सुकुमालपाणिपाया’ नेना हाथ पैर अत्यन्त कोमल हुता.

‘अहीणपंचिन्दियसरीरा’ लक्षणे तथा स्वरूपे परिपूर्ण पांच इन्द्रियो सहित शरीरवाणी हुती अर्थात् नेनी चक्षु आदि पांचे इन्द्रियो पात पोताना अडणु करवाभां पूर्ण सावधान तथा यथायोग्य आकारवाणी हुती

‘लक्खणवञ्जणगुणोववेया’ नेनाथी ओणभाय तेने लक्षणे अडे छे अथवा हाथ आदिभां भनेसी विद्या धन आदिनी रेखाओने लक्षणे (चिह्न) अडे छे नेना द्वारा अभिव्यक्ति (प्रगटपणुं) थाय छे ते तल अथवा मस आदिने व्यञ्जन अडे छे. सुशीलता पतिव्रतपणुं आदि गुणुं छे. आ त्रणेथी ने स्त्री युक्त होय तेने लक्षणव्यञ्जनगुणोपपेता अडे छे अथवा लक्षणे द्वारा व्यक्त होवावाणा गुणुंने लक्षणे व्यञ्जन गुणुं

गुणाः, अथवा-प्रोक्तस्वरूपाणां लक्षणव्यञ्जनानां ये गुणास्तैः, उपपेता=मम-
न्विना, 'अत्र 'उप' 'अप' इत्युपसर्गयोः शकन्द्वादित्वात्पररूपम् ।

हस्तस्थप्रधानरेखा लक्षणानि यथा—

“जस्स इवइ वहुरेहो, हत्थो अहवा रहियसयलरेहो ।
सो अप्पाऊ अहणो, तहा दुही लक्खणन्नुणिद्धो ॥ १ ॥

एगेगंगुलिमज्जे, होई पणवीसवच्छरं आऊ ।

जाणह जीवियरेहं, जा य कणिट्ठंगुलीमूला ॥ २ ॥

करहाओ धणरेहा, मणिवंधत्तो तहेव पिउरेहा ।

एया सव्वा पुण्णा, हवंति चे आउगोत्तधणलाहो ॥ ३ ॥”

छाया-यस्य भवति वहुरेखो, हस्तोऽथवा रहितसकलरेखः ।

सोऽल्पायुरधनस्तथा दुःखी लक्षणत्रैर्निर्दिष्टः ॥ १ ॥

एकैकाङ्गुलिमध्ये, भवति पञ्चविंशतिवत्सरमायुः ।

जानत जीवितरेखां, या च कनिष्ठाङ्गुलीमूलात् ॥ २ ॥

होने वाले गुणोंको लक्षणव्यञ्जनगुण कहते हैं, और इनसे युक्त स्त्रीको-
लक्षणव्यञ्जनगुणोपपेता कहते हैं, अथवा पूर्वोक्त लक्षणों और व्यञ्ज-
नोंके गुणोंको लक्षणव्यञ्जनगुण कहते हैं, और इनसे युक्त स्त्रीको
लक्षणव्यञ्जनगुणोपपेता कहते हैं । महारानी पद्मावती इन गुणों से युक्त थी ।

हाथ की प्रधान रेखाओंके लक्षण इस प्रकार हैं—जिसके हाथमें
बहुत रेखाएँ हों या बिल्कुल रेखाएँ न हों वे अल्पायु वाले निर्धन
और दुःखी होते हैं, ऐसे, लक्षणके जानने वाले कहते हैं ॥ १ ॥

जो रेखा कनिष्ठ अंगुलीके मूलसे निकलती है वह जीवन-
आयु-की रेखा है । एक-एक अंगुलीमें पच्चीस-पच्चीस वर्षकी आयु
होती है, अर्थात् यदि आयुकी रेखा एक अंगुल तक है तो (२५)

कडे छे. तथा तेनाथी युक्त ने श्री होय तेने लक्षणव्यञ्जनगुणोपपेता कडे छे अथवा
पूर्वोक्त लक्षणो तथा व्यञ्जनाना गुणोने लक्षण व्यञ्जन गुण कडे छे. तथा तेनाथी युक्त
ने श्री होय तेने लक्षणव्यञ्जनगुणोपपेता कडे छे. महाराणी पद्मावतीमां आ गुणो कता.

हाथनी मुख्य मुख्य रेखाओंनां लक्षण आ प्रकारनां छे:—नेना हाथमां गहु
रेखाओ होय अथवा गिलकुल रेखा न होय ते अल्प आयुवाणा, निर्धन तथा दुःखी
होय छे. ओस लक्षणना गणुवावाणा कडे छे. १

ने रेखा टयली आंगणीना मूलथी नीकणे छे ते जीवन-आयुनी रेखा छे. ओक
ओक आंगणीमां पच्चीस-पच्चीस वर्षनी आयु होय छे अर्थात् ने आयुनी रेखा ओक
आंगणी सुधी होय तो पच्चीस वर्षनी आयु, ओ हिसाणे आगण पणसमल लेवुं नेधमे.(२)

करभाङ्गनरेखा, मणिवन्धात्तथैव पितृरेखा ।

एताः सर्वाः पूर्णा, भवन्ति चेदायुर्गोत्रधनलाभः ॥ ३ ॥ इति ।

‘माने’ति-मीयते-परिच्छिद्यते पदार्थोऽनेनेति मानं, तुलाङ्गुलीप्रस्था-
दिना तोलनं, यद्वा-जलादिपरिपूर्णकुण्डादिप्रविष्टे पुरुषादौ यदा द्रोणपरिमितं
जलादि निस्सरति तदा स पुरुषादिर्मानवानित्युच्यते तदेव, उन्मानम्=ऊर्ध्व-
मानं, यद्वा-अर्द्धभाररूपः परिमाणविशेषः, प्रमाणं=सर्वतो मान, यद्वा-निजा-
ङ्गुलीभिरष्टोत्तरशताङ्गुलिपरिमितोच्छ्रायः, इत्थं च-मानं चोन्मानं च प्रमाणं
चेत्येषां द्वन्द्व मानोन्मानप्रमाणानि, तैः परिपूर्णानि=सम्पन्नानि, अत एव सु-

पच्चीस वर्षकी आयु, दो अंगुली तक हो तो (५०) पचास वर्षकी
आयु, इस हिसाबसे आगे समझना चाहिये ॥ २ ॥

धन की रेखा करम-गुद्देसे निकलती है और मणिवन्ध (करके
मूल) से पितृरेखा फूटती है। यदि ये सब रेखाएँ पूर्ण हो तो आयु
गोत्र प्रतिष्ठा और धनका लाभ होता है ॥ ३ ॥

“माणुम्माणप्पमाणपडिपुण्णसुजायसव्वंगसुंदरंगा” जिसके द्वारा पदार्थ
मापा जाय उसे मान कहते हैं, अर्थात् तराजू अंगुली सेर छटांक
आदिके द्वारा तौलना, अथवा कोई पुरुष आदि जलसे संपूर्ण भरे हुए
कुण्ड (शरीरप्रमाण गहरा, शरीरप्रमाण लम्बा व शरीरप्रमाण चौड़ा)
आदि में घुसे और उसके घुसनेसे एक द्रोण-(परिमाणविशेष) जल
बाहर निकले तो, उस पुरुष आदिको मानयुक्त कहते हैं। मान-
शब्दसे इसीका ग्रहण करना चाहिए। मान से अधिकको अथवा
अर्धभार रूप परिमाण को उन्मान कहते हैं। सर्वतोमान को, अथवा
अपने अंगुलीसे (१०८) एक सौ आठ अंगुली ऊँचाईको प्रमाण कहते

धननी रेखा करम-गुद्देथी निकले छे तथा मणिवन्ध (कांडाना मूणथी) पितृरेखा कूटे
छे. ने आ अथी रेखाओ पूरुं डोय तो आयु, गोत्र, प्रतिष्ठा तथा धननी लाभ थाय छे. (३)

“माणुम्माणप्पमाणपडिपुण्णसुजायसव्वंगसुंदरंगा” नेना द्वारा पदार्थ मापी
शकय तेने मान कडे छे अर्थात् त्राजु, आंगण, शेर, छटांक आदिना द्वारा तोणवुं.
अथवा कोर्ध पुरुष वगेरे जलथी स पूरुं भरला कुडादि (शरीर नेटवी ठांडा तथा लांघो
पडोणो)भां पेसे अने तेना पेसवाथी अेक द्रोण (परिमाण-विशेष) जल भडार निकले
तो ते पुरुष आदिने मानयुक्त कडे छे मान शब्दथी आज वात समजवी नेधअे.
मानथी अधिकने अथवा अर्धभार रूप परिमाणने उन्मान कडे छे, सर्वतोमानने अथवा
पैतानी आगणीथी (१०८) अेकसो आठ आंगणी ठांयाधने प्रमाण कडे छे आ मान

ज्ञानानि=रथोचितावयवमन्त्रिवेशवन्ति, सर्वाणि=मकलानि अङ्गानि=अव्ययते=व्य-
 व्यते ज्ञायते प्राणी यन्तानि मन्त्रकादारभ्य चरणान्तानि यस्मिन् शरीरे तद्
 मन्त्रोन्मान्प्रमाणपणिपूर्णमृजानसर्वाङ्गम्, अत एव तादृशं सुन्दरमङ्गं=वपुर्यस्याः
 ना तथोन्ना, 'शर्मा'ति शर्मा=चन्द्रमन्दन सौम्यः=आलादक आकारः=स्वरूपं
 यस्याः ना. 'कान्ता' कमनीया, चित्तशरिणी, 'प्रिये'ति प्रियं=दर्शकजनमना-
 तादृश दर्शनम्=श्रम्योस्त्वं यस्याः ना प्रियदर्शना, यत्तु-दर्शनं रूपमिति व्या-
 र्थानं तन्त्रज्ञानगयाचविशेषणपौनरुक्त्यापस्या हेयमेव । यत् एवंविशेषणविशिष्टाऽत-
 एव मूर्त्त्या=सर्गातिशयित्त्वाप्यवती, रूपेण लावण्यस्याप्युपलभितत्वात् ॥१०॥

सुन्दर-तत्त्वं चंपा नगरीण्येणियस्स रत्नो भजा कृष्ण-
 यन्म रत्नो चुट्टमाडया काली नामं देवी होत्था, सोमाल-
 पाणिपाया जाव सुखा ॥ ११ ॥

हैं । इन मान उन्मान और प्रमाणसे युक्त ज्ञानके कारण मृजान
 (यथायोग्य अटपवर्गकी रचनासे सुन्दर) जो सर्वाङ्ग-जिमके द्वारा
 प्राणी व्यक्त होता है-किम्पी आकृतिके रूपमें दिखार्ह देता है उसमें,
 अर्भाग वैशेष्ये लेकर मन्त्रक तकके अवयवोंको अंग कहते हैं । इन
 सब अंगोंसे सुन्दर अंगवाली महारानी पद्मावती थी ।

“नामसोमासारां” चन्द्रमाके समान शान्त आकारवाली थी ‘कान्ता’
 जो कामनीया-चित्त हरण करनेवाली हो उस स्त्रीको ‘कान्ता’ कहते हैं ।

‘प्रियदर्शना’ जिमकी दृष्टि दर्शकोंके मनमें आलाद उत्पन्न करती
 हो उस स्त्रीको ‘प्रियदर्शना’ कहते हैं । इस प्रकार उक्तगुणविशिष्ट
 होनेसे-यह ‘मूर्त्त्या’ श्रेष्ठ रूप लावण्यवती थी ॥ १० ॥

उन्मान रूप प्रमाणसे युक्त होवने आला सुन्दर (यथायोग्य अवयवोंकी रचनाधी
 नृत्न) के रूप में, कान्ता नाम प्राणी व्यक्त होय है-इसी आकृतिके रूपमें देखाय है
 किसे व्यक्त होय है-इसमें साथ सुधीन अवयवोंसे अंग होते हैं, आ गथां आगधी
 सुन्दर मूर्त्त्या ॥ १० ॥ पद्मावती देवी

‘नामसोमासारां’ यदना उन्मान शान्त आकारवाली रत्नी ‘कान्ता’ के
 कामनीया चित्त हरण करनेवाली होय ने अने ‘कान्ता’ अंग है,

‘प्रियदर्शना’ रत्नी तन्त्र ज्ञेयदर्शना अन्तर्मां आवर्त उत्पन्न करती होय ते
 अने ‘प्रियदर्शना’ दृष्टि से सब प्रकारसे इहल, सुदृष्टिदिष्ट होगधी ते ‘मूर्त्त्या’ श्रेष्ठ
 रूप लावण्यवती रत्नी (१०)

छाया-तत्र खलु चम्पायां नगर्यां श्रेणिकस्य राज्ञः भार्या कूणिकस्य राज्ञः
क्षुलमाता काली नाम देवी अभवत्, सुकुमारपाणिपादा, यावत् सुरूपा ॥११॥

टीका-‘तत्थणं’ इत्यादि-तत्र = तस्यां चम्पायां नगर्यां ‘खलु’ इति
वाक्यालङ्कारे, श्रेणिकस्य राज्ञः भार्या=पट्टराज्ञी कूणिकस्य राज्ञः क्षुलमाता=लघु-
जननी काली नाम देवी सुकुमारपाणिपादेति पूर्ववत्, अभवत्, पुनः सा कीदृशी?
ति विशेषवर्णनमाह-‘कौमुद्वरयणिरविमलपडिपुन्नसोमवयणा, कुंडल्लिखितगंडलेहा,
सिंगारागारचारुवेसा’ छाया-कौमुदीरजनिकरविमलपरिपूर्णसौम्यवदना, कुण्डलो-
लिखितगण्डरेखा, शृङ्गारागारचारुवेषा, एतेषां विशेषणानामेवं व्याख्या-तथाहि
‘कौमुदी’ति-‘कु’शब्देन मही प्रोक्ता, ‘मुद’ हर्षे ततो द्वयम् । धातुज्ञैर्नियमैश्चैव,
तेन सा कौमुदी स्मृता ॥ १ ॥

कौ पृथिव्यां मोदत इति अन्तर्भावितण्यर्थत्वाद् हर्षयति प्राणिन इति
कुमुदश्चन्द्रस्तस्येयं कौमुदी आश्विन-कार्तिकपूर्णिमाचन्द्रिका, तत्प्रधानो यो रज-

‘तत्थणं’ इत्यादि । उस चम्पा नगरीमें श्रेणिक राजाकी पट्टरानी
कोणिक राजाकी लघुमाता काली नामकी देवी सुकुमाल कर-चरणवाली
यावत् सुरूपा थी ।

फिर इन्हीं काली देवी का वर्णन करते हैं—

‘कौमुद्वरयणिरविमलपडिपुन्नसोमवयणा’

‘कौमुदी’ शब्दका अर्थ इस प्रकार है—

“‘कु’ शब्देन मही प्रोक्ता, ‘मुद’ हर्षे, ततो द्वयम् ।

धातुज्ञैर्नियमैश्चैव, तेन सा कौमुदी स्मृता ॥ १ ॥”

‘कु’ शब्दका अर्थ पृथिवी है ‘मुद’ शब्दका अर्थ हर्षित
करना है, जो पृथ्वीमें रहे हुए जनोको आनन्द उत्पन्न करे उसको कौमुदी
कहते हैं । कौमुदी याने आश्विन कार्तिक मास रूप शरद ऋतुकी

‘तत्थणं’ इत्यादि ते चम्पा नगरीमा श्रेणिक राजनी पट्टराणी कौणिक राजनी
लघुमाता काली नामे देवी सुकुमारपाणिपादा यगवाणी अलु स्वश्रुपवान इती.
वणी ते काली देवीनुं वर्णन करे छे.—

‘कौमुद्वरयणिरविमलपडिपुन्नसोमवयणा’

कौमुदी शब्दको अर्थ आवे छे:—

“‘कु’ शब्देन मही प्रोक्ता, ‘मुद’ हर्षे, ततो द्वयम् ।

धातुज्ञैर्नियमैश्चैव, तेन सा कौमुदी स्मृता ॥ १ ॥”

‘कु’ शब्दको अर्थ पृथ्वी छे, ‘मुद’ शब्दको अर्थ ‘हर्षित करवु’ छे ने पृथ्वी
उपर रहेवां भाषुसोने आनन्द करावे तेने कौमुदी कहे छे. कौमुदी अर्थात् आसो कार्तिक

निरुश्रन्द्रस्तद्वत् विमलं परिपूर्णं सौम्यं=रमणीयं वदनं=मुखं यस्याः सा तथा, 'कुण्डले'ति-कुण्डलाभ्यां कर्णाभरणविशेषाभ्यां उल्लिखिता=घृष्टा गण्डरेखा=कपालतलविरचितकस्तूरीरेखा यस्याः सा तथा, 'शृङ्गारे'ति-शृङ्गारस्य रसविशेष्य अगारमिव अगारं, तथा चारुः=सुन्दरः वेशो=नेपथ्यं यस्याः सा तथा, इति ।

पुनः कौटुकी सेत्याह-'सेणियस्म रघ्नो इष्टा कंता प्रिया मणुष्मा नामविज्ञा वेसाभिया मम्मया बहुमया अणुमया भंडकरंडगसमाणा तैल्लकेला इव सुसंगोत्रिया चेलपेटा इव सुसपरिग्माहिया सा काली देवी सेणिएण रघ्ना सद्धि विडलाइं भोगभोगाइं भुजमाणा विहरइ' छाया-श्रेणिकस्य राज्ञ इष्टा कान्ता प्रिया मनोज्ञा नामधेया वैश्वसिका संमता बहुमता अनुसता माण्डकरण्डकसमाना तैल्लकेलेव सुसंगोपिता चेलपेटेव सुसपरिग्रहीता सा काली देवी श्रेणिकेन राज्ञा साद्धे विपुलान् भोगभोगान् भुञ्जाना विहरति ।

इष्टा=अभिलषणीया पातिव्रत्यादिगुणवाहुल्यात्, कान्ता=कमनीया, प्रिया =प्रेमवती सदाप्रेमविषयत्वात् किमन्यदर्शनेनेति परिणामजनिका, मनोज्ञा =पतिमनोत्रिनोदिनी, भावतः पतिभाववती, स्वरूपतः शोभना । नामधेया=प्रशस्तनामवती, नामधायी, इति वा छाया, तत्र नामधायी=हृदि धरणीयं

पूर्णिमाकी उज्वल चन्द्रिका (चाँदनी) उस चन्द्रिकावाला चन्द्रमाके समान निर्मल संपूर्ण रमणीय सुखवाली थी । 'कुंडलुल्लिहियगंडलेहा' जिनके घर्षण लगनेसे कपोल पर रही हुई कस्तूरी आदि सुगंधी द्रव्यकी रेखा हट गई है ऐसे विजाल कुंडलको धारण करनेवाली थी । 'सिंगारागारचारुवेसा', शृंगार रसका घर और सुन्दर वेप वाली थी । 'इष्टा' पातिव्रत्य आदि गुणोंसे राजा श्रेणिकके अभिलषित थी । 'कान्ता' राजा के मनमें आह्लाद उत्पन्न करनेके कारण कान्ता-कमनीय थी । राजाके प्रेम उत्पन्न करनेके कारण 'प्रिया' थी । राजाके मन प्रसन्न करनेके कारण 'मनोज्ञा' थी तथा प्रशस्त नामवाली थी, उम्का नाम हृदयमें धारण करने योग्य था ।

मान इपी शरद ऋतुनी पूर्णिमानी उज्वल चंद्रिका ते चंद्रिकावाणा जे चंद्रमा समान निर्मल संपूर्ण रमणीय सुखवाणी इती 'कुंडलुल्लिहियगंडलेहा'-जेने धमारे लागवाधी गाल पर रहेली कस्तूरी आदि सुगंधी द्रव्यनी रेखा नती रही छे अेवा विशाल कुंडलेने धारण करवा वाणी इती 'सिंगारागारचारुवेसा' शृंगार रसनुं घर तथा सुंदर वेप वाणी इती 'इष्टा' पातिव्रत्य आदि शुभेधी राज् श्रेणिकनी मानीती इती 'कान्ता' राजाना मनमा आनंद उत्पन्न करवारी इती तेथी कान्ता अेटले कमनीय इती. राजाने प्रेम उत्पन्न करवाने अरहे 'प्रिया' इती. राजनुं मन प्रसन्न करवावाणी होवाधी 'मनोज्ञा' इती तथा प्रशस्त नामवाणी इती अथवा तेनु नाम हृदयमां धारण करवा

यस्याः सा तथा । वैश्वसिका = सर्वथा विश्वसनीया, सम्मता = सम्मानयोग्या तत्कृतगृहकार्याणां संमतत्वात्, बहुमता = पतिदासीदासादिसकलपरिजनसम्मानिता, अनुमता = सकलकार्यानुमतिग्रहणयोग्यत्वात् सकलकुटुम्बसमदर्शिनी विप्रियकरणेऽप्यनुकूलेत्यर्थः, भाण्डकरण्डकसमाना = आभरणकरण्डकतुल्या भूषणकरण्डकवत्पति-सुरक्षितेत्यर्थः, तैलकेलेव सुमंगोपिता = तैलकेला देशविशेषप्रसिद्धो मृण्मयस्तैलभा-जनविशेषः, सोऽतिसौन्दर्येण दृष्टिदोषसंभवाद् भङ्गभयाच्च सुष्ठु संगोप्यते, एवं सा, चेलपेटेव सुसंपरिगृहीता = बहुमूल्यवस्त्रमञ्जुषेव मनागप्यविचलतया स्वायत्तीकृता सा = पूर्वोक्तगुणविशिष्टा काली देवी श्रेणिकेन राजा स्वपतिना साद्धं विष्णु-लान् = बहून् नानाविधान् भोगान् = शब्दादिविषयान् भुञ्जाना = अनुभवन्ती विहरति = आस्ते स्म ॥ ११ ॥

मूलम्—तीसेणं कालीए देवीए पुत्ते काले नामं कुमारे
होत्था, सोमालपाणिपाए जावसुरूवे ॥ १२ ॥

छाया—तस्याः खलु काल्याः देव्याः पुत्रः कालो नाम कुमारोऽभवत्,
सुकुमारपाणिपादः यावत् सुरूपः ॥ १२ ॥

शील आदि गुणके कारण विश्वास योग्य थी । पतिके मनके अनुकूल कार्य करनेसे सम्मान योग्य थी. सकल कुटुम्बके हित करनेसे 'बहुमता' थी, सब कार्य पतिकी संमतिसे करनेके कारण 'अनुमता' थी, भूषणकरंड-कके समान 'सुरक्षिता' थी । किसी देशमें मिट्टीका तेलपात्र ऐसा सुन्दर होता है कि जिसको दृष्टिदोषसे बचानेके लिये गुप्त रखते हैं, इसी प्रकार वह सुगोपित थी, बहु मूल्य वस्त्रवाली पेट्टीके समान सर्वथा सुपरिगृहीता थी । ऐसे विशिष्ट गुणवाली काली महारानी श्रेणिक राजा के साथ अनेक प्रकारके शब्दादिविषयोंका अनुभव करती हुई रहती थी ॥ ११ ॥

योग्य હતુ. શીલ આદિ ગુણો વડે વિશ્વાસપાત્ર હતી પતિના મનને અનુકૂળ કાર્ય કરવાથી સન્માનયોગ્ય હતી. સકલ કુટુંબનું હિત કરવાથી 'બહુમતા' હતી બધા કાર્ય પતિની સંમતિથી કરવાને કારણે 'અનુમતા' હતી. ભૂષણકરંડક (ધરણ્યાના કરંડીયા—કાળલા)ની પેઠે સુરક્ષિત હતી કોઈ દેશમાં માટીનું તેલપાત્ર એવું સુંદર હોય છે કે જેને દૃષ્ટિ દોષથી બચાવવા માટે ગુપ્ત રાખે છે તેની પેઠે આ પણ સુગોપિત હતી. કિંમતી વસ્ત્રવાળી પેટીની પેઠે સર્વથા રાખાથી સુપરિગૃહીતા હતી એવા વિશિષ્ટ ગુણવાળી કાલી મહારાણી શ્રેણિક રાખાની સાથે અनेक प्रकारના શબ્દાદિ વિષયોનો અનુભવ કરતી રહેતી. ॥ ११ ॥

